बोरसद के एक प्लेग-पीड़ित गाँवमें ।

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

६१

(२५ अप्रैलसे ३० सितम्बर, १९३५)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

जुलाई १९७५ (श्रावण १८९७)

साढ़े सात रुपये

[illegible] 10.00

निदेशक, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली-१ द्वारा प्रकाशित
और शान्तिलाल हरजीवन शाह, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद-१४ द्वारा मुद्रित

भूमिका

इस खण्डमें जिस अवधि (२५ अप्रैलसे ३० सितम्बर, १९३५)की सामग्री दी जा रही है उसके दौरान राजनीतिक क्षेत्रमें कोई विशेष सरगरमी नही रही। केन्द्रीय विधान-सभामें कांग्रेस सरकारी कार्रवाइयोंके प्रति राष्ट्रका विरोध प्रकट करने के लिए जो-कुछ कर रही थी, उसके सिवाय कोई सार्वजनिक प्रवृत्ति नही दिखाई दे रही थी। जवाहरलाल नेहरू जेलमें थे, और "सरकारकी ओरसे ऐसी हठधर्मी पहले कभी" नही की गई थी जैसी उन दिनों "देखने में आ रही" थी (पृ० २२)। सविनय अवज्ञाका स्थगन भी इस बातका एक कारण था कि "सर्वत्र निराशा-ही-निराशा छा गई" थी (पृ० ९४)। लेकिन गांधीजी की जोरदार अपीलके परिणामस्वरूप सरकारने जर्मनीकी एक आरोग्यशालामें रोग-शय्यापर पड़ी अपनी पत्नी कमला नेहरूसे मिलने के लिए जवाहरलाल नेहरूको ३ सितम्बरको बिना शर्त रिहा कर दिया। सरकारके इस सद्भावनापूर्ण कार्यको कृतज्ञताके भावसे स्वीकार करते हुए अगाथा हैरिसनके नाम अपने पत्रमें गांधीजी ने लिखा कि जवाहर-लालकी रिहाई "अन्धकार और अवसादके बीच . . . एक प्रकाश-बिन्दुके समान चमक रही है" (पृ० ४६२)। स्वयं गांधीजी उस चतुर्दिक अवसादसे अछूते रहकर ग्राम-सेवामें निमग्न थे। उनकी ऐसी श्रद्धा थी कि "अगर हमारे मनमें सच्चा प्रेम अर्थात् अहिंसा है तो सब ठीक ही होगा" (पृ० २२)। वे मात्र राजनीतिक धरातलपर सरकारसे लड़ने से अधिक महत्त्व आन्तरिक शक्तिके विकासको देते थे। इसलिए जब "पूरा रचनात्मक कार्यक्रम" लोगोंके "सामने पड़ा हुआ" था, तब वे निराश और किंकर्त्तव्यविमूढ़ क्यों हों, यह बात उनकी समझमें नहीं आती थी (पृ० ९४)। यह कार्य "इतने अधिक श्रमकी अपेक्षा" रखनेवाला और "इतना दुष्कर" था कि अगर गांधीजी का बस चलता तो वे "सभी किस्मका लिखना बन्द करके, अपने-आपको किसी एक गाँवमें खपा" देते "और अपनी सामर्थ्य-भर वही काम" करते रहते (पृ० ३९७)। विगत कई महीनोंसे "ग्रामोद्योग संघका" यह "कार्य सुनिश्चित ढंगसे चल रहा" था, लेकिन "उसके सम्बन्धमें बताने को कोई बहुत बड़ी बात" नही थी (पृ० ९१)। इसके लिए ऐसे समर्पित कार्यकर्त्ताओंकी आवश्यकता थी, जो बाधाओंको देखकर भागें नही, इतना ही नहीं, बल्कि दृढ़ताके साथ उनका सामना करें। किन्तु गांधीजी को दिखाई यह दे रहा था कि "हम सबमें क्षात्रवृत्तिकी अत्यधिक कमी है। हमारे मनमें तुरन्त कायरता आ जाती है" (४६८)।

ग्राम-सेवकोंके लिए गांधीजी ने जो एक विशेष कठिन शर्त रखी वह यह थी कि उन्हें गाँवोंमें अपना पसीना बहाकर अपनी रोटी कमानी चाहिए। "गाँवोंकी

ओर जाने का अर्थ" गांधीजी की दृष्टिमें यह था कि "शरीर-श्रमके धर्मको, उसके सारे फलितार्थोके साथ, स्वीकार कर लिया जाये।" उनका विश्वास था कि "शरीर-श्रमके नियमपर चलने से" "अस्तित्वके निमित्त संघर्षके स्थानपर पारस्परिक सेवाकी प्रति-स्पर्धा" और "पाशविक नियम" के स्थानपर "मानवी नियम" की प्रतिष्ठा होगी और इस तरह "समाजमें एक शान्तिमय क्रान्ति पैदा होगी" (पृ० २२६)। एक ग्राम-सेवकने गांधीजी के सामने अपनी परेशानी रखते हुए बताया था कि "अपनी रोटी शरीर-श्रमसे कमाने" के नियमका पालन करने के फलस्वरूप स्वयंसेवकोंके पास ग्रामवासियोंकी अन्य उपयोगी सेवा करने का समय ही नहीं बच पाता। इसका उत्तर देते हुए उन्होंने लिखा कि "बुद्धिपूर्वक किया गया श्रम उच्चसे-उच्च प्रकारकी सेवा है। कारण यह है कि यदि कोई मनुष्य अपने शारीरिक श्रमसे देशकी उपयोगी सम्पत्तिमें वृद्धि करता है तो उससे उत्तम और हो ही क्या सकता है?" उन्होंने इस सिद्धान्तके मर्मको आगे समझाते हुए बताया कि "'होना' . . . ही 'करना' है।" "सदा सन्मार्गपर चलकर" सेवक अपनी "सेवाकी सुगन्ध" आसपास फैलायेंगे और "वह संक्रामक सिद्ध होगी। कालान्तरमें यह सेवा-भावना समस्त भारतमें और फिर अखिल विश्वमें व्याप्त हो जायेगी।' इसलिए "इस सेवामें एकके कल्याणमें सबका कल्याण निहित है।" व्यावहारिक दृष्टिकोणसे भी गांधीजी ने समाधानोन्मेषी कार्यकर्त्ताको आश्वस्त किया कि "ये सेवक जब कुशलता प्राप्त कर लेंगे, तब आजकी अपेक्षा बहुत कम समयमें वे अपने अन्न-वस्त्रके लायक कमा लेंगे, और हरिजन-सेवा तथा किसी दूसरे काममें वे अपनी शक्तिको बिना किसी बाधाके लगा सकेंगे" (पृ० १३५-३६)।

जब अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघका कार्यक्रम गति पकड़ने लगा तब गांधीजी के सामने हर वर्गके ग्रामीण कारीगरके लिए मानक मजदूरी तय करने की समस्या आ खड़ी हुई। वर्षोंसे वे इस बातको एक आदर्शकी तरह लोगोंके सामने रखते आये थे कि हर प्रकारके श्रमको समान रूपसे मूल्यवान मानना चाहिए और उसका पारिश्रमिक भी तदनुसार दिया जाना चाहिए। इसलिए उन्होंने आग्रह-पूर्वक कहा कि "अब वह समय आ गया है जब संघको उसकी देख-रेखमें किये जानेवाले सभी प्रकारके श्रमके पारिश्रमिकको . . . एक-सा . . . बना . . . देना चाहिए" (पृ० २५१)। उनका विचार था कि "अखिल भारतीय चरखा संघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ-जैसी परोपकारी संस्थाओंके लिए इस व्यापारिक नियमका अनुसरण करना ठीक नहीं है कि सबसे सस्ता खरीदें और सबसे सस्ता बेचें।" क्योंकि ग्रामोद्योग संघका उद्देश्य यह नहीं था कि "गाँवकी चीजें सस्तेसे-सस्तेमें तैयार की जायें", बल्कि यह था कि "जीने के लिए काफी मजदूरीपर बेकार ग्रामवासियोंको काम दिया जाये।" संघ जो करना चाहता था वह था "झूठे और मानव-कल्याणका खयाल न करनेवाले अर्थशास्त्रके स्थान पर सच्चे और मानव-हित का खयाल करनेवाले अर्थशास्त्र" का प्रतिष्ठापन। और गांधीजी का कहना था कि यदि हर कारीगरको निर्वाह-योग्य मजदूरी देना "अव्याव-

हारिक दिखाई देता हो तो संघका प्रयत्न उसे व्यावहारिक बनाने का होना चाहिए।" इसे व्यावहारिक नही बनाया जा सकता हो, यह मानने को गांधीजी तैयार नही थे, क्योकि यह एक सत्य था और "सत्य सदा व्यावहारिक होता है।" आवश्यकता सिर्फ इस बातकी थी कि ग्राहकोको सही स्थिति समझाकर अनुकूल लोकमत तैयार किया जाये (पृ० २६९-७०)। इस प्रस्तावको व्यावहारिक बनाने के लिए सबसे जरूरी कार्यकर्ताओके अन्दर इस बोधका उदय होना था कि "वे अधभूखी अवस्थामें" रहनेवाले "या ठीक भोजन न पानेवाले कारीगरो और मजदूरोके एक विशाल परिवारके ही मामूली सदस्य है" (पृ० ३०८)। गाधीजी ने खरीदारोसे भी यह याद रखने का अनुरोध किया कि "वे उस महान् ट्रस्ट", अर्थात् अखिल भारतीय चरखा संघ, "के सदस्य है, भले ही उनका नाम कागजपर दर्ज न हो।" उन्होंने उनसे सदा इस सत्यको ध्यानमें रखने को कहा कि "कत्तिनोंका हर तरहसे खयाल रखना उनका धर्म है" (पृ० ३४९)। ग्रामोद्योग कार्यक्रमकी सार्थकताके प्रति शंकालु और बड़े पैमानेके औद्योगीकरणके हिमायती एक समाजवादी मित्रको उत्तर देते हुए उन्होने अपना वह चिर-परिचित वाक्य दुहराया कि "हिन्दुस्तानके सात लाख गाँवोमें फैले हुए ग्रामीण जन-रूपी करोड़ो जीवित यन्त्रोके विरुद्ध इन जड़ यन्त्रोंको प्रतिद्वन्द्वितामें नही लाना चाहिए" (पृ० ४४९)। वे यन्त्र-मात्रके विरोधी कदापि नही थे। उनका कहना था कि "मनुष्य-मात्रके लाभके लिए विज्ञानके जो आविष्कार है, उन सबको मैं अत्यन्त मूल्यवान समझता हूँ।" सच तो यह है कि "सार्वजनिक उपयोगके जो काम मनुष्यके हाथकी मेहनतसे नही हो सकते उनके लिए भारी मशीनोंके उपयोग" पर भी उन्हे कोई आपत्ति नही थी, बशर्ते कि उन मशीनोपर "आधिपत्य सरकारका" हो और "उनका उपयोग केवल लोक-कल्याणके लिए" किया जाये (पृ० २००)।

गांधीजी को इस बातकी बड़ी चिन्ता थी कि जब भारत स्वतन्त्र हो तब उसके पास अपनी एक सम्पर्क-भाषा हो—ऐसी सम्पर्क-भाषा जो जनसाधारण तथा विशिष्ट वर्गोंके बीच भेदकी दीवार न खड़ी करे। इसलिए उन्होने अन्तर्प्रान्तीय व्यवहारकी भाषाके रूपमें उत्तरके आम लोगो द्वारा बोली जानेवाली हिन्दीकी हिमायत की। २०-२३ अप्रैलको इन्दौरमें सम्पन्न अ० भा० हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन (खण्ड ६०)के बाद सम्पर्क-भाषाकी समस्या एक ज्वलन्त प्रश्न बन गई। अधिवेशन ने, गांधीजी के शब्दोमें, "दो महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव" पास किये थे। इनमें से एक में हिन्दीकी ऐसी व्यापक परिभाषा की गई थी जिससे उसमें वह भाषा भी शामिल हो जाती थी "जो लिखी तो उर्दू लिपिमें जाती है, पर जिसे मुसलमान और हिन्दू दोनों ही समझ लेते हैं।" इस प्रस्तावमें यह तथ्य निर्दशित कराया गया था कि "हिन्दी प्रान्तीय भाषाओको नष्ट नही करना चाहती, बल्कि उनकी पूरक बनना चाहती है" (पृ० ३३)।

धर्मान्तरण-जैसी किसी भी चीजको असम्भव मानते हुए उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें घोषणा की, "जिस प्रकार मै खुद अपना धर्म बदलने की कल्पना नही कर सकता,

उसी प्रकार किसी ईसाई या यहूदीसे अपना धर्म बदलने को कहने की सोच भी नहीं सकता। . . . अपने आचरणको अपनी श्रद्धाकी ऊँचाई तक ले जाने में [ही] मेरी सामर्थ्यकी कसौटी हो रही है . . ." (पृ० ४९४)। स्वदेशी और स्वधर्म के सामान्य सिद्धान्तकी दृष्टिसे देखते हुए गांधीजी को यही प्रतीत होता था कि हर व्यक्तिका धर्म उसके लिए "काफी अच्छा" है (पृ० ४९३)। इसलिए उन्हें श्रेयस्कर मार्ग यह लगता था कि "बड़ी-बड़ी और समृद्ध ईसाई धर्मप्रचारक संस्थाएँ . . . अपनी प्रवृत्तियाँ केवल मानव-दयासे प्रेरित सेवा-कार्य तक ही सीमित" रखें और "भारतको या कमसे-कम भारतके भोले-भाले ग्रामीण लोगोंको ईसाई बना लेने" के प्रच्छन्न उद्देश्यको त्याग दें, अन्यथा "वे उसके . . . सामाजिक ढाँचेको ध्वस्त कर देंगे . . ." (पृ० ४९४)।

गांधीजी की बोरसद-यात्रा समापनपर थी कि तभी क्वेटामें भारी भूकम्प हुआ। जैसा व्यापक और भयंकर विनाश हुआ उसे "देखकर मानव-बुद्धि स्तम्भित रह" गई। पलक झपकते पचास हजार लोग जीते-जी जमींदोज हो गये। इस दारुण विपत्तिकी वेलामें भी गांधीजी क्वेटा-वासियोंको सहायता और सान्त्वना देने उस तरह वहाँ नहीं पहुँच सकते थे जिस तरह १९३४ के भूकम्पके वाद विहार-वासियोंकी पुकारपर पहुँचे थे; क्योंकि सरदार पटेल और गांधीजी-जैसे लोगोंको क्वेटामे प्रवेश करने की अनुमति नही थी। किन्तु गांधीजी यह मानते थे कि कुछ ऐसे भी अवसर होते है जब व्यवहारतः सहायता पहुँचाना न पर्याप्त होता है और न सम्भव, जब भयंकर विनाश और विध्वंस हमें हमारी स्थितिका स्मरण कराते हैं, हमें प्रार्थनामें प्रवृत्त होने और विनम्र बनने की प्रेरणा देते हैं तथा आत्म-शुद्धि एवं आत्म-निरीक्षणके लिए तत्पर करते हैं (पृ० १४८)। उनका विश्वास था कि भौतिक विपत्तियाँ व्यक्तियों तथा राष्ट्रों दोनोंके लिए दैवी दण्ड-रूप होती है, और "समझदार मनुष्य" को "विनम्र होकर भगवान्का स्मरण करने" की प्रेरणा देती है (पृ० १७२)। किन्तु इसका मतलब यह नहीं कि ऐसे समयमें प्रार्थना और प्रभु-स्मरण ही मनुष्यके कर्त्तव्यकी इति है। सच तो यह है कि "सच्ची प्रार्थनासे अकर्मण्यता कदापि उत्पन्न नही होती। उससे तो निरन्तर निष्काम कर्म करने के लिए शक्ति तथा उत्साह उत्पन्न होता है" (पृ० १७२)। लेकिन साथ ही वे यह स्वीकार करते थे कि "जिस प्रयत्नके पीछे ईश्वरका आशीर्वाद न हो, वह कितना ही अच्छा क्यों न हो, निष्फल होता है" (पृ० १४८)।

सेवा-कार्यकी ही तरह, अपने आदर्शोंके आचरणमें भी गांधीजी मानव-प्रयत्नोंकी मर्यादासे अवगत थे। उन्हें यह मानने में कोई संकोच नही था कि "साँप, बिच्छू, बाघ और प्लेगके चूहों तथा पिस्सुओंसे" उन्हें डर लगता था। किन्तु इसीलिए वे अपने अहिंसाके उच्चादर्शका त्याग करनेवाले नहीं थे, क्योंकि "जीवन एक उच्चाकांक्षा है। उसका ध्येय पूर्णता अर्थात् आत्म-साक्षात्कारके लिए प्रयत्न करना है। अपनी निर्बलताओं या अपूर्णताओंके कारण हमें अपना आदर्श नीचा नही करना

चाहिए।" इसलिए एक ओर तो उन्होंने महामारी-ग्रस्त बोरसदमें चूहों और पिस्सुओंके विनाशकी अनुमति ही नही, इस कार्यको बढ़ावा भी दिया, लेकिन दूसरी ओर पूर्ण अहिंसा और जीव-मात्रकी अनघ्यता तथा बन्धुत्वमें भी अपनी आस्था दुहराई। श्रद्धा और आचरण के बीच इस विरोधको स्वीकार करते हुए, उन्होंने विनाशके क्षेत्रको सीमित करने और जीवन तथा प्रेमकी परिधिको विस्तृत करने का प्रयत्न किया। उन्हे असफलता भी अवश्य मिलती रही, किन्तु इसकी चिन्ता उन्हे नही थी, क्योकि उनकी "प्रत्येक असफलता" उन्हें "उस सिद्धान्तके पूर्ण आचरणके अधिकसे-अधिक समीप ले जाती थी" (पृ० २०४)।

अपने आदर्शमें न कोई शिथिलता आने देने और न उसका त्याग करने के संकल्पके कारण ही गांधीजी अपने पुत्र हरिलाल गांधीको हृदयसे अपना नही सके और न उनकी पुनर्विवाहकी इच्छाका अनुमोदन कर सके। हरिलाल काफी भटकने के बाद अगस्त १९३४ में गांधीजी के पास लौट आये थे और उन्होंने अपनेको सुधारने की भी आशा दिलाई थी। किन्तु अब वे पुर्नविवाह करना चाहते थे, जिस पर गाधीजी की प्रतिक्रिया इन शब्दोमें व्यक्त हुई, "मुझे लगता है कि ऐसा नही हो सकता है कि वह विवाह करके मेरे साथ रहे। उसका विवाह मै सहन तो कर सकता हूँ, लेकिन उसका स्वागत नही कर सकता, उसे पसन्द नही कर सकता" (पृ० ३९)। और जब आगे उन्हें यह भी लगने लगा कि हरिलालने दरअसल अपनेमें कोई सुधार नही किया है तो उन्होंने नारणदास गांधीको स्पष्ट शब्दोमें लिखा, "रक्त-सम्बन्ध . . . हमें अनीतिकी ओर प्रवृत्त करे, यह नहीं होने देना चाहिए। . . . जहाँ जितना अधिक रक्त-सम्बन्ध हो वहाँ सख्ती भी उतनी ही अधिक बरती जानी चाहिए। ऐसा करके ही हम शुद्ध न्याय कर सकते है" (पृ० २२१)। इस प्रकार पिता-पुत्रके अचिर पुनर्मिलनका दुःखद अन्त हुआ। हरिलालकी भटकन एक बार फिर शुरू हो गई, लेकिन जो कोमल भावनाएँ और हर्षकी अनुभूतियाँ पिताके रूपमें गांधीजी के अन्दर वर्ष-भर पूर्व जाग्रत हुई थी उन्हे उन्होंने पूर्णतः दमित कर दिया और नारणदास गांधीको लिखा, "उसका जो होना होगा सो होगा" (पृ० २६२)।

अपनोंकी चूकोके प्रति गाधीजी के असहिष्णु रुखका परिचय हरिलाल गाधीके पुत्र कान्तिलाल गांधीको लिखे इन शब्दोमें भी मिलता है, "कड़वे शब्दोके पीछे प्रेम भरा था, यह तू नही देख सका तो यह दोष तेरा है या मेरा? अहिंसाका पुजारी होने के नाते मुझे दोष अपना मानना पड़ता है, किन्तु पिता होने के नाते तेरा मानता हूँ" (पृ० ३७)। इस प्रकार अपने आदर्शकी अहिंसाका आचरण गाधीजी के लिए एक सतत संघर्ष था। एक प्रश्नकर्त्ताको उन्होंने निस्संकोच बताया, "यह बात तो नही है कि क्रोध नही आता। बात यह है कि मै क्रोधको प्रकट नही होने देता। धैर्यके गुणका मै अक्रोधके रूपमें अभ्यास करता रहता हूँ, और साधारणतया उसमें मुझे सफलता भी मिली है" (पृ० ४७)। जान पड़ता है, सार्वजनिक जीवनमें गांधीजी ने धैर्यके गुणको पूर्णतः सिद्ध कर लिया था, क्योकि

सम्भवतः अपने अनुभवके आधारपर ही उन्होंने प्रोफेसर मलकानीको निम्न सुझाव दिया होगा, "तुमको जब-तब अनेक मालिकोंसे मिलनेवाली निराशा और झिड़कियोंके बीच भी अपनी शान्ति कायम रखनी होगी और विनोदशीलता बनाये रखनी पड़ेगी। . . . फटकारें सुननी-सहनी पड़ेंगी और उसपर भी कहना पड़ेगा: 'धन्यवाद, श्रीमान्!'" (पृ० ३५३)।

इस खण्डसे सम्बन्धित अवधिमें गांधीजी ने जो एक महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया वह उनके पूर्ण ब्रह्मचर्यके आदर्शके विषयमें था। भारतीय परम्परामें पत्नीके अतिरिक्त किसी भी स्त्रीके साथ पुरुषका सम्पर्क आपत्तिजनक माना जाता रहा है। किन्तु गांधीजी "ऐसे ब्रह्मचर्यमें विश्वास नहीं" करते थे "जिसके निर्वाहके लिए स्त्रीका पुरुषके स्पर्शसे और पुरुषका स्त्रीके स्पर्शसे बराबर बचते रहना आवश्यक हो।" इसलिए आश्रमकी वयस्क लडकियोंके कन्धोंपर हाथ रखकर घूमने में उन्हे कोई दोष दिखाई नहीं देता था। किन्तु जब उन्हें मालूम हुआ कि आश्रमका "एक तेजस्वी छात्र एकान्तमें एक लड़कीके साथ", जो उसके प्रभावमें थी, "तरह-तरहका अमर्यादित व्यवहार करता" था तब वे विचारमें पड़ गये, और अन्तमें उन्होंने अपनी इस आदतको छोड़ दिया, क्योंकि अपने आचरणके समर्थनके लिए कोई इस चीजका एक बहानेकी तरह दुरुपयोग भी कर सकता था। अपने इस निर्णयका स्पष्टीकरण देते हुए गांधीजी ने लिखा, "मेरे हर कामपर हजारों स्त्री-पुरुषोंकी निगाह लगी रहती है, क्योंकि मैं एक ऐसा प्रयोग कर रहा हूँ जिसके लिए लगातार चौकसी रखना जरूरी है। मुझे ऐसा काम करने से बचना चाहिए जिसका औचित्य सिद्ध करने के लिए दलील देने की जरूरत पड़े" (पृ० ४३७)। इस विषयको लेकर आगे गांधीजी के मनमें काफी ऊहापोह चलता रहा।

गांधीजी का ज्ञान और कर्मका समन्वय इतना अधिक मौलिक था कि "या तो यह सही है या वह"—इस प्रकारकी विभेदकारी बुद्धिकी पकड़में वह आता ही नहीं था। जगत्में फैले पापकी समस्याकी चर्चाके दौरान गांधीजी को निरुत्तर करने को सचेष्ट एक वेदान्तीको उन्होने "ग्रामीणका"-सा उत्तर देते हुए कहा, "जगत्में प्रकाश है तो अन्धकार भी है। इसी तरह जहाँ पुण्य है, वहाँ पाप होगा ही।" किन्तु पाप और पुण्य-जैसे भेद तो मनुष्यकी सीमित बुद्धि करती है। "ईश्वरके आगे तो पाप और पुण्य-जैसी कोई चीज ही नहीं है।" वेदान्तकी यह व्याख्या भी कि "जगत् मायारूप है . . ." गांधीजी के अनुसार, "अपूर्ण मानवकी तोतली वाणीमें ही किया गया निरूपण है।" वे ऐसी बातोंमें पड़ते ही नहीं थे। उनका कहना था, "मैं तो, मेरे आगे जो कर्त्तव्य है, उसे करके ही सन्तोष मानता हूँ। जो-कुछ है या रहा है, वह क्यों और कैसे, इन सब प्रश्नोंकी चिन्तामें मैं क्यों पड़ूँ?" मनकी ऐसी वृत्तिका आधार उनकी यह श्रद्धा थी कि "मनुष्य जो-कुछ अच्छा काम करता है, उसमें ईश्वर निरन्तर उसके साथ रहता है।" अपनी मनोवृत्तिकी इस व्याख्याको भी गांधीजी ने "ग्रामवासीका ही निरूपण" बताया (पृ० ४२३-२४)। और यह श्रद्धा कहाँसे प्राप्त होती है? गांधीजी ने इसका समाधान करते हुए लिखा, "श्रद्धा बुद्धिकी पकड़में आनेवाली चीज नहीं है; वह मनःस्थिति है जिसतक हमें उठना, विकास करना होता है। और यह विकास अन्तरसे प्रस्फुटित होता है" (पृ० ३१)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशको तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी है:

संस्थाएँ: साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास एवं सग्रहालय (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐण्ड मेमोरियल ट्रस्ट), नवजीवन न्यास तथा गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; भारत कला-भवन, वाराणसी; आन्ध्र प्रदेश सरकार; उत्तर प्रदेश सरकार; गाधी स्मारक निधि और सग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

व्यक्ति: राजकुमारी अमृतकौर, शिमला; श्री आनन्द टी० हिंगोरानी, इलाहाबाद; श्रीमती एफ० मेरी बार, श्री एल० आर० डूचा, हैदराबाद; श्रीमती एस० अम्बुजम्माल, मद्रास; श्री क० मा० मुंशी, बम्बई, श्री कान्तिलाल गाधी, बम्बई; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्री जयरामदास दौलतराम, नई दिल्ली; श्री जी० एन० कानिटकर, पूना; श्री जी० सीताराम शास्त्री, गुंटूर; श्रीमती तहमीना खम्भाता, बम्बई; श्री नारणदास गाधी, राजकोट, श्री नारायण देसाई, वाराणसी; श्री नारायण जेठालाल सम्पत, अहमदाबाद; श्री परशुराम मेहरोत्रा, नई दिल्ली; श्री परीक्षितलाल ल० मजमूदार, अहमदाबाद; श्री पुरुषोत्तम एल० बाविशी, ग्वालियर; श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली, श्री प्रभुदास गाधी, राजकोट; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड़; श्री बनारसीलाल बजाज, वाराणसी; श्री भगवानजी ए० मेहता, राजकोट; श्री भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या, वर्धा, श्रीमती मनुबहन मशरूवाला, बम्बई; श्री महेश पट्टणी, बम्बई; श्रीमती मीराबहन, आस्ट्रिया; डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, पटना; श्री रामनारायण एन० पाठक, अहमदाबाद; श्री रामस्वामी अय्यंगार, श्री लालचन्द जे० वोरा, श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई; श्रीमती वनमाला देसाई, नई दिल्ली, श्रीमती वसुमती पण्डित, सूरत; श्री वालजी गो० देसाई, पूना, श्रीमती विजयाबहन पंचोली, सनोसरा; श्री शान्तिकुमार मोरारजी, बम्बई, श्री शिवाभाई जी० पटेल, बोचासण; श्री श्रीपाद दा० सातवलेकर, पार्डी तथा श्रीमती सुशीला गाधी, बम्बई।

पत्र-पत्रिकाएँ: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'गुजराती', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'लीडर', 'वीणा' (श्रद्धांजलि अक), 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

पुस्तकें: 'गांधी ऐण्ड द अमेरिकन सीन', 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने', 'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने', 'बापुनी प्रसादी', 'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष : १९३२-४८', 'बापूज़ लेटर्स टु मीरा' एवं 'महात्मा गांधी और जबलपुर'।

अनुसन्धान व सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इण्डियन कौंसिल ऑफ़ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग (रिसर्च ऐण्ड रेफरेंस डिवीजन), राष्ट्रीय अभिलेखागार और प्यारेलाल, नई दिल्ली, हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटो-नकल तैयार करने में मदद देने के लिए हम सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग (नई दिल्ली)के आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजी के स्वाक्षरोमें मिली है, उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलोको सुधारकर दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करने में अनुवादको मूलके समीप रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनाने का भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारने के बाद अनुवाद किया गया है, और मूलमें शब्दोके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखने की नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारण में संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजी ने अपने गुजराती लेखोमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकों में दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अंश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोडकर साधारण टाइप में छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजी के कहे हुए नही हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषण और भेंट की रिपोर्टोंके उन अंशोमें, जो गाधीजी के नही है, कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है, और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ, वहाँ प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

इस ग्रंथमालामें प्रकाशित प्रथम खंडका जहाँ-जहाँ उल्लेख किया गया है वह जून १९७० का संस्करण है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदावादमें उपलब्ध सामग्रीका; 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका; 'एम० एम० यू०' मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिटका; 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देने के लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट भी दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. पत्र : रा० रं० दिवाकरको

२५ अप्रैल, १९३५

हाँ, यदि हम अहिंसाकी कला सीखना चाहते हैं, तो हमें कड़ेसे-कड़े आदेशोको[1] भी मानना पड़ेगा। और इसीलिए हमें प्रफुल्लित मन और विवेकशीलताके साथ उनको मानना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

२. पत्र : अगाथा हैरिसनको

वर्धा
२५ अप्रैल, १९३५

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा पत्र मिला। 'हरिजन' की अतिरिक्त प्रतियाँ तुम्हें भेज दी जायेंगी। लन्दनके दक्षिण-पूर्वमें हुई सभाका तुम्हारा वर्णन मनोरजक है।

मुझसे तुम दूसरी आत्मकथा लिखनेकी उम्मीद मत रखो; हाँ काफी लम्बे अर्सेके लिए मुझे जेल भिजवा दो और वहाँ बैठकर उसे लिखनेकी आवश्यक अनुमति भी दिला दो तो दूसरी बात है। सामग्रीका सकलन तथा प्रकाशन अवश्य ही किया जा सकता है। महादेव इस कामको सबसे अच्छी तरह कर सकता है। लेकिन उसपर कामका बोझ बहुत अधिक है। फिर भी मैं देखूंगा कि क्या-कुछ करना सम्भव है।

उम्मीद है कि एन्ड्रयूज अपनी बहनोंके पास पहुँच गये होंगे। हाँ, यह अच्छा ही है कि वे वहाँ दो सप्ताहके लिए रुकनेकी सोचते थे। उनके तारके अनुसार, वे इस पत्रके तुम्हारे पास पहुँचनेके पहले ही रवाना हो चुके होंगे। अगर वही हों, तो उनसे कह देना कि वे चाहें तो कुछ समय और वहाँ रुक सकते हैं। फिलहाल मैंने अपने-आपको खुलेमें जीवन बितानेके लिए राजी कर लिया है।

मीरा सुबहसे लेकर शामको काफी देरतक बगीचेके काममें ही खोई रहती है। अभी कुछ समयतक उससे पत्रकी अपेक्षा मत रखना। देख ही रही हो कि हम ग्रामवासी बननेकी कोशिश कर रहे हैं, लेकिन अभी इस लक्ष्यसे बहुत दूर हैं। हम सबके बीच वही एक ऐसी है जो जिस कामको भी लेती है, उसमें प्राणपणसे जुट जाती है।

१. जिलाधीशके आदेशसे अकोला-जिलेमें उनका प्रवेश वर्जित कर दिया गया था।

मैं जान-बूझकर एन्ड्रयूजको कुछ भी नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि मैं सोचता हूँ कि इस पत्रके तुम्हें प्राप्त होनेसे पूर्व ही वे रवाना हो चुके होंगे।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४८९) से।

३. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
२६ अप्रैल, १९३५

चि० मेरी,

अगर तुमने मुझसे कह दिया होता कि कितनी राशि भेजनी है तो उतनी मैं तुम्हें भेज चुका होता। लेकिन वहाँ तुम मित्रोंके बीच ही रह रही हो। बिल आने दो, हर हालतमें उनका भुगतान कर दिया जायेगा। अगर तुम चाहती हो कि मैं रुपये भेज दूँ तो लिख देना।[1]

मैंने अपने तारमें तुम्हें लिखा था कि मैं बड़ी आसानीसे बम्बई या नागपुरमें तुम्हारी जाँचका प्रबन्ध करा सकता हूँ। मेरा खयाल है कि वर्धामें भी उसकी मशीन है। लेकिन अगर वहाँके मित्रोंकी सलाह कुछ दूसरी हो, तो उसीपर अमल करना।

हम सबको डंकनसे[2] मिलकर खुशी हुई। वह अधिक स्वस्थ नहीं दिखाई देता। वह यहाँ दो दिन रुकेगा।

चन्द्रा स्वार्थी है। वह ऐसे फर्शपर चलना पसन्द करती है जिसपर फिसलनेका खतरा ही न हो। और उसको यह देखनेमें बड़ा मजा आयेगा कि मैं फिसलकर फर्शपर गिरूँ और मेरे माथेपर गूमड़ा भी पड़ जाये। उससे कह देना मैं उसकी किसी चालमें आनेवाला नहीं।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०३६) से। सी० डब्ल्यू० ३३६६ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

१. एफ० मेरी बार अस्वस्थ हो गई थीं। उनके इलाजका सारा खर्च गांधीजी उठा रहे थे।
२. डंकन ग्रीनलीज।

४. पत्र : अमृतकौरको

२६ अप्रैल, १९३५

प्रिय अमृत,

तुम्हारा पत्र मिला।

तुम जितनी जल्दी शिमला चली जाओ, उतना ही अच्छा। तुम जो भी कर सको, वहीसे करना। अपनी मर्यादा जान लेना अच्छा रहता है और स्पष्ट ही तुम दोनोंको जलवायु-परिवर्तनकी जरूरत भी है।

तुम्हारा सूत जरूर इस्तेमाल किया जायेगा। इस गतिसे तुम्हें अभी कई महीने तक सूत कातना होगा, तब जाकर बा को एक साड़ी और मुझे एक कटि-वस्त्र मिल पायेगा। लेकिन वह इस समय सोचनेकी बात नहीं है। वह सब तो यहाँ तुम्हारे दूसरी बारके प्रशिक्षणके बाद ही होगा। बड़े खेदकी बात है कि सारे जालन्धरमें तुम्हें ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिल सका जो इसकी सभी विधियाँ जानता हो। इसपर गौर करो तो लगता है कि तथाकथित सुसंस्कृत वर्गोंमें कताईके कामकी प्रगति बहुत ही कम हुई है।

दलीपसिंह जब हरिजनोंके बीच जमकर काम करने लगेगा, तब देखेगा कि उनके अन्दर जीविकोपार्जनका कौशल तो पर्याप्त है, लेकिन एक श्रमिकके नाते उन्हें उतनी जल्दी काम नहीं मिलता जितनी जल्दी दूसरोंको, और दस्तकारोंके रूपमें उनको दस्तकारीकी अपनी तैयार वस्तुओंके लिए खरीदार ही नहीं मिलते। इसमें शक नहीं कि चमड़ा कमानेके हरिजनोंके तरीकेमें सुधार किया जा सकता है और किया जाना चाहिए। लेकिन यह तभी होगा जब वह जमकर काम करने लगेगा। उसको हमारे संगठनके एक प्रतिनिधिके रूपमें कार्य करनेकी जरूरत नहीं है। वह स्वतन्त्र रूपसे अपना कार्य कर सकता है, और अपनी आवश्यकतानुसार सभी तकनीकी सहायता हमसे, हमारी सामर्थ्यके अनुसार, पा सकता है।

वर्षाने इन्दौरमें हमारे काममें बाधा तो उत्पन्न की थी, पर अधिक नहीं। सहायक कार्यक्रमके रूपमें आयोजित ग्राम-शिल्पी प्रदर्शनीको इससे हानि पहुँची। महिलाओंकी सभा भी बड़े अच्छे ढंगसे सम्पन्न हो गई। हजारों महिलाएँ उसमें सम्मिलित होने आईं; अधिकांश शायद अपने जीवनमें पहली बार इस प्रकारके आयोजनमें सम्मिलित हुई थीं।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

पत्र लौटा रहा हूँ।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५३०) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६३३९ से भी

५. पत्र : नारणदास गांधीको

२६ अप्रैल, १९३५

चि० नारणदास,

इसके साथ मैथ्यूका पत्र है। मैंने उसे लिखा है कि उसे फिलहाल तो ६५ रुपयेकी आशा न रखनी चाहिए। मैंने जितना कहा है उससे ज्यादा नहीं दिया जा सकता। और अभी तो उसे यहाँ आकर मजदूरकी तरह ही काम करना होगा। उसमें वह योग्य सिद्ध हुआ और परिस्थितियाँ अनुकूल हुईं तो विचार किया जायेगा। यह भी कहा है कि यदि यहाँ उसका कोई पैसा बाकी हुआ तो वह उसे भेज दिया जायेगा अन्यथा रेल-भाड़ेका पैसा भी उसे वहीसे जुटाना होगा।

एक लाख रुपयेका इनाम किसीको दिया नहीं गया, किन्तु हम जैसा चाहते हैं वैसा चरखा मिला तो यह इनाम दिया जा सकता है। निर्णयकी नकल अभी मेरे पास नही आई। उसमें मुख्य मुद्दे तीन हैं : इसे 'हैंडी' नही कहा जा सकता। 'हैंडी' तो उसे ही कह सकते हैं जो इतना छोटा हो कि गाँवके घरोंमें आसानीसे बैठाया जा सके, और जिसे रोज़ उठाकर यहाँ-वहाँ रखा जा सके। फिर, यह ऐसा है कि १५० रुपयेमें नहीं बन सकता और यह सवाल भी है कि क्या समय-समयपर उसकी मरम्मत करनी होगी? और क्या मरम्मत करवानेका खर्च प्रतिवर्ष उसकी कीमतके ५ प्रतिशतसे भी अधिक होगा? विनोबा और काकासाहबने इस [यन्त्र]के खिलाफ विशेष आपत्तियाँ उठाई हैं उनकी नकल मैं इसके साथ भेज रहा हूँ। यदि केशू[1] उन दोषोंको दूर कर सके तो करे। कालेका यन्त्र मेरे पास नहीं है। वह अहमदावाद भेजा गया था। मैंने उसे वापस मँगवाया है। लेकिन शायद वापस नही आयेगा और इसलिए मैं उसे नही देख पाऊँगा। केशू वहाँ रहकर अपना प्रयोग करता रहे, यह अच्छा है। तुम्हारे ही पास रहे। प्रयोगोंमें होनेवाले खर्चकी सीमा बाँध ले। यदि वह मेरे पास आना चाहता हो तो अवश्य आ जाये। किन्तु मैं उसे ज्यादा न बता सकूँगा और न इस काममें उसका कोई मार्गदर्शन कर सकूँगा। इस प्रयोगके बारेमें कहनेके लिए और कुछ नहीं रह जाता। उसका प्रयोग एक लाखके इनामके योग्य न हो तो भी वह जिन सुधारो की खोज करेगा वे तो हमारे लिए उपयोगी होंगे ही।

१. केशव गांधी, मगनलाल गांधीके पुत्र।

पूनियाँ बनानेका यन्त्र भी यदि सुसम्पूर्ण हो गया हो तो यह भी बहुत अच्छी बात है। इस यन्त्रमें उसने कहाँतक प्रगति की है, इसका वर्णन वह मुझे विस्तारसे लिख भेजे। इस विषयपर मुझे जो कहना था वह सब मैंने यही कह दिया है इस-लिए अब मैं उसे अलगसे पत्र नही लिख रहा हूँ।

शालाके विषयमें अब तुम्हें जो भी व्यवस्था करनी हो सो करना। यदि शाला हमारे कामके लिए उपयोगी टेक्निकल इंस्टीट्यूट बन जाये तो यह उत्तम होगा। भाषाका ज्ञान भिन्न दृष्टिकोणसे दिया जाना चाहिए। अभी वह साहित्यकी दृष्टिसे दिया जाता है। हम तो यह शिक्षा भाषा सिखानेकी हदतक ही दें। भाषाओंमें गुजराती, हिन्दी और अंग्रेजी ही रखें। इनके साथ यदि सरल संस्कृत भी रख दी जाये तो पर्याप्त है। उर्दू लिपि सिखानी चाहिए। ये सब विषय आसान ढंग से सिखाये जाने चाहिए। विद्यार्थियोको उद्योगका शिक्षण देते हुए इतना किया जा सकता है। और उद्योग ऐसा होना चाहिए कि जिनसे बालक अर्थोपाजन कर सके। फीस न रखी जाये। फीसके बजाय बालक जो उद्योग करें वही उनकी फीस मानी जाये। एक निश्चत सीमाके बाद अपने उद्योग से वे जो-कुछ उत्पादन करें वह विद्यार्थियोका माना जाना चाहिए। फीसमें सब खर्चोंका समावेश होना चाहिए।

ये सारे परिवर्तन तुम बिना किसी आडम्बरके या घोषणाके धीरे-धीरे कर सकते हो। सम्भव हो तो शिक्षक और कार्यकर्त्ता वही ढूँढ निकालो। कोई ज्यादा वेतन लेनेवाला न हो। कुसुम,[1] लीलावती[2] आदि जो भी लोग सीखकर तैयार हो गये है वे ही तुम्हारे कार्यकर्त्ता है। केशू इसमें यदि तुम्हारी मदद करे तो क्या कहना! इस सुझावपर विचार करना। मेरे साथ और विचार-विमर्श करना हो तो करना।

टाइटसके[3] कामके निरीक्षणकी बात जल्दी निपटा देना।

[पुनश्च :]

बापूके आशीर्वाद

इसके साथ यन्त्र-चरखाके विषयमें विनोबाकी राय भेज रहा हूँ। रघुनाथ शास्त्री को लिख रहा हूँ।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० / २) से। सी० डब्ल्यू० ८४३९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. कुसुम गांधी।
२. लीलावती आसर।
३. आश्रम दुग्धशालाके प्रबन्धक, टी० टाइटस।

६. पत्र : बलवंतसिंहको

[२६ अप्रैल, १९३५के पश्चात्][1]

चि० बलवंतसिंह,

मैंने तेहकीकात की! तुमारी बात सही है। मुझको तो बिना पूछे हुए जो खबर मिली उससे दुःख हुआ। अब महादेवको पूछने पर पता चलता है कि कांतिने समजाया था। यहांसे जानेके पहले तुमने कह रखा था? इतना तो अभी भी है कि वे खानेको तैयार तो थे ही।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८७५) से।

७. चर्चा : जयकृष्ण भणसालीसे[2]

[२७ अप्रैल, १९३५ के पूर्व]

गांधीजी : बोलो, कल तुमने कितना सूत काता?

भणसाली : जरा भी नहीं, मुझे दुःख है।

गां० : पर, मेरा तो ऐसा खयाल था कि तुम थोड़ा-थोड़ा कातने लगे हो?

भ० : हाँ, उस दिन पचासेक गज मुश्किलसे काता होगा। बस।

गां० : तुम मेरे लिए एक कटि-वस्त्र बना दो तो कितना अच्छा हो! . . . अगर एक जोड़ी बना दो तो मुझे बहुत खुशी होगी, लेकिन एकसे भी काम चल जायेगा।

भ० : यह मेरा परम सौभाग्य होगा कि मैं आपके कटि-वस्त्रके लिए सूत कात सकूं। पर आप मेरी मनःस्थिति जानते ही हैं।

दूसरे दिन फिर इसी विषयपर बातें हुईं। बालोचित भोलेपनके साथ भणसालीजीने गांधीजी से पूछा, "आप कटि-वस्त्र नहीं चाहते हैं, बापू। मैं समझ गया, आप तो मुझसे कुछ काम कराना चाहते हैं। है न यही बात?"

१. बलवन्तसिंह इस तारीखको मगनवाड़ी छोड़ चुके थे।

२. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

गां० : तुम्हारा खयाल ठीक है। पर तुम्हें जब काम करना ही है, तो फिर मेरे लिए यह काम क्यो न करो?

भ० : मुझे काम करना ही है तो मुझसे आप कोई दूसरा काम क्यों नहीं लेते? मुझमें वह पात्रता ही कहाँ कि आपके प्रीत्यर्थ मैं यह पवित्र काम कर सकूँ।

गां० : पर इसका मुझे विश्वास है कि मैं जिनके काते हुए सूतका कपड़ा पहनता हूँ, वे तुमसे किसी भी कदर अधिक पवित्र नहीं हैं।

भ० : नहीं बापू। मैं तो तुच्छातितुच्छ हूँ, उनके चरणोंकी धूलसे भी तुच्छ हूँ मैं।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-४-१९३५

८. बढ़ता हुआ दुराचार?

सनातन-धर्म कॉलेज, लाहौरके प्रिंसिपल लिखते हैं :

इसके साथ मैं जो कतरन और विज्ञप्तियाँ वगैरा भेज रहा हूँ उन्हें देखनेकी आपसे प्रार्थना करता हूँ। आपको सारी बातका पता इन कागजोंसे ही लग जायेगा। यहाँ पंजाबमें युवक हितकारी-संघ बहुत उपयोगी काम कर रहा है। विद्वत्-समाज एवं अधिकारी-वर्गका इसकी ओर ध्यान आकृष्ट हुआ है, और बालकोंके प्रबुद्ध माता-पिताओंने भी संघमें दिलचस्पी दिखाई है। बिहारके पण्डित सीतारामदासजी इस आन्दोलनके प्रेरणा-स्रोत हैं; इस आन्दोलनके प्रश्रयदाताओंमें यहाँके अनेक प्रतिष्ठित सज्जनोंके नाम गिनाये जा सकते हैं।

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि कोमल वयके बालकोंको फँसानेका यह दुराचार भारतके दूसरे भागोंकी अपेक्षा इधर पंजाब और उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्तमें ज्यादा है।

क्या आप कृपा कर 'हरिजन' अथवा किसी दूसरे अखबारमें लेख या पत्र लिखकर इस बुराईकी तरफ देशका ध्यान आकर्षित करेंगे?

१. इसके अन्तमें महादेव देसाई लिखते हैं : "इसके दूसरे दिन काकासाहब-जैसे पुराने साथियोंने प्रयत्न किया। . . . पर भणसाली बराबर अपनी अयोग्यता बताते रहे। काकासाहबने कहा, 'मान लो कि बापू एक गिलास पानी लानेके लिए किसीसे कहें और हम सबके-सब उनसे यह कहने लगें कि बापू, हमें खेद है, हम अपवित्र मनुष्य आपकी कोई सेवा करने योग्य नहीं, तो फिर बापूका क्या हाल होगा?' काकासाहबका यह निशाना सीधा बैठ गया। भणसालीने लिखकर दिया (क्योंकि वे बोलते केवल बापूसे ही हैं) 'ठीक है, मैं काता करूँगा। भूल ही करनी है तो ऐसी क्यों न करूँ जिसमें कोई जोखिम न हो।' और अब वे नियमसे कात रहे हैं।"

इस अत्यन्त नाजुक प्रश्नके सम्बन्धमें, बहुत दिन हुए, युवक-संघके मन्त्री ने मुझे लिखा था। उनका पत्र आनेपर मैंने डॉ० गोपीचन्दके[1] साथ पत्र-व्यवहार शुरू किया। और उनसे यह मालूम हुआ कि संघके मन्त्रीने जो बातें अपने पत्रमें लिखी हैं वे सब सच्ची हैं। लेकिन मुझे यह स्पष्ट नहीं सूझ रहा था कि इस प्रश्नकी 'हरिजन' या किसी दूसरे पत्रमें चर्चा करूँ या नहीं। इस दुराचारका मुझे पता था, मगर मुझे इस बातका विश्वास नहीं था कि अखबारोंमें इसकी चर्चा करनेसे कोई लाभ हो सकेगा या नहीं। विश्वास अब भी नहीं है। किन्तु कॉलिजके प्रिंसिपल साहबने जो प्रार्थना की है उसकी मैं अवहेलना नहीं करना चाहता।

यह दुराचार नया नहीं है। यह बहुत दूर-दूर तक फैला हुआ है। चूँकि उसे गुप्त रखा जाता है, इसलिए वह आसानीसे पकड़में नहीं आ सकता। जहाँ विलासपूर्ण जीवन होगा वहाँ यह दुराचार होगा। प्रिंसिपल साहबके बताये हुए किस्सेसे तो यह प्रकट होता है कि अध्यापक ही अपने विद्यार्थियोंको भ्रष्ट करनेके दोषी हैं। बाड़ जब खुद ही खेतको चर जाये तो फिर रखवालीकी आशा किससे करें? बाइबिलमें कहा है कि नमक जब खुद अलोना हो जाये तब कौन-सी चीज उसे नमकीन बना सकती है?

यह प्रश्न ऐसा है कि इसे न तो कोई जाँच-कमेटी हल कर सकती है, न सरकार ही। यह तो एक नैतिक सुधारका काम है। माता-पिताओंके दिलमें अपने उत्तरदायित्वका भाव पैदा करना चाहिए। विद्यार्थियोंको शुद्ध-स्वच्छ रहन-सहनके घनिष्ठ सम्पर्कमें लाना चाहिए। सदाचार और निर्विकार जीवन ही सच्ची शिक्षाका आधार-स्तम्भ है, इस विचारका गम्भीरताके साथ प्रचार करना चाहिए। शिक्षण-संस्थाओंके न्यासियोंको अध्यापकोंके चुनावमें बहुत ही सावधानी बरतनी चाहिए, और अध्यापकोंको चुननेके बाद भी उनके आचरणका ध्यान रखा जाना चाहिए। मैंने तो थोड़े-से उपाय बतलाये। इन उपायोंके सहारे यह भयंकर दुराचार निर्मूल न हो तो कमसे-कम काबूमें तो आ ही सकता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-४-१९३५

१. डॉ० गोपीचन्द भार्गव, पंजाबके कांग्रेसी नेता और बादमें मंत्री।

९. पत्र : जी० वी० गुरजलेको

वर्धा
२७ अप्रैल, १९३५

प्रिय गुरजले,[1]

अपनी पत्नीसे कुछ गोपनीय मत रखो। भली-भाँति समझ लो कि उसके प्रति वफादारी रखना ही तुम्हारा सबसे अचूक कवच है। तुम अवश्य विजयी होगे।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३८१) से।

१०. पत्र : जमनालाल बजाजको

२७ अप्रैल, १९३५

चि० जमनालाल,

कमलनयन[2] यहाँसे इलाहाबादकी ओर रवाना हुआ है। मैंने . . .[3] को लिखा है कि अगर वह यहाँ आ जाये तो अच्छा हो। सम्बन्ध जुड़नेके पहले मैं उससे मिल लूँ। रामकृष्ण[4] मेरे साथ इन्दौर आया था। वहाँ उसे दो-तीन दिनके लिए गुलाबने रोक लिया है। उज्जैन और आसपासके अन्य स्थान देख लेगा। आज उन दोनोको आना चाहिए।

प्रभावतीके[5] नाम ब्रजकिशोर बाबूका[6] पत्र है। उन्होंने लिखा है कि जब वे कहें तब बिहार जाये। इसलिए सम्भव है, छुट्टीके दिनोंके अलावा भी जाना पड़ जाये। प्रभावतीने लिखा दिया है कि जब वे बुलायेंगे तब जानेके लिए तैयार रहेगी।

चौधरी यहाँ आया है। . .[7] और तुम्हारे बीच क्या बात हुई, मुझे पता नही है। उसके तथा बालुजकरके कहनेसे मैं समझा हूँ कि उसकी पत्नीको सूतिका-गृहका काम करनेके लिए तुम उसे सौ रुपये देनेको तैयार हो। इस सम्बन्धमें तुम्हारे साथ मेरी बात हुई हो, ऐसा याद नहीं है। चौधरीने मुझसे कहा था, यह याद है।

१. भिक्षु निर्मलानंदके नामसे भी जाने जाते हैं।
२ और ४. जमनालाल बजाजके पुत्र।
३. नाम नहीं दिया जा रहा है।
५ जयप्रकाश नारायणकी पत्नी।
६. प्रभावतीके पिता।
७. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

इस वातके आधारपर उसकी पत्नीने पूनाके सेवा-सदनसे त्याग-पत्र दे दिया। चौधरी यहाँ आ गया है। अब उसकी पत्नी आनेवाली है। वालुंजकरके नाम लिखे तुम्हारे कार्डसे ऐसा मालूम होता है कि तुमने कोई निश्चय नहीं किया और यह कि इस बहनको तुम पहचानते भी नहीं हो। अब इस सम्बन्धमें तुम्हारी क्या इच्छा है, सो लिखना। फिलहाल उसकी पत्नीको बगीचेमें रखा जा सकता है। . . .[1] को कदाचित् न लिया जा सके। सूतिकागृह तो बनवाना पड़ेगा और वह बगीचेमें बनवाया जा सकता है या नहीं, इसपर विचार करना पड़ेगा। यदि इस बहनको रखना हो तो प्रसूतिके लिए या तो पुराने बँगलेका ऊपरका कोई हिस्सा देना पड़ेगा या नये बँगलेका वह हिस्सा, जिसमें तुम रहते हो। तबतक पहले यह बहन सामान्य केस लोगोंके घरोंमें जाकर देखे, बहनोंकी दवा करे और गाँवकी बहनोंसे मिले आदि-आदि। सूतिका-गृह शुरू करनेके लिए तो खाटों आदिके लिए भी खर्च करना चाहिए। यह सब तो तुम यहाँ आओ और इसपर विचार करो, तभी होगा। मूल बात तो यह है कि इस बहनको रखना है या नहीं। चौधरीको सौ रुपये उद्योग संघसे नहीं दिये जा सकते। संघ तो उसे ज्यादासे-ज्यादा २५) मासिक दे सकता है; क्योंकि इसका महत्त्व हमारे हाथ-कागजके प्रयोग जितना ही हो सकता है।

कमलासे[2] मिलनेके लिए कुछ समयके लिए बम्बई हो आऊँगा। रास्तेमें उससे मिलनेके लिए जाना मुझे मुश्किल मालूम होता है।

मदालसा[3] वहाँ पहुँची होगी। मोटर-रेलका कुछ समयके लिए त्याग करो, वह मुझे अच्छा लगेगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९६५) से।

११. पत्र : लीलावती आसरको

२७ अप्रैल, १९३५

चि० लीलावती,

मुझे सफर तो करना ही नहीं है। शायद बोरसद जाना पड़े। मईके आरम्भमें तो मैं यहीं रहूँगा।

यहाँ मेरे साथ बगीचेमें रहना होगा। कोठरी नहीं है। हम लोग बरामदेमें रहते हैं। कोठरी सामान रखने-भरके लिए काफी है। यह समझकर ही आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६८१) से।

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

२. कमला नेहरू, जो डॉक्टरोंके सुझावपर २३ मईको यूरोपके लिए रवाना होनेवाली थीं।

३. जमनालाल बजाजकी कन्या।

१२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२७ अप्रैल, १९३५

भाई घनश्यामदास,

खुर्जाके शर्माका नाम तो तुमको मैंने दिया है। वह नैसर्गिक उपाय थोडा जानता है। मैं उसे वर्षोंसे पहचानता हूं। उसका इरादा बेटलक्रीक में जाकर अनुभव लेनेका है और वादमें यूरोपके नैसर्गिक दवालय देखनेका। उसने इसके लिये १॥ वर्षकी मुद्दत बना रखी है। वह त्यागी है, हुशियार है। कुछ विचित्र प्रकृतिका है। सेवा भाव खूब भरा है। अपनी इस्पीताल रखता था। सो फूक दी है, किताबें छपाई थी वह भी जला दी क्योंकि उसमें अनुभव-ज्ञान कम था। जो रुपये मुझे इस वर्षके लिये देनेका तुमने इरादा कर रखा है उसमेंसे खर्च निकालकर शर्माको अमरीका-यूरोप भेजनेकी इच्छा है। अगर इसमें तुम्हारी सम्मति हो तो तलाशकर मुझे बताइये कि बेटलक्रीक जानेका क्या खर्च होगा। किस रास्तेसे जाना सुभीता होगा? वह तो थर्ड या डेक जो मिलता होगा वही पेसेज लेगा। गरीबीसे रहनेका खर्च वहां कितना लगता है। बेटलक्रीकमें विद्यार्थीको लेते हैं? उसका जापानके रास्तेसे जाना ठीक होगा क्या?

तुमारा शरीर अब कैसे रहता है?

मैंने हिंदी साहित्य-सम्मेलनका बोज उठा लिया है सो देखा होगा।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ८००९) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१३. पत्र : हीरालाल शर्माको

२७ अप्रैल, १९३५

चि० शर्मा,

कैसी बात? छोटी ही चीज़ थी उसमें परिणाम बड़े भरे थे। तुमारी बातपर मैंने ध्यान दिया था। तुमसे उठ सके उससे ज्यादा बोज था। इस कारण तुमको मददकी आवश्यकता थी। यही मेरा दुःख। हम तो गरीब लोग हैं। हमारे पास इतना बोज क्यों? तुमारे साथ तो एक किताब, एक कम्बल, एक गमछा, एक लोटा, एक कटोरा, एक चद्दर, धोती, कुरता और टोपीके सिवाय और कुछ होना नहीं चाहिये था। उससे अधिक क्यों लाये? लाये तो चुपकीसे एक हेलकरीको बुलाकर जाना था।

अथवा जैसे मैंने कहा ज्यादा चीज़ थी वह छोड़ जाना था। न भगवानजी को आना था न किशोरप्रसादको। दोनों काममें थे लेकिन दोनों सामान उठानेके लिये गये। किशोरप्रसादके नाम खत था सो तो अलग बात है। तुमारे दुखी होनेका तनिक भी कारण नहीं था। शिक्षा पानेका था। जब भी पाये हो तो यह हादसा भले ही हुआ। मेरा खत चला गया है।[1]

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तुमारा खत वापिस जाता है।

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह. वर्ष, पृ० १५६-५७ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

१४. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

[२८ अप्रैल, १९३५ के पूर्व][2]

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला। उसे पढ़कर टाइटसको तार किया है कि तुरन्त तुम्हें चार्ज सौंपें, तथा नारणदासके आनेतक वहाँ रुकें, और उसके बाद यहाँ आयें।

मैंने उन्हें पत्र भी लिखा है। तुम्हें उसकी प्रामाणिकताके बारेमें सन्देह है क्या? हो सके तो मेरा उसे निवाह ले जानेका इरादा है। अतः तुम मेरा मार्गदर्शन करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वनमालाकी[3] तबीयत कैसी है? तुम्हारी तबीयत कैसी है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०७७) से।

१. साधन-सूत्रमें हीरालाल शर्मा बताते हैं कि पत्र बैटल क्रीकके डॉ० के० एच० केलॉगको लिखा गया था।

२. टाइटसके उल्लेखसे; देखिए अगले दो शीर्षक भी।

३. नरहरि परीखकी पुत्री।

१५. पत्र : नारणदास गांधीको

वर्धा
२८ अप्रैल, १९३५

चि० नारणदास,

जीवनलाल आदि शालाके सम्बन्धमें मुझसे जरूर मिल जायें। मै बाहर गया तो थोड़े ही दिनोंके लिए जाऊँगा। केवल बोरसद जानेकी बात वल्लभभाई की इच्छापर निर्भर है। गया तो १५ मईके बाद ही जाऊँगा।

थरपारकरका पैसा तो जैसा तुमने लिखा है उसी तरह बाँट दिया गया है। वह पैसा तुम जिस खातेसे निकालना चाहो निकाल लेना।

मैथ्यूके विषयमें मै तुम्हें लिख चुका हूँ। टाइटसको साबरमतीसे मुक्त कर दिया गया है। नरहरिको उसकी शक्तिमें बिलकुल विश्वास नही है। मैंने उसे यहाँ बुलाया है; आयेगा तो रखूंगा और उसकी जाँच करूँगा। तुम उसके हिसाबकी जांच कर ही आना। केशूका पत्र स्वच्छ मनसे लिखा गया है। उसे ३०० रुपये और दे देना। लेकिन अब सीमा निर्धारित करना। उसका पत्र अच्छा है।

जमनाको[1] लिखे हुए पत्रमें मैंने भापसे भोजन पकानेके विषयमें संकेत किया था। यह सुझाव सावधानीसे विचार करने योग्य है। हम यहाँ किस तरह करते है यह तुम्हें कनु बतायेगा। यह बहुत आसान है और बहुत सस्ता पड़ता है। नये बरतनोकी कोई जरूरत नही होती। ब्राह्मण लोग क्यो आयेंगे? जिस तरह भंगीका कोई धन्धा नही होता उसी तरह रसोइयेका भी नही हो सकता। ब्राह्मण ही रसोइया होना चाहिए यह बात अज्ञानजन्य है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० / २) से। सी० डब्ल्यू० ८४४० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. नारणदास गांधीकी पत्नी।

१६. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

२८ अप्रैल, १९३५

चि० नरहरि,

टाइटसने चार्ज दे दिया होगा।[1] न दिया हो, तो मुझे तार करना। मैं उसे फिर तार करूँगा। उसने मेरा पत्र तुम्हें दिया होगा।

गोशालाको सफल बना सको तो समझूँगा, तुमने बड़े महत्त्वका काम पूरा किया।

अपनी नाकका इलाज करना। मुझे लगता है, सादे उपचारसे ठीक हो जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तुमने यहाँसे साड़ियाँ और खादी क्यों मँगवाई है? यह मुझे तो ठीक नहीं लगता। बाकी बातें महादेव लिखेगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०७६) से।

१७. पत्र : जमनालाल बजाजको

२८ अप्रैल, १९३५

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

मदालसा चाहे तो उबाला हुआ दूध पिये और हजम हो तो रोटी भी खाये। अपने शरीरको सँभाल रखकर जो चाहे वह खाये; परंतु चार बारसे अधिक नहीं। बीचमें भी कुछ नहीं। यह समझमें आ सकता है कि वह कसरत करेगी तो भोजनका परिमाण बढ़ेगा।

क्या कानका मवाद बन्द हुआ? राजेन्द्रबाबू और राजा[2] आज आ गये। राजा बहुत थक गये हैं, इसलिए अब वह जा रहे हैं।

१. देखिए पिछले दो शीर्षक भी।
२. चक्रवर्ती राजगोपालाचारी।

प्रोफेसर भी आ गये।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

प्यारेलालके विषयमें तारादेवीको लिख चुका हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९६६) से।

१८. पत्र : मदालसा बजाजको

२८ अप्रैल, १९३५

चि० मदालसा,

तेरा पत्र मिला है। आहारके बारेमें कल तार दूंगा। स्वास्थ्य सुधारना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३१६

१९. पत्र : मनु गांधीको

२८ अप्रैल, १९३५

चि० मनुड़ी,[1]

ठीक है, अब तू मुझे पत्र लिखना भी बन्द कर दे। बम्बई जानेके लिए मेरी अनुमति चाहिए ही, तो वह तो है ही; बशर्ते मौसीकी[2] भी यही इच्छा हो।

तू सुखी रहे, और भली बने तो मेरा काम हो गया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५४१) से, सौजन्य : मनुबहन मशरूवाला

१. हरिलाल गांधीकी पुत्री।
२. बलीबहन अडालजा।

२०. पत्र : विजया गांधीको

२८ अप्रैल, १९३५

चि० विजया,[1]

कल जमनाका पत्र मिला। उससे मालूम हुआ कि तू अच्छी तरह बीमारीसे पार पा गई है। अब स्वस्थ रहनेकी कला सीख ले। खाना दवा समझकर खाना चाहिए, स्वादके लिए नहीं। फैक्टरीकी शक्कर तो खानी ही नहीं चाहिए। रोज मेथी-जैसी किसी भाजीके कोमल पत्ते (की कोंपलें) भोजनके साथ खानी चाहिए। नारंगी, अंगूर-जैसे रसभरे फल खाने चाहिए। साँस लेना सीखना चाहिए। जितना बने, खुली हवामें रहना चाहिए।

पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

चि० विजयाबहन
मार्फत श्री हरकचन्द मोतीचन्द
चोरवड
सोनगढ़ रियासत, काठियावाड़

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२१. पत्र : वसुमती पण्डितको

२८ अप्रैल, १९३५

चि० वसुमती,

तू मुझसे लम्बे पत्रकी आशा करती है, भला यह कैसे सधेगा? भणसाली यहाँ हैं। कच्चा आटा और नीमकी पत्तियाँ खाता है। खूब कातता है। अमतुस्सलाम यहाँ आई है। अच्छी तरह है। बाकी, लोगोंका आना-जाना तो लगा ही रहता है। हाँ, इस बारका काम जरा ज्यादा मुश्किल कर लिया है। किसीको रहनेके लिए अलग कोठरी मिलती ही नहीं।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ६४५)से; सौजन्य : वसुमती पण्डित। एस० एन० ९३९९ से भी

१. पुरुषोत्तम गांधीकी पत्नी और नारणदास गांधीकी पुत्रवधू।

२२. पत्र : विजयाबहन पटेलको

२८ अप्रैल, १९३५

चि० विजया,

तेरा पत्र मिला। मेरे पास अलग कोठरी नहीं है। पूरे दिनकी मजूरी है। बिना मसालेका खाना है। यह सब बर्दाश्त हो तो आ जाना। आये तो पहनने-ओढ़नेके कपड़े तथा थाली, कटोरा, लोटा लेती आना। अगर समझे कि काम नहीं कर सकेगी, तो मत आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०५९) से। सी० डब्ल्यू० ४५५१ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

२३. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

२८ अप्रैल, १९३५

चि० गंगाबहन,

तुम्हारी बात समझ गया। अधिकाधिक सेवा करती जाओ। पाँच वर्षतक एक स्थानपर स्थिर होकर रहनेकी तुम्हारी प्रतिज्ञा फलवती हो। हकीमजी तुम्हें कौन-सी सादी दवाएँ सिखा गये?

मैत्रीके[1] भी ठिकाने लग जानेकी बात सुनी। दोनोंका विवाह कब होगा? इस कुटुम्बको तो, कहा जा सकता है, तुम्हींने पार उबारा।

तुम्हारा शरीर तो ठीक रहता है न?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ८४

१. मैत्री गिरि।

२४. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदीको

२८ अप्रैल, १९३५

भाई बनारसीदास,

तुमारा खत मिला था। समिति तो क़रें लेकिन काम कौन करेगा? स्थायी समितिमें विचार करेंगे। उसमें आओगे?

बापुके आशीर्वाद

श्री बनारसीदास चतुर्वेदी
१२०/२ अपर सर्कुलर रोड
कलकत्ता

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५६८) से।

२५. तार : जमनालाल बजाजको

वर्धागंज
२९ अप्रैल, १९३५

सेठ जमनालालजी
भुवाली

मदालसाको उबला हुआ दूध और मक्खन, चोकरयुक्त आटेकी पाव रोटी या चपाती लेनी चाहिए अगर वह पचा सके।

बापू

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १५८

२६. पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

२९ अप्रैल, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

जिसने हरिभाईको[1] सचीनके पास मकान बनानेकी सलाह दी, लगता है, उसने उसका हित नहीं किया। जो हरिभाई ८०० भी नहीं जुटा सके वे २०० की मदद पाकर क्या कर सकेंगे? किस प्रकार अपनी हालत सुधारेंगे? वहाँ रहकर अपना बनाया हुआ कितना सामान बेच सकेंगे? मुझे पूरी बात समझाइये।

बापूके आशीर्वाद

श्री परीक्षितलाल
हरिजन आश्रम
साबरमती

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५५) से।

२७. पत्र : मूलचंद अग्रवालको

२९ अप्रैल, १९३५

भाई मूलचंद,

तुमको इन्दौरमें नही मिल सका उसका मुझे दुःख रह गया है। मेरे पास समय ही नही था। तुमने जो लिखा है सब मैं जानता था। आज तो ओर डर बरदास्त करनेके सिवाय और कुछ नही कह सकता हूँ। हाँ स्टटको सब लिख सकते हैं। रीगसका काम अब कौन देखेगा?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७६०) से।

१. एक हरिजन कार्यकर्ता; देखिए खण्ड ६०, पृ० ३५२-५३।

२८. एक पत्र

३० अप्रैल, १९३५

यह ठीक है कि ईश्वर तक पहुँचनेके कई मार्ग हैं लेकिन सबका मूल स्रोत एक ही है। हो सकता है कि अस्पृश्यता-निवारणके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करनेवाला व्यक्ति उस व्यक्तिकी अपेक्षा अधिक प्रभावशाली काम कर रहा हो जो हरिजनोंके बीच काम करता है। मेरे कहनेका मतलब यह है कि सेवा-कार्यके बिना मात्र प्रार्थना करना लाखों व्यक्तियोंके लिए एक मौखिक प्रयत्न-भर है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई

२९. पत्र: हुकमचन्दको

वर्धा
३० अप्रैल, १९३५

श्री हुकमचन्दजी,[१]

अबतक आपके तरफसे मुझे कुछ नही मिला। यह दु:खकी बात है। अब भी मैं अवश्य आशा रखूंगा कि हिन्दी-प्रचारके लिए मुझे एक अच्छी हुंडी मिल जायेगी।

इसके साथ मजदूरोंने दिया हुआ खत भेजता हूँ। यदि इस पत्रमें लिखी हुई बात सही है तो उसका इलाज भी शीघ्र करना आवश्यक और उचित समझता हूँ। कोई कारण नहीं कि आपके यहाँ आदर्श स्थापित न हो।

आपका,
मो० क० गांधी

वीणा, श्रद्धांजलि अंक, अप्रैल-मई १९६९

१. स्वागताध्यक्ष, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इन्दौर।

३०. पत्र : जौहरीलाल मित्तलको

३० अप्रैल, १९३५

भाईश्री मित्तल,

मैं नित्य आपके तरफसे कुछ खतकी और कुछ हुंडीकी प्रतीक्षा करता हूँ। गुजरातीके ५०० और बड़वासके १०१ के [सिवा] यहाँ तो कुछ भी अबतक मुझे नहीं मिला है।

आपका,
मो० क० गांधी

श्री प्रधान मन्त्री
स्वा० समिति
हिं० सा० सम्मेलन
इन्दौर

वीणा, श्रद्धांजलि अंक, अप्रैल-मई १९६९

३१. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
१ मई, १९३५

चि० मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे मालूम नहीं कि तुम्हारे पास कौन-से मित्र आये थे और न मुझे इस बातकी ही कोई जानकारी है कि तुमको हाथका बना कागज दरकार है। तुमने किसे लिखा था? लड़कियाँ छुट्टीपर गई हुई हैं। छोटेलाल[1] मधुमक्खी-पालनका तरीका सीखने दक्षिण गया है। जबतक मुझे तुम्हारी तरफसे कोई सूचना नहीं मिलती, मैं तुमको कुछ भी नहीं भेजूंगा। डंकन चार दिन यहाँ रहा। वह अब भी बिलकुल ठीक ढंगसे काम नहीं कर रहा था।

१. छोटेलाल जैन, वर्धा आश्रमके प्रबन्धक।

उम्मीद है कि तुम धीरे-धीरे प्रगति कर रही हो।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०४३) से। सी० डब्ल्यू० ३३७३ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार

३२. पत्र: अगाथा हैरिसनको

१ मई, १९३५

प्रिय अगाथा,

तुम्हारी खातिर अगर किसीको लन्दन भेजना सम्भव होता, तो मैं भेज देता। लेकिन मैं देखता हूँ कि इस समय ऐसा करना मुमकिन नहीं है। राजाजी ऐसे प्रस्तावपर[1] विचार नहीं करेंगे, कोई और भी नहीं करेगा। आज जैसी देखनेमें आ रही है, सरकारकी ओरसे ऐसी हठधर्मी पहले कभी की गई हो, ऐसा याद नहीं पड़ता। इस समय भारतके सीनेपर एक नंगी तलवार रख दी गई है। मैं तो समझता हूँ कि इस तरह ईश्वर हमारी परीक्षा ले रहा है। अगर हमारे मनमें सच्चा प्रेम अर्थात् अहिंसा है तो सब ठीक ही होगा। अगर प्रेम सचमुच हमारे अन्दर नहीं है और हम मात्र प्रदर्शनके लिए उसे ऊपरसे ओढ़ रहे हैं, तो हम इस नंगी तलवारके ही योग्य हैं। जो भी हो, लोग उसी तरह सोचते है जैसा मैंने बतलाया है और इसलिए सरकारकी इस नीतिके कायम रहते बड़े-बड़े नेताओंमें से तो कोई भी इंग्लैंड जानेकी बात सोचेगातक नहीं।

मैंने सर सेम्युअलकी बीमारीका समाचार जरूर पढ़ा था। लेकिन उस समाचार में उनकी बीमारीको कोई गम्भीर नहीं माना गया था। इसीलिए मैंने उन्हें न तो पत्र लिखा और न तार ही दिया।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४९०) से।

१. अगाथा हैरिसनने गांधीजीको सुझाव दिया था कि इंग्लैंडवाले स्थितिको ठीक समझ सकें, इसके लिए उन्हें तथ्योंसे अवगत करानेके लिए किसीको वहाँ भेजा जाये। देखिए खण्ड ६०, पृ० ४१५-१६।

३३. पत्र : बालूकाका कानिटकरको

१ मई, १९३५

प्रिय बालूकाका,

आपने अपनी पुस्तिकाएँ पढ़नेके लिए आमन्त्रित करके मुझसे एक ऐसा काम करनेके लिए कहा है, जिसे कर पाना आज मेरे लिए सम्भव नही है। मुझे उम्मीद है कि आप तीनो गाँवोंमें अपने प्रयत्नोंमें सफलता प्राप्त करेंगे।

मो० क० गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९६६) से; सौजन्य : जी० एन० कानिटकर

३४. पत्र : अमृतकौरको

१ मई, १९३५

प्रिय अमृत,

मैं तुम्हें पत्र लिख चुका था, तब शम्मीका[1] पत्र मुझे प्राप्त हुआ। उसने जो जानकारी[2] मुझे दी है, उसका मै खासा उपयोग करनेवाला हूँ। मैं चाहूँगा कि वह इमलीके बीज तथा अन्य खाद्य फलोंके बीजोंके सम्बन्धमें भी इसी प्रकारकी जाँच-पड़ताल करे।

मै अभी तुरन्त तुम्हारे पास खास तौरसे बनाये गये लिफाफे और पत्र लिखनेके कागज भेजने जा रहा हूँ।

जब भी तुम्हें पूनियाँ चाहिए, मुझे थोड़ा पहले लिख देना।

हाँ, हमने बडी महारानीसे भेंट की थी, लेकिन उनसे बातचीत करनेका अवसर नही मिला।

तुम दोनोको स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५३१) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६३४० से भी।

१. अमृतकौरके भाई कुँवर शमशेरसिंह।

२. जानकारी संभवतः अमरूदके बीजों और दंत-मंजनमें कोयलेके प्रयोगके बारेमें थी। यह हरिजन, १८-५-१९३५ के अंकमें "उपयोगी सुझाव" (यूज़फुल हिन्ट्स) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

३५. पत्र : पद्मावतीको

१ मई, १९३५

प्रिय बहन,

मैंने रामचन्द्रनको पत्र लिखा है; वह तुमको दिखा देगा। कान्ति तुमको कुछ भाने लगा है। मुझे आशा है, वह इसके योग्य सिद्ध होगा। मैं कान्तिके साथ तुम्हारी पुत्रीके विवाहका स्वागत करूँगा, यदि वह विवाहका समय आनेपर अपनेको उसके योग्य सिद्ध कर देगा। बीचका समय दोनों पक्षोंके लिए एक पवित्र कार्यकी तैयारीका समय बन जाना चाहिए। हाँ, एक आग्रह मेरा है। लड़कीको हमारे इरादोंके बारेमें कुछ भी पता न चले। उसे वयस्कता प्राप्त करनेपर स्वयं अपना चुनाव करनेके लिए बिलकुल स्वतन्त्र रहना चाहिए।

मैं जानता हूँ कि कान्तिके साथ तुम्हारा पत्र-व्यवहार बहुधा चलता रहा है। रामचन्द्रनसे इसके बारेमें कुछ भी छिपाना नहीं है। कान्ति यदि लड़कीके सम्बन्धमें कुछ करता है या रामचन्द्रनसे छिपाकर तुमसे पत्र-व्यवहार करता है तो वह विश्वास भंग करनेका दोषी होगा। अगर ऐसा कुछ भी हुआ तो मैं स्वयंको कभी क्षमा नहीं कर पाऊँगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७४१) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

३६. पत्र : जी० रामचन्द्रनको

१ मई, १९३५

प्रिय रामचन्द्रन,

मैंने जान-बूझकर कान्तिके सम्बन्धमें तुम्हारे पत्रका उत्तर अबतक नही दिया था। अब मैं तुम्हारे पत्रका उत्तर दे सकता हूँ। लडकी जबतक पूर्ण वयस्क नही हो जाती, उसे हमारे इरादोके सम्बन्धमें कुछ भी ज्ञात नही होना चाहिए। कान्ति ऐसा इरादा रख सकता है लेकिन उसके वयस्क होनेके पहले उसके साथ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष किसी प्रकारका पत्र-व्यवहार नही कर सकता है।[1] वह तुम्हारी बहनको पत्र लिख सकता है, जैसाकि वह करता ही रहा है, लेकिन उसका कुछ भी तुमसे छिपा नही रहना चाहिए। जब और जिस समय तुम चाहो, उसके सब पत्र तुम्हारे देखनेके लिए सुलभ रहने चाहिए। दोनोमें से प्रत्येकको एक-दूसरेके योग्य बनना है। इसलिए, यदि लड़कीको कान्तिके योग्य बनाना है, तो कान्तिको भी स्वयको लड़कीके और तुम्हारे योग्य बनाने की तैयारी करनी पड़ेगी। और विवाहका समय आनेपर यदि कान्ति इस दिशामें की गई अपनी प्रगतिमें अयोग्य सावित हो, तो तुम यह मानकर लडकीको उसके सम्पर्कसे निश्चय ही अलग रख सकते हो कि वयस्कता प्राप्त करनेपर वह तुम्हारी बात सुन-समझकर मान लेगी। तुम और मैं इस प्रस्तावित सम्बन्धको तभी सहन कर सकेंगे, जब यह दूसरोंके लिए अनुकरणीय बन जाये। इसलिए इसे सेवा-भावनासे ही विकसित होना चाहिए। इस तरह विकसित होनेका मतलब है, अपेक्षाकृत अधिक सादगी, अधिक आत्म-त्याग, सत्य और अहिंसाकी ओर अपेक्षाकृत अधिक प्रगति और मन, वचन तथा कर्मसे पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन। कान्तिके लिए लडकीके बारेमें सोचनेका मतलव ही यह होना चाहिए कि यौन-भावनाकी तुष्टिके लिए अन्य किसी स्त्रीका ध्यान भी उसके मनमें न आये।

अगर ये शर्तें पूरी कर दी जाती है, तो मैं इस गठ-बन्धनका स्वागत करूँगा। मुझे तो लगता है कि इस सम्बन्धमें आरम्भसे कोई दोष नही रहा है। कान्तिने इस लड़कीके प्रति आकर्षण अनुभव करते ही पूरी ईमानदारीसे वह-सब स्वीकार कर लिया था। बादका उसका आचरण भी मुझे ऐसा नही लगता जिसपर उँगली उठाई जा सके।

इस पत्रको कान्ति देखेगा और बादमें तुम्हारे पास भेज देगा। अगर पत्रमें ऐसी कोई बात हो जिससे तुम सहमत न होओ, तो मुझे बताना। मैं कान्तिको इस पत्रकी

१. साधन-सूत्रमें यह वाक्य अधूरा लगता है; उसका अर्थ स्पष्ट करनेके लिए कुछ शब्द जोड़े जा रहे हैं।

एक प्रति देवदासको भेजनेके लिए भी लिख रहा हूँ। महादेव और हीरालाल भी इसे पढ़ेंगे ही। साथका पत्र[1] तुम्हारी बहनके लिए है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७४२) से; सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

३७. पत्र: कान्तिलाल गांधीको

१ मई, १९३५

चि० कान्ति,

रोज लिखनेकी सोचता था, लेकिन यह तय नहीं कर पाता था कि रामचन्द्रनको लिखूं क्या। तू क्या कर रहा है, यह तो मैंने पूछा ही नहीं। अब ये दोनों पत्र पढ़।[2] और तुझे ठीक लगें, तो रामचन्द्रनको भेज दे। उसके साथ पत्र भी लिखना और मुझे बताना। महादेव और हरिलालको भी दिखाना। प्रतिलिपि देवदासको भेजना। यह सम्बन्ध आदर्श सम्बन्ध हो जाये, ऐसी मेरी इच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

रोकड़ मैं पढ़ गया हूँ। तू रोज खाताबही पूरी कर लेता होगा, यह मैं माने लेता हूँ। कहाँतक पहुँचा है, बताना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७२९५) से; सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए पिछले दो शीर्षक।

३८. पत्र : डॉ० हरिप्रसाद देसाईको

१ मई, १९३५

भाई हरिप्रसाद,[1]

आपका पत्र मिला। जिनके लिए मुझे आपका नुस्खा चाहिए था, वे तीन-एक वार पूछ चुके थे। अब वे खुश हो जायेंगे।

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आपके पत्रका अच्छेसे-अच्छा उपयोग यही था कि उसे सरदारको भेज दिया जाये।

मेरा आपने जो वर्णन किया है, वह मुझे अच्छा लगा। सारे यूरोपके लोग मुझे जितना पहचानते हैं, उससे अधिक अपने देशके लोग पहचानते हैं। हरिभाईसे कहिए कि यूरोपसे जो ज्ञान लेकर आये हो, उसका उपयोग यहाँके गाँववालोंके लिए करें।

बापूके वन्देमातरम्

डॉ० हरिप्रसाद देसाई
११, प्रीतमनगर
एलिसब्रिज, अहमदाबाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१३७) से।

३९. पत्र : अयोध्याप्रसादको

१ मई, १९३५

भाई अयोध्याप्रसाद,

अवधेश पर[2] तुमारा पत्र है सो मैंने सुना। यदि उसको मेरे पास ही रखना है तो थोड़े दिनोंके लिये अपने पास बुलानेका मोह छोड दिया जाय। ऐसे करनेसे कार्यमें बाधा आती है और पैसे बरबाद होते हैं।

मो० क० गांधीके व० मा०

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२१६) से।

१. अहमदाबादके एक सामाजिक कार्यकर्ता और चिकित्सक।
२. अर्थात् अवधेशके नाम।

४०. प्रस्तावना : 'गुजरात एंड इट्स लिटरेचर' की

[२ मई, १९३५ के पूर्व][1]

श्री मुंशी-जैसे लेखकके साहित्यिक ग्रंथकी भूमिका लिखने के लिए मुझसे कहनेका केवल एक ही कारण हो सकता है कि मैं 'महात्मा' कहलाता हूँ। मैं किसी भी प्रकार साहित्यिक होनेका दावा नहीं कर सकता। इसमें मेरा कोई दोष नहीं है कि गुजरातीके साहित्यसे, बल्कि दरअसल किसी भी भाषाके साहित्यसे मेरा परिचय लगभग शून्य है। लगभग किशोरावस्थासे ही कर्म-क्षेत्रमें व्यस्त हो जानेके कारण दक्षिण आफ्रिका और भारतमें सिवा जेलोंके मुझे पढ़नेका अवसर ही नहीं मिल पाया। गुजराती साहित्यके श्री मुंशी द्वारा किये गये इस सर्वेक्षणको पढ़नेमें मुझे आनन्द आया है। लेखकोंके जो संक्षिप्त शब्द-चित्र उन्होंने खींचे हैं, पाठकोंको उनसे उनकी रचनाओंकी पर्याप्त झाँकी मिल जाती है।

श्री मुंशीने हमारी साहित्यिक उपलब्धियोंका जो मूल्यांकन किया है, वह मुझे बहुत प्रामाणिक लगता है। स्वभावतः सर्वेक्षणका क्षेत्र वह गुजराती भाषा है जो मध्यमवर्गके लोगोंके बीच बोली और समझी जाती है। आत्म-सन्तुष्ट और व्यापारी-वृत्तिके होनेके कारण इनकी भाषा 'कोमल और रसीली' है। जन-भाषाके बारेमें तो हम लगभग कुछ नहीं जानते। हम उनकी बोली शायद ही समझ पाते हैं। हम मध्यम वर्गके लोगों और उनके बीच जो खाई है वह इतनी चौड़ी है कि हम उन्हें नहीं जानते और हम जो सोचते या कहते हैं उसे वे तो और भी कम जानते हैं!

श्री देवेन्द्र सत्यार्थीके सौम्य आग्रहके कारण मैंने लोकगीतोंके उनके विशिष्ट संग्रह को थोड़ा-बहुत देखा है जो उन्होंने विभिन्न प्रान्तोमें घूम-घूमकर तैयार किया है। इस लेखकसे मिलनेकी याद तो मुझे नहीं है। लोकगीत ही लोगोंका साहित्य है। ये गीत जिन प्रान्तोंके हैं, उन प्रान्तोके मध्यमवर्गीय लोगोंका इनसे उसी प्रकार कोई नाता नहीं है, जिस प्रकार गुजरातके मध्यमवर्गीय लोगोका लोकगीतों अर्थात् गुजरातकी जनताकी भाषासे सम्पर्क नहीं है। सौराष्ट्रके मेघाणीने काठियावाड़की लोककथाओंको लेकर शोध-कार्य किया है। इस शोध-कार्यसे जनभाषा और हमारी भाषाके बीच जो खाई है, वह स्पष्ट होती है।

किन्तु लोककथा आदि उस व्यवस्थाके अंग हैं जो यदि विलीन नहीं हो गई है तो तेजीसे विलीन होती जा रही है। जनतामें एक जागृति आ रही है। उनमें परिवर्तनका प्रारम्भ विचारसे नहीं कर्मसे हुआ है। मेरी समझमें जनताका तरीका ही यह है। उसकी भाषाको निश्चित स्वरूप ग्रहण करना बाकी है। यह रूप थोड़ा-बहुत

१. देखिए "पत्र: क० मा० मुंशीको", ृ० ३०-१।

समाचार-पत्रोंमें ढल रहा है; किताबोंमें नहीं। इसलिए कहा जा सकता है जो कृति मेरे सामने है, उससे श्री मुंशीका काम शुरू-भर होता है। वह आवश्यक था। किन्तु इस सुन्दर प्रारम्भके बाद उन्हें इसे आगे बढ़ाते रहना है। अपने कामके प्रति आवश्यक लगन उनमें है। यदि स्वास्थ्य साथ दे तो अब उन्हें सीधे जनताके बीच जाना चाहिए और समझना चाहिए कि वह किस तरह सोच रही है। फिर उन्हें चाहिए कि वे उन विचारोंको अभिव्यक्ति दें। गुजराती भाषा सम्पन्न बेशक नहीं है किन्तु यह तो उस जनताकी गरीबीका चिह्न ही है। पर वास्तवमें कोई भी भाषा दरिद्र नहीं होती। हमने जबसे काम करना शुरू किया है, तबसे बोलनेका तो मानो हमें समय ही नहीं मिला। सारे भारतकी तरह गुजरात भी सोचमें डूबा है। भाषा स्वरूप ग्रहण कर रही है। हमारे इस लेखककी तरह और लेखकोंके सामने भी पर्याप्त काम पड़ा हुआ है।

मुंशी ने पारसी-गुजरातीका उल्लेख किया है, सो तो है। यह एक दुर्भाग्यकी बात है कि पारसी-गुजराती-जैसी चीज है। यह भाषा बारह आना सीरीजके सनसनीखेज उपन्यासों और कहानियोंतक सीमित है। उनका उद्देश्य खाली समय काटना है। उनमें भाषापर बलात्कार करके उसका स्वरूप विकृत कर दिया जाता है। पारसी-गुजरातीकी तरह, भले ही काफी छोटे पैमानेपर क्यों न हो, मुस्लिम-गुजराती भी है। इन धाराओंकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। ये दूषित धाराएँ हैं, जिनमें गुजराती साहित्यका निर्मल जल नहीं मिल सकता। लेकिन गुजराती साहित्यका कोई भी समीक्षक ऐसी पुस्तकोंकी उपेक्षा नहीं कर सकता जिन्हें हजारों नहीं तो कमसे-कम सैकड़ों पारसी और मुसलमान पाठक पढ़ते हों और जिन्हें पढ़कर वे अंशतः ही सही अपना आचरण ढालते हों।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
गुजरात ऐंड इट्स लिटरेचर

४१. एक पत्र[1]

२ मई, १९३५

फोड़े-फुन्सियोंको हम जितना छेड़ते है, वे उतने ही बिगड़ते जाते हैं। हिन्दू-मुस्लिम तनाव ऐसा ही एक फोड़ा है। इसीलिए मैं इसके समाधान के लिए ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ। मैं इसके बारेमें कुछ भी कहना नहीं चाहता।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई

१. पत्र-लेखक ने लिखा था कि चूँकि हिन्दू-मुस्लिम एकताके बिना स्वराज्य सम्भव नहीं है, इसलिए गांधीजी को केवल इसी समस्याके समाधानपर अपनी सारी शक्ति केन्द्रित करनी चाहिए।

४२. एक पत्र[1]

२ मई, १९३५

प्रेमकी कोई सीमा नहीं होती। मेरे राष्ट्र-प्रेममें विश्वके सभी राष्ट्रोंके प्रति मेरा प्रेम सम्मिलित है, उनके अपने धार्मिक विश्वास चाहे कुछ भी हों।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई

४३. पत्र: क० मा० मुंशीको

वर्धा
२ मई, १९३५

भाई मुंशी,

तुम्हारा पत्र मिला था। भूमिका[2] भेज दी गई है।

समाजवादी तो अपना काम करते ही रहेंगे। जबतक जवाहरलाल वहाँसे निकल नहीं जाते, तबतक हमें यह सब बर्दाश्त करना ही पड़ेगा। उन्हें बार-बार जवाब क्या देना है? मुझे तो लगता है कि उनके साथ हमारे जो तात्त्विक मतभेद हैं, उन्हें स्पष्ट बताकर हमारा चुप हो जाना ही ठीक होगा।

जितने अंशसे हमारा मतभेद नहीं है, उतने अंशमें उनका काम भले आगे बढ़ा करे। जहाँ मतभेद है, वहाँ उनका काम आगे बढ़ेगा ही नहीं; ऐसी श्रद्धा हम क्यों न सँजोयें?

राजाजी को मैंने बहुत समझाया। मुझे लगता है, उन्हें अभी आराम करने देना ही ठीक होगा। तुम जो सोचते हो, वह कारण तो बहुत करके नहीं है। इसका विश्वास उन्होंने मुझे दिलाया है। कोई वजह नहीं कि हम उनकी बात न मानें। बुरा माना होता, तो मुझसे तो नहीं ही छिपाते।

बापूके आशीर्वाद

१. यह पत्र एक अमरीकीको लिखा गया था। साधन-सूत्रमें उसका नाम नहीं दिया गया है।
२. देखिए पृ० २८-९।

[पुनश्च :]

क्या तुमने देखा कि हमारे मनमें जो प्रस्ताव[1] था, वह हिन्दी सम्मेलनमें पारित कर दिया गया?

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५७२) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

४४. एक पत्र

३ मई, १९३५

श्रद्धा बुद्धिकी पकडमें आनेवाली चीज नहीं है; वह मन:स्थिति है जिसतक हमें उठना, विकास करना होता है। और यह विकास अन्तरसे प्रस्फुटित होता है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

४५. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३ मई, १९३५

चि० प्रेमा,

अभी तेरा पत्र मिला। सारे वर्णन सुन्दर हैं।[2] तू बहुत-सी बातें तो निबटा ही लेगी। 'कुरान' का अनुवाद उर्दूमें हुआ है, वह तुझे पढ़ लेना चाहिए। तब तुझे उसकी ध्वनि मिलेगी। और उर्दू पाठावलियाँ भी पढ़ लेनी चाहिए। वे पंजाबसे प्रकाशित हुई हैं। हैदराबादमें भी होंगी।

तेल छाननेकी बात समझ ली। यहाँ तो घानी है। थोड़ी मात्रामें तेल निकालना हो तो तेरी रीति काम देगी। आजमाऊँगा।

शायद ६ तारीखको मुझे यहाँसे बोरसद जाना पड़ेगा। यहाँ १७ तारीखको वापस आनेका विचार है। बीचमें १६ तारीखको कुछ घंटे बम्बईमें बीतेंगे।[3] यह सब निश्चित हो जायेगा तो तू अखबारोंसे भी जान लेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (१०३९१) से। सी० डब्ल्यू० ६८१० से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

1. देखिए पृ० ३३-४।
2. प्रेमाबहन हैदराबादकी मुस्लिम महिलाओंके बीच काम कर रही थीं और उन्हें कुरानका मराठी अनुवाद पढ़कर सुनाया करती थीं।
3. वास्तवमें गांधीजी २१ मईको वर्धासे रवाना हुए थे। वे महीनेके अन्ततक बोरसदमें रहे।

४६. पत्र : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको

३ मई, १९३५

भाई पुरुषोत्तमदास,[1]

आपका पत्र आज ही मिला। आज ही मैं अहमदाबादसे आया। आपका भेजा लेख पढ़ गया। उसके अन्तमें डाले गये आँसू उचित नहीं हैं। सरकार जाग्रत है तो हम भी उसी तरह क्यों न जागें? जगानेवाले आप-जैसे चाहिए। किन्तु आप ही यदि दूसरेसे आशा करें, तो क्या यही नहीं कहा जायेगा कि समुद्र ही अपना खारापन खो बैठा है और अब रोता है? आप जायें, रास्ता दिखायें तो दूसरे भी पीछे चलेंगे।

'एक्सचेंज' वगैरा 'हाई फिनेन्स' कहा जाता है। उसमें कांग्रेस क्या कर सकती है? उस विषयको जाननेवाले इसमें शामिल नहीं होते, शामिल हो भी नहीं सकते। जो इसमें हैं, स्वाभाविक है कि उनमें से बहुत-से इस विषयकी बातें नहीं जानते। यह काम ही पैसेवालोंका है। उन्हें इसके लिए एक विशेष संस्थाकी स्थापना करके आवश्यक कदम उठाना चाहिए।

(उस) लेखकका कहना है कि जब देश स्वर्णमानसे अलग हुआ, तब यदि हिन्दुस्तान जाग्रत होता तो यह न हो पाता। तब क्या करना चाहिए था?

आज क्या करें कि सही नीति व्यवहारमें लाई जा सके?

क्या आप समझते हैं कि ग्रामोद्योगका इस समस्याके साथ कोई सम्बन्ध है? सही नीतिका व्यवहार हो या न हो, गाँवोंको स्वच्छ-साफ तो होना ही पड़ेगा न? उचित खुराकका ज्ञान प्राप्त करना ही पड़ेगा न? यदि वहाँके उद्योगोंका पुनरुद्धार हो सकता हो, तो वह होना चाहिए न? यह काम चलता रहे, तो क्या करेन्सीका काम रुक जायेगा? करेन्सीके विशेषज्ञ तो शायद ही कोई इस काममें अटके हों। यदि अटके भी हों, तो इसमें रहते हुए भी वे दूसरा काम कर सकते हैं।

यह बोझ यदि पैसेवाले नहीं उठाते, तो इसका क्या उपाय है? उन्हें कौन जगायेगा? इस विषयका मेरा ज्ञान इतना नहीं है कि मैं उन्हें जगा सकूँ।

सीमेंटकी बात समझा। अर्जी भेजनेके लिए बापाको[2] लिख रहा हूँ।

मोहनदासके व० मा०

[गुजरातीसे]

पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास पेपर्स : फाइल नं० १५९/१९३५; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. अर्थशास्त्री और इंडियन सेंट्रल बैंकिंग इन्क्वाइरी कमेटीके उपाध्यक्ष।

२. अमृतलाल वि० ठक्कर।

४७. पत्र : हीरालाल शर्माको[1]

३ मई, १९३५

मैं डाक्टर गोपीचन्दको लिख रहा हूँ। यहाँ तुमारे हिसाबमें ५३ रुपया निकलते है। ४२ रुपया रेल किराये का है। मुझे सब स्मरण नही है। मेरी सलाह है भले १०० रुपया ऐसे ही रहें।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १५७-५८

४८. दो महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव

इन्दौरके अ० भा० हिन्दी साहित्य-सम्मेलनमें कुछ खास उपयोगी प्रस्ताव स्वीकृत हुए। एकमें तो हिन्दी भाषाकी परिभाषा बताई गई है, और दूसरेमें यह मत प्रकट किया गया है कि उन समस्त भाषाओंको देवनागरी लिपिमें ही लिखना चाहिए, जो या तो संस्कृतसे निकली हैं या जिनपर संस्कृतका बहुत अधिक प्रभाव है।

पहला प्रस्ताव इस तथ्यपर जोर देता है कि हिन्दी प्रान्तीय भाषाओंको नष्ट नही करना चाहती, बल्कि उनकी पूरक बनना चाहती है, और अखिल भारतीय स्तरपर सेवा करनेवाले जो लोग इसे बोलते है उनके ज्ञान तथा उपयोगिताको बढाती है। वह भाषा भी हिन्दी ही है जो लिखी तो उर्दू लिपिमें जाती है, पर जिसे मुसलमान और हिन्दू दोनो ही समझ लेते हैं,—इस बातको स्वीकार करके सम्मेलनने इस सन्देहको दूर कर दिया है कि उर्दू लिपिके प्रति सम्मेलनकी कोई दुर्भावना है। तो भी सम्मेलन की प्रामाणिक लिपि तो देवनागरी ही रहेगी। पंजाब तथा दूसरे प्रान्तोके हिन्दुओके बीच देवनागरी लिपिका प्रचार अब भी जारी रहेगा। यह प्रस्ताव किसी भी प्रकारसे देवनागरी लिपिके महत्त्वको कम नहीं करता। वह तो मुसलमानोंके इस अधिकारको स्वीकार करता है कि अबतक जिस उर्दू लिपिमें वे हिन्दुस्तानी भाषा लिखते आ रहे है उसमें अब भी लिख सकते हैं।

दूसरे प्रस्तावको व्यावहारिक रूप देनेकी दृष्टिसे एक समिति बना दी गई है, जिसके अध्यक्ष और सयोजक काकासाहब कालेलकर हैं। इस समितिका काम देवनागरी

१. महादेव देसाई द्वारा हीरालाल शर्माको लिखे पत्रके अन्तमें गांधीजी ने ये पंक्तियाँ लिखी थीं। उक्त पत्रमें महादेव देसाईने लाहौरकी एक दुकानका पता देते हुए लिखा था कि गांधीजी की जरूरतकी वे पुस्तकें डॉ० गोपीचन्दके द्वारा खरीदी जायें, ताकि उनकी कीमतोंपर कुछ रिआयत मिल जाये।

लिपिमें ऐसे परिवर्तन और परिवर्धन दाखिल करनेकी सम्भावनाका पता लगाना और तदनुसार ऐसे परिवर्तन और परिवर्धन करना होगा जो उसे और भी आसानीके साथ लिखनेके लिए आवश्यक होंगे, और मौजूदा अक्षरोंसे जो शब्द-ध्वनि व्यक्त नहीं हो सकती उसे व्यक्त करनेके, लिए देवनागरी लिपिको और भी पूर्ण बनायेंगे।

हमें अगर अन्तर्प्रान्तीय सम्पर्कको बढ़ाना है, और अगर हिन्दीको प्रान्तोंके आपसी सम्बन्धका माध्यम बनाना है तो उसमें इस प्रकारका परिवर्तन आवश्यक है। इस दूसरी बातको तो हिन्दी साहित्य-सम्मेलनके सिद्धान्तोंमें विश्वास रखनेवाले लोग गत पच्चीस वर्षोंसे मानकर चल रहे हैं। लिपि-सम्बन्धी प्रश्नपर चर्चा तो अक्सर हुई, पर गम्भीरता-पूर्वक वह कभी हाथ में नहीं लिया गया। फिर भी यह पहली मान्यताका स्वाभाविक परिणाम प्रतीत होता है। [एक लिपि हो जानेपर] भगिनी-भाषाओंको सीखना अत्यधिक सरल और आसान हो जाता है। बंगला लिपिमें लिखी हुई 'गीतांजलि' को सिवा बंगालियोंके और पढ़ेगा ही कौन? अगर वह देवनागरी लिपिमें लिखी जाये तो उसे सभी लोग पढ़ सकते है। संस्कृतके तत्सम और तद्भव शब्द उसमें बहुत अधिक हैं, जिन्हें दूसरे प्रान्तोके लोग आसानीसे समझ सकते हैं। मेरे इस कथनकी सत्यताको हरएक जाँच सकता है। हमें अपने बालकोंको विभिन्न प्रान्तीय लिपियोंको सीखनेका व्यर्थ कष्ट नहीं देना चाहिए। यह निर्दयता नहीं तो क्या है कि तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़, उड़िया और बंगला सीखनेकी इच्छा रखनेवालोंसे देवनागरीके अलावा इन छह लिपियोंको — और अगर वे अपने मुसलमान भाइयोंके चिन्तन और कार्योंको उनके लेखो आदिसे जानना चाहें तो उर्दू लिपिको भी — सीखनेकी अपेक्षा की जाये? जो अपने देश या मनुष्य-मात्रका प्रेमी है उसके सामने मैंने यह कोई बड़ा प्रचण्ड कार्यक्रम नही रख दिया है। आज तो अगर कोई प्रान्तीय भाषाएँ सीखना चाहे और कोई प्रान्तीय भाषा-भाषी हिन्दी पढ़ना चाहे तो यह लिपियोंका अभेद्य प्रतिबन्ध ही उसके मार्गमें कठिनाई उपस्थित करता है। काकासाहबकी यह समिति एक ओर तो इस सुधारके पक्षमें लोकमत तैयार करेगी, और दूसरी ओर उसे प्रयोगमें लाकर उसकी इस महान् उपयोगिताको प्रत्यक्ष करके दिखायेंगी कि जो लोग हिन्दी या प्रान्तीय भाषाओंको सीखना चाहते है, उनका समय और उनकी शक्ति इससे बच सकती है। किसीको भूलकर भी यह कल्पना नहीं करनी चाहिए कि यह लिपि-सुधार प्रान्तीय भाषाओंके महत्त्वको कम कर देगा। सच पूछिए तो वह तो उनकी उसी प्रकार श्रीवृद्धि करेगा, जिस प्रकार कि एक सामान्य लिपि स्वीकार कर लेनेके फलस्वरूप प्रान्तीय व्यवहार-विनिमय सरल हो जानेसे यूरोपकी तमाम भाषाएँ समृद्ध हो गई हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-५-१९३५

४९. आय दूनी कैसे की जाये?

चरखेका आन्दोलन यद्यपि सत्रह सालसे चल रहा है, और उससे हर साल एक लाख बीस हजार स्त्रियोंको थोड़ी किन्तु स्थायी आमदनी हो जाती है, तो भी हमारे कार्यकर्त्ताओंके कताई-विज्ञानके शोचनीय अज्ञानके कारण आमदनी जितनी होनी चाहिए उससे बहुत कम होती है। खराब रुईको अनाड़ीपनेसे धुनेंगे, और फिर हिलते-डुलते चरखेपर तकुएके चक्करोंका खयाल रखे बगैर कातेंगे, तो सूत तो कम निकलेगा ही। एक-एक चीजपर ध्यान दिया जाये तो सहज ही सूत दूना उतरे और इससे आमदनी भी दूनी बढ़ जाये। कपास ठीक तरहसे चुनी जाये; हाथसे ओटी जाये और फिर रुईको अच्छी तरह धुना जाये तो सूत तो अधिक उतरेगा ही, वह ज्यादा मजबूत और इकसार भी होगा। तकुएके चक्करोंपर, अर्थात् चरखेके पहियेके प्रत्येक घुमावसे तकुआ जितने चक्कर खाता है, इसपर सूत निकलनेकी गति, सूतकी मजबूती, समानता तथा अंक शायद सबसे अधिक निर्भर करते हैं। इसका हिसाब लगानेका आसान तरीका यह है कि तकुएकी गरारीपर एक खड़ी लकीर खींच दी जाये, और पहिया इतना धीरे-धीरे घुमाया जाये कि जिससे तकुएके चक्कर आसानीसे गिने जा सकें। पहियेके एक चक्करके मुकाबले तकुएके सौ चक्करसे कम तो होने ही नहीं चाहिए। किन्तु श्री शंकरलाल बैंकरने यह रिपोर्ट दी है कि उन्होंने अपने दौरेमें सिर्फ ३५ ही चक्कर लगानेवाले तकुए देखे हैं। अब अगर सूत बहुत ही कम और कच्चा तथा रोएँदार उतरे तो इसमें कोई अचरजकी बात नहीं। तकुएके चक्कर बढ़ानेकी तरकीब यह है कि मालको अपनी ठीक जगहपर रखनेवाली तकुएकी साड़ीकी मोटाई कम कर दी जाये। स्थानीय कार्यकर्त्ताओंको अपने गाँवके प्रत्येक चरखेकी जाँच-पड़ताल करके उसके तकुए तथा दूसरे हिस्सोंमें, जहाँ आवश्यक जान पड़े वहाँ, हेरफेर कर देना चाहिए। यह भी सम्भव है कि अन्तमें तकली सूतकी उत्पत्तिका सबसे बढ़िया साधन साबित हो। इसमें कमसे-कम ध्यान देनेकी जरूरत रहती है, और तकली चलानेकी नई पद्धतिसे प्रति घंटा औसतन २०० तार अर्थात् २६६ गज सूत कतता है और ४४० तार तककी गति बढ़ सकती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ४-५-१९३५

५०. पत्र : नारायणदास मलकानीको

वर्धा
४ मई, १९३५

प्रिय मलकानी[1],

हमारी बातचीतके तुमने जो नोट तैयार किये हैं, उनको जाँचनेमें मुझे काफी समय लगाना पड़ा। तुम देखोगे कि मैंने काफी रद्दोबदल की है और कुछ पूरे-के-पूरे पैरे हटा दिये हैं। दूसरोंके बारेमें किये गये सभी उल्लेख हटा दिये गये हैं; होना भी यही चाहिए था।

उम्मीद है, तुम्हारा कलकत्ता-प्रवास उपयोगी रहा होगा।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०९) से।

५१. पत्र : कान्ति गांधीको

४ मई, १९३५

चि० कान्ति,

जैसा मूर्खतासे भरा पत्र तूने लिखा है, वैसा ही कनुने लिखा था। उसका समाधान एक क्षणमें हो गया, वैसे ही तेरा भी हो जायेगा। मनुष्य बिना मौतके रोज मरता है, और जब सच्ची मौत आती है तब दुःखी होता है। मनुष्य अपने-आप ही दुःख पाता है। मैं तुम दोनोंमें से एकको भी यहाँ दफन करना नहीं चाहता। इस बार भी महादेवने जवाब क्यों दिया, मुझे नहीं मालूम। मैंने जान-बूझकर तुम दोनोंमें से एकको भी रसोईघरका काम न सौंपनेका निश्चय किया है, जिससे जब मैं सचमुच सफरपर जाऊँ तब दोमें से एकको साथ ले जा सकूँ। यों मेरी इच्छा तो दोनोंको ले जानेकी है। समय और कामकी मजबूरीसे अगर कुछ न कर सकूँ, तो तुम दोनों समझ जाओगे। इस बरस तो मुझे सफर नहीं ही करना है। यहीका सब काम व्यवस्थित करना है। जिन्दा रहा, तो अगले वर्ष सफर करना है — जिन्दा दोनों अर्थोंमें, जेल जाना एक प्रकारका मरण ही कहलाता है न? अंग्रेजीमें इसे 'सिविल-डेथ'[2] कहते हैं, अर्थात् सार्वजनिक नागरिक जीवनकी दृष्टिसे मरण। यह तो मेरे भाग्यमें बदा ही है न?

१. हरिजन सेवक संघके संयुक्त मन्त्री।
२. मूलमें ये दो शब्द अंग्रेजीमें हैं।

तुझे जैसे उलाहना दिया, वैसे ही बालको भी दिया है। वह मुझसे पत्र चाहता है, इसलिए उसे मिलते हैं। तूने मुझे पत्रोका उत्तर देनेसे मुक्त कर दिया है, इसलिए तुझे कम लिखे-हैं। देवदासको कितने लिखता हूँ? मैं पत्र लोगोंकी आवश्यकताके अनुसार भेजता हूँ।

मेरी बातोंसे तू 'सन्न' रह जाता है, इसका अर्थ तू समझता है? इसका अर्थ तो यह हुआ कि तू अपनेको मुझसे हजारों योजन दूर मानता है। कड़वे शब्दोंके पीछे प्रेम भरा था, यह तू नही देख सका, तो यह दोष तेरा है या मेरा? अहिंसाका पुजारी होनेके नाते मुझे दोष अपना मानना पड़ता है, किन्तु पिता होनेके नाते तेरा मानता हूँ। तुझसे बोलते हुए मुझे नाप-तोलकर बोलना पड़े, और भाषापर नियन्त्रण रखना पड़े कि कही तू नाराज न हो जाये, तो यह कैसी विचित्र बात है?

तुझमें शुरूसे ही एक प्रकारका उजड्डपन अथवा अविवेक रहा है। वह तूने बहुत-कुछ कम कर लिया है। फिर भी अभी उसके कुछ छींटे तो हैं ही। मुझे लिखे इस पत्रमें तो कुछ भी नही है। हाँ, उस रोज छतपर थे। यों मैंने तो अपना समाधान कर ही लिया था। आश्चर्यकी बात है, हरिलाल समझता है कि तू मेरी नजरोंसे गिर गया है। मुझे इसका थोड़ा दुःख भी है। कारण यह है कि तू तो जानता है, मेरी नजरमें तेरी कीमत बहुत है। मेरा मन तो कहता है, मैं तेरी सार-सँभाल एक फूलके समान कर रहा हूँ। तेरे कामसे मुझे सन्तोष ही हुआ है। तेरी होशियारी तेरे चेहरेसे झलकती है। देवदासको मै तो समझा रहा हूँ कि वह कुछ भूल कर रहा है। रामचन्द्रनको जो पत्र लिखा है, वह भी क्या सिद्ध करता है? मेरी नजरमे तेरी कीमत बहुत है, यह समझ ले। मेरे पास आनेमें तुझे संकोच होता है, यह मेरे और तेरे दोनोके लिए शर्मकी बात है। इस प्रकारकी शर्मका कोई कारण तो नहीं है।

इलायची, तेल और टूथपेस्ट, इन तीनमें से एककी भी जरूरत नही है। जले कंडोंकी मैदा-जैसी महीन राख और नमक अथवा नीमकी दातौन दाँतोको उम्दा रखते हैं। खोपरेका तेल बालोके लिए सबसे बढिया होता है। उसमें नीबूके रसकी कुछ बूँदें डाल दी जायें, तो वह और बढिया हो जाता है। इलायचीकी अपेक्षा नीमकी पत्तियाँ अधिक अच्छी होती है, गाँववाले उन्हें मुख-शुद्धिके लिए काममें लाते हैं।

जहाँ तुझे शादी[1] करनी है, वहाँ भरतके चारित्र्यकी आवश्यकता है। तेरा विवाह संयमका उदाहरण प्रस्तुत करेगा, मैं ऐसी आशा सँजोये हुए हूँ।

तुझे किसी भी प्रकारका असन्तोष नही होना चाहिए, अध्ययन-सम्बन्धी भी नही। यहाँके क्लेश सहन कर गया, तो आदमी बन जायेगा। नही सहन कर सका, तो भी दुनियादार तो बन ही जायेगा। मेरे पास रहते हुए पृथुराज सूख कर काँटा हो गया था, और रुपए-पैसेकी इफरात होते ही उसका वजन बढकर १३५ पौंड हो गया। इस सबसे मुझे तो बहुत-कुछ सीखनेको मिलता है। तू मेरे पास पूर्ण

१. देखिए पृ० २४-६ भी।

आनन्दमें रहना। अपना शरीर क्षीण करके रहे, इससे तो मुझे यह बर्दाश्त होगा कि तू मुझसे दूर रहे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यह दुबारा नहीं पढ़ा है। समझमें न आये, तो फिर पूछना। कुछ छूट गया हो तो पूरा कराना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७२९६)-से; सौजन्य : कान्ति गांधी

५२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
५ मई, १९३५

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा तार मिला। २५ तारीखको मैं वहाँ[1] पहुँच जाऊँगा। यदि २३ तारीखको पहुँचूं तो हर्ज तो नहीं है न? अगर २२ तारीखको बम्बईमें कमलासे मिला, तो शायद २३ तारीखको सवेरे वहाँ पहुँचूंगा। लिखना, वहाँ कितने दिन रोकनेका विचार है। कमसे-कम दिन रोकना।

राजाजी की थकावटका पार नहीं है। इसमें उनका दोष भी क्या बताया जाये? जिसका मन थक जाये, उसे क्या जबरन् रखा जा सकता है?[2] तुम और राजेन्द्रबाबू वगैरा किसे त्यागपत्र दोगे? जो हैं वे जबतक काम चले, चलायें। किसी दलसे किया जा सके तो वह खुशीसे कांग्रेसपर कब्जा कर लें।[3]

जयप्रकाशने तुमको जो पत्र भेजा है, उसकी नकल मुझे दिखानेके लिए उसने प्रभावतीको भेजी है। वह किस बारेमें हैं? तुम ऐसा क्या बोले हो?

आठवले यहाँ आये थे। वे चले गये। मुझसे भी उन्होंने वही बात कही थी, जो तुमको लिखी है।

अब तो प्लेगका जोर कम हो गया होगा। क्या तुममें ताकत आ गई?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १६५

१. बोरसद।

२. चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ११ मई, १९३५ को अस्थायी तौरपर सक्रिय राजनीतिसे अलग हो गये थे।

३. अपने २ मईके पत्रमें वल्लभभाई पटेलने लिखा था कि एकके-बाद-एक सदस्यके कांग्रेस छोड़ते चले जानेसे उन्हें कितनी कठिनाई हो रही थी।

५३. पत्र : नारणदास गांधीको

५ मई, १९३५

चि० नारणदास,

चि० हरिलाल फिर राजकोट वापस जा रहा है। उसे ब्याह तो करना ही है। योग्य संगिनी मिलनेकी शर्त जरूर रखी है। मुझे लगता है कि ऐसा नही हो सकता है कि वह विवाह करके मेरे साथ रहे। उसका विवाह मैं सहन तो कर सकता हूँ, लेकिन उसका स्वागत नही कर सकता, उसे पसन्द नही कर सकता। उसका विवाहित जीवन सुखी हो, ऐसी कामना तो करता ही हूँ। हमारी अनेक प्रवृत्तियोंमें से किसीमें लगकर वह अपना गुजारा करे, इसमें तो कोई आपत्ति नही हो सकती, बल्कि यह मुझे अच्छा ही लगेगा। लेकिन मैं उसकी सिफारिश नही कर सकता। हरिलालकी इच्छा फिलहाल तो तुम्हारे दिये कमरेमें ही रहनेकी है। अगर तुम्हें यह ठीक लगे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन यह उचित है या अनुचित, इसका विचार तुम्हींको करना है। मैं परिस्थिति तो जानता ही नही। अब तुम्हें हरिलालको मासिक खर्चके लिए कुछ नही देना है, लेकिन १०० रुपयेतक एक मुश्त या जैसे वह कहे वैसे दे देना। इससे ज्यादाकी जरूरत होगी तो वह खुद कमा लेगा। उसका विचार कोई नौकरी ढूंढ़ने अथवा व्यापार करनेका है। मुझे कुछ सूझ नहीं रहा। उसका यहाँ रहना मुझे अच्छा लगता था। यथाशक्ति काम करता था। सबके साथ घुल-मिलकर रहता रहा। कहता है कि उसकी शराबकी लत छूट गई है। और मैंने यह समझा है कि विवाह तो वह करना चाहेगा किन्तु विषय-भोगकी वासनासे वह मुक्त हो गया है। इस सम्बन्धमें उससे कोई खोद-खोदकर पूछताछ नही की है। धूम्रपानका व्यसन उसे अब भी है और मुझसे अनुमति लेकर वह रोज तीन बीड़ियाँ पीता है। मैं मानता हूँ कि वह तीनकी सीमाकी रक्षा करता रहा है।

तो यह रही हरिलालकी कथा। अब भाग्य उसे जिधर ले जाये, ले जाये। आया धन खो न जाये तो भी ईश्वरकी कृपा मानूँगा।

मैथ्यूके सामने जो शर्तें[1] रखी गई हैं, उनपर वह आनेको तैयार है। अब वह वर्धा आश्रमसे पैसा माँग रहा है, ताकि उसमें से वह यात्रा-व्यय निकाल सके। मैं आश्रमकी स्थिति बतानेको लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४४१ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. देखिए पृ० ४ भी।

५४. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

५ मई, १९३५

चि० अम्बुजम,[1]

तुमारा खत मिला। पिताजी के स्वास्थ्यके बारेमें मुझे खबर देते रहो।

तुमने चावल भेजे वह बहुत अच्छे थे। लेकिन थोडे पोलिश थे। पोलिश बिलकुल नहीं होने चाहिये।

क्रिश्नास्वामी[2] के लिये लड़की ढुंढनेकी कोशीश अवश्य करो। लेकिन उसकी चिंता कैसे? चिंतासे लड़की थोड़े ही मिलनेवाली है। वह तो प्रयत्नसे ही मिलेगी।

व्रतक श्लोक यह है:

> अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असंग्रह,
> शरीरश्रम, अस्वाद, सर्वत्र भयवर्जन।
> सर्वधर्मी समानत्व, स्वदेशी, स्पर्शभावना[3],
> ही एकादश सेवावी नम्रत्व व्रत निश्चये॥[4]

यह पढ़ सकती है?

साथका पत्र पिताजी का देना।

बापुके आशीर्वाद

मूलपत्रसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. एस० श्रीनिवास अय्यंगारकी पुत्री। वे बालिका उच्च विद्यालय, मद्रासकी प्रधान थीं।

२. एस० अम्बुजम्मालके पुत्र।

३. अस्पृश्यताके प्रति सही दृष्टिकोण।

४. ये दो संस्कृत श्लोक विनोबा भावेने रचे थे और आश्रमकी प्रार्थनामें इनका गायन किया जाता था।

५५. पत्र : हीरालाल शर्माको

५ मई, १९३५

चि० शर्मा,

तुमको कल एक खत भेजा। अब स्टीमरके बारेमें उत्तर[1] आ गया है, सो उसके पीछे है,[2] ठीक है ना? . . .[3] कार्गो बोटकी मुसाफिरी बिलकुल खराब नही है। मैं मुंबईसे सीलोन तक कार्गो बोटमें ही गया था।[4] मुझे ज्यादा अच्छा लगा था। एकान्त थी।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १५८

५६. पत्र : बलीबहन एम० अडालजाको

६ मई, १९३५

चि० बली,

मेरे पत्रमें क्रोध नहीं था। हरिलालने मुझसे ऊँच-नीच कुछ नही कहा। मनुके पत्रके आधारपर ही मैंने वह-सब पूछा था, सो भी अपनी जानकारीके लिए। हरिलाल भी अगर इसमें बीचमें पड़ता है, तो मुझे क्या लेना-देना है? रामीकी सगाई भी तूने और हरिलालने की थी। विवाह कर देना तो फिर मेरे सिरपर आ पड़ा था, क्योंकि हरिलालका उस समय दिमाग ठिकाने नही था। मनुका विवाह तू और हरिलाल कर दें, इसमें मुझे कोई एतराज नही है। यदि मुझे करना पड़े, तो मनुको मेरे पास होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५४२) से, सौजन्य . मनुबहन मशरूवाला

१. घनश्यामदास बिड़लाका।

२. अर्थात् पत्रके पीछे। दरअसल गांधीजी ने यह पत्र घनश्यामदास बिड़लासे प्राप्त उत्तरकी दूसरी ओर लिखा था।

३. साधन-सूत्रके अनुसार।

४. नवम्बर १९२७ में; देखिए खण्ड ३५।

५७. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

वर्धा
६ मई, १९३५

भाई घनश्यामदास,

तुमारे खत मिले हैं। १७-१८ के नजदीक आ जाओगे तो अच्छा होगा। १६ उससे भी अच्छा। १८ को हिन्दी-सम्मेलनकी स्थायी समितिकी सभा होगी तो भी समय तो निकालूंगा। २१ को मुझे भी मुंबई जाना होगा। कमला नेहरूको मिलनेके लिये। वह तुमारी ही जहाजमें जायेंगी। एसफेल्ट लाइनकी स्टीमर कलकत्तेसे जाती है। सीधी न्यूयार्क जाती है?

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मीराबहनकी मधुमाखीकी किताब वापिस चाहिये।

मूल (सी० डब्ल्यू० ८०१०) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

५८. पत्र : अवधेशदत्त अवस्थीको

७ मई, १९३५

चि० अवधेश,

तुलसीदासने ही कहा है ना कि रामसे नाम बड़ा है। अर्थात् देहधारी रामसे देहातीत अरूपी, अनामी राम बड़ा है। दशरथनन्दन सीतापति राम सही तदपि हमारी कल्पनाके पूर्ण पुरुषोत्तम राम क्योंकि [अव्यक्त है, अतः] अव्यक्त भी व्यक्तसे भिन्न नहीं है। अव्यक्तकी ही यह सब माया है। राम शब्द पर मेरा कोई आग्रह नही। भले ओंकार, कृष्ण, ईश्वर क्यों नहीं।

क्रोध तो आता है, उस पर क्रोध करता हूं। पूर्ण विजय आत्म-दर्शन से ही सम्भव है।

हमको कोई कैसे भी नीच माने उनपर प्रेम करें, वही अहिंसा, बाकी सब माया।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२१२) से।

५९. पत्र : छगनलाल जोशीको

वर्धा
८ मई, १९३५

चि० छगनलाल,

बहुत दिन बाद तुम्हारा पत्र मिला है। तुम्हारे खिलाफ शिकायत तो आई थी, पर उसमें मुझे लिखनेकी कोई बात नजर नही आयी। जीवणलालके यहाँ आने पर कुछ लिखने लायक होगा तो लिखूँगा। तुमने क्या सेवा-धर्म किसीकी खातिर अपनाया है? जबतक चल सके, चलाओ। तुम निश्चिन्त रहना। आखिरमें यदि कुछ करनेकी जरूरत जान पड़ी तो करेंगे। तुम्हारा मानभंग नही होने दूंगा। तुम अपने काममें तन्मय रहना। व्यर्थका उद्वेग न करना।

आशा है, रमा[1] और बच्चे मजेमें होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५२९) से।

६०. पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

८ मई, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

हरिभाईके सम्बन्धकी बात ठीक समझ गया। उसे एक पैसा भी देना मैं अनुचित समझता हूँ। उसका भला इसीमें है कि उसे उसके प्रयत्नोपर छोड़ दिया जाये। यदि जमीन बेचकर वह वहाँसे आ जाये, तो उसे आगे बढानेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। उसका सचीनके पास पड़े रहना तो चाबुक बनानेके लिए भैंसकी जान लेने-जैसा है। तुम्हारा कर्त्तव्य भी यही है कि उसे सचीनसे[2] अलग करो।

गुजरातके खर्चवाला तुम्हारा दूसरा पत्र ध्यानपूर्वक पढकर उसपर विचार कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५९) से।

१. छगनलाल जोशीकी पत्नी।
२. देखिए पृ० १९।

६१. पत्र : उदयप्रसादको

८ मई, १९३५

भाई उदयप्रसाद,[1]

आपके पद्य कुछ याद तो आते हैं। मैंने पढे नही क्योंकि भाई किशोरलाल व काकासाहेबने कहा उसमें पढनेके लायक कुछ बहुत नही है। १५ मिनिट भी कहाँसे?

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९७५३) से।

६२. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
९ मई, १९३५

चि० मेरी,

डॉ० टैण्डीका[2] लिखा पत्र नत्थी कर रहा हूँ। उनका बिल ८७ रुपयेका बना है। मैंने इसे चुकता करनेको कह दिया है।

तुमने मिरज जानेकी उनकी सलाहके बारेमें क्या सोचा है? अगर तुम पूरी तरह आराम करो और ठीक पौष्टिक आहार लेती रहो तो शायद और कुछ करनेकी जरूरत ही न पड़े। मुझे सविस्तार लिखना।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

मैंने तुम्हें लिखा था या नहीं कि छोटेलाल मधुमक्खी-पालनका कार्य सीखनेको कोयम्बटूर गया है? देखता हूँ कि मनीआर्डर तुम्हें भेज दिया गया है। मुझे अफसोस है। डॉ० टैण्डीको वह राशि अब तुमको ही भेजनी पड़ेगी।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०४०) से। सी० डब्ल्यू० ३३७२ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

१. बोदेगाँव, मध्य प्रान्तके।
२. डॉ० टैण्डी एफ० मेरी बारका इलाज कर रही थीं।

६३. पत्र : नारणदास गांधीको

९ मई, १९३५

चि० नारणदास,

साथमें भगवानजीका[1] पत्र है। इनकी सहायता करनेके लिए तुम जाना या किसी और को भेजना। आसपासके गाँवोंमें जाना कोई बड़ी बात नहीं है। जाकर इनसे मिलना। वे सज्जन व्यक्ति हैं और बहुत-कुछ करनेकी इच्छा रखते हैं। यदि शालाको समय देनेकी इच्छा प्रकट करें तो उनकी सेवा स्वीकार करना। अलबत्ता, तुम्हारा अनुभव विपरीत हो तो छोड़ देना।

लीलावतीका पत्र साथमें है। केशूकी क्या खबर है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४४३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

६४. पत्र : नारणदास गांधीको

९ मई, १९३५

टाइटसके बारेमें तुम्हारा पत्र मिला। अगर आश्रममें गोशाला कायम न ही रह सके तो वह [टाइटस] बखूबी चला जाये।

बापू

[पुनश्च :]

मैथ्यूको फिर लिखना ही है।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो–९ : श्री नारणदास गांधीने, भाग-२, पृ० १९०। सी० डब्ल्यू० ८४४२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. राजकोटके एक वकील भगवानजी अनूपचन्द मेहता।

६५. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

९ मई, १९३५

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला। क्या गायके बिना हरिजन आश्रम चल सकता है? मेरी धारणा यह है कि आश्रममें गायके साथ साँड़ रखना चाहिए, बाकीके ढोर पिंजरा-पोलको सौंप देने चाहिए। बीड़जका क्या करना चाहिए, यह सोच लेना। यदि सम्भव हो, तो मुझसे बिना पूछे, मगर ट्रस्टियोंसे पूछकर, ढोर बेखटके रामभाईको सौंप देना। क्या वे इतनी कीमत देंगे?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०७८) से।

६६. पत्र : कृष्णचन्द्रको

९ मई, १९३५

चि० कृष्णचन्द्र,

तुमारा उद्देश तो आत्म-दर्शन है। उसके लिये एकादश व्रत[1] जिसका चितवन हम नित्य करते हैं, आवश्यक हैं। इसलिए आज तुमारे रास्तेमें थोड़ी [असुविधा] है। कौटुंबिक कर्ज भरनेका एक हदतक फर्ज बन गया सा है। सरल प्रयत्नसे यह भर दिया जा सकता है तो किया जाय। इसके लिये भी तुमारे पंच महाव्रत[2] तो आवश्यक है। मेरी आशा है कि प्रफुल्लित [चित्तसे] सब व्रतों पर कायम रहोगे।

एक वर्ष तक अभ्यास छोड़कर शरीरको अच्छा बना लो और बुद्धिको ताजा कर दो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२६८) से।

१. देखिए "पत्र : कृष्णचन्द्रको", पृ० ३७।

२. अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह।

६७. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

वर्धा
१० मई, १९३५

चि० ठक्कर बापा,[1]

चन्द्रशेखरको लिखा आपका पत्र पढा। मेरे किस पत्रसे आपने यह निष्कर्ष निकाला? ३,७४२-३-८ रुपये बट्टे खातेमें डाल दिये। इतना रुपया बट्टेखातेमें डाल देनेका मतलब हुआ कि 'हरिजन' ने दिवाला निकाला दिया। क्या यह रुपया 'हरिजन' कोडंबाकमको भेंट कर दे? जहाँतक मुझे याद है, मेरी आपके साथ कोढ़पत्रके बारेमें चर्चा हुई है। 'हरिजन' को जारी रखनेके लिए आप तो मुझे पैसा देनेको तैयार थे। अब आप 'हरिजन' पर बोझ डालना चाहते हैं? उसके पास पैसा हो जाये, तो जरूर डालिए।

४,००० रुपयेका नुकसान भुगताइयेगा, तो 'हरिजन' बन्द करनेकी नौबत आ जायेगी। ग्राहक बढ़ानेके लिए किसीको कुछ न लिखें, यह मैं ठीक ही समझता हूँ। उसमें कुछ सार होगा, तो लोग खरीदेंगे। अन्यथा खत्म होता है तो हो जाये।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११५६)से।

६८. भेंट : एक मिशनरी नर्सको[2]

[११ मई, १९३५के पूर्व]

[नर्स :] मैंने सुना है कि आपको कभी क्रोध नहीं आता। क्या यह बात ठीक है?

[गांधीजी :] यह बात तो नही है कि मुझे क्रोध नही आता। बात यह है कि मैं क्रोधको प्रकट नही होने देता। धैर्यके गुणका मैं अक्रोधके रूपमें अभ्यास करता रहता हूँ, और साधारणतया उसमें मुझे सफलता भी मिली है। पर वास्तवमें जब क्रोध आता है, तब मैं उसे दबा-भर देता हूँ। यह पूछना व्यर्थ ही होगा कि मैं किस तरह उसे दबा पाता हूँ। अभ्याससे यह आदत प्रत्येक मनुष्य डाल सकता है और निरन्तर अभ्याससे उसमें उसे सफलता भी मिल सकती है।

आपने अपने अन्तरमें दीन-दुखियोंके प्रति प्रेमका अनुभव कब किया? क्या आप मुझे वह समय अथवा प्रसंग बतला सकेंगे?

१. हरिजन सेवक संघके महामंत्री।

२. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र)से उद्धृत।

आदिसे ही दीन-दुखियोंके प्रति प्रचुर प्रेम मेरे जीवनका अभिन्न अंग रहा है। अपने अतीत कालके जीवनमें से दृष्टान्त देने बैठूं तो मैं बतला सकता हूँ कि मेरा यह स्वभाव एक जन्मजात वस्तु है। यह मैंने कभी माना नहीं कि मेरे और गरीबोंके बीचमें किसी तरहका कोई भेद है। उन्हें सदा अपना सगा-सम्बन्धी ही माना है।

गन्दगी और कूड़ा-करकट क्या आपके मनमें घृणा पैदा नहीं करते?

मेरे मनमें गन्दे लोगोंके लिए तो घृणाकी भावना पैदा नहीं होती, पर गन्दगी देखकर मैं काँप जाता हूँ। मैं गन्दी थालीमें नहीं खा सकता, न गन्दा चम्मच या रूमाल छू सकता हूँ। पर कचरेको उसके योग्य स्थानपर ले जाकर डाल देना मैं ठीक समझता हूँ। वहाँ वह कचरा कचरा नहीं रहता।[1]

यह मुझे जरूर लगता है कि भिक्षावृत्तिको प्रोत्साहन देना अच्छा नहीं; तो भी मैं भिखारीसे काम लेकर उसे भोजन दिये बिना नहीं जाने दूँगा। अगर वह काम न करे तो उसे भूखा चला जाने दूँगा। जो अपंग हैं, लूले-लँगड़े या अन्धे हैं उनकी परवरिश सरकार को करनी चाहिए। पर अन्धेपनके ढोंगके नामपर या सचमुचके अन्धेपनके नामपर आज भारी दगाबाजी चल रही है। कितने ही अंधे अनुचित रीतिसे पैसा पैदा करके धनी बन गये हैं। उन्हें इस लोभ-पंकमें फँसानेसे तो यह कहीं अच्छा है कि उन्हें किसी अनाथाश्रममें भरती कर दिया जाये।

क्या आप लोगोंका धर्मान्तरण करनेके लिए मिशनरियोंके भारत-आगमनपर रोक लगा देना चाहेंगे?

उन्हें रोकनेवाला मैं कौन होता हूँ? अगर मेरे हाथमें सत्ता हो और मैं कानून बना सकूँ तो मैं धर्मान्तरणका यह सारा कारोबार ही बन्द करा दूँ। इससे वर्ग-वर्गके बीच निश्चय ही निरर्थक कलह और मिशनरियोंके बीच बेकारका द्वेष बढ़ता है। यों किसी भी राष्ट्रके लोग शुद्ध सेवा-भावसे आयें तो मैं उनका स्वागत करूँगा। हिन्दू-कुटुम्बोंमें मिशनरीके प्रवेशसे वेश-भूषा, रीति-रिवाज, भाषा और खानपानतक में परिवर्तन हो गया है और इस सबका नतीजा यह हुआ है कि सुन्दर हरे-भरे कुटम्ब छिन्न-भिन्न हो गये।

आप जो कहते हैं वह तो पुराने जमानेकी बात है। अब धर्म-परिवर्तनके साथ इन सब चीजोंका सम्बन्ध नहीं है।

बाह्य स्थिति शायद बदल गई होगी, पर आन्तरिक स्थिति तो अधिकतर अब भी वैसी ही है। हिन्दू-धर्मकी निन्दा दबी जबानसे आज भी की जाती है। मिशनरियों की दृष्टिमें अगर आमूल परिवर्तन हो गया होता तो क्या आज भी मिशनोंकी दुकानों पर मरडोककी किताबें बिकने दी जाती? क्या मिशनरियोंके संघोंने किताबोंके बेचे जानेकी मनाही कर दी है? इन किताबोंमें सिवा हिन्दू-धर्मकी निन्दाके और है ही क्या? आप कहती हैं कि उस पुरानी कल्पनाके लिए अब स्थान नहीं रहा। अभी कुछ ही दिन हुए, एक मिशनरी एक दुर्भिक्ष-पीड़ित अंचलमें पैसा लेकर पहुँच गया, अकाल-पीड़ितोंको उसने पैसा बाँटा, उन्हें ईसाई बनाया; फिर उनका मन्दिर हथिया

१. यहाँ महादेव देसाई लिखते हैं कि इसके बाद मुलाकातीने भिखारियोंकी समस्याकी चर्चा छेड़ी।

लिया, और उसे तुड़वा डाला। यह अत्याचार नहीं तो क्या है? जिन हिन्दुओंने ईसाई धर्म ग्रहण कर लिया था उनका अधिकार तो उस मन्दिरपर रहा नहीं था, और ईसाई मिशनरीका भी उसपर कोई हक नहीं था। पर वह मिशनरी वहाँ पहुँचता है, और जो लोग कुछ ही समय पहले यह मानते थे कि उस मन्दिरमें ईश्वरका वास है, उन्हींके हाथसे उसे तुड़वा डालता है।

पर गांधीजी, आप धर्म-परिवर्तन-मात्रके विरुद्ध क्यों हैं? हम तो लोगोंको और भी अच्छा जीवन बितानेके लिए आमन्त्रण देते हैं; क्या उसके लिए बाइबिलमें प्रमाण नहीं है?

हाँ, है; पर उसका यह अर्थ नहीं है कि उन्हें आप ईसाई धर्ममें दीक्षित कर लें। आप अगर अपने धर्मवचनोंका ऐसा अर्थ करने लग जायें जैसाकि किया जा रहा है तो इसका यह मतलब हुआ कि आप लोग मानव-समाजके उस विशाल हिस्सेको पतित मानते हैं जिसका विश्वास वैसा नहीं है जैसा आपका है। ईसा मसीह यदि आज पृथ्वीपर पुनः अवतीर्ण हों तो ईसाई धर्मके नामपर जो बातें आज हो रही हैं उनमें से बहुत-सी बातोंको वे निषिद्ध ठहरा दें। जो मुखसे 'प्रभो, प्रभो' उच्चारण करता है, वह ईसाई नहीं है; सच्चा ईसाई वह है जो "प्रभुकी इच्छाके अनुसार आचरण करता है"। जिस मनुष्यने ईसा मसीहका नाम नहीं सुना, क्या वह प्रभुकी इच्छाके अनुसार आचरण नहीं कर सकता?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-५-१९३५

६९. घोर दुर्व्यवहार

करीब चार महीनेसे मैं हरिजन सेवक संघकी ओरसे एक बस्तीमें काम कर रहा था। मेरे काम शुरू करनेसे पहले नैतिक अपराध करनेपर एक हरिजनको बस्तीसे निकाल दिया गया था। एक दिन वह हरिजन अपने लड़केको, जो हमारी पाठशालामें पढ़ रहा था, देखने बस्तीमें वापस आया। मैंने उसे अपने साथ ठहरा लिया। रातमें वह पाठशालाके ओसारेमें पड़ा हुआ था। मैं किसी कामसे बाहर गया था। इस बीच जिसे उसने फुसलाया था उस औरतके पाँच नजदीकी नातेदार और कुछ तथाकथित सवर्ण हिन्दू वहाँ चढ़ आये, और विवाहित स्त्रीको फुसलानेके उस पुराने अपराधपर उस हरिजनको उन लोगोंने बहुत बुरी तरह पीटा, और घसीटकर उसे ओसारेसे बाहर कर दिया। ज्यों ही मुझे इसका पता लगा, मैं उन लोगोंके पास पहुँचा, जिन्होंने कानूनको अपने हाथमें ले लिया था। मैंने उनके उस दुर्व्यवहारका विरोध किया, और उस हरिजनको फिरसे बस्तीमें दाखिल कर लेनेके लिए उनसे कहा। उन्होंने साफ इन्कार कर दिया। इसलिए मैंने वहाँ रहना ठीक नहीं समझा, और उस गाँवको छोड़कर चला आया।

एक लम्बे पत्रका यह बहुत ही संक्षिप्त रूप है। इस बयानकी सत्यताका मैं कोई दावा नहीं कर सकता। किन्तु जैसा कहा गया है, वह यदि सही है, तो निश्चय ही लोगोंका उस हरिजनको उस तरह पीटना एकदम अनुचित था। अगर उसने कोई जुर्म किया था तो उसपर मुकदमा चलाना चाहिए था। पर इस तरह कानूनको खुद अपने हाथमें ले लेनेका, खुद ही मुंसिफ बन जानेका किसीको कोई अधिकार नहीं था। जो बस्ती इतना मामूली-सा इन्साफ करनेको भी तैयार नहीं थी, वहाँ इस हरिजन-सेवकने न रहना मुनासिब समझा तो अच्छा ही किया। मैं आशा करता हूँ कि यह मामला स्थानीय संघके आगे रखा गया होगा और संघने इस बातका प्रयत्न किया होगा कि लोग उस हरिजनके प्रति सद्व्यवहार करने लगें। इस सारे मामलेकी तहकीकात बहुत अच्छी तरह होनी चाहिए। ऐसे मामले शायद अक्सर और काफी तादादमें होते रहते हैं। यह हरिजन-सेवकोंका काम है कि एक ओर तो वे अत्याचार-पीड़ितोंकी रक्षा करें, और दूसरी ओर जहाँ उनके चरित्रमें कोई दोष देखें वहाँ उन्हें सदाचारका मार्ग दिखायें। अपराधियोंकी कोई खास जाति नहीं होती। दूधका धोया कोई नहीं है। अपराधियोंके हृदयपर केवल सुयोग्य और सच्चरित्र जन-सेवकोंका ही प्रभाव पड़ सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-५-१९३५

७०. हरिजनोंके लिए कुएँ

बम्बई-सरकारने बम्बई सूबेमें हरिजनोंके लिए कुएँ बनवानेका जो निर्णय किया है, उसके लिए उसे धन्यवाद दिया जाना चाहिए। कामको देखते हुए तो उसके लिए रकम बहुत ही कम रखी गई है। यह तो हम सबको भलीभाँति विदित है कि वर्षोंसे कांग्रेस द्वारा स्थापित भूतपूर्व अस्पृश्यता-निवारक बोर्डकी तरफसे, और अब सन् १९३२ से हरिजन सेवक संघकी ओरसे गुजरातमें हरिजनोंके लिए कुएँ बनवाये जा रहे हैं। संघका कूप-निर्माणका कार्यक्रम काफी व्यापक है। चुपचाप काम करनेवाले महान् जन-सेवक श्रीयुत जूथाभाईने भी इस सुन्दर धर्म-कार्यपर ध्यान देनेका निश्चय किया है। क्या ही अच्छा हो कि इस एक ही उद्देश्यको लेकर काम करनेवाली भिन्न-भिन्न संस्थाओंमें पूरा-पूरा सहयोग रहे। अगर सहकारी प्रयत्न सम्भव न हो, तो कमसे-कम श्रम और कार्यक्षेत्रका विभाजन तो होना ही चाहिए। किसी भी अवस्थामें जो-कुछ भी काम किया जाये उसमें यह ध्यान रहे कि काम शीघ्रता से हो, अच्छा हो, और पैसा कमसे-कम खर्च हो। सस्तेसे-सस्ता काम तो तभी हो सकता है, जब हरिजन हिन्दू या सवर्ण हिन्दू अथवा दोनों ही स्वेच्छापूर्वक इस धर्म-कार्यमें अपने शारीरिक श्रमका योग दें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-५-१९३५

७१. एक ग्राम-सेवकके प्रश्न

एक ग्राम-सेवक लिखता है:

१. सौ-एक घरके एक छोटे-से गाँवमें मैं काम कर रहा हूँ। आपने कहा है कि दवा-दारू देनेके पहले ग्राम-सेवकोंको स्वच्छतापर ध्यान देना चाहिए। लेकिन जब कोई ज्वर-पीड़ित ग्रामवासी मदद माँगने आये, तब ग्राम-सेवकका क्या कर्त्तव्य है? अबतक तो मैं उन्हें गाँवकी दुकानोंमें मिलनेवाली देशी जड़ी-बूटियोंको ही काममें लानेकी सलाह देता आया हूँ।

२. बरसातके दिनोंमें मैलेका क्या करना चाहिए?

३. मैला क्या सभी फसलोंमें काम दे सकता है?

४. शक्करके बजाय गुड़ खानेमें क्या लाभ है?

जहाँ ज्वर, कब्ज या इसी प्रकारके सामान्य रोगोंके रोगी ग्राम-सेवकोंकी मदद लेने आयें, वहाँ वे उनकी जो मदद कर सकें, जरूर करें। रोगका निदान अगर सही हो गया हो तो बेशक गाँवमें उस रोगकी सस्तीसे-सस्ती और अच्छीसे-अच्छी दवा मिल जायेगी। दवाइयाँ कोई अपने पास रखना ही चाहता है तो अण्डीका तेल, कुनैन और उबला हुआ गरम पानी सबसे बढ़िया दवाइयाँ हैं। अण्डीका तेल सभी जगह मिल सकता है। सनायकी पत्तीसे भी वही काम निकल सकता है। कुनैनका कम ही उपयोग करना चाहिए। प्रत्येक प्रकारके ज्वरमें कुनैन देनेकी जरूरत नहीं और न प्रत्येक ज्वर कुनैनसे काबूमें आता ही है। अधिकांश ज्वर तो पूर्ण या अर्ध-उपवाससे ही शान्त हो जाते हैं। अन्न और दूधको छोड़ देना और फलोंका रस अथवा मुनक्केका उबला हुआ पानी लेना और नींबूके ताजे रस या इमलीके साथ गुड़का उबला हुआ पानी लेना भी अर्ध-उपवास है। उबला हुआ पानी तो रामबाण औषधि है। आँतोंको वह खलबला डालता है और पसीना लाता है, जिससे बुखारका जोर कम हो जाता है। यह एक ऐसी रोगाणुनाशक औषध है, जिसमें किसी भी तरहकी जोखिम नहीं और सस्ती इतनी कि एक कौड़ी भी खर्च नहीं होती। हर हालतमें जब भी पानी पीना हो तो उसे कुछ सिराकर पीना चाहिए। उतना ही गरम पीना चाहिए जितना अच्छी तरह सहन हो सके। उबालनेका मतलब सिर्फ गरम करना नहीं है। पानीमें जब बुलबुले उठने लगें और उससे भाप निकलने लगे, तभी उसे उबला हुआ समझना चाहिए।

जहाँ ग्राम-सेवक खुद किसी निश्चयपर न पहुँचें वहाँ रोगीको पूरी तरह स्थानीय वैद्य पर छोड़ देना चाहिए। जहाँ वैद्य न हो अथवा हो तो भरोसेका न हो और ग्राम-सेवक पड़ोसके किसी परमार्थी डॉक्टरको जानते हों, तो उससे जरूर मदद लेनी चाहिए।

पर वे देखेंगे कि रोगके उपचारमें भी स्वच्छताका स्थान सबसे महत्त्वका है। उन्हें यह याद रखना चाहिए कि सर्वश्रेष्ठ वैद्य तो प्रकृति ही है। इस बातका वे विश्वास रखें कि मनुष्य जिसे बिगाड़ देता है, प्रकृति उसे सँवारती रहती है। लाचार तो वह उस समय मालूम पड़ती है जब मनुष्य लगातार उसकी अवहेलना करता है। तब जो असाध्य हो जाता है, उसे नष्ट कर डालनेके लिए वह अपने अन्तिम और अटल दूत मृत्युको भेजती है और उस देहधारीको नया चोला पहना देती है।

२. बरसातके दिनोंमें भी गाँववालोंको ऐसी जगहोंपर शौच करना चाहिए जहाँ मनुष्यके आने-जानेका रास्ता न हो। मैलेको गाड़ जरूर देना चाहिए। पर ग्रामवासियोंको परम्परासे जो भ्रामक शिक्षा मिली है, उसके कारण मैलेको गाड़नेका यह प्रश्न सबसे कठिन है। सिंदी गाँवमें हम लोगोंको यह समझानेका प्रयत्न कर रहे हैं कि वे सड़कोंपर पाखाना न करें बल्कि पासके खेतोंमें जायें और अपने पाखानेपर सूखी-साफ मिट्टी डाल दिया करें। दो महीनेकी लगातार मेहनत और नगरपालिकाके सदस्यों तथा दूसरे लोगोंके सहयोगका इतना परिणाम तो हुआ है कि वे साधारणतया सड़कोंको खराब नहीं करते। इसके बजाय पासके खेतोंमे चले जाते हैं और उन खेतोंके मालिकोंने भी उन्हें इसके लिए अपने खेतोंके इस्तेमालकी इजाजत देनेकी भलमनसाहत दिखाई है। मगर लोगोंसे कितना ही क्यों न कहा जाये, मिट्टी तो वे अब भी अपने मल-मूत्रपर नहीं डालते। पूछिए तो यह जवाब देते हैं कि यह तो भंगीका ही काम है, मैलेको देखना ही पाप है, फिर उसपर मिट्टी डालना, यह तो घोर पाप हुआ। उन्हें शिक्षा ही ऐसी मिली है। यह विचित्र विश्वास उसी शिक्षाका फल है। इसलिए ग्राम-सेवकोंको सिर्फ नव-संस्कारकी ही रचना नहीं करनी है। ग्रामवासियोंके हृदयपर नया संस्कार जमानेके पहले ग्राम-सेवकोंको उनके इन रूढ़िगत संस्कारोंको एकदम मिटा देना होगा। अगर हमारा अपने कार्यक्रममें दृढ़ विश्वास है, अगर हममें नित्य सवेरे झाड़ू आदि लगानेका काम चलाते रहनेका पर्याप्त धैर्य है और सबसे बड़ी बात यह कि अगर हम गाँववालोंके इन कुसंस्कारोंपर चिढ़ते नहीं हैं, तो उनके ये सब मिथ्या विश्वास इस प्रकार लुप्त हो जायेंगे, जिस प्रकार सूर्यके प्रकाशसे कोहरा नष्ट हो जाता है। युगोंका यह वज्र-अज्ञान कहीं आपके दो-चार महीनेके पदार्थ-पाठसे दूर हो सकता है?

सिंदी गाँवमें हम वर्षाका सामना करनेकी भी तैयारी कर रहे हैं। अपनी खेतीकी रखवाली तो किसान करेंगे ही। तब इस तरह वे लोगोंको शौचके लिए अपने खेतोंमें थोड़े ही आने देंगे, जिस तरह अभी आने देते हैं। हमने लोगोंके सामने यह तजवीज रखी है कि वे खेतीकी हदबन्दीके अन्दर कुछ जमीनको बिलकुल अलग करके उसमें बाड़ लगायें। वे जो चन्द फुट जमीन छोड़ देंगे उसमें चौमासेके अन्तमें काफी खाद तैयार हो जायेगी। वह वक्त आ रहा है जब खेती करनेवाले खुद ही लोगोंसे अपने खेतोंमें शौच करनेको कहेंगे। अगर डॉ० फाउलरके हिसाबको मान लें तो किसी भी खेतमें बिला नागा शौच-क्रिया करनेवाला मनुष्य वर्षमें दो रुपयेकी खाद उस खेतको दे देता है। ठीक दो ही रुपयेकी खाद हासिल होती है या कुछ कम-ज्यादा, इसमें सन्देह हो सकता है; पर इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि मल-मूत्रके संचयसे खेतको फायदा होता है।

३. यह सलाह तो किसीने दी नहीं है कि मैला ज्यों-का-त्यों सभी फसलोंके लिए बतौर खादके काममें आ सकता है। मतलब सिर्फ इतना है कि मैला मिट्टीके साथ मिलकर एक नियत समयके बाद सुन्दर खादमें परिणत हो जाता है। मिट्टीमें मिलनेके बाद मैला कई प्रक्रियाओंसे गुजरता है; तभी वह जमीन जोतने-बोने लायक होती है। जहाँ मैला दबाया गया हो, उस जमीनको नियत समयके बाद खोदनेपर अगर मिट्टीसे कोई दुर्गन्ध न आती हो और उसमें मैलेका नामोनिशानतक न हो तो समझ लेना चाहिए कि उस जमीनमें अब बीज बोया जा सकता है। मैं पिछले तीस सालसे इसी प्रकार मैलेकी खादका उपयोग हर तरहकी फसलके लिए करता रहा हूँ और इससे अधिकसे-अधिक लाभ हुआ है।

४. इस बातको सभी विशेषज्ञ एक स्वरसे मानते हैं कि शक्करसे गुड़ अधिक ताकतवर है, क्योंकि गुड़में जो क्षार और विटामिन हैं, वे शक्करमें नहीं हैं। जिस प्रकार मिलके पिसे-छने आटेसे चक्कीका बिना छना आटा अथवा पालिशदार चावलसे बिना कुटा, बिना पालिशका चावल अच्छा होता है, उसी प्रकार शक्करके मुकाबले गुड़ तो अच्छा होगा ही।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-५-१९३५

७२. पत्र : टी० प्रकाशम्को

वर्धा
११ मई, १९३५

प्रिय प्रकाशम्;

मैंने आपकी टिप्पणी पढ़ ली है। मैं वस्तु-विनिमय-प्रणालीमें विश्वास करता हूँ। वह केवल ग्रामीण समाजपर लागू हो सकती है। प्रणाली है ही कुछ इस ढंगकी कि वह छोटे-छोटे मानव-समुदायोंके बीच ही चल सकती है। ग्राम-आन्दोलन अगर सफल होता है[1] तो उसका यही परिणाम निकलना चाहिए कि गाँवोंके लोग अपनी-अपनी वस्तुओंका परस्पर विनिमय करने लगें। इसका प्रचार केवल उपदेश देनेसे नहीं, बल्कि जहाँ भी मुमकिन हो, इसे अमली रूप देनेसे ही होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२४५) से।

१. मूलमें इस वाक्यांशके कुछ शब्द पढ़े नहीं जा सके। इसे अनुमानसे पूरा करके अनुवाद किया गया है।

७३. पत्र : जयरामदास दौलतरामको

११ मई, १९३५

प्रिय जयरामदास,

यह सब क्या है? आनन्दका[1] क्या रहा? तुम्हारा कैसा चल रहा है? क्या तुम चाहते हो कि मैं आनन्दको अदायगी करना फिर शुरू कर दूं? तुम अपने कार्य-कलापकी जानकारी मुझे अवश्य देते रहना।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च:]

मलकानी यहीं है। साँपके काटनेकी बातको लेकर चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं।[2]

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९७१४) से; सौजन्य: जयरामदास दौलतराम

७४. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

११ मई, १९३५

चि० अम्बुजम,

तुम अपने लड़केकी शादीकी चिन्ता बेकार ही करती जान पड़ती हो। यह तो बिलकुल ऐसा मामला है जो तुम्हें पूरी तरह माता-पितापर छोड़ देना चाहिए। वे जैसा ठीक समझेंगे वैसा करेंगे। यह बात कठिन है। लेकिन लगता है, उन्होंने हर कठिनाईपर पार पा लिया है। तुम्हें चिन्तासे बचना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. आनन्द टी० हिंगोरानी।

२. देखिए "पत्र: अमृतलाल वि० ठक्करको", ११-५-१९३५ और "पत्र : जमनालाल बजाजको", १३-५-१९३५।

७५. पत्र : जमनालाल बजाजको

[११. मई, १९३५][1]

चि० जमनालाल,

तुम्हारे पत्र मिले। महादेव वल्लभभाईके बुलाने पर बोरसद गया है। दो-चार दिनमें वापस आयेगा। मेरीबहन बहुत बीमार हो गई थी। इटारसीके अस्पतालमें थी। उसका ८७ रुपयेका बिल मैंने चुका दिया है। सम्भव है, उसे क्षय हो गया हो। इटारसीकी डाक्टरनी कहती है, उसे मिरज भेजना चाहिए। अभी तो वह बैतूलमें है।

मुझे शायद २४को बोरसद जाना पड़ेगा। कमलासे मिलने बम्बई तो जाना ही होगा, सो २१को यहाँसे रवाना हो जाऊँगा।

किशोरलाल और गोमती कल आये। गोमतीको थोड़ा बुखार आया, इससे कमजोर हो गई है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी स्थायी समितिकी बैठक १८को यहीं रखी गई है। रामकृष्णका काम चल रहा है। लगता है, ओम[2] अपने काममें डूबी हुई है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सम्मेलनमें एक लाख नहीं मिला, यह तो जानते हो न? जिसे ठीक समझो, उसे लिखना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९६८) से।

१. जमनालाल बजाजने साधन-सूत्रमें इस पत्रकी प्राप्ति-तिथि १४-५-१९३५ दी है। किशोरलाल मशरूवाला और उनकी पत्नी वर्धा १० मई, १९३५ को पहुँची थीं। देखिए "पत्र: मणिलाल और सुशीला गांधीको", १३-५-१९३५ भी।

२. उमा, जमनालाल बजाजकी पुत्री।

७६. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको[1]

११ मई, १९३५

भाई ठक्कर बापा,

. . .[2] के बारेमें मुझे तो पहलेसे ही सन्देह था। मुझे उसका काम साफ नहीं लगा। ढोरोंसे जो मिला, उसमें से शुक्ल आदिकी राय विरुद्ध होते हुए भी कुछ देना शायद ठीक नहीं होगा। अतः यदि आपको उसके ऊपर पूरा भरोसा हो, तो जो दूसरा पैसा मेरे नाम पड़ा है, उसमें से दे दीजिए।

मलकानीके सम्बन्धमें कल ही तो तार किया था। आज दूसरा करना पड़ा। वह नालवाड़ी काम देखने गया था। वहाँसे लौटते हुए अँधेरेमें किसीने[3] काट लिया। साथमें . . . आदि थे। उन्होंने . . . स्थानपर रखा। वाहन मिलनेपर अस्पताल ले गये। वहाँ चीरा लगाकर लहू निकाला गया। . . . रात ठीक बीती। . . . दो-एक दिन तो अस्पतालमें लगेंगे ही। इसके सिवा मुझे लगता है कि आप दोनोंमें से कोई दिल्लीमें न हों, यह ठीक नहीं है। आप देख आये हों उस . . . परसे जो अमलमें लाना हो . . . आपकी गैरहाजिरीमें जो हुआ हो . . . योजना बनाई जाये, आदि बहुत आवश्यक है। कुएँका एक . . . तो है ही। ऐसे अन्य भी बहुत काम होने चाहिए। . . . अतः मेरे सुझावोंपर विचार कीजिएगा। मैंने तो मलकानीसे भी कल यही कहा था, और फिर आपको तार किया। किन्तु इसमें आपको कोई वैचारिक दोष दिखाई दे, तो मुझसे पूछिएगा।

चन्द्रशंकरको आपने जो जवाब लिखा है, उससे सम्बद्ध अपना विचार[4] मैंने आपको कल भेजा है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० २२७६५) से।

१. पेन्सिलसे लिखे इस पत्रकी फोटो-नकल बहुत धुँधली है और उसमें कुछ शब्द पढ़े नहीं जाते। फोटो-नकलके साथ पत्रकी एक अपूर्ण प्रतिलिपि भी नत्थी है। यह प्रतिलिपि शायद मूलके आधारपर तैयार की गई है। अनुवाद उसी प्रतिलिपिसे किया गया है। इसी कारण अनुवादमें यत्र-तत्र स्थान रिक्त छोड़ने पड़े हैं।

२. नाम छोड़ दिया गया है।

३. साँप; देखिए "पत्र : जयरामदास दौलतरामको", ११-५-१९३५।

४. देखिए "पत्र : अमृतलाल वि० ठक्कर को", १०-५-१९३५।

७७. पत्र : कासिम अलीको

११ मई, १९३५

भाई कासिम अली,

'शिवा बावनी'[1] के बारेमें मैंने तजवीज की थी अबी भी हो रही है।

ग्राम उद्योग संघके तरफसे तुमको उत्तर दे दिया है। ग्राम उद्योगके काममें किसीको रुकावट तो है ही नही।

दरमाह तो दिया नही जाता है।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९७५१) से।

७८. पत्र : छगनलाल जोशीको

वर्धा
१२ मई, १९३५

चि० छगनलाल,

तुम्हारे पत्र पढ़ गया—मेरे नाम लिखा पत्र, ठक्कर बापाको लिखा पत्र और 'रोशनी'[2] में लिखा लेख भी। भाई जीवणलालसे[3] भी बात की। उस समय भाई नानालाल उपस्थित थे। बापाको लिखा तुम्हारा पत्र और 'रोशनी' में लिखा तुम्हारा लेख मुझे ठीक नहीं लगा।

तुम्हारे कामकी मर्यादा तय कर दिये जानेकी जरूरत मैं मानता हूँ। तुम्हारी स्वतन्त्रताकी रक्षा होनी चाहिए। जो वैमनस्य चल रहा है, उसका कारण मुझे केवल लोगोंके स्वभावकी भिन्नता दिखाई देती है। संघसे तुम्हारे निकल जानेमें मुझे कोई लाभ दिखाई नही देता और न भाई जीवणलालके निकल जानेमें ही। अमीर और गरीब साथ मिलकर काम न कर सकें, यह हमारे लिए शर्मकी बात है। भाई जीवण-

१. शिवाजी की प्रशस्ति में लिखा भूषणका काव्य-ग्रन्थ।

२. उन दिनों सौराष्ट्रसे प्रकाशित होनेवाला एक गुजराती साप्ताहिक।

३. जीवणलाल मोतीचन्द शाह; कलकत्ताके एक उद्योगपति, जिन्होंने गांधीजी को खादी और हरिजन-विषयक प्रवृत्तियोंके लिए आर्थिक सहायता दी थी।

लाल तुम्हें सहन करें और तुम उन्हें सहन करो, ऐसा होना चाहिए। भाई जीवणलालसे सलाह किये विना तुम कुछ करना चाहते हो, ऐसा तो मुझे मालूम नहीं होता। और मुझे यह भी नहीं लगता कि जीवणलाल तुम्हारे साथ सलाह-मशविरा नहीं करना चाहते। इसलिए आज तो मैं इतना ही लिखकर निवटाना चाहता हूँ कि तुम दोनों यह निश्चय कर लो कि जिस तरह सगे भाई साथ मिलकर काम करते हैं उसी तरह तुम दोनोंको भी साथ मिलकर ही काम करना है। मैंने भाई जीवणलालसे भी यही कहा है। यह पत्र भी उन्हें दिखा दिया है। इसकी नकल ठक्कर बापाको भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३०) से।

७९. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

१२ मई, १९३५

चि० अम्बुजम,

तुमारा खत और रु० ११० मिले। कृष्णाके लिये चिंता कुछ भी न की जाय। मुझे ठंडे प्रदेशमें जानेकी आवश्यकता नहीं है। और यहां काम इतना पड़ा है कि मैं निकल भी नहीं सकता।

एकादश व्रत है वह देश सेवाके साधन है। इसलिये देश सेवा व्रतमें वही रखी गई।[1]

पिताजी को शीघ्र पहाडमें ले जाओ।

बापुके आशीर्वाद

मूल से : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. देखिए पृ० ४०।

८०. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
१३ मई, १९३५

प्रिय अमृत,

तुम्हारा पत्र मैंने सी० एफ० ए[न्ड्र्यूज]को दिखा दिया है। वे शायद इस महीनेकी २५ तारीखसे पहले तुम्हारे यहाँ नहीं पहुँच सकेंगे। सेरेसोल[1] तथा विलकिन्सन[2] १६ तारीखको यहाँ आ रहे हैं। वे २३ तारीखको समुद्री मार्ग द्वारा यूरोपके लिए रवाना होंगे।

तुमने जो दो किस्मके नमूने यहाँ छोड़े थे वैसे कुछ और लिफाफे तथा पत्र लिखनेके कागज मैं बनवा रहा हूँ। अगर तुम्हें और भी किसी किस्मके चाहिए तो उसके नमूने भेज दो। मैं तुम्हें और अधिक तभी भेजूँगा, जब तुम्हारा आर्डर आयेगा। मैं तुम्हारे लिए उनका स्टाक रखूँगा। जो पैकेट तुम्हें भेजा गया है, उसके दाम तुम यहाँ आनेपर अदा करोगी।

आशा है, मैं कुछ ही दिनोंमें काफी मात्रामें पूनियाँ भेज दूँगा।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५३२) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६३४१ से भी

१. पियरे सेरेसोल, स्विट्जरलैंडके एक इंजीनियर और इंटरनेशनल वॉलंटरी सर्विस (अन्तर्राष्ट्रीय स्वयंसेवक दल) के अध्यक्ष। १९३४ में सी० एफ० एन्ड्र्यूजकी अपीलपर बिहारके भूकम्प-पीड़ितोंके लिए राहत-कार्य करनेके लिए ये भारत आ गये थे।

२. जो विलकिन्सन भी सी० एफ० एन्ड्र्यूजके कहनेपर ही भारत आये थे।

८१. पत्र : जमनालाल बजाजको

१३ मई, १९३५

चि० जमनालाल,

राधाकृष्णके[1] नाम तुम्हारा पत्र मिला है। मेरा विश्वास है कि तुम्हें इस तरहके काममें पड़नेकी कोई जरूरत नहीं है। यह काम अब लगभग समाप्त हो गया जान पड़ता है। तुम्हारा कर्त्तव्य वहाँ रहकर शरीरको पूरी तौरसे स्वस्थ कर लेना है। जूनके अन्ततक नीचे उतरना ही नहीं है। जो-कुछ हुआ है, वह विपरीत तो हुआ है, पर उसमें ऐसी उलझनें हैं कि बीचमें पड़नेसे बहुत सार नहीं निकल सकता। जो-कुछ हो रहा है, सो होते रहने देना ठीक है। दूर बैठकर जो सलाह दी जा सकती है, सो हम दें।

इन्दौरसे कुछ नहीं मिला, यह लिख चुका हूँ।[2] अब तुम्हें जिनको लिखना हो उन्हें लिखो।

. . . की[3] बात समझता हूँ। उसे लिखा मेरा पत्र तुम्हें मिल गया होगा।

हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी स्थायी समितिकी बैठक यहाँ १८ तारीखको होगी। सदस्योंको बँगलेमें ठहरानेके लिए राधाकृष्णसे कह दिया है।

एन्ड्रयूज यहीं हैं। उन्हें मगनवाड़ीमें ठहराया है। मलकानी भी यहीं हैं। उसे साँपने काट लिया था। वह भी अब ठीक है, क्योंकि तुरन्त उपचार किया जा सका था।

[पुनश्च :]

मदालसाका पत्र नियमित रूपसे मिलना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९६७) से।

१. राधाकृष्ण बजाज; जमनालाल बजाजके भतीजे।

२. देखिए पृ० ५५।

३. नाम छोड़ दिया गया है।

८२. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१३ मई, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले। आखिर मेरे सूतका कपड़ा समयपर तैयार नही ही हुआ। किसी दिन तो हो ही जायेगा।

फीनिक्ससे मैने जिस तरह रोगको निकाल बाहर किया, उसी तरह तुम भी कर सकते हो। केवल भोजनमें और खेतकी उपजमें रद्दोबदल कर देनेसे रोग चला गया था। मलेरिया तो शायद ही कभी होता था। उन दिनों दूध तो हम लोग लेते ही नही थे।

तुम्हें क्या रद्दोबदल करनी चाहिए, यह तो तुम्हीको सोचना पड़ेगा। किशोरलाल, गोमती और अनसूया[1] तीन दिन पहले ही यहाँ आये हैं। छुट्टी पूरी होने पर अनसूया चली जायेगी। सफरमें किशोरलालकी तबीअत कुल मिलाकर ठीक ही रही।

रामदास बम्बईमें बस जाने के लिए खट रहा है। उसने भी छापाखानेमें काम करना शुरू कर दिया है।

हरिलालको पुर्नविवाह करना है, इसलिए वह राजकोट गया है। वहाँ प्रयत्न करेगा और कोई धन्धा भी खोजेगा। और तरहसे तो वह ठीक लगता है।

कान्ति,[2] कनु[3] अभीतक तो यहीं है। एन्ड्रयूज परसो आये। देवदास दिल्लीमें है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

ठक्करबापा ने गोकलदास गराचको पहुंच भेजी होगी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८३७)से।

१. हरिलाल गांधीकी दौहित्री।

२. हरिलाल गांधीके पुत्र।

३. नारणदास गांधीके पुत्र।

८३. पत्र : महावीर गिरिको

१३ मई, १९३५

चि० महावीर,

तेरे पत्रको विवाहका निमन्त्रण मानूं न? मैत्री,[1] दुर्गा,[2] सत्यदेवीके[3] पत्र भी मिले हैं। सबको अलग-अलग जवाब देनेका समय नही है। दुर्गा और उसके पति दीर्घायु हों, सादा और सेवामय जीवन बितायें तथा आश्रमका नाम ऊँचा करें, यही मेरी इच्छा और आशीर्वाद हैं। शादीके बाद दुर्गा मुझे भूल न जाये।

मैत्रीको अपना कब्ज दूर करना चाहिए। उसका ब्याह कब होगा? रक्तके सगे न हों, तो चिन्ता मत करना। हमें तो सबको अपना सगा समझना चाहिए। सगा और पराया, ये सब भेद मनकी मान्यता है।

सत्यदेवीने मेरा अच्छा मजाक उड़ाया है। लगता है, मैं जब उसकी हस्तलिपि की आलोचना करता था, उसकी याद दिला रही है। ऐसा लिखकर उसने मुझे हरा दिया, मुझसे यही कहलाना चाहती है न? मै तो चाहता हूँ, इसी प्रकार सब मुझे हरायें। वह जैसी चतुर है, वैसी ही पवित्र बने और रहे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :[

मैं २२ तारीखको बम्बईमें रहूँगा, उस समय तुम सब मुझसे मिनट-दो मिनटके लिए मिल सकोगे। उसी रात मैं बोरसदके लिए रवाना हो जाऊँगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२४२) से।

१, २ व ३. महावीर गिरिकी बहनें।

८४. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१३ मई, १९३५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। उपाय यह हो सकता है कि गहने अथवा उनके पैसे तेरे लिए पिताजी मुझे सौंप दें।[1] इसका अर्थ यह हुआ कि उससे जो मासिक आय हो वह मैं तेरे लिए काममें लूं। तेरी मृत्युके बाद आश्रमके ट्रस्टी उसका उपयोग आश्रमके लिए करें। ऐसा करनेमें तुझपर कोई दोष नहीं आता। तू तो अपना जीवन ईश्वर पर ही अवलम्बित रखती है। पिताजी के और मेरे बीच जो समझौता हो उसके प्रति तू अलिप्त रह सकती है। मीराबहनका यही तो होता है। उसके लिए १५० से २०० पौंड आते हैं। वे आश्रमके खातेमें जाते हैं। उसका खर्च आश्रम उठाता है। मेरे सुझावसे पिता निर्भय रह सकते हैं, और तू अलिप्त रह सकती है।

मैं वहाँ २२ तारीखको आऊँगा। उसी रातको बोरसदके लिए रवाना हो जाऊँगा। तू बम्बईमें तो मिलेगी ही। परन्तु बोरसद आना हो तो आ सकती है। वर्षा तो है ही।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

क्या किसन[2] घोड़ेकी तरह मजबूत हो गई? सुशी[3] . . .[4] दिखाई पड़ती है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३७२) से। सी० डब्ल्यू० ६८११ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. प्रेमाबहन कंटकके पिता और पितामहकी इच्छा थी कि माँ के छोड़े गहनोंका न्यास बनाकर प्रेमाबहनके लिए नियमित आमदनीका प्रबन्ध कर दिया जाये। प्रेमाबहन यह नहीं चाहती थीं। वे गहनोंकी बिक्रीसे प्राप्त होनेवाली पूरी राशि गांधीजी को दे देना चाहती थीं।

२. किसन घुमटकर।

३. सुशीला पै।

४. साधन-सूत्रमें अस्पष्ट है।

८५. पत्र : ठाकुरप्रसाद शर्माको

१३ मई, १९३५

भाई ठाकुरप्रसाद शर्मा,

दोष छुपाकेर हम इत्तेफाक नहीं बढ़ा सकते हैं। यदि दोनो पक्ष मिलकर पंच नियत करे तो अदालत छोड़े। यदि ऐसे नहीं हो सकता है तो अदालती न्याय लेनेकी कोशीश करनेमें कोई दोष नहीं माना। ऐसे कामोंमें कोई निश्चित सिद्धान्त नही हो सकता है। प्रत्येक केसका निर्णय उसके गुण-दोषपर निर्भर रहता है।

मो० क० गांधी

श्री ठाकुरप्रसाद शर्मा
जालपा देवी
बनारस सिटी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १५६) से। सी० डब्ल्यू० ९७५४ से भी; सौजन्य : भारत कला भवन

८६. पत्र : हिन्दी साहित्य सम्मेलनके मन्त्रीको

वर्धा
१४ मई, १९३५

प्रधान मन्त्रीजी,

आपका पत्र मिला है। मैंने स्वतन्त्रतया ऐसे तो नहीं कहा है कि समिति बन्धन-मुक्त है। मैंने ऐसे कहा था कि यदि हरिभाऊ व कोतवालने आपको यह कहा कि आप इन्दौरके विश्वविद्यालयका धन भी एक लाखमें गिन सकते है तो आप बन्धन-मुक्त हैं। लेकिन मैं इस बहसमें न पड़ना चाहता हूं न आपको तकलीफ देना चाहता हूं। आखरमें जिम्मेवारी तो शेठ जमनालालजी ने ली है। वे चाहे सो करें। टण्डनजी ने जो कहा और किया उसमें उनका दोष मैंने नहीं पाया। बाहिरके आन्दोलनको रोकनेकी मेरी न शक्ति थी, न इच्छा थी। अन्तमें जो मैंने किया उससे दूसरा करना मेरे लिये असम्भवित था।

आपका,
मो० क० गांधी

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३७५

८७. पत्र : रामस्वामी अय्यंगारको

१४ मई, १९३५

प्रिय रामस्वामी,

आपने जो बडा काम हाथमें लिया है, मैं उसकी सफलताकी कामना करता हूँ। इस बातका ध्यान रखिए कि जिस कामको शुरू किया है, उसे बीचमें नही छोड़ना है।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९२३४) से; सौजन्य: रामस्वामी अय्यंगार

८८. पत्र : जी० सीताराम शास्त्रीको

[१४ मई, १९३५][1]

प्रिय सीताराम शास्त्री,

मैं चीजके बदले चीज देकर व्यापार करनेकी पुरानी प्रणालीपर निबन्ध आमन्त्रित करनेके सुझावका समर्थन करता हूँ। मगर उसके लिए जो पुरस्कार निश्चित किया गया है वह आकर्षक नही है। उसके निर्णयकर्त्ता कौन होंगे? वे विशेष [योग्यता][2] वाले [व्यक्ति][3] होने चाहिए। [मैं][4] अभी उनके [सम्बन्धमें][5] कुछ विचार नही कर पाऊँगा।

हृदयसे आपका,
बापू

श्री जी० सीताराम शास्त्री
विनय आश्रम
गुंटूर जिला, पो० आ० चंदोल

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९१७५) से; सौजन्य: आन्ध्र प्रदेश सरकार

१. डाककी मोहरसे।
२ से ५. ये स्थल मूल प्रतिमें फटे हुए हैं।

८९. पत्र : जमनालाल बजाजको

१४ मई, १९३५

चि० जमनालाल,

तुम्हें इन्दौरके बारेमें वहाँ[1] बैठे हुए भी परेशानी उठानी पड़ रही है। वहाँसे कुछ मिलेगा, ऐसा नहीं लगता। साथका पत्र पढ़ लेना। मैं अपने जवाबकी[2] नकल भेज रहा हूँ। वहाँ मेरी तो किसीसे जान-पहचान है नहीं; तुम्हारे ऊपर ही सब छोड़ दिया है। उसमें भी यदि कुछ नहीं हो सका तो समझ लेंगे सुलट गया। तुम्हें इसके लिए चिन्तामें नहीं पड़ना है। वहाँ बैठे-बैठे कुछ हो सके या किसीको लिख सको तो लिखकर काम कर देना। फिलहाल यदि ऐसा न हो सके तो इसे भूल जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९६९) से।

९०. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

१४ मई, १९३५

भाई मूलचंद,

सब चीज 'हरिजन' में आनेसे दुरुस्त हो सकती है, ऐसा मानना भ्रम है। बाल-विवाहकी कुप्रथाको दूर करनेके लिये बहुत परिश्रमकी आवश्यकता रहेगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५६) से।

१. भुवाली।
२. देखिए "पत्र : हिन्दी साहित्य सम्मेलनके मन्त्रीको", १४-५-१९३५।

९१. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१४ मई, १९३५

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असंग्रह, शरीरश्रम, अस्वाद, सर्वत्र भयवर्जन, सर्वधर्मी समानत्व, स्वदेशी, स्पर्शभावना ही एकादश सेवावी नम्रत्वे व्रतनिश्चये।

'गीता' तुम्हारी जीवन-दोरी बनो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२६९) से। एस० जी० ४३ से भी

९२. पत्र : समीरमलको

१४ मई, १९३५

भाई समीरमल,

तुमारी और श्री वायुलालकी उम्मर कितनी है, शरीर दोनोका कैसा है, अभ्यास कहांतक है, अपना खर्च दे सकते हैं? इ० हकीकत भेजो। यहां मजदुरीका ही कार्य है।

मो० क० गांधी

श्री समीरमल
दफरिया
जावरा, मालवा

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १२९२) से।

९३. तार : रामेश्वरदास पोद्दारको

वर्धा
१५ मई, १९३५

सेठ रामेश्वरदास
धूलिया

गंगाके[1] पुत्री हुई है। दोनों सकुशल हैं।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४१) से।

९४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१५ मई, १९३५

भाई वल्लभभाई,

'दिल्लीके कौवे कितने' वाला मजाक मैं ठीक नहीं मानता। इससे लोगोंको कुछ मिलता नहीं है। अभी लड़ाई तो चल नहीं रही है।

अमृतलालका[2] पत्र मिल गया। मैंने लिखा है कि यदि वह अपने अखबारमें खेद प्रकट करें तो अच्छा होगा।

बाकी तुम महादेवके पत्रसे जानोगे। इस वक्त तो काममें खूब व्यस्त हूँ। एन्ड्रयूज यहाँ हैं। सेरेसोल और विलकिन्सन कल आये हैं। और लोग भी आ रहे हैं। मैं २१ तारीखको मुश्किलसे तैयार हो पाऊँगा। महादेवको साथ लाना असम्भव दीखता है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १६७

१. रामेश्वरदास पोद्दारकी पत्नी।
२. अमृतलाल सेठ, बम्बईसे प्रकाशित होनेवाले दैनिक जन्मभूमिके सम्पादक।

९५. पत्र : अवधेशदत्त अवस्थीको

१५ मई, १९३५

चि॰ अवधेश,

अपना देश सब नैतिक बातमें सर्वोत्कृष्ट बने और रहे। मनुष्यका स्वाभिमान है कि वह आत्मोन्नति करे और करनेमें मृत्युसे भी न डरे।

स्वाभिमान और गौरवकी रक्षाके लिये अथवा कुचेष्टा दूर करनेके लिये क्रोध क्यों चाहिये। मुझे कोई कहता है नाक घसीटो। मैं क्रोध न करूं लेकिन नाक न रगडुं, इसके लिये जो दण्ड मिले उसे प्रसन्नतासे सहन करूं।

धर्म उसे कहते हैं जो आत्माको ऊंचे ले जाता है। ईश्वर सत्यका नाम है। सत्य रूप है ऐसी कल्पना करें।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी॰ एन॰ ३२१७) से।

९६. पत्र : एफ॰ मेरी बारको

वर्धा

१६ मई, १९३५

चि॰ मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम कही भी रहो, पूरी तरहसे आराम करना जरूरी है। अपने हाथकी बात न रह जाये, उससे पहले ही क्यो नहीं करती? मिरजकी बजाय तुम बम्बईमें ही स्वास्थ्यकी जाँच क्यो नही करा लेती? मिरज जाते हुए तुम बम्बईके पाससे ही तो गुजरोगी। बम्बईमें जाँच भी हो जायेगी और पैसे भी खर्च नही होंगे। बम्बईमें सबसे योग्य चिकित्सक मौजूद है। जो भी हो, तुम्हें शीघ्र स्वस्थ हो जाना चाहिए।[1]

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी॰ एन॰ ६०४१) से। सी॰ डब्ल्यू॰ ३३७० से भी; सौजन्य : एफ॰ मेरी बार।

१. देखिए "पत्र : जमनालाल बजाजको", ११-५-१९३५ भी।

९७. पत्र : ग्लेडिस ओवेनको

१६ मई, १९३५

प्रिय ग्लेडिस,

मुझे आपका पत्र [पढ़कर प्रसन्नता][1] हुई। यह आज ही मुझे दिया गया और अभी . . . पियरे सेरेसोलके पहुँचनेके बाद। उनसे सम्बन्धित अंश मैंने उन्हें सुना दिया। इससे वे प्रसन्न हुए। वे निश्चय ही . . . यह काम . . . हाथमें लेंगे . . . मार्ग . . . उनके सम्मुख है।

हम सभीको . . . से प्रसन्नता होगी और म्यूरियलके साथ आपका स्वागत करेंगे। सी० एफ० एन्ड्रयूज . . . मेरे साथ . . .।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१९१) से।

९८. पत्र : एस० सत्यमूर्तिको[2]

१६ मई, १९३५

आप ललचानेमें बड़े कुशल हैं। लेकिन मुझे लालचमें नहीं पड़ना है। मेरे आशीर्वादके बिना भी आपका काम ठीक चलता रहेगा। आपने ठीक ही कहा है कि यदि आपमें सफल होनेकी योग्यता होगी तो आप सफलता प्राप्त कर ही लेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-५-१९३५

१. साधन-सूत्रमें ये शब्द बहुत अस्पष्ट हैं और कई स्थानोंपर लिखावट पढ़ी नहीं जाती।

२. सत्यमूर्तिने तमिलनाडु प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीका अध्यक्ष बननेपर गांधीजी का आशीर्वाद माँगा था।

९९. पत्र : निर्मलकुमार बोसको

१६ मई, १९३५

प्रिय निर्मलबाबू,

इतना ही है कि मेरे पास काम बहुत ज्यादा रहा है। पुनरीक्षण समाप्त करते ही मैं पांडुलिपि लौटा दूंगा। आप बखूबी उसे 'मॉडर्न रिव्यू' को भेज सकते हैं।

आपका,
मो० क० गांधी

श्री निर्मलकुमार बोस
६/१ ए, ब्रिटिश इंडियन स्ट्रीट
कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५२०) से।

१००. पत्र : क० मा० मुंशीको

१६ मई, १९३५

भाई मुंशी,

आपका पत्र मिला। वहीं[1] रहकर स्वास्थ्य सुधारना ठीक होगा। स्थायी समितिकी बैठक १८को है। देखूं, उसमें क्या होता है। जीजी माँ ने[2] ठीक याद किया; उन्हें मेरे नमन।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५७३) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

१. पंचगनी।
२. क० मा० मुंशीकी माता।

१०१. चर्चा: पियरे सेरेसोल और जो विलकिन्सन से[1]

[१६ मई, १९३५][2]

फिर सेरेसोल उन पुस्तकोंके विषयमें कहने लगे जो उन्होंने उन्हीं दिनों पढ़ी थीं। उन्होंने एक पुस्तक 'इंडिया इन दि डार्क वुड' के बारेमें बताया कि . . . इसमें कहा गया है कि "हिन्दू दर्शनका मुख्य ढाँचा तोड़ डालना चाहिए।" उन्होंने दूसरी एक भिन्न प्रकारकी पुस्तक फ्रैंक लौनवुड कृत 'जीसस लॉर्ड और लीडर' की बात की और बताया कि उसमें इस बात का खण्डन किया गया है कि ईसाई धर्म ही अन्तिम धर्म है और कहा गया है कि "आज जहाँतक हम पहुँचे हैं उससे भी अधिक पूर्ण और उच्च धर्म अभी आयेगा; और . . . ईश्वर . . . अन्य धर्मों तथा अनेक जातियों द्वारा आविष्कृत सत्यों और संस्थाओंका भी उपयोग करके मनुष्य जातिकी विचार-सम्पत्तिको और समृद्ध बनायेगा।" उन्होंने बताया कि बाइबिल जो प्रेरणा देती है वह दूसरी प्रेरणाओंकी अपेक्षा श्रेष्ठ है, इस दावेको छोड़ देनेमें उक्त लेखक निश्चित लाभ देखता है, और कहता है कि "मैं उन लोगोंमें से हूँ जो ईसा मसीहको एक सद्गुरु मानते हैं, परमप्रभु नहीं।" गांधीजी ने कहा:

ऐसा लगता है कि चढ़ावके बाद अब उतारकी क्रिया चल रही है। हमारे यहाँ एक ईसाई सज्जन हैं जो कहते हैं कि बाइबिलके 'न्यू टेस्टामेंट' का उपदेश जीवनमें किस प्रकार उतारा जा सकता है, यह बात मुझे 'गीता' में मिली है; और 'न्यू टेस्टामेंट' के कितने ही वचन जो मुझे गूढ़ मालूम होते थे उनका अर्थ अब 'गीता' के अध्ययनसे खुलता जा रहा है।

तो भी सेरेसोल यह महसूस करते हैं कि प्रत्येक मनुष्यको अपने ही धर्मसे समाधान मिलना चाहिए। हमारी प्रातः और सायंकालकी प्रार्थनाओंमें वे नियमित रूपसे आते थे। किन्तु एक दिन साँझको कहने लगे, "एक ही चीजका जो यह बार-बार पाठ होता है वह मेरे कानोंको कुछ रुचता नहीं। हो सकता है कि यह मेरे बुद्धिवादी, गणितीय स्वभावका दोष हो, लेकिन चाहे जिस कारणसे भी हो, पुनरावृत्ति मुझे पसन्द नहीं आ सकती।" . . .

गांधीजी: पर आपके गणितमें क्या पुनरावृत्ति दशमलव नहीं होता?

पियरे सेरेसोल: किन्तु प्रत्येक दशमलव से एक नवीन ही वस्तु निकलती है।

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। अपने लेखमें महादेव देसाई बताते हैं: "पियरे सेरेसोल और जो विलकिन्सन बिहारके भूकम्प-पीड़ित क्षेत्रका दौरा करके लौटे थे और रास्तेमें वे वर्धामें रुके थे।"

२. गांधीजी: १९१५-१९४८ — ए डिटेल्ड क्रॉनोलॉजी से।

गां० : इसी प्रकार प्रत्येक जपमें नूतन अर्थ रहता है। प्रत्येक जप मनुष्यको भगवान्के अधिक समीप ले जाता है। यह बिलकुल सच्ची बात है, और जब मैं आपसे यह कहता हूँ तब आपको यह जानना चाहिए कि आप किसी सिद्धान्तवादीसे नही बल्कि एक ऐसे व्यक्तिसे बात कर रहे है जिसने इस वस्तुका अनुभव जीवनके प्रत्येक क्षणमें किया है। मै तो यहाँतक कहूँगा कि किसी बार यह तो हो सकता है कि मेरे हृदयका स्पन्दन एकाएक रुक जाये पर इस अविराम-क्रियाका बन्द हो जाना इतना आसान नही है। यह हमारी आत्माकी भूख है।

पि० से० : मै इसे अच्छी तरह समझ सकता हूँ, पर साधारण मनुष्यके लिए तो यह एक अर्थशून्य विधि है।

गां० . मै मानता हूँ, पर अच्छीसे-अच्छी चीजका भी दुरुपयोग हो सकता है। इसम चाहे जितने दम्भके लिए गुजाइश हो, पर वह दम्भ भी तो सदाचारकी स्तुति ही है न! और मै यह जानता हूँ कि अगर दस हजार दम्भी मनुष्य मिलते है तो ऐसे करोड़ो सरल श्रद्धालु भी होगे जिन्हें ईश्वरके इस नाम-रटनसे शान्ति मिलती होगी। मकान बनाते समय पाड़ बाँधनेकी जरूरत पड़ती है न—यह ठीक वैसी ही चीज है।

पि० से० : मगर मै आपकी दी हुई इस उपमाको जरा और आगे ले जाऊँ तो आप यह मान लेंगे न कि जब मकान तैयार हो जाये तब उस पाड़को गिरा देना चाहिए?

गां० . हाँ, जब शरीर-पात हो जायेगा तब वह भी दूर हो जायेगी।

पि० से० : यह क्यों?

जो विलकिन्सन : यह इसलिए कि हम निरन्तर निर्माण ही करते रहते है।

गां० : इसलिए कि हम निरन्तर पूर्णताके लिए प्रयत्न करते रहते हैं। केवल ईश्वर ही पूर्ण है, मनुष्य कभी पूर्ण नही होता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-५-१९३५

१०२. पत्र : आर० बी० ग्रेगको

वर्धा
१७ मई, १९३५

प्रिय गोविन्द,

बेशक, मैं जानता हूँ कि पत्र न आनेका मतलब यह नहीं है कि हमारे प्रेममें कोई कमी आ गई है। मैं जानता हूँ कि तुम प्रेम-धर्मके प्रसारके लिए क्या कर रहे हो। तुमको अपनी समूची शक्ति खपानी पड़ रही होगी।

अगर अमरीकी लोग अपने यहाँ खादीके समान ही किसी वस्तुको अपना सकें, तो यह एक बड़ी बात होगी।

एन्ड्रयूज, पियरे सेरेसोल तथा उनके साथी जो विलकिन्सन, अभी इस समय यहीं हैं। एन्ड्रयूज कविगुरुके साथ कुछ [महीने][1] भारतमें ही रहेंगे। सेरेसोल यूरोपके लिए २३ तारीखको प्रस्थान करेंगे।

ग्रामोद्योगका कार्य चल रहा है।

हीरालाल शर्मा एक प्राकृतिक चिकित्सक हैं। वे अपने ज्ञानको अधिक पूर्ण बनानेके लिए बैटल क्रीक जाना चाहते हैं। वे अपने ज्ञानका उपयोग विशुद्ध परमार्थके लिए करना चाहते हैं। मैं उनके लिए एक वजीफेका प्रबन्ध कर रहा हूँ। वहाँ अगर वे कुछ समय काम करके अपने खाने और रहनेका खर्च निकाल सकें, तो अच्छा रहेगा। क्या उनके सम्बन्धमें तुम कोई सलाह दे सकते हो?

तुमको और राधाको स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६६६) से।

१. साधन-सूत्रमें बहुत अस्पष्ट है।

१०३. पत्र : अमृतकौरको

१७ मई, १९३५

प्रिय अमृत,

पत्रका तुम्हारा कागज साटनकी तरह चिकना लगता है।

दलीपसिंहका[1] पत्र अच्छा है।

अभी इस समय हमारा परिवार बहुत भरा-पूरा है। सी० एफ० एन्ड्रयूज, सेरेसोल, विलकिन्सन, मलकानी, श्रीमती मलकानी, उनके मित्र और एक पुत्र तथा दो छात्र — खासी वृद्धि है न! और तुम्हें याद ही होगा कि हमारे पास थालों और प्यालियोकी कितनी कमी है। लेकिन हम काम चला लेते हैं; खुश रहते हैं।

हाँ, यहाँ गर्मी काफी पड़ रही है।

लिफाफों पर लगा गोंद बगीचेके एक वृक्षकी छाल का है। मैं देखूँगा कि आगे और लिफाफोंके लिए क्या प्रबन्ध हो सकता है।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५३३) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६३४२ से भी

१०४. अपील : नगरपालिकाओंसे

हरिजन सेवक संघके संयुक्त-मंत्री आचार्य मलकानी द्वारा नगरपालिकाओंके लिए निम्न अपील जारी की गई:[2]

आशा करनी चाहिए कि नगरपालिकाएँ इसके उत्तर में कारगर ढंगसे कारंवाई करेंगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-५-१९३५

१. अमृतकौरके भाई।

२. अपील यहाँ उद्धृत नहीं की जा रही है; उसमें नगरपालिकाओंको सुझाव दिया गया था कि मेहतरों तथा सफाई आदि करनेवाले कर्मचारियोंको निवास-सम्बन्धी सुविधाएँ, बेहतर सेवाके अवसर, बीमारी, आकस्मिक तथा प्रसव आदिकी छुट्टियाँ दी जानी चाहिए।

१०५. हरिजनोंकी शिक्षा

माध्यमिक और कॉलिजकी शिक्षासे प्राथमिक शिक्षाका प्रश्न अनेक दृष्टियोंसे कहीं अधिक कठिन है। और हरिजनोंकी शिक्षा तो सबसे अधिक कठिन है। भले ही वह कच्चा हो, पर कुछ-न-कुछ संस्कार तो हरिजनेतर बालकको घरपर मिलता ही है। हरिजन बालकको ऐसा संस्कार बिलकुल ही नहीं मिलता, क्योंकि समाजके साथ उनका सम्पर्क नहीं रहता। इसलिए जब तमाम प्राथमिक पाठशालाएँ हरिजन बालकोंके लिए खुल जायेंगी — देर-सवेर उन्हें खुलना तो है ही, और मेरी रायमें देरसे नहीं, सबेरे ही उन्हें खुलना है — तब भी, यदि हरिजन बालकोंको पिछड़ी हुई दशामें नहीं रखा जाना है तो उनके लिए प्राथमिक पाठशालाओंकी आवश्यकता तो पड़ेगी ही। यह प्रारम्भिक शिक्षा-प्रणाली किस प्रकारकी होनी चाहिए, इसकी खोज-बीनकी जा सकती है, और हरिजन सेवक संघोंकी ओरसे समस्त भारतवर्षमें जो सैकड़ों हरिजन पाठशालाएँ चल रही हैं, उनमें उस प्रणालीका परीक्षण भी हो सकता है। हरिजन बालकोंकी इस प्रारम्भिक शिक्षामें शिष्टाचार, सुन्दर वाणी और सद्व्यवहारका समावेश अवश्य होना चाहिए। हरिजन बालकको आज बैठने-उठने, कपड़ा पहननेका सलीका नहीं होता। उसकी आँखों, कानों, दाँतों और नाखूनोंमें अक्सर मैल भरा रहता है। बहुतेरोंको तो यह भी पता नहीं कि नहाना-धोना किसे कहते हैं। मुझे सन् १९१५ की वह बात आज भी याद है कि जब मैं ट्रांकीबारसे एक हरिजन लड़केको कोचरबके आश्रममें लाया था। सबसे पहले मैंने उसका मुण्डन कराया, फिर अच्छी तरह नहलाया और पहननेको उसे सादी, साफ धोती, कुरता और टोपी दी। चन्द मिनटोंमें ही वह मैला-कुचैला लड़का संस्कारी घरके किसी भी बालकसे जरा भी भिन्न मालूम नहीं पड़ता था। उसका सिर, आँखें, कान-नाक सब खूब अच्छी तरह साफ कर दिये गये थे। उसके नाखूनोंमें मैल-ही-मैल भरा हुआ था। उन्हें मैंने कटवाकर साफ कराया। उसके पैर, जिनपर धूलकी तहें जम गई थीं, रगड़-रगड़कर साफ कराये गये। जरूरत पड़े तो पाठशालाओंमें आनेवाले हरिजन बालकोंके पूरे शरीरकी सफाई नित्य इसी तरह करनी चाहिए। तीन महीने तक तो उन्हें स्वच्छताकी शिक्षा देनी चाहिए, हालाँकि यह वाक्य लिखते हुए मुझे उड़ीसाकी पैदल यात्राका[1] एक दृश्य याद आ रहा है। उस यात्रामें कुछ-एक स्थानोंपर हरिजन बालकों और वयस्कोंको भोजन कराया गया था; उन्होंने औरोंकी अपेक्षा अधिक स्वच्छतासे खाया था। दूसरे लोग सानने-सूननेमें उँगलियाँ खराब कर लेते थे, और जहाँ-तहाँ जूठन छोड़कर जगह गन्दी करके उठते थे। हरिजन अपनी पत्तल या थालीमें कुछ भी नहीं छोड़ते

१. १९३४ में।

थे, उसे बिलकुल साफ कर देते थे। भोजनके समय हर कौरपर वे अपनी उंगलियोंको चाटकर साफ कर लेते थे। यह मैं जानता हूँ कि मैंने जिनका यह वर्णन किया है, सब हरिजन बालक उनकी-जैसी स्वच्छतासे नहीं खाते।

अगर इस प्रारम्भिक शिक्षाका आयोजन समस्त हरिजन पाठशालाओंमें करना है, तो अध्यापकोंके लिए उनकी भाषामें विस्तृत आदेशोंकी पत्रिकाएँ तैयार करके बँटवानी चाहिए। साथ ही पाठशालाओंके निरीक्षकोंको यह आदेश दे दिया जाये कि वे पाठशालाओंका मुआइना करते समय अध्यापकों तथा विद्यार्थियों की इस विषयमें परीक्षा लिया करें और इस दिशामें जो प्रगति हो उसकी पूरी-पूरी रिपोर्ट भेज दिया करे।

नये अध्यापकोंकी नियुक्ति तथा वर्तमान अध्यापकोंके प्रशिक्षणपर ध्यान रखनेसे ही यह कार्यक्रम सफल हो सकेगा। मगर संघको यदि उन हजारों हरिजन बालकोंके प्रति अपना फर्ज अदा करना है; जिनकी सार-सँभालका दायित्व उसने ले रखा है, तो उसे इस सबपर ध्यान देना ही होगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-५-१९३५

१०६. पत्र : नारणदास गांधीको

१८ मई, १९३५

चि० नारणदास,

धीरूका[1] क्या समाचार हैं? उसका खर्च कौन चलाता है? उसकी प्रगति कैसी है? उसका अध्ययन कबतक पूरा होगा? उसने जो लिखकर दिया है, वह क्या तुम्हारे पास है?

हरिलाल कैसा है?

पाठशालाके बारेमें तो सब तय कर लिया है। सब यह मानते है कि तुम्हारी योजना बिलकुल ठीक है।

पुरुषोत्तम[2] कैसा है? क्या उसको चोरवाड माफिक आया?

जमनाको मैंने यह लिखा है या नहीं कि विजयाको पत्र लिख दिया था?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैं २३ से ३१ मईतक बोरसदमें रहूँगा।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४४४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. धीरू गांधी, व्रजलाल गांधीके पुत्र। ये शान्तिनिकेतनमें चित्रकलाकी शिक्षा प्राप्त कर रहे थे।
२. नारणदास गांधीके पुत्र।

१०७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
१८ मई, १९३५

भाई वल्लभभाई,

जबतक महादेव तुम्हारे पास थे, तबतक मैंने पत्र लिखनेमें ढिलाई की। फिर उनके आनेमें मजबूरन दो दिन लग गये। इसलिए यहांके पत्रोंमें गड़बड़ी हो गई।

मोहनलाल पंड्याके बारेमें तुम्हारा लिखना यथार्थ है।[1] पिछले संस्मरण ठीक वैसे ही हैं। परन्तु दुःख माननेसे क्या होता है? साथी आते हैं और जाते हैं। तुमको लगता है कि साथी जाते ही हैं, आते नहीं। यदि ऐसा हो तो भी क्या? ईश्वर तो नहीं जाता न? वह है तो सब हैं। यदि वह न हो तो और सब किस कामके? — जीवरहित देह? इसलिए तुमको साथीके वियोगका दुखड़ा नहीं रोना चाहिए। हमसे तो जो हो सके, सो कर दें।

मैं २१ तारीखसे पहले नहीं छूट सकता। २२ को सुबह बम्बई पहुंचूंगा। २० तारीखको सोमवार है। २१ को मुझे यहां रहना ही चाहिए। साथमें बहुत करके अकेली बा होगी। मजबूर हो जाने पर ही मीरांबहन रहेगी। वह आनेका हठ करेगी, तो लाचारीमें ही उसे लाऊंगा और शायद एक आदमी और होगा। मेरे लिए तो बकरीके दूधके अतिरिक्त नीमके पत्ते और स्थानीय फल काफी होंगे। बम्बईसे कुछ मत मंगवाना। यहां भी ऐसा ही चल रहा है। नीबूके बदले मैं इमलीका रस और हरी भाजीके बदले नीमके पत्ते पीसकर लेता हूं। आजकल यहींके बगीचेकी अमियां लेता हूं। बम्बईकी तो चखीतक नहीं। ऐसा मैं बम्बईमें करूंगा; बोरसदमें हरगिज नहीं।

महादेवको यहां छोड़नेके सिवा कोई चारा नहीं। यदि जरूरत हुई तो मेरे यहां लौटनेपर महादेवको भेज दूंगा। शेष सब मिलनेपर।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १६८-६९

१. देखिए "भाषण : बाल-मन्दिरके उद्घाटनके अवसरपर", ३१-५-१९३५।

१०८. पत्र : बलवंतसिंहको

१८ मई, १९३५

चि० बलवंतसिंह,

मेरे मनमे थोडा-सा भी शक नहीं है कि तुमारे किसी देहातमें स्थिर होना उत्तम वस्तु है। वहाँ रहकर श्रमसे अपना निर्वाह करना और मनसे, वाचासे, कर्मसे ग्रामवासीयोकी सेवा करना, उसके लिये एकादश व्रतका पालन करना। घडीकी कोई आवश्यकता नही है। और है तो पानी या रेतसे घडी बना सकते हो। उसमें एक कोडीका भी खर्च नही है। हाँ, जब मेरे पास आनेका जी चाहे तब आनेकी इजाजत है लेकिन याद रखो हमारे पास रेलका किराया व्यर्थ खर्चनेके लिये पैसे नही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८७६) से।

१०९. पत्र : कुँवरजी के० पारेखको

१९ मई, १९३५

चि० कुँवरजी,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। यहाँ तो हरिलालके व्यवहारके विषयमें कहने-जैसी कोई बात नहीं दिखी। यदि तुम्हारा शक ठीक ठहरे तो दु:खकी बात है। मनुको उसके हाथमें सौंपनेकी कोई बात ही नही है। आशा है, तुम सब कुशल होगे।

बा और मैं बुधवारको वहाँ होंगे। आ सको तो कुछ मिनट दे दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२१) से।

१. हरिलाल गांधीके दामाद और रामीके पति।

११०. पत्र : मनु गांधीको[1]

१९ मई, १९३५

चि० मनु,

तेरा पत्र मिला। मैं बुधवारको बम्बईमें रहूंगा। बा भी होगी। आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२१) से।

१११. पत्र : डाह्याभाई एम० पटेलको

वर्धा
१९ मई, १९३५

भाई डाह्याभाई,

तुम्हारे २५-६-३५ के[2] पत्रपर इतने दिन विचार करनेके बाद आखिर थककर इस पत्रसे यह प्रकरण समाप्त करता हूं। तुम्हारा पत्र मिलनेके बाद ऐसी घटनाएं और जगहोंपर भी हुई हैं। लिख-लिखकर थक गया। उसका कुछ असर हुआ होगा, लेकिन नहीं के बराबर। इन मामलोंमें प्रत्येक स्थानीय व्यक्तिको अपनी शक्तिके अनुसार जो बने करते रहना चाहिए। हां, मुझ-जैसोंको सम्बन्धित समाचार तो देते ही रहना चाहिए। हमें अपनी मर्यादा समझनी चाहिए; हम सुधारक है, पुलिसके सिपाही नहीं। पुलिस हमें बनना भी नहीं है। सुधारक मरकर सुधार कराता है, पुलिस मारकर। एक ही व्यक्ति दोनों नीतियां साथ-साथ नहीं अपना सकता, इसीसे राजतन्त्रकी उत्पत्ति होती है। किन्तु हम राजतन्त्रको सहयोग नहीं देते, इसलिए उसकी मदद हमें थोड़े ही मिल सकती है। बिना अपमानित हुए जहां हम ऐसी मदद ले सकते हों, वहां लें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २७०६) से; सौजन्य : डाह्याभाई एम० पटेल

१. यह पत्र पिछले शीर्षक "पत्र : कुंवरजी के० पारेखको" के पीछे लिखा पाया गया है; देखिए पिछला शीर्षक।

२. मूलके अनुसार।

११२. पत्र : शालिग्राम वर्माको

१९ मई, १९३५

भाई शालिग्राम वर्मा,

मैंने जो-कुछ कहा वह निर्दोष भावसे था। जो दलील पेश की गई थी उसे सुनकर मेरेपर जो असर हुआ मैंने कह दिया। उसमें किसीपर आक्षेप तो हो ही नहीं सकता था। मैंने राय ली उस बारेमें मैं कह चुका था कि वह 'इनफोर्मल' थी। मैं तो बादमें समझ भी गया था कि प्रकाशकोंको मंत्रीपदसे मुक्त ही रखना योग्य नही होगा। आपको संबंध छोड़नेका कोई कारण नहीं है। मेरी आशा है कि आप इस्तीफा भेजनेका इरादा छोड़ देंगे।

आपका,

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२१९) से। सी० डब्ल्यू० ५६३४से भी

११३. पत्र : हीरालाल शर्माको[1]

वर्धा

२० मई, १९३५

चि० शर्मा,

तुमारी टिकिटका ओर्डर तो आ गया। लेकिन पासपोर्टमें मुश्किल है। पासपोर्टके लिये अर्जी प्रत्येक मनुष्यको अपने लिये करनी पडती है। इसलिये तुमारे शायद दिल्ली जाना पड़े। संभव है कि खुर्जाके मजिस्ट्रेट के यहा अर्जीका फार्म मिल सके। तुमारी अर्जी जानेके बादमें लिख सकूगा। यदि आवश्यकता होगी तो। पासपोर्ट मिलनेके बाद कलकत्तेके अमेरिकन कोनसलका प्रमाणपत्र चाहियेगा। वह तो मैं ले सकूगा ऐसी उम्मीद रखता हूं। अब तो तुमारे पासपोर्टका तजवीज करना है।

सायके खत वापिस किये जायें। मैं कल बोरसद जाता हूं। २ जूनको वापस। बोरसद—वाया—आनन्द। बी० बी० ऐंड सी० आई० रेलवे। ठिकाना २३ तारीखसे ३१ तक समझो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १६०-६१

१. यह पत्र सुबह तीन बजे लिखा गया था, देखिए "पत्र : हीरालाल शर्माको", २०-५-१९३५।

११४. पत्र : अमृतकौरको

२० मई, १९३५

प्रिय अमृत,

पिछले पाँच दिनोंसे मैं तुम्हें पत्र नही लिख सका। मेहमानोंने मेरा सारा समय ले लिया।

चार्लीका तार अभी-अभी आया है। तुम्हारा पत्र मुझे मिलनेसे पहले हममें से कोई भी नहीं समझ पाया था कि तुम किस तरह बाल-बाल बचीं। तुमने अबतक जो सेवाएँ की हैं, उनसे भी बड़ी सेवाएँ तुम्हें करनी हैं। दुर्घटना घातक जान पड़ती थी और उससे तुम्हारी रक्षा करनेमें ईश्वरकी यही इच्छा मुझे दिखाई देती है। इस दुर्घटनासे हमें यही सीख लेनी चाहिए कि ईश्वर हमें जीवनके जो भी क्षण प्रदान करता है, हम उन सबका सदुपयोग करें।

मैं तुम्हारे लिए पूनियाँ और पत्र लिखनेके कागज तैयार करवा रहा हूँ। उनको यथासमय तुम्हारे पास भेज दिया जायेगा।

मेरा खयाल है कि तुम पुरीको काफी अर्सेसे जानती हो। अगर तुम्हें वह भरोसेके लायक लगा हो, तो उससे तुमको काफी मदद मिल सकती है। वह वहाँ क्या कर रहा है?

क्या शम्मीको फालसा नामक फलके वृक्षकी जानकारी है? फल बेरकी जातिका है और मटरके दानेके आकारका होता है। क्या वह मुझे उसके गूदे और बीजोके गुणोंका विवरण दे सकता है? इसका वनस्पतिशास्त्रीय नाम क्या है? मैं इन सर्व-सुलभ फलों और इनकी पत्तियोंकी आहार-सम्बन्धी उपयोगिता समझनेकी कोशिश कर रहा हूँ। मुझे उनमें काफी बड़ी सम्भावनाएँ नजर आती हैं। मैं चाहूँगा कि शम्मी इस कार्य-विशेषमें विशेषज्ञता प्राप्त कर ले। विशेषज्ञोंतक उसकी जितनी पहुँच है, उतनी चन्द ही लोगोंकी है।

तुम तीनोंको स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५३४) से; सौजन्य: राजकुमारी अमृतकौर। जी० एन० ६३४३ से भी

११५. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

२० मई, १९३५

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला। रामजीभाईको गाय भेजनेके बारेमें मैं तो तुम्हें पूरी आजादी दे चुका हूँ।[1] जो तुम्हारा मन कहे, वही करना। इस मामलेमें अपनी इच्छाका मैं कोई मूल्य नहीं मानता। काम करो तुम और मरजी मेरी चले, इसका क्या मतलब?

पारनेरकरको[2] जो मवेशी बेचना ठीक समझो, बेच देना। मतलब यह कि इस सम्बन्धमें तुम्हें पूरी आजादी है। जो करोगे वह मेरे कानमें तो डालोगे ही, यह मैं माने लेता हूँ।

वनूकी[3] बीमारी भी कैसी लम्बी चली? मुझे २३ को बोरसद पहुँचना है। मणि[4] की दाढके कारण तुम्हें भड़ौंच भी जाना पड़ेगा, यह कैसी झंझट है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०७९) से।

११६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२० मई, १९३५

भाईश्री वल्लभभाई,

तुम्हारे बारेमें विचार बना ही रहता है। काका अभी यहीं हैं। उनके हाथमें सब-कुछ सौंपकर महादेवको साथ ला रहा हूँ। मुझे यह खयाल परेशान कर रहा था कि तुमको यदि अभी काम है, तो बादमें उन्हें भेजकर क्या करूँगा। इसलिए मैंने काकासे बात की और उन्होंने भार उठाना स्वीकार कर लिया।

१. देखिए "पत्र : नरहरि द्वा० परीखको", ९-५-१९३५।

२. यशवन्त महादेव पारनेरकर।

३. वनमाला परीख, नरहरि परीखकी कन्या।

४. मणिबहन परीख, नरहरि परीखकी पत्नी।

और वातें तो हम जब मिलेंगे तब या ठेठ बोरसदमें करेंगे। बुधवारके दिन तो शायद लोग तुम्हें और मुझे वातें करनेका जरा भी वक्त ही न दें।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो — २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १६९

११७. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

२० मई, १९३५

चि० अम्बुजम,

जितनी शीघ्रतासे पिताजी पहाड़ोंपर जा सकें उतना अच्छा रहेगा। लेकिन समयका निर्णय तो डाक्टर ही कर सकता है। हम सब प्रार्थना करें कि पिताजी को शीघ्र पूर्ण आराम हो जाय।

कृष्णस्वामीकी शादीकी बात हो गई सो अच्छा हुआ। हम आशा करें कि यह संबंध दोनोंको सुखदायक होगा।

अब [अभी] तो वादाम है। मैं यहांसे कल निकलूंगा। २ जून वापिस आऊंगा। ठिकाना वोरसद वाया आनन्द बी० बी० ऐंड० सी० आई० आर०[1] किया जाय।

बापूके आशीर्वाद

मूलसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

११८. पत्र : समीरमलको

२० मई, १९३५

भाई समीरमल,

ता० १० जूनके बाद मुझे खबर देकर दोनों आ सकते हैं। मेरे पास एक भी कमरा नहीं है। वरांदेमें पडा रहना पडता है। नित्य मजदूरी ही करनी पडती है। यदि आओ तो साथमें बिस्तरके उपरांत थाली, लोटा, कटोरा, गमछा इ० ले आना। निकम्मा सामान नहीं लाना। संदूक अनावश्यक है।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १२९१) से।

१. यह पता अंग्रेजीमें है।

११९. पत्र : हीरालाल शर्माको

२० मई, १९३५

चि० शर्मा,

साथका खत[1] तो प्रातःकाल तीन बजे लिखा। दोपहर तुमारा खत आया। उसी डाकसे खबर आई कि तुमने गवाही देनेके लिए रु० ५,००० मांगा था।[2] मैंने इस बातपर वजन नही दिया। इतनेमें तुमारा खत पढ़ा। उसमें उसी बारेमें और बात। तुमको निराशा कैसे हुई? जजको कैसे निराशा हुई? क्यो, खुर्जा क्यों छोड़ना? दुनियां कुछ भी कहे इससे क्या? . . .[3] जोइंट पोलीसीके बारेमें मुझको पूरा समझा दोगे तो मैं अवश्य कुछ छापूगा। अबतक मै समझा नहीं हूं। तुम तो जानते हो मैं बीमा करानेका विरोधी हू। लेकिन खास जोइंटका क्यो? बीमामें जहर देनेका तो अकसर हुआ ही करता है। जोइंटमें कुछ विशेषता मैं नहीं पाता।

तुमको फोड़े कहां है? मिट्टीसे शीघ्र आराम न हो तो उसे छोड़ना चाहिये।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

कोई बात आवेशमें न की जाय।

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १६२

१. देखिए "पत्र : हीरालाल शर्माको", २०-५-१९३५।
२. बीमेके दावेके एक मामलेमें।
३. साधन-सूत्रके अनुसार।

१२०. भेंट : एक ईसाई विद्यार्थीको[1]

[२१ मई, १९३५ या उसके पूर्व][2]

गांधीजी : जिस सेवा-कार्यमें स्वार्थकी लेश-मात्र गन्ध न हो, वह तो स्वयं ही परम धर्म है।

विद्यार्थी : किन्तु मनुष्यकी क्या किसी एकके प्रति निष्ठा होनी ही चाहिए?

हाँ, अवश्य। सत्यके प्रति उसकी निष्टा होनी चाहिए। मैं सिवा सत्यके और किसीका भक्त नहीं हूँ और सत्यके सिवा मैं किसी और का अनुशासन नहीं मानता।

पर इस सामान्य कल्पनासे मनुष्यको प्रेरणा कैसे मिल सकती है?

इसका यही अर्थ हुआ कि तुम एक ऐसे ईश्वरको चाहते हो जिसका कि कोई आकार हो, और सत्य तुम्हारे लिए एक अत्यन्त अमूर्त वस्तु है। बात यह है कि मूर्ति-पूजा मानव-प्रकृतिका मानों एक अभिन्न अंग है। किन्तु यदि तुम सत्यको ईश्वरके रूपमें नहीं पूज सकते तो ईश्वरको सत्यके रूपमें पूज सकते हो। ईश्वर सत्य तो है ही, किन्तु ईश्वरके और भी अनेक रूप हैं। इसीसे मैं यह कहना पसन्द करता हूँ कि सत्य ही ईश्वर है। लेकिन तुम्हें मेरा यह कथन शायद रहस्यवादियोंकी गूढ़ोक्तियों-जैसा लगेगा, इसलिए तुम उसे समझनेकी झंझटमें मत पड़ो। तुम तो केवल उसीको पूजो जो तुम्हें सत्य जान पड़े, क्योंकि सत्य सापेक्ष रूपमें ही भासित होता है। केवल यह स्मरण रखो कि सत्य उन अनेक गुणोंमें से एक नहीं है जिनके हम नाम लेते हैं। सत्य तो ईश्वरका साक्षात् स्वरूप है, और यही जीवन है, और मैं सत्यको पूर्णतम जीवनके रूपमें देखता हूँ, और इसी कारण वह साकार बन जाता है; क्योंकि यह समस्त सृष्टि, यह सारी हस्ती ही ईश्वर है, और जो-कुछ भी है, जो-कुछ भी 'सत्य' है, उस सबकी सेवा ईश्वरकी ही सेवा है।

पर हम ईसाई विद्यार्थी गाँवोंमें किस तरह जायें? शायद वे लोग हमसे दूर रहें, हमसे बचें, क्योंकि हम लोग ईसाई जो हैं।

तुम लोग उनसे कहो कि 'हम बेशक ईसाई हैं, पर तुम्हें हमसे डरनेकी जरूरत नहीं। जिस तरह तुम्हारे हिन्दू होनेसे हम तुमसे नहीं डरते, उसी तरह तुम भी

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। इस भेंटका प्रसंग बताते हुए महादेव देसाई कहते हैं : एक ईसाई विद्यार्थीने जो आजकल हमारे साथ ग्रामोंकी स्थितिका अध्ययन कर रहा है, और अपनेको ग्रामसेवा-कार्यके योग्य बना रहा है, एक दिन गांधीजीसे पूछा कि क्या बगैर धर्मके भी कोई सेवा हो सकती है?

२. गांधीजी बोरसद जानेके लिए २१-५-१९३५ को बम्बई बम्बई रवाना हुए थे।

हमसे मत डरो। तुम्हारे पास हम कोई स्वार्थपूर्ण हेतु लेकर नही आये हैं, और हम जानते हैं कि हमारे प्रति तुम्हारे दिलमें कोई दुरभिसन्धि नहीं है। हम चाहते हैं कि तुम और भी अच्छे हिन्दू बनो, जिस तरह कि तुम्हारे संसर्गमें आनेसे हम और भी अच्छे ईसाई बन जायेंगे।' उनके पास जाकर उनकी सेवा करनेका यह तरीका है। ईसाई धर्म-प्रचारकोंका यह कहना कि वे लोगोंको ईश्वरके पक्षमें खींच रहे हैं, बिलकुल व्यर्थ है। अरे, सर्वशक्तिमान् ईश्वर क्या इतना असहाय है कि वह मनुष्योंको अपनी ओर नही खीच सकता? प्रत्येक मनुष्यका धर्म उसकी अपनी चीज है। मैं हिन्दू-धर्मका उपदेश नहीं कर सकता, मैं तो केवल उसपर आचरण ही कर सकता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-५-१९३५

१२१. बातचीत : जयरामदास दौलतरामसे

[२१][1] मई, १९३५ [या उसके पूर्व]

यह तो बिलकुल जवाहरलाल नेहरू-जैसी ही बात है। उसका इसमें कोई खास मतलब नही है। वेस्टमिन्स्टरके कानूनके सम्बन्धमें मेरे विचारोंपर उसने कोई चर्चा आमन्त्रित नही की थी। लेकिन हम उसका मिजाज जानते है। और इसलिए हमें उसको खुशी-खुशी बरदाश्त करना सीखना चाहिए।

मैंने आनन्दको पत्र लिखा है। उसने अपना यह दुःख आप ही मोल लिया है। उसके पिताको राजी करनेका सबसे अच्छा तरीका उसे भुला देना है। उसको सान्त्वना देने और उसकी सेवा करनेका भी सबसे अच्छा तरीका यही है। उसे अपनी माँ से दृढ़तापूर्वक कहना चाहिए कि उसे यह वियोग सहना ही है। उसे लोगों या समाजकी चर्चाकी परवाह नही करनी चाहिए। हो सकता है कि वह उसकी बात न सुने। लेकिन उसके यह सलाह देनेके बाद भी यदि उसकी माँ अपना दुःख पालती रहे तो आनन्दको उसकी चिन्ता नही करनी चाहिए। जहाँतक विद्याका प्रश्न है मैं इस बातमें विश्वास नही करता कि अस्तित्वको चाहे जिस कीमतपर और बिना किसी प्रयोजनके कायम रखा जाये। तथाकथित विज्ञानमें अत्यन्त कृत्रिम ढंगकी जो सहायता सुलभ करा रखी है, उसकी उपेक्षा करके जल्दी ही मृत्युको प्राप्त हो जाना तिल-तिल कर मरनेकी अपेक्षा अच्छा है। मैंने आनन्दको इस लहजेमें पत्र लिखा है। उसे शरीर-रक्षाके सम्बन्धमें मेरे इस विचारको सुनकर शायद कुछ आघात भी लगेगा लेकिन मेरा यह विचार वर्षोंसे रहा है और मैं इसपर अमल भी करता

१. गांधीजी वर्धासे बम्बईके लिए इसी दिन रवाना हुए थे।

रहा हूँ। जब मीरा और नानावटीके शरीरके विषयमें कहा गया था कि उनके शरीर बिलकुल छीजते जा रहे हैं तब उनके सम्बन्धमें भी यही किया था।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द टी० हिंगोरानी.

१२२. पत्र : छगनलाल जोशीको

वर्धा
२१ मई, १९३५

चि० छगनलाल,

तुम्हें कुएँके बारेमें अनुमति मिल गई होगी। अब देखो कि क्या होता है। धीरजका फल मीठा होता है। तुम्हें अनुमति नहीं मिली, यह तो मैं कबका जान गया था। मैं तो भूल भी गया था। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि तुमसे मिलनेके लिए मुझे ईश्वर किसी बहाने उधर ले जाये?

भाई नानजीको[1] अभी कुछ नहीं लिख रहा हूँ। जरूरत पड़ी तो बादमें देखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३१) से।

१२३. पत्र : कृष्णचंद्रको

२१ मई, १९३५

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारी सब शुभेच्छा पूर्ण हो। मैंने तो तुमको कबसे अपना रखा है। लेकिन कहां तक रहोगे सो तो तुम जानो या प्रभु जानता है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२७१) से।

१. पोरबन्दर-निवासी नानजी कालीदास मेहता।

१२४. चर्चा : पियरें सेरेसोलसे[1]

[२१ मई, १९३५]

पियरे सेरेसोल: धनिकोंके लिए उनके रहन-सहनका कोई नियम क्या हम निश्चित कर सकते हैं? अर्थात्, क्या यह निश्चित किया जा सकता है कि धनिकोंका अधिकार कितने धनपर है और कितनेपर नहीं?

गांधीजी: हाँ, यह निश्चित किया जा सकता है। धनी मनुष्य अपने खर्चके लिए ५ प्रतिशत या १० प्रतिशत अथवा १५ प्रतिशत ले सकता है।

पर ८५ प्रतिशत नहीं?

मैं तो २५ प्रतिशततक जानेका विचार कर रहा था। पर ८५ प्रतिशतकी बात तो किसी शोषकको भी नहीं सोचनी चाहिए।

यही साम्यवादियोके साथ मेरा मतभेद है।[2] मेरे लिए तो अहिंसा ही अन्तिम कसौटी है। हमें यह हमेशा याद रखना चाहिए कि एक दिन हम लोग भी धनियों-जैसी ही स्थितिमें थे। हमें अपनी सम्पत्तिका त्याग करना आसान नहीं मालूम पड़ता था। हमने जिस तरह अपने प्रति धीरज रखा, उसी तरह दूसरोके प्रति भी रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त मुझे यह मान लेनेका कोई हक नही कि मैं सही हूँ और वह गलत। जबतक मैं उसके गले अपनी बात नही उतार सकता, तबतक मुझे राह देखनी ही चाहिए। इस बीच अगर वह कहे कि 'मैं २५ प्रतिशत अपने लिए रखकर बाकी ७५ प्रतिशत परोपकारी कामोंमें लगानेको तैयार हूँ', तो मैं उसकी बात मान लूँगा। क्योकि मैं जानता हूँ कि संगीनके भयसे दिये हुए १०० फीसदी धनसे स्वेच्छापूर्वक दिया हुआ ७५ फीसदीका यह दान कही अच्छा है। ऐसा करके हम सबके साथ न्याय करते हैं। अहिंसाका अंचल तो हम दोनोको ही पकड़े रहना चाहिए।

इसपर शायद आप यह कहें कि जो मनुष्य आज जोर-जबर्दस्तीसे अपना धन सुपुर्द कर देता है वह इस स्थितिको कल अपनी इच्छासे स्वीकार कर लेगा। यह सम्भावना मुझे बहुत दूरकी मालूम देती है, और इसपर मैं अधिक निर्भर नहीं करता।

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। यह चर्चा रेलगाड़ीमें हुई थी। गांधीजी वर्धासे बम्बई जा रहे थे और सेरेसोल, जो २३ मईको वहाँसे यूरोपके लिए रवाना होनेवाले थे, इस यात्रामें उनके साथ थे।

२. एक साम्यवादी लेखकने यह मत व्यक्त किया था कि गरीबोंके प्रति गांधीजी की सहानुभूति "धनिकोंके प्रति उनकी सच्ची सहानुभूतिका आवरण-मात्र" थी। महादेव देसाईके अनुसार सेरेसोलकी असल कठिनाई यह थी कि धनिकोंके गले यह बात उतारनेके लिए हमें कबतक राह देखनी चाहिए।

इतनी बात पक्की है कि यदि मैं आज हिंसाका प्रयोग करता हूँ, तो कल निश्चय ही मुझे भारी हिंसाका सामना करना पड़ेगा। अहिंसाको अगर हम नियम बना लेते है तो इसमें सन्देह नहीं कि जीवनमें हमें अनेक समझौते करने पड़ेंगे। किन्तु अनन्त-अखंड कलहकी अपेक्षा यह स्थिति अच्छी है।

धनाढ्य मनुष्यकी न्यायसम्मत स्थितिका वर्णन एक शब्दमें आप किस प्रकार करेंगे?

वह ट्रस्टी है। मैं ऐसे कितने ही मित्रोंको जानता हूँ जो गरीबोंके लिए पैसा कमाते और खर्च करते हैं, और अपनेको अपनी सम्पत्तिका स्वामी नहीं, किन्तु ट्रस्टी मानते हैं।

मेरे भी कुछ अमीर और गरीब मित्र हैं। मेरी अपनी कोई सम्पत्ति नहीं है, पर मेरे धनी मित्र जो धन मुझे देते हैं, उसे मैं स्वीकार कर लेता हूँ। इस बातको मैं किस तरह न्यायसंगत मानूँ?

आप खुद अपने लिए कुछ भी स्वीकार न करें। सैर-सपाटेकी गर्जसे स्विट्जरलैंड जानेके लिए आप चेक स्वीकार न करें, पर हरिजनोंके लिए कुएँ या स्कूल अथवा औषधालय बनवानेके लिए आप उनके लाख रुपये भी स्वीकार कर लें। स्वार्थकी भावना खत्म हुई कि यह प्रश्न सहज ही हल हो जाता है।

पर मेरा निजी खर्च कैसे चलेगा?

आपको इस सिद्धान्तके अनुसार चलना होगा कि हरएक मजदूरको उसकी मजदूरी मिलनी चाहिए। आपको अपनी न्यूनतम मजदूरी लेनेमें कोई संकोच नही होना चाहिए। हम सब यही तो करते हैं। भणसालीकी मजदूरी केवल गेहूँका आटा और नीमकी पत्तियाँ हैं। हम सब भणसाली तो हो नहीं सकते, मगर वे जैसी जिन्दगी बसर कर रहे हैं, उसके नजदीक पहुँचनेका प्रयत्न तो हम कर सकते हैं। मैं अपनी आजीविका प्राप्त होनेपर सन्तोष मान लूँगा, पर मैं किसी धनी आदमीसे यह सिफारिश नहीं कर सकता कि वह मेरे लड़केको अपने यहाँ किसी अच्छी-सी जगह रख ले। मुझे तो इतनी ही चिन्ता रखनेकी जरूरत है कि जबतक समाज-सेवा करता रहूँ तबतक यह शरीर टिका रहे।

किन्तु जबतक मैं किसी धनवानके यहाँसे अपने निर्वाहका खर्च लेता हूँ तब तक निरन्तर उससे यह कहते रहना क्या मेरा कर्त्तव्य नहीं है कि उसकी स्थिति बहुत स्पृहणीय नहीं है और यह कि सिर्फ उसके गुजारेके लिए जितना जरूरी हो उसे छोड़कर बाकीकी सम्पत्तिसे उसे अपना स्वामित्व उठा लेना चाहिए?

हाँ, अवश्य, यह आपका कर्त्तव्य है।

पर ये धनी मनुष्य भी सब एक-जैसे नहीं होते? उनमें से कुछएक तो शराबके व्यापारसे मालामाल बने होते हैं।

हाँ, भेद आप अवश्य करें। आप खुद कलवारका पैसा न लें, पर आपने अगर किसी सेवा-कार्यके अर्थ धनकी अपील निकाली हो तो आप क्या करेंगे? लोगोंसे क्या आप यह कहते फिरेंगे कि जिन्होंने न्याय-पथपर चलकर पैसा कमाया हो, केवल

वे ही उस कोषमें दान दें? मैं तो इस शर्तपर पैसा मिलनेकी आशा रखनेके बजाय अपीलको ही वापस ले लेना पसन्द करूँगा। यह निर्णय कौन करेगा कि अमुक मनुष्य न्याय-परायण है और अमुक नही। और यह न्याय भी तो एक सापेक्ष वस्तु है। हम अपने ही दिलसे पूछें तो यह पता चलेगा कि हम अपने तमाम जीवनमें धर्म या न्यायका अनुकरण करके नही चले। 'गीता' में कुछ ऐसा कहा है कि सबका एक ही लेखा है, इसलिए दूसरोके गुण-दोष देखते फिरने के बजाय दुनियामें अलिप्त बनकर रहो। अहभावका नाश ही सच्चा जीवन-रहस्य है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-६-१९३५

१२५. भेंट : 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको

[२२ मई, १९३५][1]

भेंट-वार्त्ता प्रारम्भ होनेसे पहले हमारे प्रतिनिधिने गांधीजी से कहा कि मुझे हिदायत कर दी गई है कि मै आपसे राजनीतिसे सम्बन्धित कोई भी प्रश्न न पूछूँ। गांधीजी ने कहा :

गांधीजी : बिलकुल सही है। तो क्या आपके पास प्रश्न तैयार हैं? आप मुझसे क्या कहनेको कहते हैं?

प्रतिनिधि : सर्वप्रथम तो मै चाहूँगा कि आप अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके बारेमें मुझे कुछ बतायें। जब दस माह पूर्व उसकी स्थापना हुई, तबसे यह क्या काम करता रहा है?

ग्रामोद्योग संघका कार्य सुनिश्चित ढंगसे चल रहा है। उसके सम्बन्धमें बतानेको कोई बहुत बड़ी बात नही है। लेकिन इसके आरम्भके समय जो भी कार्यक्रम निर्धारित किया गया था, उसे लागू करनेकी कोशिश हर क्षण की जा रही है। हालाँकि हमारे सम्मुख प्रत्याशित और अप्रत्याशित सभी प्रकारकी बाधाएँ आ रही हैं, लेकिन अब भी मूल कार्यक्रममें मेरी आस्था पूरी तरह बनी हुई है। मैं मानता हूँ कि दुनियामें मानव-शरीरसे अच्छा प्रगतिका कोई भी साधन नही है और अगर मानव-शरीर ही दुर्वल है, और आन्तरिक तथा बाहरी कारणोंसे दिन-दिन और भी दुर्वल होता जा रहा है तो हम बड़े परिणामोंकी आशा नही कर सकते। इसलिए हम भोजन और स्वास्थ्य-सफाईके प्रश्नोको हल करनेकी कोशिश कर रहे हैं। और क्योंकि पहले घरमें चिराग जलाया जाता है, फिर अन्यत्र, इसलिए हम केन्द्रमें वह सब कर रहे है जिसे बादमें हम भारतके प्रत्येक गाँवमें होते देखना चाहेंगे।

इसके साथ-साथ हमने अपने केन्द्रके सबसे समीपके एक गाँवको इस प्रयोगके लिए चुन लिया है। मै चाहूँगा कि समाचार-पत्र इस आन्दोलनके गम्भीर महत्त्वको

१. यह भेंट-वार्ता कलकत्ता मेलमें उस समय हुई थी जब गाड़ी सुबहके वक्त बम्बई पहुँचनेको थी।

पहचानें और इसे अपना विवेकपूर्ण समर्थन दें। विवेकपूर्ण समर्थन देनेसे मेरा मतलव है कि महत्त्वपूर्ण समाचार-पत्र अपने कर्मचारियोंमें विशेषज्ञोंकी नियुक्ति करें, जो ऐसे शिक्षाप्रद लेख लिखें जिनसे पाठक फायदा उठा सकें। आप देखेंगे कि इस कार्यक्रमके बारेमें, जो सतही तौरपर देखनेवालों को नीरस लगेगा किन्तु जो वास्तवमें वहुत रुचिकर है, मतभेदकी कोई गुंजाइश नहीं है। सारे पक्षों और सब व्यक्तियोंको इस प्राथमिक आवश्यकताको समझना चाहिए कि भारतके करोड़ों लोगोंको पौष्टिक भोजन या डॉ० तिलकके शब्दोंमें 'युक्ताहार' और स्वास्थ्यप्रद परिवेश प्राप्त होना चाहिए। मेरा खयाल है कि हमें दिन-दिन खोखला बनाती जा रही हमारी ग़रीबीके बावजूद ये दोनों वस्तुएँ सुलभ कराना सम्भव है।

जब गांधीजी को यह बताया गया कि इस संघको स्थापित हुए दस माह बीत चुकनेपर भी इसकी ओरसे शायद वर्धा और पनवेलमें किये जानेवाले कामको छोड़कर उसके बारेमें कुछ सुनाई नहीं देता, तब उन्होंने कहा कि सारे देशमें मूक रूपसे काम किया जा रहा है। इसके कार्यकर्त्ता इस बातका पता लगा रहे हैं कि इसका कार्य किस गहराईतक ले जाया जा सकता है। समाचार-पत्रोंको प्रतिदिन या प्रति सप्ताह बताने लायक कार्य नहीं हो रहा है। जैसे-जैसे उपयुक्त कार्यकर्त्ता मिलते जा रहे हैं, विभिन्न प्रश्नोंको हल करनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

यह पूछे जानेपर कि संघके उद्देश्य तथा कार्यको विस्तार देनेके लिए क्या गांधीजी के लिए यह जरूरी नहीं है कि वे निकट भविष्यमें सारे भारतका दौरा करें, उन्होंने कहा कि मेरे विचारसे अभी यह जरूरी नहीं है। उन्होंने आगे कहा:

अभी तो सारे भारतका दौरा इस कार्यको गहराईमें ले जानेके बजाय इसे विस्तार देनेके लिए ही किया जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसा करनेसे धन प्राप्त होगा और मैं कार्यके सम्बन्धमें सतही ढंगसे निर्देश भी दे पाऊँगा, मगर वह निर्देश भी, ग्रामसेवकोंके सम्मुख जो कठिनाइयाँ आती है, उन्हें जाने बिना ही दे पाऊँगा।

इस समय मै केन्द्र तथा आसपासके गाँवोंमें ही अपना प्रयत्न केन्द्रित करनेकी कोशिश कर रहा हूँ ताकि खुद मुझे और साथी कार्यकर्त्ताओंको भी अनुभवपर आधारित निर्देश प्राप्त हो सकें। अन्य केन्द्रोंमें दूसरे कार्यकर्त्ता भी इसी प्रकारसे कार्य कर रहे हैं। जब हम प्राथमिक प्रशिक्षण ग्रहण कर लेंगे तब अगर आवश्यक हुआ तो मैं सारे भारतका दौरा करूँगा। याद रखिए कि यह एक प्रकारसे सामूहिक रूपसे प्रौढ़ोंको शिक्षित बनानेका ही काम है, यह हमारे बिना पहलेसे तैयारी किये नहीं किया जा सकता। अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके बारेमें मुझे जो-कुछ कहना है वह सब मैंने कह दिया है। बस।

हमारे प्रतिनिधिने कहा कि वह उनसे एक या दो छोटे-से सवाल और पूछेगा, और उसके बाद वह उन्हें और कोई कष्ट नहीं देगा। गांधीजी को ग्रामीणकला तथा अ० भा० ग्रा० सं० के बारेमें डॉ० ठाकुरके भेजे उस सन्देशका स्मरण दिलाया

गया जिसमें कविने कहा था कि संघ द्वारा जिस केन्द्रीय संग्रहालयकी स्थापना की जानेवाली है, उसे केवल ग्रामोद्योगोंतक ही सीमित नहीं रखना चाहिए। उन्होंने कहा था: . . . "किसी राष्ट्रका आर्थिक जीवन, जैसा महात्माजी सोचते हैं, उस तरह से उसके जीवनके अन्य पहलुओंसे सर्वथा अलग-थलग चीज नहीं है। आज आर्थिक दीनताके साथ-साथ हम सांस्कृतिक रूपसे भी दीन हैं। यह दीनता हमारे लिए लज्जास्पद है। और जब हम यह सोचते है कि एक समय हम सांस्कृतिक दृष्टिसे कितने समृद्ध थे तो उससे हमारी यह दीनताजनित लज्जा कुछ कम नहीं हो जाती। आज हमारी कलाके नमूने विदेशोंके संग्राहालयोंमें पड़े हुए हैं और हमारे ग्राम-कलाकार मिटते जा रहे हैं। . . . महात्माजी से कहिए कि कला कोई श्रीसम्पन्न लोगोंकी विलासिता का साधन नहीं है। गरीबोंको भी इसकी उतनी ही जरूरत है।" . . .

डॉ० ठाकुरकी ओरसे आनेवाले हर सन्देशपर मैं आवश्यक रूपसे ध्यानपूर्वक विचार करता हूँ। मैं भी यह मानता हूँ कि ग्रामीण कलाका ध्यान रखा जाना चाहिए और जब उनकी सहायता मिलेगी तो हम उसकी भी उपेक्षा नही होने देंगे। अगर हम अपना कर्त्तव्य भूल जायें, तब भी वे इसकी उपेक्षा हमें नही करने देंगे। उन्होने श्रीयुत सुरेन्द्रनाथ कर की सहायता प्रदान भी की है। श्रीयुत कर वस्तु-स्थितिको प्रारम्भिक तौरपर देख लेनेके विचारसे एक बार यहाँ हो भी गये है और इधर मैं दीनबन्धु सी० एफ़० एन्ड्रयूजके साथ पूरे विषयपर चर्चा कर चुका हूँ। अब वे इस सम्बन्धमें गुरुदेवसे बातें करेंगे।[1]

गांधीजी से पूछा गया कि क्या वे ऐसा चाहते हैं कि जन-व्यवहारकी भाषा हिन्दुस्तानी, देवनागरी और उर्दू दोनों लिपियोंमें लिखी जाये। गांधीजी ने कहा:

स्वाभाविक है कि एक विशाल जन-समाज हिन्दुस्तानीको देवनागरी लिपिमें लिखेगा, लेकिन मुसलमान लोग एक अर्सेतक या शायद हमेशा इसे उर्दू लिपिमें ही लिखना चाहेंगे। इसीलिए इसकी परिभाषा देते समय हमने लिखा है कि हिन्दुस्तानी उत्तर भारतके लोगो द्वारा बोली जानेवाली भाषा है और देवनागरी अथवा उर्दू लिपि में लिखी जाती है। लेकिन मुझे यह उम्मीद है कि जब धार्मिक मतभेद समाप्त हो जायेगा और धार्मिक मेलजोल पुख्ता हो जायेगा तथा हिन्दुओ और मुसलमानोंके बीच हार्दिक सौहार्दकी भावना स्थापित हो जायेगी, तब दुनियाकी सब लिपियोंसे अधिक वैज्ञानिक देवनागरी लिपिको उसका उचित गौरव अवश्य प्राप्त होगा; अर्थात् इसे सारे भारतमें सर्वत्र अपना लिया जायेगा।[2]

"मैं जानता हूँ कि मुझे जो हिदायतें दी गई है उनके तहत मुझे यह प्रश्न तो नहीं पूछना चाहिए, क्योंकि यह निश्चित रूपसे एक राजनीतिक प्रश्न है।" गांधीजी ने कहा:

१. साधन-सूत्रके अनुसार "गाड़ी अबतक कल्याण पहुँच चुकी थी और रामदास गांधी तथा कुछ और लोग डिब्बेमें आ गये थे।" . . .

२. इसके बाद महादेव देसाईने भेंटकर्त्ताको समय समाप्त हो चुकनेका स्मरण दिलाया तो उन्होंने एक और अन्तिम प्रश्न पूछनेकी इजाजत माँगते हुए कहा:

नहीं, नहीं, पूछिए।

[प्र० :] **श्रीयुत भूलाभाई देसाईने अभी कुछ ही दिन हुए कहा था कि प्रत्येक व्यक्तिको यह प्रयत्न करना चाहिए कि गांधीजी कांग्रेस और राजनीतिमें वापस लौट आयें। आप कांग्रेसमें वापस कब आ रहे हैं?**

अगर आपकी परमात्मातक सीधी पहुँच है, तो यह प्रश्न आप उसीसे पूछिए कि मै कांग्रेसमें कब आऊँगा। मैं यह इसलिए कह रहा हूँ कि मुझे स्वयं ही यह मालूम नहीं है।[1]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-५-१९३५

१२६. भाषण : प्रार्थना-सभामें[2]

बम्बई
२२ मई, १९३५

आप लोगोंको आश्चर्य होगा कि जब अनेक मनुष्योंके लिए ईश्वरका अस्तित्व भी सन्देहका विषय हो रहा है, तब मैंने बम्बईमें प्रार्थना-सभा करनेके लिए क्यों हामी भर दी। ऐसे भी लोग है, जिनका यह कहना है कि "अगर ईश्वरका वास प्रत्येकके हृदयमें है, तो फिर कौन किसकी प्रार्थना करे और कौन किसका नाम-स्मरण?" मैं यहाँ इन दिमागी पहेलियोंको सुलझाने नहीं आया हूँ। मैं तो इतना ही कह सकता हूँ कि मेरे बचपनसे ही यह प्रार्थना मुझे सान्त्वना और बल प्रदान करती आ रही है।

मुझसे लोग कहते हैं कि जबसे जेल जानेकी मनाही कर दी गई, तबसे सर्वत्र निराशा-ही-निराशा छा गई है। मैंने सुना है कि लोग किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो रहे हैं। न जाने क्यों उन्हें अपना कर्त्तव्य नही सूझ रहा है, जबकि पूरा रचनात्मक कार्यक्रम उनके सामने पड़ा हुआ है। जब जेल जानेका कार्यक्रम चल रहा था, तब दम्भ, जोर-जबरदस्ती और हिंसाके लिए स्थान था। मौजूदा रचनात्मक कार्यक्रममें इन चीजों के लिए कोई गुंजाइश ही नही है। और न इसमें हताश होनेका ही कोई कारण है। फिर भी लोग संशयग्रस्त और हताश हो रहे हैं। ऐसे लोगोंके लिए ईश्वरका नाम ही सहारा है। प्रभुका यह वचन है कि जो भी अपनेको निर्बल और असहाय समझकर उसकी शरण में जाता है, उसकी तमाम निर्बलताको वह हर लेता है।

१. इस भेंटवार्त्ताके अंतमें बताया गया है कि उपर्युक्त प्रश्नका उत्तर पानेके बाद भेंटकर्त्ताने जाने की अनुमति माँगी। इसपर गांधीजी ने उससे फोटोग्राफरोंसे अपना कमीशन वसूल करको देनेको कहा। उसने फोटोग्राफरोंसे कुछ पैसे, जो एक रुपयेसे कम ही थे, इकट्ठे करके गांधीजी को दे दिये।

२. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। यह प्रार्थना-सभा कांग्रेस-भवनके अहातेमें हुई थी और इसमें हजारों लोग उपस्थित थे।

भक्त सूरदासने यही तो गाया है कि "सुने री मैंने निर्बलके बल राम।" यह बल अस्त्र-शस्त्रोंसे या इसी प्रकारके अन्य साधनोंसे प्राप्त नही होनेका। यह बल तो उस अशरण-शरण रामके नाम-स्मरणमें सर्वतोभावेन तन्मय हो जानेसे ही प्राप्त हो सकता है। राम तो भगवान्‌का केवल एक नाम है। उसे आप 'गॉड' या 'अल्लाह' या जिस नामसे पुकारना चाहें पुकार सकते है। उसी क्षण आपमें शक्ति आ जायेगी, आपकी सारी निराशा दूर हो जायेगी, जब आप सर्वाश्रय छोड़कर एक ईश्वरका ही आश्रय ले लेगे। सूरदासके इस भजनमें जो यह आया है कि—"जब लगि गजबल अपनो बरत्यो नेक सरयो नहिं काम; निर्बल ह्वै बल रामे पुकारयो आये आधे नाम"—उसपर आप मनन कीजिए। आपको यह तो मालूम ही होगा कि गजेन्द्रको जब ग्राहने ग्रस लिया, तब पैर छुड़ानेका उसने बहुतेरा जतन किया, पर सब बेकार गया। गजेन्द्रकी सिर्फ सूंड-भर जलके ऊपर रह गई थी। उसने अन्तमें अपनेको सर्वथा निर्बल-निःसहाय पाकर ज्योही हरिका नाम स्मरण किया, त्यो ही भगवान्‌ने उसे छुड़ा लिया। गजेन्द्र-मोक्ष तो एक रूपक-मात्र है। पर इसके अन्दर एक महान् सत्य छिपा हुआ है। मैंने अपने जीवनमें बार-बार उस सत्यका अनुभव किया है। घोरसे-भी-घोर निराशाके समय जब इस दुनियामें न तो कोई हमारा सहायक दीखता है और न कोई सहारा, तब भगवान्‌का अमोघ नाम ही हमें बल और स्फूर्ति प्रदान करता है और हमारे तमाम संशय तथा हमारी निराशाको एक क्षणमें दूर कर देता है। हो सकता है कि आज निराशाकी काली-काली घटाएँ घिरी दिखाई देती हो, पर उन्हें छिन्न-भिन्न कर देनेके लिए हमारे अन्तस्तलसे निकली हुई प्रार्थना काफी है। इस प्रार्थनाकी ही बदौलत मैंने अपने जीवनमें निराशा-जैसी चीजको कभी जाना ही नही। यद्यपि आज मैं कांग्रेससे अलग हो गया हूँ, तो भी मै सब देखता हूँ, सब सुनता हूँ। मेरे चारो ओर जो-कुछ हो रहा है उस सबका मुझे पता है, और अगर यह सब देख-सुनकर किसी मनुष्यको निराशा हो सकती है, तो वह मुझे ही होनी चाहिए। लेकिन निराशा तो मैंने कभी जानी ही नही। तब फिर आप लोग क्यो निराश हो रहे हैं? भगवान्‌से आज हम यह प्रार्थना करे कि वह हमारे हृदयसे क्षुद्रता, नीचता और वंचकताको दूर कर दे। निश्चय ही वह हमारी इस प्रार्थनाको सुनेगा। मै जानता हूँ कि अनेकोंको इस प्रार्थनाके सहारे निश्चय ही बल मिला है।

स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। जबतक हम उस अधिकारको खुद ही नही छोड़ देते, तबतक हमारे हाथसे उसे कौन छीन सकता है? हमने अपने इस जन्मसिद्ध अधिकारको छोड़ दिया है और हमें उसे आज फिरसे प्राप्त करना है। स्वराज महज जेल जानेपर निर्भर नही करता। अगर ऐसा होता, तो आज भी तो हजारो कैदी जेलमें पड़े हुए है। वह तो प्रत्येक मनुष्यके अपने कार्यपर निर्भर करता है। उस कार्यकी दिशा आपको बतला दी गई है। गाँवोमें जाकर अपना डेरा जमाइए, ग्रामवासियोकी ही तरह वहाँ रहिए, हरिजनोंको अपनाइए और हिन्दू-मुस्लिम-एकताको वास्तविक रूप दीजिए। देशमें जो हिन्दू-मुस्लिम दंगे हो रहे हैं उनसे आप हरगिज हताश न हों, आप तो अपना निर्धारित कार्य करते चले जाइए,

और यह यकीन रखिए कि वह तारनहार प्रभु निश्चय ही आपकी नैयाको पार लगा देगा।

[अंग्रेज़ीसे]

हरिजन, १-६-१९३५। बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-५-१९३५ से भी।

१२७. पत्र : मीराबहनको[1]

वोरसद

[२३][2] मई, १९३५

चि० मीरा,

हम यहाँ पौने छह बजे पहुँचे। अब सुबहके ८-२० हुए हैं। मौसम बिलकुल ठण्डा है। मन्द-मन्द हवा चल रही है। आनन्दी[3] और बाल[4] बम्बईमें हमारे साथ हो गये थे। इस प्रकार हम पाँच हो गये हैं। बालने मेरी सेवाका काम सँभाल लिया है। यहाँ बहुत-से पुराने परिचित लोग हैं, जो मेरी जरूरतें पहलेसे ही समझ लेते हैं। इसलिए तुम्हें मेरे लिए कुछ भी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। मेरे मनमें जरा भी सन्देह नहीं कि तुम्हें अपने साथ न लाकर मैंने अच्छा किया। परन्तु यह आगेके लिए कोई उदाहरण नहीं है। और हर सूरतमें अन्तिम निर्णय तो तुम्हारा ही रहेगा।

आशा है, तुम्हें जितने फलोंकी जरूरत होती होगी, मिल जाते होंगे। जिस किसी चीजकी जरूरत हो, मँगवा लेनेमें संकोच न करना।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०२) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७६८ से भी

१. बापूज़ लेटर्स टु मीरामें मीराबहन बताती हैं : "यूरोपसे लौटनेपर मैं वर्धा आश्रममें बापूसे मिली। उसके कुछ ही दिन बाद बापू अपना आवास मगनवाड़ी ले गये, जहाँ उन दिनों ग्रामोद्योग संघकी जड़ें जमाई जा रही थीं। जब बापूने . . . पत्र . . . लिखा तब मैं वहीं ठहरी हुई थी।"

२. साधन-सूत्रमें "२२" लिखा है जो स्पष्टतः गलत है; क्योंकि गांधीजी बोरसद इसी तारीखको पहुँचे थे।

३. आनन्दी आसर।

४. बाल कालेलकर।

१२८. पत्र : नारणदास गांधीको

२३ मई, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र आज मिला। केशूको भेजनेके लिए तुम्हें तार किया है। मुझे याद नही आता कि तुमने मेरी अनुमति माँगी थी।

घड़ियो[1] [के कारोबार] के बारेमें हरिलालकी बात मुझे जरा भी अच्छी नही लगी। तुम समझाना। इसके बावजूद वह ऐसा करे, तो भले करे।

मैथ्यू आनेके लिए छटपटा रहा है। आश्रमके पास उसका कुछ बकाया नहीं है। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो हम उसे आनेके लिए किरायेका पैसा भेज दें। मेरी इच्छा तो नही है। यदि उसकी आनेकी तीव्र इच्छा होगी तो आयेगा। उसे मै लिख रहा हूँ कि अगर वह जल्दी नही आता तो उसे रखा नही जा सकेगा।

टाइटस छुट्टीपर नही गया है। वह तो हमेशाके लिए चला गया है। यात्रा-व्यय उसे दे दिया गया। मैंने उसे वर्धामें रखनेकी हामी भर दी थी। उसमें इसकी कोई खास इच्छा दिखाई नही दी। लेकिन श्रावणकोरसे जवाब लिखेगा। किसी अन्य के नाम उसे सिफारिशका पत्र देनेसे मैंने इंकार कर दिया।

थरपारकरका पैसा अभी तो आश्रमके खातेमें से ही निकाल लो। बादमें जरूरी लगा तो दूसरे किसी खातेमें से दे दूंगा।

मेरी दृष्टिमें चिमनलाल[2] ज्यादा खर्च करता है। लेकिन चूंकि हमने दूसरोका भी ऐसा खर्च बरदाश्त किया है, इसलिए उसका भी बरदाश्त करना चाहिए। जीने और स्वस्थ होनेका थोड़ा-बहुत लालच हम सबको लगा रहता है। किसीने अपनी कोई मर्यादा बना रखी है, तो किसीने कोई। चिमनलाल तो वेरावल जाकर और तलवलकरसे[3] इंजेक्शन लेकर ही सन्तुष्ट है। लेकिन हमने दूसरोंके लिए इससे ज्यादा खर्च किया है। इसलिए जो पुराने कार्यकर्त्ता है उनपर ज्यादा प्रतिबन्ध लगानेकी मेरी इच्छा नही होती। वे खुद जितने संयमका पालन कर सकें उतना काफी है। इस सम्बन्धमें तुम्हें कुछ और तो नही सुझाना है?

मैं समझ गया कि ब्याज नहीं मिलेगा।

१. हरिलाल गांधी घड़ियोंका कारोबार शुरू करना चाहते थे; देखिए "पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको", २४-५-१९३५।

२. एक वृद्ध आश्रमवासी चिमनलाल एन० शाह।

३. अहमदाबाद-निवासी डॉ० तलवलकर।

लगता है, यह भूल हो गई कि गजाननको पैसा दिया गया। उसने तो अध्ययन भी छोड़ दिया था। धीरूका भी बन्द होना चाहिए। धीरूने जो कागज लिखकर दिया था, उसकी नकल उसके पास होगी। शायद छगनलालके पास भी हो। देखना।

लीलावतीको दिया मेरा सुझाव ठीक है न?

पिताश्री[1] को अलगसे लिख रहा हूँ।

प्रेमा आकर मिल गई थी। अपने कुछ गहने दे गई। बात तो हो ही नहीं सकी। यदि तुमने प्रेमाके पिछले दो पत्र सुरक्षित रख छोड़े हों तो वे गोमतीको पढ़नेको दे देना (वह वर्धामें है)।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्मसे (एम० एम० यू०/२) से; सी० डब्ल्यू० ८४४५ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१२९. पत्र: खुशालचन्द गांधीको

२३ मई, १९३५

आदरणीय भाईसाहबकी सेवामें,

चि० नारणदासने लिखा है कि हालाँकि आपने बहुत बाँचा, बहुत मनन किया है; किन्तु इस समय वह सब किसी काम नहीं आ रहा है, और मन निर्बल हो गया लगता है। ऐसा सबके साथ होता है, अतः मुझे कोई आश्चर्य नहीं हो रहा है। तथापि, आपसे मैंने कुछ और ही आशा की थी। जिसका मन ईश्वरमें रम गया हो, उसे फिर बुढ़ापा नहीं आता। हाँ, शरीर क्षीण होता है, किन्तु यह तो उसका धर्म ही है। मनका क्षीण होना जरूरी नहीं है। वह तो लगातार आगे बढ़ता हुआ अन्तमें ईश्वरमें लीन हो जाता है। यही अर्थ —

> एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति।
> स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति।।[2]

का है। जो अन्ततक टिके, वही तो ब्राह्मी स्थिति कही जायेगी न? इस स्थितितक पहुँचनेके लिए निर्बल हुआ मन क्या करेगा? इसका एकमात्र उत्तर तो नामस्मरण ही है। अतः मेरी तो यह प्रार्थना है कि दृढ़ संकल्पपूर्वक सभी वस्तुओंसे चित्तको हटा कर केवल नामस्मरण करते हुए बने तो 'नत्वहं कामये राज्यं'[3] — इस श्लोकको

१. खुशालचन्द गांधी; देखिए अगला शीर्षक।
२. भगवद्गीता, २/७२; देखिए खण्ड ३२, पृ० १४४।
३. आश्रम भजनावलि, पद १०; देखिए खण्ड ४४, पृ० ३९६।

दुहरायें। किन्तु यदि यह सम्भव न हो तो नामस्मरण ही काफी होगा। यह मनको सर्वथा तेजस्वी बना देगा, मनकी जीर्णावस्था मिट जायेगी और युवावस्था की अनुभूति होगी। किसी भी प्राणी अथवा वस्तुके विषयमें 'ममत्व' हो, तो मेरी प्रार्थना है कि उसे बिलकुल निकाल दें।

मोहनदासके दंडवत् प्रणाम

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० / २)से।

१३०. पत्र : मदालसा बजाजको

२३ मई, १९३५

चि० मदालसा,

तेरा पत्र भले लम्बा हो जाये मुझे सब खबर मिलनी ही चाहिए। जानकी-बहनसे[1] कहना कि वह घोड़ेपर न बैठे। यदि वह गिर पड़ी तो अच्छा होनेमें देर लगेगी। तेरे बारेमें ऐसा डर नहीं है। और घोड़ेपर चढ़नेवाला गिरता भी है, ऐसा कायदा तो है ही न?

तेरे फोड़ेका इलाज ढूँढ़ना ही होगा। नमक जरूर खाकर देखना, हालाँकि मैं नहीं मानता कि इसके साथ उसका कुछ सम्बन्ध होता है। नीमका सेवन कर देखना। मैं उसके प्रयोग कर रहा हूँ। दो बार खानेके बाद आधा तोला [नीमकी] पत्ती चबाकर देखना। इससे भूख ज्यादा लगेगी और रक्त शुद्ध होगा। परिणाम सूचित करना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३१७

१. मदालसा बजाजकी माँ।

१३१. पत्र : कान्ति और कनु गांधीको

२३ मई, १९३५

चि० कान्ति और कनु,

यह समझ लो कि तुम्हें साथ लानेकी मेरी बड़ी इच्छा थी, लेकिन मैंने उसे दबा लिया। यह ठीक हुआ, इसमें सन्देह नहीं है। किन्तु इसमें भी सन्देह नहीं है कि तुम्हारी मेरे साथ सफर करनेकी इच्छा है। आशा है, सब काम ठीक चल रहा होगा। प्रार्थनामें जितना रस-आनन्द भर सको, भरना। कनुको 'गीता' के अध्याय मुखाग्र कर लेने चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७२९७) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

१३२. पत्र : बलवन्तसिंहको

२३ मई, १९३५

चि० बलवन्तसिंह,

तुमारी २१ तारीखकी अव्यवस्था देखकर में परेशान हुआ। लेकिन अच्छा हुआ कि मैंने तुमारी इतनी निर्बलता जान ली। अब तुमारे स्थिरचित्त होकर अपने को समझ लेना चाहिये। किशोरलाल और काकासाहबसे बात करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८७७) से।

१३३. पत्र : राजकिशोरी त्यागीको

२३ मई, १९३५

चि० राजकिशोरी,[1]

तुमको मैं साथ नहीं ले चला उसका मुझको दुःख था। लेकिन तुमारा कल्याण तुमको वहीं रखनेमें था। लेकिन कोई अवसर आवेगा जब मेरे साथ ही चलेगी, खुश होगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६३६) से। सी० डब्ल्यू० ४२८४ से भी।

१३४. पत्र : अमतुस्सलामको

२३ मई, १९३५

प्यारी बेटी,

मेरी उमीद है कि खुश होगी और सब कुछ अच्छी तरह चलता होगा। तुम्हारा वजन बढ़ता होगा। किसी बातकी फ़िक्र होनी नहीं चाहिये।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२६) से।

१. चन्द त्यागी की पुत्रवधू।

१३५. भाषण : बोरसदमें[1]

[२३ मई, १९३५ को या उसके पश्चात्][2]

चूहे और पिस्सू छूत फैलाते हैं, इसलिए डाक्टरोंका कहना है कि चूहों और पिस्सुओंको नष्ट कर देना चाहिए। पर चूहे और पिस्सू तो ईश्वरके सन्देशवाहक हैं। इनके द्वारा ईश्वर हमें चेतावनी देता है। मैं प्रत्यक्ष अपनी आँखोंसे देखता हूँ कि जिन गाँवोंमें आपको प्रकृतिने अच्छेसे-अच्छा जलवायु और स्वास्थ्यकर जमीन प्रदान की है वहाँ आप प्रकृतिके नियमोंको इस तरह भंग करते हैं कि लगता है वहाँ महामारीने हमेशाके लिए अपना डेरा जमा रखा है। आप कुछ चूहों और पिस्सुओंको तो नष्ट कर देंगे, पर यदि आपने अपने घरों और आँगनोंको इतना साफ न रखा कि चूहे और पिस्सू पैदा ही न हों, तो वे तो वहाँ बारबार पैदा होंगे ही। उन्हें मारनेसे क्या होगा? मुझ-जैसा अहिंसाव्रती मनुष्य तो यही कहेगा कि चूहों और पिस्सुओंको भी जीनेका उतना ही अधिकार है जितना कि मुझे है, और इसका तो कोई कारण नहीं दीखता कि उनका नाश करनेके बजाय मैं अपना ही नाश क्यों न हो जाने दूँ। लेकिन अपने इस जीवनमें मैं अहिंसाकी उक्त मंजिलतक पहुँचनेकी आशा नहीं करता। यों तो एकाधिक जीवनोंमें भी शायद ही ऐसा कर पाऊँ। आप भी अपने लिए शायद ऐसी कोई आशा नहीं रखते होंगे। लेकिन आप अपने आसपास ऐसी परिस्थितियोंका निर्माण अवश्य कर सकते हैं जिनमें चूहे और पिस्सू पैदा ही न हों। मैं चाहता हूँ कि आप ऐसी परिस्थितियोका निर्माण करें। मैं चाहता हूँ कि इन स्वयंसेवकोंने गाँवोंकी सफाई और रास्तोंको झाड़ने-बुहारनेकी जो मुहिम शुरू की है उसे आप एक स्थायी चीज बना दें। और मैं चाहता हूँ कि आप अपने घरोंमें चूहोंके बिलोंको खोलकर नष्ट कर दें और ऐसे फर्श बनायें जिनमें चूहे अपने घर न बना सकें।[3]

जिस मनुष्यमें प्लेगके कीटाणु प्रवेश कर गये है वह ऐसे कीटाणुओंसे ग्रसित चूहे या पिस्सूसे बदतर है, और जबतक आप अपने शरीरको ऐसा नहीं बना लेते जिससे रोगाणुओंका उसपर कोई असर न हो तबतक आप महामारियोंको समाप्त नहीं कर सकते। प्रकृतिने हमें रोग-प्रतिरोधकी पर्याप्त क्षमता दी है। लेकिन हमने

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। महादेव देसाईके कथनानुसार गांधीजीने विभिन्न गाँवोंमें लगभग दस सभाओंमें भाषण दिये थे, और अपने भाषणोंमें उन्होंने लोगोंसे कहा था कि "वे अपने शत्रुके भाग जानेसे ही संतुष्ट न हो जायें बल्कि ऐसी व्यवस्था करें जिससे वह दुबारा उनकी ओर रुख ही न करे।"

२. गांधीजी २३ मईको बोरसद पहुँचे थे।

३. आगेके अनुच्छेदकी रिपोर्ट महादेव देसाईने गांधीजी के "एक भाषणके अंश" के रूपमें दी थी।

उसके नियमोंकी उपेक्षा करके स्वयं ही वह क्षमता नष्ट कर ली है। हमें रहन-सहन तथा खान-पानमें आरोग्यप्रद और स्वच्छ आदतें अपनानेकी यह क्षमता फिर प्राप्त करनी होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-६-१९३५

१३६. पत्र : एफ० मेरी बारको

२४ मई, १९३५

चि० मेरी,

तुम्हारे सम्बन्धमें खुर्शीदसे मेरी बात हुई थी। उसका सारा मकान करीब-करीब खाली हो जायेगा। इसलिए अगर तुम्हें मिरज जाना ही पसन्द हो, तो जरूर जाओ, और जितनी जल्दी हो सके, उतनी जल्दी जाओ। वैसे अगर केवल परीक्षा करवानेके लिए बम्बई जाना हो तब तो तुम्हें वहाँ कहीं भी ठहरनेमें कोई दिक्कत नही होगी। तुम्हारे स्वास्थ्यके लिए जो ठीक हो, वही करो।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०४२) से। सी० डब्ल्यू० ३३७१ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

१३७. पत्र : अगाथा हैरिसनको

वर्धा[1]
२४ मई, १९३५

प्रिय अगाथा,

जबतक सी० एफ० ए० यहाँ है, मुझे तुम्हें लिखनेकी कोई जरूरत नही है। लेकिन तुमने अपने जिस पत्रके साथ 'मैंचेस्टर गार्जियन' को लिखे कार्लं हीथका पत्र भेजा है, उसके बारेमें तो कुछ कहना ही है। उस पत्रका कोई असर नहीं हो रहा है, क्योंकि सचाईको जिस रूपमें लोग यहाँ जानते हैं उसका इसमें कोई खयाल नही रखा गया। वहाँ राजा दलगत झगड़ोंसे ऊपर है, या ऊपर हो सकता है। यहाँ तो सम्राट्का मतलब शासनतंत्र चलानेवाला अधिकारी-वर्ग ही लगाया जाता है। वह अपने प्रतिनिधिके माध्यमसे शासन करता है। भारत कार्यालय वास्तविकतासे

१. स्थायी पता।

सर्वथा अलग पड़े इस अनुच्छेदको देखकर उपहास कर रहा है। और सरकार उन कैदियोंको क्यों आजाद करे जिनके मनमें न तो सम्राट्के रूपमें सम्राट्के प्रति और न साम्राज्यके ही प्रति कोई प्रेम है। मैंने राजनीतिक कैदियोंको छुड़वानेके किसी आन्दोलनको कभी ठीक नहीं माना है। मैंने सरकारके हठ-भरे इन्कारको समझ लिया है। उसका रवैया संगत भी है। असंगत तो वह तभी होगा जब यह मान लिया जाये कि पूरी प्रणाली ही गलत है। काश, लोग तथ्योंपर थोड़ा ध्यान देते।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४९१) से।

१३८. पत्र : अमृतकौरको

२४ मई, १९३५

प्रिय अमृत,

तो तुम पत्र लिखनेके समयतक — यानी इस २० तारीखतक भी — दुर्घटनाके प्रभावसे मुक्त नहीं हो पाई थीं। मुझे उम्मीद है कि अब पूरी तरह मुक्त हो गई होगी।

यह जानकर खुशी हुई कि तुमने ग्रामवासियोंके साथ सम्पर्क स्थापित कर लिया है। तुम्हें उनकी घरेलू हालतकी जानकारी लेनी चाहिए और उनके साथ इस तरह मेलजोल बढ़ाना चाहिए जैसे वे तुम्हारे परिवारके सदस्य हों। अभी हमें उनकी नैतिक अवस्थाकी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। क्योंकि उन्हें इस सम्बन्धमें अधिक ज्ञान ही नहीं है। उनके मनमें कोई कलुष नहीं है। इसलिए अगर हम उनके साथ सम्पर्क स्थापित करेंगे तो उनको अपनी कुछ आदतोंको छोड़नेके लिए कहना आसान और असरदार हो जायेगा।

गर्मी तो है, पर बहुत ज्यादा दुःखदायी नहीं।

मैं चार्लीको अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ।

वहाँके सभी लोगोंको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५३५) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६३४४ से भी

१३९. पत्र : मीराबहनको

२४ मई, १९३५

चि० मीरा,

एक अटेरन मैंने खुद ही साथमें रख लिया था। इसलिए कोई कठिनाई नहीं हुई। सूत अटेरनेवाले यहाँ काफी हैं, और पूनियाँ भी पर्याप्त मिल जाती हैं। पैर पोंछनेवालोंकी भी कमी नहीं है। भोजनका तो यह है कि बाल बकरियाँ दोहवा लाता है और आम खूब मिल जाते हैं। नीमके पेड़ तो सब जगह है ही। इसलिए मेरे लिए तो तुम्हें चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है।

तुम राघवैयाका इलाज करवा रही हो, यह जानकर खुशी हुई। रसोईघरमें हाथ बँटा रही हो, यह भी अच्छा है।

कमला बिलकुल स्वस्थ और प्रसन्न थी।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७६९ से भी

१४०. पत्र : जमनालाल बजाजको

२४ मई, १९३५

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला है। इन्दौरकी बातको भार-स्वरूप न होने देना। जब नीचे उतरो तो वहाँ जरूर हो आना।

गंगादेवीकी खबर मिलती होगी। बोरसदमें सब ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७०) से।

१४१. पत्र : मणिलाल तथा सुशीला गांधीको

२४ मई, १९३५

चि० मणिलाल तथा सुशीला,

कल सरदारकी इच्छानुसार मैं बोरसद आया। बा और महादेव साथ हैं। ३१ को वापस वर्धाके लिए रवाना हो जाऊँगा। बा बहुत करके लगभग महीने-भर के लिए इसी ओर रह जायेगी।

बड़े दुःखकी बात है, तुम्हारा गन्ना सूख गया। लेकिन किसानके भाग्यमें ऐसा होता ही रहता है। इस सबको मनमें रखकर ही खेती की जाती है। पाला पड़नेसे क्या यहाँ इसी बरस करोड़ोंकी सुनहरी फसल बर्बाद नहीं हो गई?

बा भले थोड़ी देर चिन्ता कर ले, किन्तु तुम्हें तो वहाँके सारे समाचार भेजने ही चाहिए। तभी तो, जहाँ आवश्यक हो, मैं मार्गदर्शन कर सकता हूँ।

रामदास-सम्बन्धी तेरा सुझाव मुझे अच्छा लगा। तेरा पत्र उसे भेज रहा हूँ। वह आयेगा तो नहीं; लेकिन एजेंसी जरूर ले सकता है और उससे तुम दोनोंको फायदा होगा। मैं ऐसा करनेका सुझाव दे रहा हूँ।

हरिलाल अभी तो नई बहूकी खोजमें है। घड़ीका धन्धा करना चाहता है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

. . .[1] जमनालालजी से जो पैसे उधार लिये थे, उनमें से तो एक पाई भी वापस नहीं दी। मेढने[2] जो पैसा भेजा था, वह भी हड़प कर गया। इसलिए तुझे मेढको तो हर महीने एक पौंड भेजना ही पड़ेगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८३८) से।

१. नाम छोड़ दिया गया है।

२. सुरेन्द्रनाथ मेढ।

१४२. पत्र : शान्तिकुमार मोरारजीको

२४ मई, १९३५

चि० शान्तिकुमार,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम दीर्घायु होओ और खूब सेवा करो; सदाके लिए यही मेरी आशा है, सदाके लिए यही मेरा आशीर्वाद है।

सुमतिका[1] स्वास्थ्य ठीक रहता होगा।

मातुश्री को मेरे प्रणाम।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८००) से; सौजन्य: शान्तिकुमार मोरारजी

१४३. पत्र : अवधेशदत्त अवस्थीको

२४ मई, १९३५

चि० अवधेश,

मनुष्य-जीवनका उद्देश्य प्राणी-मात्रकी सेवा माना जाय।

२. एकादश व्रतका पालन और उसके विरोधी वस्तुका त्याग आवश्यक है।

३. गरुडके वचनमें क्रोध अवश्य था। उसका अर्थ यह कभी नहीं है कि हम भी क्रोध करें।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२१५) से।

१. शान्तिकुमार मोरारजीकी पत्नी।

१४४. वैनलेस सैनेटोरियमके अधीक्षकको भेजे गये तारका मसविदा

[२४ मई, १९३५ के पश्चात्][1]

अधीक्षक
वैनलेस सैनेटोरियम
मिरज

कु० बारको बुखारके कारण कल रवाना न हो सका। शनिवारकी सुबह वहाँ पहुँचूंगा।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१४५. एक लाख रुपया चाहिए

हरिजन सेवक संघका केन्द्रीय बोर्ड सेठ जुगलकिशोर बिड़लाके दिये हुए रुपयेसे बहुत-से कुएँ हरिजनोंके लिए बनवा चुका है। वह रुपया अब समाप्त हो चला है किन्तु हरिजनोके लिए कुएँ बनवानेकी आवश्यकता अब भी शेष है। सार्वजनिक कुओंसे हरिजनोंके पानी भरनेका विरोध अब भी अनेक स्थानोमें किया जा रहा है, और बेचारे हरिजनोंको या तो मवेशियोंके हौजोंका पानी पीना पड़ता है, या लोग दया-वश उनके घड़ोंमें दूरसे जो पानी डाल देते हैं उसके लिए उन्हें पैसा देना पड़ता है। इसलिए जितने भी नये कुएँ बनेंगे उनसे निस्सन्देह हरिजनोंका कष्ट-निवारण तो होगा ही; साथ ही, उनसे देशकी सम्पत्तिमें वृद्धि भी होगी। इस कामके लिए हरिजन सेवक संघके केन्द्रीय बोर्डने एक लाख रुपयेकी अपील निकालनेका निश्चय किया है। किस प्रान्तमें कितने कुओंकी जरूरत है, इसके आँकड़े जनताके सामने रखनेके लिए तैयार किये जा रहे हैं। इतनी बड़ी आवश्यकताको देखते हुए एक लाख रुपया कुछ भी नहीं है। किन्तु संघके पास कोई ऐसा जरिया नहीं कि जिससे वह कुओंके बनवाने पर बड़ी-बड़ी रकमें खर्च कर सके। यह ऐसा काम है जो धीरे-धीरे ही होता है, और फिर उसमें विशेष बुद्धि-कौशल भी चाहिए। हर कोई

१. गांधीजी ने मेरी बारको २४ मईको जो पत्र लिखा था यह तारीख उसीके आधार पर निर्धारित की गई है। देखिए "पत्र : एफ० मेरी बारको", २४-५-१९३५।

कुआँ नहीं बनवा सकता। फिर यह काम एक-दो जगहका तो है नहीं, तमाम प्रान्तोंमें सैकड़ो जगह कुएँ बनवाने हैं, इसलिए कामकी ठीक-ठीक देखभाल रखना भी बहुत मुश्किल है। बोर्डकी यह नीति है कि जिस कामपर वह ठीक तरहसे पैसा खर्च नहीं कर सकता और जनताके आगे उसका ठीक-ठीक हिसाब-किताब नहीं रख सकता, उस कामके लिए वह पैसा माँगता ही नहीं। मैं उम्मीद करता हूँ कि लोग इस छोटी-सी अपीलका तुरन्त पर्याप्त उत्तर देंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-५-१९३५

१४६. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

२५ मई, १९३५

चि० भगवानजी,

हूबहू वर्णन देनेवाला तुम्हारा पत्र मिला था। अपने शरीरका खूब ध्यान रखना। वाडजको मत भूलना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३८७) से; सौजन्य : भगवानजी पु० पण्ड्या

१४७. पत्र : विनायकप्रसाद पण्ड्याको

२५ मई, १९३५

भाईश्री विनायक,

आपके बहनोईको विनयपूर्वक समझाने-बुझानेके सिवा मैं उनकी चाय और बीड़ी छुड़वानेका और कोई उपाय नहीं देखता। यदि आप सबका प्रेम भी उन्हें द्रवित नहीं करता तो आपको उनकी इस आदतको बरदाश्त करना पड़ेगा।

मो० क० गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३६७) से।

१४८. पत्र : अन्नपूर्णाको

वर्धा [के पतेपर]
२५ मई, १९३५

चि० अन्नपूर्णा,

पिताजी ने उपवास क्यों किया? उपवासमें क्या किया? बहुत कष्ट हुआ था? अब क्या खाते हैं? उपवासका निवारण कैसे किया? सतीश बाबूके[1] आ जानेके बाद मुझे सब ब्यान लिखो। वैद्यनाथ क्या करता है? अब लड़कियाँ कितनी हुई? देवकपास बोनेकी चेष्टा की जाय।

बापुके आशीर्वाद

श्री अन्नपूर्णा कुमारी
मार्फत श्री गोपबन्धु चौधरी
डा० बारी
जि० कटक

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७७८) से।

१४९. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

बोरसद
२६ मई, १९३५

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र सवेरे साढ़े तीन बजे मेरे हाथमें दिया गया, और पढ़कर मैं तुरन्त ही जवाब लिखने बैठा हूँ। रोनेसे सावलीकी बहनोंके दुःख दूर नहीं होंगे। जितना तुम सोचते हो, उतनी खराब हालत सावलीकी हरिजन बहनोंकी नही है। यह सिद्ध किया जा सकता है। तुम्हारी कल्पनाशक्ति तुम्हें बहुत दूर खींच ले जा सकती है, इस शक्तिको नियन्त्रित करना चाहिए। यह संसार दुःखका सागर है। यदि इसीका विचार करते रहें, तो इसमें डूब जायेंगे। इस जगत्का सिरजनहार और नियन्ता ईश्वर है तथा वह न्यायी है। अतः हमारा माना हुआ दुःख दुःख नही है; बल्कि कुल मिलाकर सुख ही है; अर्थात् सत्यकी ही जय होती है, ऐसा मानकर मनको

१. सतीशचन्द्र दासगुप्त।

हलका रखना चाहिए। ऐसा करें, तो दूसरोंके दुःख दूर करनेमें भी सहायता मिलती है। किन्तु इसके विपरीत यदि दुःखका आँकड़ा बढ़ाकर रखें तो मोह उत्पन्न होता है और हम दुःख दूर करनेके लायक भी नहीं रह जाते।

सावलीके बारेमें मैं जाँच-पड़ताल तो करूँगा ही। लेकिन एक बात कह देता हूँ। पहले बहनोंकी सूतसे कोई कमाई नहीं थी, उसके बदले अब इतनी हो गई, यह सन्तोषकी ही बात है। बहनोंको दूसरी आमदनी होती ही है। आखिर वे कुटुम्बमें से एक ही होती है। दूसरे कुटुम्बी भी कमाते हैं। इन बहनोंसे अधिक गरीब तो इस देशमें असंख्य हैं। उनकी गरीबीका विचार करके आँसू नहीं ढालने चाहिए, बल्कि छातीको पत्थर बनाकर गरीबी मिटानेका प्रयत्न करना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३८८) से; सौजन्य : भगवानजी पु० पण्ड्या

१५०. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा [के पतेपर]
२६ मई, १९३५

प्रिय अमृत,

तुम्हारा सूत अब मुझे मिल गया है। बुरा नहीं है। अब तुमको ठीक बटदार धागा निकालना सीखना चाहिए। न सीखनेपर सूत कमजोर पड जाता है। देखता हूँ कि तुमने बहुत-सारे हजामतके ब्लेड भेज दिये हैं, जिनमें से कुछ बिलकुल नये हैं। सूत भेजनेपर खर्च हुए डाक-खर्चकी पूर्ति उनसे हो गई। अब कोई पार्सल भेजनेसे पहले तुमको उसे काफी तादादमें जमा कर लेना चाहिए।

क्या लिफाफों और लिखनेके कागजोंका पैकेट तुमको मिल गया? विशेषज्ञने अभीतक कागज बनानेका काम शुरू नहीं किया है। मैंने उसको इन्दौरसे आई हुई सामग्रीसे पत्र आदि लिखनेका कागज इत्यादि तैयार करनेका काम सौंपा है। वह जब बना लेगा, तुमको सूचना मिल जायेगी।

हाँ, शिमलाके बाजारके बारेमें मैंने बात चलाई तो थी। मैंने तुमको सुझाया था कि तुम खुद जाकर देखो कि वहाँ स्थानीय रूपसे कौन-कौन-सी सब्जियाँ तथा फल मिलते है और स्वास्थ्यकी दृष्टिसे वे कितने गुणकारी रहते हैं, और बाजारमें दूर-दूरके पहाड़ी इलाकोंसे अपनी उपजाई वस्तुएँ बेचनेके लिए आनेवाले गरीबोंकी हालत की भी जानकारी हासिल करो। तुम शिमलामें एक बड़ी तादादमें पहुँचनेवाले लोगोंको कागज, खद्दर और इसी प्रकारकी अन्य वस्तुएँ भी बेच सकती हो।

आशा है कि तुम दोनों अब पर्वतीय प्रदेशके वायु-सेवनका लाभ महसूस करने लगे होगे।

एन्ड्रयूजको इसी सप्ताहमें यहाँ पहुँच जाना चाहिए।
सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५३६) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६३४५ से भी

१५१. पत्र : न० रा० मलकानीको

२६ मई, १९३५

प्रिय मलकानी,

तुम्हारे २३ तारीखके पत्रका हरिजी[1] बुरा मान गये लगते हैं। वह कोई शिष्टतापूर्ण पत्र नहीं है। उसका स्वर सचिवके लिखे पत्र-जैसा नहीं, बल्कि किसी प्राध्यापकके लिखे पत्र-जैसा है। सचिवके सामने प्राध्यापककी तुलनामें अप्रिय बातें कहनेके प्रसंग बहुत अधिक आते हैं, और अगर वह अप्रिय बातोंको भी प्रिय ढंगसे न कह पाये तो फिर उसका सचिव होना व्यर्थ है।

मैंने बापाको लिखा है कि हरिजी के कारण वातावरणमें जो विक्षोभ पैदा हो गया है, उसे वही शान्त करें। हरिजी को मैं भी लिख रहा हूँ, और तुम भी एक विनयपूर्ण पत्र लिखकर उनसे कह सकते हो कि अगर अनजाने ही तुमसे कहीं अशिष्ट भाषाका प्रयोग हो गया हो तो उसके लिए वे क्षमा करें।

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

पानी-फण्डके[2] लिए दिये दान की सूची क्या तुम भेजते रहे हो?

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५३) से।

१. हृदयनाथ कुँजरू।

२. हरिजन बस्तियोंमें जल-आपूर्तिकी स्थिति सुधारनेके लिए जून, १९३३ में हरिजन सेवक संघ द्वारा आरम्भ किया गया जे० के० पानी-फण्ड।

१५२. पत्र : मीराबहनको

२६ मई, १९३५

चि० मीरा,

तुम गंगादेवीका मार्गदर्शन कर रही हो, इस बातसे मैं बहुत खुश हूँ। उसे अभी कठिन परिश्रमका कोई कार्य नहीं करना चाहिए। आशा है, राघवैयाकी तबीयतमें सुधार हुआ होगा। सिन्दीकी सफाईका काम एक दिनके लिए भी बन्द नहीं होना चाहिए।[1] लेकिन साथ ही तुम्हें मौनपूर्वक पहाड़ीतक का अपना वह भ्रमण भी जारी रखना चाहिए।

सरदारने मेरे लिए बहुत हलका कार्यक्रम रखा है।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०४) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७७० से भी

१५३. पत्र : कान्ति गांधीको

२६ मई, १९३५

चि० कान्ति,

तेरी कैफियत ठीक है। मैं इतना ही समझा हूँ कि सब मिलाकर तू मेरे साथ रहनेमें ही अपना भला समझता है। मैं यह नहीं मानता कि मेरे साथ जिस तरह रहना होता है उसीमें सच्ची शिक्षा निहित है, यह बात तेरे मनमें घर कर गई है। लेकिन यह मानता हूँ कि जो निर्णय तूने किया है, उससे तू प्रसन्न है। तेरा भला होगा, इसमें तो मुझे कोई सन्देह है ही नहीं। तेरा कार्यक्रम मैं समझ गया हूँ। मैं जब वहाँ आऊँगा, तब उसपर विचार कर लेंगे। यदि खतौनी पूरी हो जाए,

१. सिन्दी गाँवके निवासी शौचके लिए गाँवके रास्तोंका उपयोग करते थे। मीराबहनकी शिकायत पर गांधीजी ने उन्हें, गाँववालोंको सफाईका पाठ पढ़ानेकी दृष्टिसे, इन गलियों और रास्तोंको प्रतिदिन साफ करनेकी सलाह दी थी।

तो एक काम निबट जायेगा। काकासाहबकी उपस्थितिका जितना भी लाभ लिया जा सकता हो, लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७२९८) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

१५४. पत्र : प्रभावतीको

२६ मई, १९३५

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तेरा बीमार पड़ना मुझे पसन्द नहीं आता। रोगसे मुक्त होना ही चाहिए। कमलाने लिखा है कि तू उससे मिलने गई थी। तू गई और जयप्रकाशके साथ भी कुछ दिनों रह आई, यह तूने ठीक किया। इसी तरह अगर वह शादी भी तय हो जाये तो तेरी सारी समस्याएँ सुलझ जायें। देखना, उसके पहले बीमार मत पड़ जाना। नीमकी पत्तियाँ खाना। कटि-स्नान करना। नियमसे घूमने जाना। मैं ३१ को बोरसदसे रवाना हो जाऊँगा और २ जूनको वर्धा पहुँचूँगा। मेरा वजन १०४ पौंड है। खुराकमें इन दिनों दूध, नीमकी पत्तियाँ और आमका-रस ले रहा हूँ। फिलहाल इमली नहीं मिल रही है। इसकी जगह नीबूका रस ले लेता हूँ। मेरी तबीयत अच्छी है। साथमें सिर्फ बा और महादेव हैं। बा और आनन्दी बम्बई से साथ हुए। बहुत करके बा महीने-भर साथ रहेगी। बोचासणमें इन दिनो गंगाबहनके[1] पास बहुत-सी लड़कियाँ हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४४९) से।

१५५. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२६ मई, १९३५

न तू मुझसे मिल सका, न मैं कपिलको[2] देखने आ सका। महादेवको लिखा तेरा पत्र पढ़ा। कपिलको आराम हो गया, बधाई!

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १५८

१. गंगाबहन वैद्य।
२. मथुरादास त्रिकमजीका पुत्र।

१५६. पत्र : अमतुस्सलामको

२६ मई, १९३५

प्यारी बेटी,

तुम्हारा खत मिला। स्टेशन आकर[1] कोई ऐसा गुनाह तो नहीं किया। क्या खामखा परेशान होती है? तुमने सब खबर ठीक दी है। गंगाबहन[2] खुश होंगी। राजकिशोरीको[3] मेरा खत मिला होगा।[4] तुम्हारे तबीयतके बाहर काम न करना। मैं दो तारीखको पहुँच जाऊँगा।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२७)से।

१५७. पत्र : मीराबहनको

२७ मई, १९३५

चि० मीरा,

तुम्हारे दो बढ़िया वर्णनात्मक पत्र मिले। उनसे पता चलता है कि आत्माभिव्यक्तिके लिए तुम्हें इस तरह अकेले घूमनेकी कितनी जरूरत है। रोज नहीं तो अक्सर तुम्हें यह सैर करनी ही चाहिए। डाकका समय हो रहा है और मैं लिख रहा हूँ। मेरा मुख्य भोजन यहाँ दो पौंड दूध, दो तोले नीम, स्थानीय आमोंका बड़ा कटोरा-भर रस और नीबू है। यहाँका मौसम वहाँसे बेशक बहुत ठण्डा है। हम समुद्रसे सिर्फ १५ मील दूर हैं।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०५)से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७७१ से भी

१. गांधीजी जब कुछ दिन पहले ही बम्बईके लिए रवाना हुए तो अमतुस्सलाम उनसे मिलने वर्धा-स्टेशन गई थीं।

२. धूलियावाले रामेश्वरदास पोद्दारकी पत्नी।

३. चन्द्र त्यागीकी बहू।

४. देखिए "पत्र: राजकिशोरी त्यागीको", २३-५-१९३५।

१५८. पत्र : कनु गांधीको

२७ मई, १९३५

चि० कनु,

तेरा पत्र मिला। 'गीता' विधिवत सीख रहा है, यह अच्छा है। यदि 'मार्गोपदेशिका'[1] ठीक तरहसे सीख ले, तो व्याकरण आ जायेगा। उससे उच्चारणमें भी सरलता होगी और स्मरणशक्ति भी बढ़ेगी। एक-एक मिनटका सदुपयोग कर, तो बहुत-कुछ सीख लेगा। आशा है, सब साफ-सुथरा तो रखता ही होगा। तीसरी चक्की आई थी, उसका क्या हुआ? जो टूट गई थी, उसके ठीक करवानेका क्या हुआ? आशा है, भेंटमें जो आम वगैरह आये थे, उनका हिसाब रजिस्टरमें दर्ज किया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१५९. पत्र : वैकुंठलाल एल० मेहताको

बोरसद

२७ मई, १९३५

भाई वैं[कुंठ],[2]

भाई [म]॰[3]थु[रा][4] दास विसनजी लिखते हैं कि आप हरिजन सेवक संघकी प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर नहीं कर सकते, इसलिए त्यागपत्र देना चाहते हैं। यह क्या बात है? मुझे तो विश्वास नही हुआ। यह प्रतिज्ञा तो केवल हमारी मानसिक वृत्ति की सूचक है। इसके बिना कैसे चल सकता है? अगर आप ऐसी प्रतिज्ञा नहीं ले सकते, तो फिर वह किससे लिवाई जा सकती है? मैं तो समझता हूँ, भाई मथुरादास आपको [समझे नहीं है]। जैसी स्थिति हो [मुझे] समझाकर लिखिए। बम्बईका संघ सुव्यवस्थित हो जाना चाहिए।

बापू

[पुनश्च :]

मैं ३१-को बोरसद छोड़ दूँगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३६२) से।

१. बच्चोंके लिए भाण्डारकर-कृत संस्कृत-व्याकरणका गुटका।

२ से ४. कोष्ठकबद्ध अंश उन स्थानोंका निर्देश करते हैं, जो मूल पत्रके क्षतिग्रस्त हो जानेसे साधन-सूत्रमें ही अस्पष्ट हैं।

१६०. पत्र : विष्णु नारायण अभ्यंकरको

२७ मई, १९३५

भाई विष्णु नारायण अभ्यंकर,

आपका पत्र मैंने ध्यानसे पढ़ लिया। आपने जो दृढ़ता और विश्वाससे खादी-काम किया है उसके लिए अनेक धन्यवाद। प्रजामडलने खादीकी दरी छोड़कर मिलके धागेकी दरी ली यह जितना आश्चर्यजनक है इतना ही दु:खद है। लेकिन हम जो खादीपर विश्वास रखते है अपना विश्वास कभी न छोड़ें।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (एस० एन० ३२७१) से।

१६१. पत्र : बलवंतसिंहको

२७ मई, १९३५

चि० बलवंतसिंह,

तुमको जब दोषदर्शन नहीं हुआ है तो क्लेश क्यो? भले कोई महात्मा भी हमारा दोष बतावे लेकिन जबतक हमको प्रतीति न हो तबतक न शोक होना चाहिये, न प्रायश्चित। मैंने तुम[में] असत्य नही पाया है लेकिन विवेकशून्यता पाई है। जब तुमारे जाहेर पैसेसे जाना था तो जानेका कारण ही नही था। दिल्लीसे आना भी उचित था या नही यह सोचनेकी बात है। ऐसे ही रोटी व आमकी बात है। लेकिन इन सब बातोमें दु:ख माननेकी बात नही है, सिर्फ समजनेकी बात है, मनपर अंकुश रखनेकी बात है। अधिक मिलने पर। मेरी उमीद है कि १२ दिन जो मिल गये हैं उसका पूरा सदुपयोग किया होगा।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तुमारा कागद वापिस करता हूं।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८७८) से।

१६२. पत्र : हीरालाल शर्माको

२७ मई, १९३५

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला है। मैं समजा हूं इस वखत तो तुमने पुस्तकोंके पैसे दिये हैं। दूसरे आ जानेसे सबके पैसे तुमको जमा दूंगा। पुस्तकोंके पैसे तुमारे देनेकी कोई आवश्यकता नही है। कया दूकानदारने कुछ दाम कम लिया कि जो छापा था वही लिया? जो पुस्तक पढ़ सकते हैं आज सो तो ऐसे ही पढ़े जाय। दरम्यान अमरीका का कया होता है सो देखें। वर्धा आकर तो अवश्य सीख सकते हो ये सब तो अमरीका पर निर्भर है। दा० केलागको लिखनेका मतलब यह नहीं है कि तुमारा जाना उनके उत्तरपर निर्भर है। यदि पासपोर्ट हमारे पास रहता तो मैं तुमको ३१ तारीख़को अवश्य रवाना कर देता। केलागके उत्तरकी प्रतीक्षा न करता। पासपोर्टका तो मैंने तुमको लिखा[1] सो हूआ। तुमारी अरजीके सिवा एक कदम भी आगे नही बढ़ सकते हैं।

मैं बोरसदमें हूं। ३१ ता० को रवाना होकर २ जूनको वर्धा पहोंचुंगा।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तुमारे फोड़ेका कया? कोरटके जजमेंट का क़्या?

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १६२-६३ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

१६३. पत्र : अमतुस्सलामको

२७ मई, १९३५

प्यारी बेटी,

तुमने तो मुझे लिखनेकी मनाही की है, लेकिन मुझे लगता है कि मेरे खतसे तुमको खुशी होगी। मुझे लिखनेका वक्त है। वहाँ सब अच्छा चल रहा है, जानकर खुशी होती है। जापानी साधु[2] अच्छे होंगे।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२८) से।

1. देखिए "पत्र : हीरालाल शर्माको", २०-५-१९३५।
2. गांधीजी ने उनका नाम आनन्द रखा था।

१६४. भाषण : बोरसदमें[1]

२७ मई, १९३५

यह शर्मकी बात है कि यहाँ प्लेग चार बरसतक बना रहा। खास बोरसदकी आबादी सिर्फ तेरह हजारकी है। और ताल्लुकेकी आबादी १,४४,००० की है। खास बोरसद और बोरसद ताल्लुकेसे प्लेगको नेस्तनाबूद कर देना कोई ऐसी बात नहीं जो अशक्य हो। पर पूरे शहरके लिए सिर्फ छह भंगी रखनेसे यह काम पूरा होनेका नहीं। आप सब लोग खुद भंगी न बनेंगे, खुद सफाईका काम न करेंगे, तो सरदार और उनके स्वयसेवकोंके प्रयत्नके बावजूद यहाँ फिर प्लेग फैलेगा। सच बात तो यह है कि स्वयंसेवकोंने यहाँ जो सहायता-कार्य किया और जो अब समाप्त हो गया है उससे आपकी जिम्मेदारी और अधिक बढ गई है। आपने सफाईका यह काम चालू न रखा तो यह सारा परिश्रम व्यर्थ ही जायेगा। पहले मैं जब यहाँ आया तब आप लोगोंने सविनय अवज्ञा-आन्दोलनमें जो वीरता दिखाई थी और जो कष्ट सहन किये थे तथा त्याग किया था, उस सबके लिए आपको बधाई देने आया था। लेकिन आज मैं आपसे यह कहने आया हूँ कि जो लोग सरकारके खिलाफ लड़ सकते हैं वे नहीं, बल्कि इस प्लेग-जैसे विकट संकटसे जो मोर्चा ले सकते हैं, वे ही स्वराज भोग सकेंगे। मैं आपको यह बताऊँ कि जबसे मैंने 'स्वराज' शब्द सीखा, तभीसे मैं इस किस्मके काममें रस लेता आया हूँ। सन् १८९३ से ही, जबसे मेरे सार्वजनिक जीवनका आरम्भ हुआ, मेरी मुख्य रुचि इस प्रकारके रचनात्मक कार्योंमें रही है। सरकारके साथ लड़नेका मौका तो मेरे जीवनमें बहुत देरसे आया। पर यह कहा जा सकता है कि यह अनेक वर्षोंके ठोस रचनात्मक कार्यकी पुख्ता नींवपर खड़ी की गई इमारत है। मैंने नगरपालिकाके हर कायदे-कानूनका यथाशक्ति पालन किया है; और जिस सरकारने मुझे अनेक बार जेलकी सजा दी है वह भी मेरी नियम-पालन करनेकी योग्यताको जानती है। मैंने पहले-पहल दक्षिण आफ्रिकामें जब भंगीका काम सीखा, तबसे मैं यह जोर देकर कहता चला आ रहा हूँ कि इस किस्मके कामसे ही हम स्वराज भोगनेके योग्य बनेंगे। आप यह तो नहीं कह सकते कि स्वराज प्राप्त हो जानेके बाद इन समस्याओंकी ओरसे निश्चिन्त होकर आप सो जायेंगे। स्वराजका अर्थ नियम-रहित स्थिति नहीं। आपको स्वराज मिलनेके बाद भी इन सब प्रश्नोंको हल करना ही पड़ेगा। याद रखिए कि जिस व्यक्तिने सविनय अवज्ञाकी आवाज उठाई थी, वही इस प्रकारके आवश्यक कामके लिए आपको आज आमन्त्रण दे रहा है। जबतक आप अपने शरीर और अपने घरको रोगोंके लिए

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

अभेद्य नहीं-बना लेते तबतक आप खादीकी उत्पत्तिका तथा ग्रामोद्योगोंको पुनरुज्जीवित करनेका रचनात्मक कार्य भी नहीं कर सकते; और इसलिए यह सफाई का काम तमाम रचनात्मक कार्योंका मूलाधार है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-६-१९३५ तथा *बॉम्बे क्रॉनिकल*, २८-५-१९३५

१६५. पत्र : कान्ति गांधीको

बोरसद
२८ मई, १९३५

चि० कान्ति,

तेरा विनोद-भरा पत्र मिला। रविशंकर[1] मिलता रहता है। यदि उसका सिखाया सूत्र तेरे कंठसे हृदयमें उतर गया हो तो समझ, तेरा बेड़ा पार हो गया। समय आनेपर वह सब होता रहेगा। बाल भी मिलेगा और शेष सब चीजें भी मिलेंगी। भूख-प्यास सबको लगती है, लेकिन भूख-प्यासमें भी जो मस्त रहे, उसीको मस्त कहते हैं।

मीराबहन-जैसी लकड़ीकी बाँसुरी यदि किसीके पास हो, तो अमतुस्सलाम को दे देना। मैं दूसरी प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७२९९) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

१६६. पत्र : नारणदास गांधीको

२८ मई, १९३५

चि० नारणदास,

साथका पत्र पढ़कर हरिलालको दे देना। इसमें कुछ है, ऐसा तुम्हें लगता है या नहीं?

केशू बम्बई गया है। कुछ छात्रवृत्ति माँग रहा है। गजाननके बारेमें पण्डितजी[2] से मैंने कह दिया है। पण्डितजी उससे बात करेंगे। अभी देते रहो।[3]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से; सी० डब्ल्यू० ८४४६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. रविशंकर महाराजके नामसे प्रसिद्ध रविशंकर व्यास।
२. नारायण मोरेश्वर खरे।
३. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", २३-५-१९३५।

१६७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२८ मई, १९३५

दुबारा नहीं पढ़ा

चि० प्रेमा,

तुझे पौन घंटे कैसे ठहरना पड़ा? मगर मैंने यह नहीं सोचा था कि तू भाग जायेगी। बहुत दिन बाद मिली थी, इसलिए कुछ सवाल पूछने की और जी-भर तुझे देख लेनेकी इच्छा थी। तू अपने स्थानपर पहुँच गई, यह तो ठीक ही हुआ। उस दिन तो वहाँ रही ही थी, इसलिए मनमें लोभ था।

अरविन्दबाबूके बारेमें मैं कुछ कहनेमें असमर्थ हूँ। इतना ही कह सकता हूँ कि मुझे अपना मार्ग फला है। हम जगत्के काजी न बनें। हाँ, इतना स्वीकार करें कि उनकी छायामें रहनेवाले २०० लोगोंमें ऐसे भी हैं जिनके जीवनमें उनके सम्पर्कसे महान् परिवर्तन हुए हैं।

सब अपने-अपने स्वभावका अनुसरण करते हैं।

पश्चिममें व्यक्तिगत जीवनकी पवित्रताकी आवश्यकता नहीं मानी जाती, यह कहना पूरी तरह सही नहीं है। यह बात भी नहीं कि हमारे यहाँ सभी लोग उसकी आवश्यकताको मानते हैं। हम उसकी आवश्यकताको तो स्वीकार करते ही हैं, साथ ही यह भी मानते हैं कि अन्तःशुद्धि-रहित बुद्धिसे होनेवाले कार्य कितने ही सुन्दर क्यों न लगते हों, उनमें स्थायित्व कभी नहीं रहेगा। तात्कालिक परिणामोंके आधार पर ऐसे कार्योंकी तुलना की ही नहीं जा सकती। हाँ, उन कार्योंमें, जिनका नीतिके साथ सम्बन्ध न हो, अन्तःशुद्धिकी जरूरत नहीं होती। व्यभिचारी बढ़ई समकोणवाली मेज बना देगा। परन्तु अन्तःशुद्धि-रहित मनुष्य अस्पृश्यताको नहीं मिटा सकता, न वह लोगोंको चरखेकी तरफ मोड़ सकता है; क्योंकि दोनोंमें हृदयकी जरूरत होती है। ऐसे कामोंमें समयकी गणना सार्थक नहीं होती। सत्यनिष्ठासे किये गये कामोंके शुभ परिणाम अवश्य होंगे, इस बारेमें शंका ही नहीं हो सकती। यदि इतना विश्वास न हो तो हम नीतिकी रक्षा कभी कर ही नहीं सकते।

ईश्वर तो कल्पनातीत है। इसलिए हम जिसे भजते हैं वह हमारी कल्पनाका ईश्वर है। सच्चे ईश्वरको किसीने नहीं देखा और जिन्होंने देखा है, वे भी उसका वर्णन नहीं कर सके हैं। मुझे कौन-सा स्वरूप विशेष प्रिय है, यह कहना कठिन है। परन्तु जिस स्वरूपको मैं पूजता हूँ उसका नाम सत्य है। वह मूर्त है, अमूर्त है। अनेक प्रकारसे प्रकट होता है। अपूर्णको पूर्ण स्वरूप भला कैसे दिखाई दे सकता है?

गहनोंकी बात कहीं भी नहीं लिखूंगा। मेरी डायरीमें तो उसका उल्लेख हो गया है। तेरे पत्रके बाद नयी टिप्पणी लिखी जायेगी; वह तो मेरे अपने लिए होगी। तू इतना ही चाहती है न?

खादी आयेगी तब उसका उपयोग करूँगा।

लीलावती राजकोटसे आई है। इस बार उसका शरीर खूब अच्छा हो गया है। वजन भी बढ़ा है और खुश मालूम होती है।

यहाँसे ३१ तारीखको रवाना होकर २ तारीखको वर्धा पहुँचनेका विचार है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३७३) से।

१६८. पत्र : कृष्णदासको

[वर्धाके पतेपर]
२९ मई, १९३५

प्रिय कृष्णदास,

मुझे इस बातका इल्म नहीं था कि गैरकानूनी अधिवेशन भी अन्य अधिवेशनों के साथ गिन लिये गये हैं। मेरी समझमें राजेन्द्रबाबूसे[1] उनका निर्णय जानकर तुम्हें इस विषयमें तदनुसार करना चाहिए। यदि उन्हें अधिवेशन गिना जाये तब तो उनके अध्यक्ष भी निःसन्देह प्राथमिक सदस्योंपर लागू होनेवाले नियमोंका अनुसरण करनेवाले हुए तो, अ० भा० कां० क० के सदस्य बन जाते हैं।

श्री श्रीनिवास अय्यंगारका नाम सूचीमें नहीं है क्योंकि मेरी समझमें उन्होंने चन्दा नहीं भरा है।

अगर सचमुच कांग्रेस अपने जीवनके ५० वर्ष पूरे कर चुकी है, तब तो बड़े पैमानेपर आयोजन होने ही चाहिए। कार्यक्रम खूब सोच-समझकर बनाया जाना चाहिए। इस विषयमें राजेन्द्रबाबूसे चर्चा करो।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

सरदारने यह पत्र देख लिया है और वे सहमत हैं।

अंग्रेजीकी नकलसे : अ० भा० कां० क० फाइल, १९३१; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. जो उन दिनों कांग्रेसके अध्यक्ष थे और जिन्हें गांधीजी ने इस पत्रकी एक नकल भेजी थी।

१६९. पत्र : मीराबहनको

बोरसद
२९ मई, १९३५

चि० मीरा,

तुमने वहाँके मौसमका जो वर्णन किया है, उसे देखते हुए तो बोरसद स्वर्ग मालूम होता है। सुबह-शाम सुहावनी ठण्ड पड़ती है। वर्धा तो दिन-रात भट्ठीकी तरह तपता होगा। कुछ भी हो, सब ठीक चलता रहा तो हम लोग २ जूनको वहाँ पहुँच जायेंगे।

मुझे इस बातकी खुशी है कि जानकीप्रसाद अपनी ही मर्जीसे पार्टीमें शरीक हो गया।

अमतुस्सलामको अपने ही ढंगसे विकास करने देना चाहिए। वह विलक्षण लड़की है—कुदरतकी मौज है। अगर वह दीर्घजीवी हुई तो सम्भव है मानव-जाति की प्रथम श्रेणीकी सेविका बन जाये।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०६) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७७२ से भी

१७०. पत्र : विट्ठल ल० फड़केको

२९ मई, १९३५

चि० मामा,

तुम्हारा पत्र मैं कल रातको पढ़ पाया। कल रासमें मुकाम है। ३१ के सवेरे नड़ियाद। ९.२२ पर नड़ियादसे अहमदाबादकी गाड़ी पकड़नी है। अहमदाबादमें बुधाभाईके यहाँ दिन बिताना है। फिर रातको वर्धाकी ट्रेन। अतः अब तो हम अहमदाबादमें ही मिल सकेंगे। सूरतमें चार घंटे कानजीभाईके[1] यहाँ बिताने होंगे। वहाँ भास्करकी[2] राह देखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८३१) से।

१. कन्हैयालाल देसाई।
२. डॉक्टर भास्कर पटेल।

१७१. पत्र : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको

२९ मई, १९३५

भाई पुरुषोत्तमदास,

हरिजन सेवक संघके पास हरिजनोंके लिए कुएँ बनवानेकी एक बड़ी योजना है। कुएँ सीमेन्टसे बनवानेका इरादा है। क्या सीमेन्ट प्राप्त करनेमें आपसे मदद मिल सकेगी? ठक्कर बापा कहते हैं, बिहार रिलीफमें आपने ३० प्रतिशतकी छूट दी थी। मैं समझता हूँ, इसमें भी-जो सम्भव होगा, करेंगे ही। बम्बईमें कुछ घण्टे बिताये, उस बीच आप भी वहाँ आये थे, यह खबर मुझे बोरसदमें मिली। न मिल सकनेका दुःख हुआ।

आशा है, आपकी तबीयत बिलकुल ठीक रहती होगी।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास पेपर्स। फाइल नं० १५९/१९३५; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१७२. पत्र : हीरालाल शर्माको

[२९ मई, १९३५][1]

चि० शर्मा,

मैं क्या करुं? तुमको वर्धासे पासपोर्ट नहीं मिलेगा। जहांतक मैं जानता हूं दिल्लीसे ही मिलेगा। मजिस्ट्रेटके [य]हां अरजी होगी। तलाश पोलीस कमिशनर करेगा। इसलिए तुमारे अरजीका फार्म लेकर भरकर देना होगा। मेरी तो उमीद थी कि मैं ही पासपोर्ट निकालुंगा लेकिन कानुन ही ऐसा नही होता है। मुझको भी अरजी करनी पड़ी थी। फोटो देना पड़ा था और यह सब सीमलामें नहीं लेकिन मुम्बईमें। फरक इतना था कि मेरे लिये सीमलेसे रास्ता साफ कर दिया गया क्योंकि मैं राउंड टेबलमें जा रहा था। तुमारे बारेमें काफी तलाश होगी जैसी सबके बारेमें हुआ करती है। इसमें न कुछ गभराहटकी बात है न कुछ और बात है। ऐसे अमलदारोंके संपर्कमें बहुत दफा तुमारे इधर-उधर आना ही पड़ेगा। अमरीकामें तो बहूत

१. साधन-सूत्रमें यही तारीख दी गई है।

ही आना पड़ता है। हर जगह तेहकीकात और पूछताछ होती है। इसलिए यह काम का आरंभ कर लो।

५००० की बात एक सज्जनने ही लिखी है।[1] अपना नाम प्रगट करना नहीं चाहता है। कम्पनी तो वही है। इसमें मुझको तो कोई धोका दिया जा सकता ही नही। न उसका मतलब ऐसा है। जब उनको मालुम हुआ कि मै तुमको अमरीका भेज रहा हूं तो उसने मुझको सावधान करनेके लिये खत भेजा। मैंने लिख दिया, मुझे सावधान होनेका कुछ है नही। तदपि तुमारे लिये कैसी बातें होती है यह तुमारे कानोतक पहोचानेका धर्म समझकर तुमको लिखी। इसमें कोई विचार करनेकी बात नही है।

जोईन्ट पोलिसीका समझा। इसमें कुछ कर नही सकते हैं ऐसा मुझे डर है। मेरे लेखसे एक भी पोलिसी रुक जानेका सभव नही है। उसकी भी फिकर न करे अगर लिखना कर्तव्य बन जाय तो। मै अब तो ऐसे प्रतीत करता हूं कि लिखनेका कोई कर्तव्य नही है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १६४ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे

१७३. पत्र : कोतवालको

३१ मई, १९३५

भाई कोतवाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने किसीको मुक्त किया ही नही। मैंने तो यह कहा था कि तुमने और हरिभाऊने गलत समझा दिया हो, तो कमेटीके सदस्य मुक्त हो जायें। किन्तु तुम दोनोने गलत समझाया हो, तब भी, जो तुम्हारे साथ आये थे, वे कैसे मुक्त हो सकते है? अत वास्तवमें मुक्त तो कोई नही होता। तुम्हारे लिए एक प्रायश्चित्त तो यह है कि तुम वहाँके लोगोको उनके कर्त्तव्यका भान कराओ और दूसरा यह कि आइन्दा तुम्हें अपनी शक्तिके वाहरकी जिम्मेदारी नही लेनी चाहिए। पैसा इकट्ठा करनेकी योग्यता तुममें नही है। तुम्हारे पास पैसा नही है, इसलिए तुम्हे पैसेकी बातमें पडना ही नही चाहिए था। इसके अतिरिक्त अन्य कोई प्रायश्चित्त नहीं है। तुमसे कुछ भी इकट्ठा न हो, तो भी कोई बात नही। तथापि, तुम्हें सौ-दो सौ देनेवाला भी मिले तो ले लेना। बूँद-बूँदसे तालाब भरता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३६१०) से।

1. देखिए "पत्र : हीरालाल शर्माको", २०-५-१९३५।

१७४. पत्र : विपिन डा० पटेलको

वोरसद
३१ मई, १९३५

चि० बाबा[1],

आज तो तेरा जन्म-दिन है, मणिवहनने ऐसा वताया। आज तू क्या करेगा? क्या कोई सेवाका काम नहीं करेगा? करना चाहे तो मणिवहनसे पूछना। तू वड़ा तो होगा ही। तुझे भला भी होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० १६३

१७५. भाषण : विट्ठल कन्या विद्यालयके[2] उद्घाटनपर

३१ मई, १९३५

आज हम कन्या विद्यालयका उद्घाटन करने के लिए एकत्र हुए हैं। मैं जैसे वाल-शिक्षणके विषयको घोटकर पी गया हूँ, वही वात कन्या-शिक्षणके सम्वन्धमें भी कह सकता हूँ। लेकिन बड़े-बड़े धुरन्धर इस वातको क्यों मानेंगे? मैं भी अव यह दावा नहीं कर सकता। आजके वातावरणमें कन्या-शिक्षाकी वात करना सरल नहीं है। सव भले ही कहते रहें कि हम कन्याओंको शिक्षा प्रदान कर सकते हैं। किन्तु मैं तो उनसे पूछूँगा, क्या आपने अपनी बेटी या पत्नीको शुद्ध शिक्षा दी है? जिसने अपनी स्त्री या वहन या माता या सासके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं किया, वह दूसरोंकी वेटियों अथवा वहनोंको क्या सिखाने चलेगा? शिक्षक बी० ए०, एम० ए० भले हो गये हों, किन्तु मैं तो उन्हें इसी कसौटीपर कसूँगा। कन्या-शिक्षण सम्वन्धी पुस्तकें लिखनेवालोंके वारेमें मैं जानना चाहूँगा कि वे स्वयं कैसे पति हैं, कैसे पिता हैं।

आप मुझसे कहेंगे कि विट्ठलभाईके स्मारकके रूपमें यह विद्यालय खोला जाना है तथापि, विट्ठलभाईके सम्वन्धमें तो आपने अभी कुछ कहा ही नहीं। विट्ठलभाईका

१. सरदार पटेलका नाती।
२. नड़ियाद-स्थित।

स्मारक नड़ियादमें क्यों बनाया जाये? उनकी सेवाका क्षेत्र तो विशाल था। उन्होंने तो बम्बई नगर निगमके अध्यक्षकी गद्दीको सुशोभित किया था। बम्बई और शिमला में भी राष्ट्रीय हितको आगे रखकर ही जूझे। विट्ठलभाई और मेरे बीच मतभेद चले ही आ रहे थे। तिसपर भी जो उन्होंने अमेरिकामें मेरी प्रशंसाका शंख फूंका, उसका कारण यह है कि हम दोनोंके बीच एक बात समान थी, और वह थी देशके लिए जीने और देशके लिए ही मरनेकी साध। उन्होंने एक पैसा भी अपने पास बचाकर नही रखा। जो जमा किया, वह देशके लिए छोड़ गये। कमाते थे, तब ४०,०००) रुपये दिये जिनका ब्याज आज भी आ रहा है। ऐसे व्यक्तिका स्मारक बनाना कोई खेल है? कन्या-शिक्षाका आदर्श तो यह है कि हमारे यहांकी शिक्षित कन्या न गुड़िया बने, न सुन्दर नर्तकी; वरन सुन्दर स्वयंसेविका बने। आप लोगोंने पाटीदार होनेके नाते यह स्मारक बनानेका निश्चय किया है। वे पाटीदार थे या क्या थे, यह तो भगवान् जानें। मैं तो जब पहले उनसे मिला था, तब उनकी फैज टोपी और दाढ़ी देखकर उन्हें मुसलमान समझा था। पूछनेकी आदत नहीं है, सो पूछा भी नहीं। सबको भाई माननेवाला जात-पाँत क्यों पूछे? आपको पाटीदार कहकर विट्ठलभाईका मजाक उड़ाना हो, तो भले उड़ाइये। उन्होंने पाटीदारोंके किस रिवाज का पालन किया था? पाटीदारोंका कौन-सा दल उन्हें अपने में शामिल कर सकता है? विट्ठलभाई, वल्लभभाईको यदि आप लोगोंने अपना माना तो ठीक समझिए, आप लोगोंका दिवाला निकल जायेगा। आप लोग यदि विट्ठलभाईको अपना मानेंगे, तो आपको ढेढ, भंगी, धाराला सबको अपना मानना पड़ेगा। उन्होंने तो भंगियों और पाटीदारोंमें कभी भेद नही किया। उनका स्मारक बनाना चाहें, तो आपको इस संस्थाको ऐसा बनाना पड़ेगा, जो मात्र खेड़ाकी शोभा न हो, सारे हिन्दुस्तानकी शोभा हो। और हिन्दुस्तानकी सेवा करें, ऐसी सेविकाएं उत्पन्न करनी पड़ेंगी। यह आदर्श सामने रखकर यदि आप यह संस्था चलायेंगे, तब समझा जायेगा कि आपने विट्ठलभाईका सच्चा स्मारक बनाया।

ऐसा करना सरल नही है। किन्तु आपके आग्रह तथा मोहके वश मैं यहाँ आ गया। खेड़ा जिला, जिसके पुण्यस्मरण मेरी स्मृतिमें भरे पड़े हैं, जहाँ मैं गाड़ीमें घूमा हूँ, जहाँ पैदल घूमकर मैंने धूल खाई है, जहाँ मैं एक बार मरणशय्या पर पड़ा था और जहाँ फूलचन्द-जैसे स्वयंसेवकोंने मेरा पाखाना उठाया था, वहाँ आनेके लिए मैं मना कैसे कर सकता था, कैसे कह सकता था कि विद्यालयका उद्घाटन नही करूँगा? इस विद्यालयका उद्घाटन करनेके लिए मेरे मनमें कोई बड़ा उत्साह नहीं था, यह बात सच है, क्योंकि मैं दूधका जला हूँ। फिर भी, मैंने स्वीकार कर लिया क्योंकि मैं मानता हूँ कि विश्वासके बलपर जहाज चलते हैं।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ९-६-१९३५

१७६. भाषण: बालमन्दिरके[1] उद्घाटनपर

३१ मई, १९३५

आजका कार्य प्रारम्भ करनेसे पहले दो बातें कह देना आवश्यक प्रतीत होता है। आज इस अवसरपर फूलचन्द[2] और प्याज-चोर मोहनलाल पंड्याकी[3] अनुपस्थिति मुझे बहुत अखर रही है। मैं १९१८ में नड़ियादमें अनाथाश्रममें रहा था; तब इन दोनोके साथ स्नेह-सम्बन्ध बन गया था और वह दोनोकी मृत्युतक बना रहा। दोनोंके अनेक मधुर संस्मरण मैंने सहेजकर रखे हैं। मोहनलाल नही रहे, तब सरदारका हृदयद्रावक पत्र मेरे पास आया था। सामान्यतः सरदारका हृदय वज्र-जैसा है। चाहे जैसा दुःख आ पड़े, वे उसे छाती कड़ी करके सहन कर सकते हैं। ऐसा होते हुए भी, जब मैंने उनके पत्रमें हृदयद्रावक शब्द देखे, तब मैं समझ गया कि ऐसे साथीके बिछोहसे उनको कितनी चोट लगी है। इस जिलेको तो उनका अभाव खलेगा ही, गुजरातको भी खलेगा। मूक स्वयंसेवकके जिस आदर्शका मैं पोषण करता आया हूँ, ये दोनो वैसे मूक स्वयंसेवक थे। दोनोंने अपनी सेवाका चिन्तन करते-करते प्राण त्यागे।

फूलचन्दके स्मारकके रूपमें जो बालमन्दिर बनाया गया है, वह मैं देखकर आया हूँ। आपकी यह इच्छा कि मोहनलालका भी कोई स्मारक हो, स्वाभाविक है। किन्तु ऐसे छोटे-छोटे स्मारकोंसे हम अपनी आत्माको धोखा न दें, तो अच्छा हो। स्थायी स्मारक बनाना हो, तो वह तो ईंट और चूनेके मकानमें पैसा उँडेलनेसे नहीं बन सकता। इसका अर्थ यह नही है कि ऐसे स्मारक न बनाये जायें। बल्कि स्मारक बनाते हुए क्या करना चाहिए, यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए। ये गये, किन्तु इनकी जोड़का अब हम कहाँ पायेंगे, ऐसा कहकर बैठे नही रहना चाहिए। ऐसे स्वयंसेवक उठ जायें, तो उनका दुःख तो होना चाहिए, किन्तु उनका अभाव नहीं खटकने देना चाहिए। बादशाहकी मृत्युके बाद जैसे बादशाहकी गद्दी खाली नही रहती, और हम "बादशाह गये, बादशाह दीर्घायु हों" ऐसा कहते हैं, उसी प्रकार स्वयंसेवक न रहें, किन्तु उनकी संस्था बनी रहनी चाहिए, स्वयंसेवकोंकी परम्परा कायम रहनी चाहिए। फूलचन्द और मोहनलाल दोनों अपने-आपमें एक-एक संस्था थे। यदि ऐसी संस्थाएं न चलें, तो मेरे-जैसोका क्या होगा? यानी एक फाँसीपर चढ़ जाये, तो दूसरा फाँसी पर चढ़नेके लिए तैयार मिले। इसलिए मैं तो यह सुझाव देता हूँ कि यदि हम फूलचन्द और मोहनलालके स्मारकको चिरस्थायी बनाना चाहते हैं, तो स्मारक

१. नड़ियाद-स्थित।

२. फूलचन्द बापूजी शाहका १९ अप्रैल, १९३४ को स्वर्गवास हुआ था।

३. मोहनलाल पण्ड्याका ८ मई, १९३५ को स्वर्गवास हो गया था।

बनानेवाले यह संकल्प करे कि हम फूलचन्द और मोहनलाल-जैसा बननेका प्रयत्न करेंगे। शेक्सपियरने कहा है, "मनुष्य जो अच्छा करता है, वह तो उसीके साथ दफना दिया जाता है। बुरा ही बच रहता है।" इसमें कविने कोई सनातन सत्य नहीं उभारा, उसने तो दुनियाको ताना मारा है।

सच्ची बात तो यह है कि प्रकृति कचरेका संग्रह करके नहीं रखती। वह तो कचरेको गाड़कर, जलाकर उसका खाद बनाकर अपना सौरभ फैलाया करती है। उसी प्रकार हमें अपने बड़े-बूढ़ोंमें, अपने स्वर्गस्थ नेताओंमें कोई दोष हो तो उन्हें दफनाकर उनके गुणोंका संचय करना चाहिए। क्योंकि उनके दोष नहीं, उनके गुण ही हमारी पूंजी है। मोहनलाल-जैसोंकी अपेक्षा हम अधिक अच्छे हो सकते हैं, ऐसा माननेमें हम उनके साथ कोई अन्याय नहीं करते। सब अपने दोष लेकर जन्म लेते हैं। उन दोषोंको मिटाकर, गुणोंको विकसित करना, संचित करना हम सबका कर्त्तव्य है। जिस हदतक संसार अपने उक्त कर्त्तव्यका नियमित रूपसे पालन नहीं करता, उस हदतक संसारने अपने उत्तराधिकारकी शोभा नहीं बढ़ाई।

फूलचन्द बाल-शिक्षण स्मारकके रूपमें जो बालमन्दिर खोला गया है, वह मैं आज देखकर आया हूँ। उसके संचालकोंसे मालूम हुआ कि बालकोंको मन्दिरतक लानेमें प्रतिमास पचास रुपया वाहनपर खर्च होता है। बाल-शिक्षण तथा मॉन्टेसरी-पद्धति मैं समझता हूँ। विदुषी मॉन्टेसरीसे मैं मिला[1] हूँ। मैंने उनसे एक भी पाठ नहीं पढ़ा, फिर भी उन्होंने तो मुझे प्रकट रूपसे प्रमाणपत्र दिया है कि "आप तो मेरी पद्धति पूरी तरह जानते हैं और इसपर अमल करते आये हैं।" इस प्रमाणपत्रमें झूठी चापलूसी नहीं थी, क्योंकि यह प्रमाणपत्र तो मैंने अपने-आपको पहले ही दे दिया था। अतः बाल-शिक्षण क्या है, इसका पूरा भान रखकर मैं कहता हूँ कि पचास रुपयेका यह खर्च मुझे भयानक लगा। बालकोंको पंगु बनानेके लिए पचास रुपये देना, यह मॉण्टेसरी-पद्धति नहीं है। माण्टेसरी-पद्धति यूरोपमें चाहे जैसी चलती हो, इस देशमें उसका अन्धानुकरण करनेवाले मूर्ख हैं। फिर अनुकरण कहाँ-कहाँ करोगे? इस पद्धतिमें तो शालाके साथ बगीचा जरूरी होता है। इस मन्दिरमें तो मैंने बगीचा नहीं देखा। मैंने पूछा, मन्दिर बालकोंके घरसे कितनी दूर है। मुझसे कहा गया, एक मीलसे अधिक दूर नहीं होगा। मैं बच्चोंके माता-पिता तथा शिक्षकोंसे कहता हूँ कि उन्हें ये पचास रुपये बचाने चाहिए। शिक्षकोंको स्वयं भोरमें ही बाहर निकल जाना चाहिए और बालकोंको अँगुली पकड़कर ले जाना चाहिए। बालकोंको बग्घीमें लाकर आप फूलचन्दका स्मारक नहीं बना सकते। फूलचन्द फूलोंकी सेजपर सोनेवाला आदमी नहीं था। वह तो वज्रके समान था। अतः मैं तो शिक्षकोंसे कहता हूँ कि उन्हें माता-पिताओंको सूचित कर देना चाहिए कि यदि आप बालकोंको पैदल नहीं भेज सकते तो हमारा त्यागपत्र स्वीकार कीजिए किन्तु हमसे अपने बालकोंको

१. १९३१ में, जब गांधीजी दूसरी गोलमेज कॉन्फ्रेंसमें शामिल होनेके लिए इंग्लैंड गये थे; देखिए खण्ड ४८, पृ० २४२।

पंगु न बनवाइये। गाड़ीमें तो नानासाहब[1]-जैसे वयोवृद्ध अथवा अपंग लोग बैठें, मैं तो नहीं बैठूँगा। और जब ६६ बरसका बूढ़ा गाड़ीमें नही बैठेगा तो ढाई बरसके बच्चोंको गाड़ीमें क्यों लाया-ले जाया जाता है?

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ९-६-१९३५

१७७. वक्तव्य: समाचार-पत्रोंको[2]

अहमदाबाद
३१ मई, १९३५

गफ्फार खाँ दुबले तो काफी हो गये हैं, मगर वे प्रफुल्ल और प्रसन्न हैं। वे कमजोर दिखाई देते हैं। बातचीत उनके परिवारके लोगोंको लेकर ही चलती रही।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १-६-१९३५

१७८. भेंट: समाचार-पत्रोंको

३१ मई, १९३५

गांधीजी ने कई प्रश्नोंके उत्तर देते हुए कहा कि बोरसदमें प्लेग लगभग समाप्त हो गया है। उसके बाद बातचीतका रुख ग्रामोद्योगोंसे सम्बन्धित कामोंकी ओर मुड़ गया। यह पूछे जानेपर कि उन्होंने वर्धाको अपने सदर मुकामकी तरह क्यों चुना है, गांधीजी ने कहा:

इसलिए कि वर्धा भारतके केन्द्रमें स्थित है और वर्धामें ही मुझे करीब दो लाख रुपयेकी लागतकी ऐसी जमीन मिल सकी जिसकी किस्म अच्छी है और जिसमें सिंचाईके प्रबन्धके साथ-साथ इमारतें भी हैं। इस जमीनपर तकरीबन ७०० फलोंके वृक्ष हैं। मैंने वर्धाका चुनाव इसलिए भी किया कि सेठ जमनालाल बजाज इस बातके लिए बहुत उत्सुक थे कि जो जमीन वे मगनलाल गांधी स्मारकको दान कर देनेकी सोच रहे थे, वह अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ द्वारा ले ली जाये। आखिरी बात यह कि वर्धा आधा गाँव, आधा शहर है। मेरी तथा मेरे साथियोंकी यह इच्छा थी कि मुख्य कार्यालय शहरी क्षेत्रमें न बनाया जाये।

१. गोपालदास विट्ठलदास देसाई।
२. उसी दिन दोपहर बाद खान अब्दुल गफ्फार खाँ से साबरमती जेलमें मिलनेके बाद गांधीजी ने यह वक्तव्य जारी किया था।

विनोबा और वर्धा-आश्रममें प्रशिक्षित उनका दल तो वहाँ पहलेसे मौजूद था ही; यह भी एक अतिरिक्त आकर्षण था। हम सबके लिए वर्धाको मुख्यालयके रूपमें चुननेके लिए इन सब कारणोंने पर्याप्त प्रेरणा दी।

दूसरे सवालोंके पूछे जानेपर गांधीजी ने कहा कि वे वर्धासे यथासम्भव बाहर नहीं जायेंगे ताकि काम उनकी उपस्थितिमें ही चलता रहे, क्योंकि यह कल्पना उन्हीं की है। इसके अलावा, यह उचित है कि संघके सभी पदाधिकारी उनके निकट सम्पर्कमें रहें, और उनमें से किसीको जब भी जरूरत हो, मार्ग-दर्शन मिल सके। सोमवारको छोड़कर वे रोज १½ घंटे साथ बैठते हैं।

यह पूछे जानेपर कि क्या उन्होंने गुजरातको असन्तुष्ट होकर छोड़ दिया है, गांधीजी ने कहा, यह बिलकुल गलत खयाल है। [उन्होंने आगे कहा:]

मैं शारीरिक रूपसे गुजरातसे अलग हो गया हूँ और मुझे इसका पर्याप्त दु:ख है, लेकिन मैं दूसरी तरहसे उसके कामोंमें उसके साथ जुड़ा हुआ हूँ।

एक दूसरे सवालके जवाबमें गांधीजी ने कहा कि ग्रामोद्योगके कामके लिए उनकी इच्छा गुजरातमें रहने की तो है, लेकिन ऐसा लगता है कि वहाँ व्यापारिक प्रवृत्ति इतनी अधिक है कि गुजरातमें ग्रामोद्योगके प्रारम्भिक काम प्रारम्भ करके भली-भाँति चलाना कठिन है। गांधीजी की रायमें गुजरातके गाँवोंपर अन्य क्षेत्रोंके बजाय व्यापार-वृत्तिका अधिक असर है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १-६-१९३५

१७९. प्रश्नोंके उत्तर[1]

३१ मई, १९३५

यह पूछे जानेपर कि स्त्रियोंका परिवारके प्रति क्या रुख होना चाहिए और वे किस हदतक कुटुम्बमें अपना व्यक्तित्व कायम रख सकती हैं, गांधीजी ने कहा:

जो हक पतिको है, वे सभी पत्नीको भी है, इसमें जरा भी सन्देह नहीं है। दोनोंके कर्त्तव्य भिन्न हैं, किन्तु उनके अधिकार कम-ज्यादा नहीं है। स्त्री कमीज-पतलून पहनकर बन्दूक लेकर घूमने निकले, तो उसे रोकनेका अधिकार पतिको नहीं है। ऐसे कामोंका जितना हक पुरुषोंको है, उतना ही स्त्रियोंको भी है। यदि स्त्रीको सिनेमा न जाना हो, तो पुरुष उसे बाध्य नहीं कर सकता अथवा यदि स्त्री अकेली जाना चाहे तो पुरुष उसे रोक नहीं सकता। तात्पर्य यह कि दोनोंके साथ-साथ करने के कामोंमें, उनमें जितना सहकार, सहयोग सध सके, उतना अच्छा है।

१. प्रश्न स्त्रियोंके उत्थानका उद्देश्य लेकर काम करनेवाली संस्था 'ज्योति-संघ' की सदस्याओंने पूछे थे।

यह सहकार एकांगी वस्तु नहीं है। इसमें नापतोल हो ही नहीं सकती। यह एकपक्षीय चीज ही नहीं है। पुरुष कहता आया है कि मैं तेरा मालिक हूँ; तू मेरी चीज है; मैं जैसे कहूँ, वैसे तुझे चलना पड़ेगा। इस प्रकारकी भावनाके लिए मेरे विचारोंकी दुनियामें कोई स्थान नहीं है। पुरुषके ऐसे आग्रहके विरुद्ध अन्तिम उपाय सत्याग्रह है। स्त्री भी इसका प्रयोग कर सकती है। यह तलवार इकधारी है, दुधारी भी है। इसका प्रयोग चाहे जहाँ सफलतापूर्वक किया जा सकता है। प्रेमकी इस शक्तिके आगे पुरुषको झुकना पड़ता है। अपने पतिके प्रति जिसे अपना व्यक्तित्व सिद्ध करना ही पड़े, उस स्त्रीको मैं यह प्रेमका, सत्याग्रहका मार्ग दिखा रहा हूँ। किन्तु यह मार्ग जैसाकि प्रीतम कविने कहा है, "पावककी ज्वाला" है। इस मार्गपर चलना पडेगा, सो भी जूते पहनकर नहीं, नंगे पाँव।

स्त्रियोंकी आर्थिक परतन्त्रता दूर करने के प्रश्नके सम्बन्धमें उन्होंने कहा:

स्त्रियोंकी आर्थिक परतन्त्रता दूर करनेके भी अनेक उपाय मैं बता सकता हूँ। आर्थिक स्वतन्त्रताका सीधा उपाय यह है कि प्रत्येक स्त्री कोई-न-कोई उद्योग करे। आजकलकी पढ़ी-लिखी बहनें जैसी स्वतन्त्र होती है, वैसी नहीं। वे भी उतनी ही परतन्त्र होती हैं। किन्तु यह तो शहरकी और ऊँची जातिकी बहनोंकी बात है। मैं गाँवोंमें घूमा हूँ; और वहाँ मैंने असंख्य बहनोंको आर्थिक स्वतन्त्रताका उपभोग करते देखा है। वहाँ स्त्री पुरुषोंसे भी अधिक मेहनत करती है। यद्यपि स्त्रीको मेहनताना कम मिलता है। सच पूछो तो स्त्री-पुरुषको समान मजदूरी मिलनी चाहिए, यह स्त्रीका अधिकार है। यह ईश्वरी न्याय है। ज्योति संघ यह कर सके, तो कहा जायेगा कि उसने संसारमें एक नया आदर्श सामने रखा।

अब यह खोजना रहा कि हमें कौन-सा उद्योग करना चाहिए। करोड़ों स्त्रियोंमें तुम-जैसी एम० ए०, बी० ए० कितनी होंगी? लेकिन मैं तुमसे कहे देता हूँ कि हिन्दकी करोड़ों स्त्रियाँ आर्थिक स्वतन्त्रताका उपभोग करती हैं। अहमदाबादकी कितनी स्त्रियाँ करती हैं, यह मुझे मालूम करना है। ज्योति संघके लिए आर्थिक परतन्त्रता दूर करना कठिन है, किसानकी स्त्रीके लिए कठिन नहीं है। वे जो अधिकार माँगती हैं, हम-तुम नहीं भोगते। तलाकके अधिकारके लिए ब्राह्मण और बनियेको लड़ना है। अन्य जातियोंको तो यह अधिकार कबका मिला हुआ है। इसीलिए मैं तुमसे कहता हूँ कि तुम उनपर कोई झूठा तरस मत खाओ। तुम शहरी जीवन बितानेवाली ही परतन्त्र हो।

हम सबको, जैसे एक ईंटपर दूसरी और दूसरीपर तीसरी रखी जाती है, ऐसे मिलकर काम करना है। तुम्हारे कामकी जो सीमा निर्धारित है, तुम उसीमें रहकर काम करो, और उसमें चार चाँद लगाओ। राष्ट्रीय अथवा सामाजिक जीवनमें सक्रिय भाग लेनेकी इच्छा रखनेवालोंको तुम आमन्त्रित कर सकती हो कि यहाँ आओ। और इसमें तुम सफल हो सको, यह मेरा आशीर्वाद है। किन्तु इसके लिए अनेक बहनोंको फकीरी लेनी पड़ेगी, जोगन बनना पड़ेगा। यह हँसी-खेल नहीं है; और यदि खेल है, तो फिर केवल रस्सीपर चलनेवाले नट के खेल-जैसा खेल है। वह एक

लक्ष्यपर दृष्टिको स्थिर करता है, इष्टका अनुसन्धान करता है, तथा शहनाई और ढोलके सुरके साथ एकतान हो जाता है; तभी लाठीके समान सीधा रह पाता है। ऐसी ही एकाग्रताके साथ काम करो, तो कुछ हो सकेगा।

स्त्रियोंके कर्त्तव्योंके सम्बन्धमें गांधीजी ने कहा :

स्त्रीका कर्त्तव्य अंग्रेजीमें जिसे 'हार्थ एण्ड होम' — चूल्हा और घर कहते हैं, उसको अक्षुण्ण रखना, उसका रक्षण करना है। पुरुषने यह काम नहीं किया। वह तो रक्षणके किले और परकोटे बनाकर उनमें बैठ गया है। वह घरकी रक्षा करने क्या आयेगा? और आया भी तो वह घरकी कैसी रक्षा करेगा? वह तो घरमें भी किले और परकोटे बनायेगा। गोली मारने के लिए उसमें छेद करेगा, और दीवारपर काँच और कीले ठोंकेगा। अन्तमें घरके बच्चे उसपर चढ़कर मर जायेंगे। किन्तु हमें तो घरको सजाना है। इसलिए मेरी तो राय है कि स्त्रीकी शिक्षा दूसरे ही प्रकारकी होनी चाहिए। इसमें एकका काम नीचा और दूसरेका ऊँचा है, ऐसा नहीं है; बल्कि दोनोंका काम एक-दूसरेके पूरकके समान है।

[गुजरातीसे]
गुजराती, १६-६-१९३५

१८०. एक सेवककी कठिनाइयाँ

कुछ साथियोंकी सहायतासे मैं एक आश्रम चला रहा हूँ। उसमें हमारा उद्देश्य अपनेको आदर्श किसान बनाना है, जिससे कि हम गाँवके लोगों और गाँवके समाजके साथ एकरूप हो जायें; और इस प्रकार उनकी सेवा कर सकें। इस उद्देश्यको सामने रखकर खेतीको यहाँ आजीविकाका मुख्य साधन बनाया गया है, और कताई और बुनाई इसमें पूरक उद्योगका काम देती है।...

आश्रमका आरम्भ करते समय ऐसा सोचा गया था कि स्वावलम्बी किसानकी जिन्दगी बसर करनेका आदर्श साधनेके साथ-साथ हम लोग हरिजन-सेवा और चरखे आदिके द्वारा गाँवकी भी कुछ सेवा कर सकेंगे। मगर हमें इस उद्देश्यमें पूरी निराशा ही हुई है, क्योंकि हमें अभीतक आश्रमके लिए कोई अनुकूल स्थान नहीं मिल सका। आजकल जिस जगह आश्रम है, वहाँ एक-एक दो-दो घरके पुरवे-भर हैं और ये पुरवे एक-दूसरेसे आधा या कभी-कभी तो एक-एक मीलके फासलेपर हैं।

फिर, एक दूसरी चीजसे भी आश्रमके कामको भारी धक्का पहुँचा है। आहारके विषयमें मैंने कई भारी भूलें कीं, और उनका पता मुझे अब चला है। मुझे अब ऐसा मालूम होता है कि गरीबीके आदर्शको लेकर जरूरतसे

ज्यादा उत्साहके ही कारण हमने अपने आहारका स्तर बहुत नीचा रखा था। उदाहरणके लिए, साग-भाजीको ले लीजिए। सब्जी आश्रममें तो पैदा होती नहीं थी, इसलिए हमने उसे नियमित रूपसे नहीं खाया।... दूध और दूधसे बनी चीजोंको विलासकी वस्तुएँ माना गया ... इन सब कारणोंसे आश्रम-वासियोंके स्वास्थ्यको बहुत क्षति पहुँची है। आरम्भमें हम बारह आश्रमवासी थे, पर आजकल हम केवल पाँच ही रहते है।...

आश्रम अबतक शारीरिक श्रमसे ही आजीविका प्राप्त करनेके आदर्शको पकड़े हुए है।...

मित्र तथा सहानुभूति रखनेवाले सज्जन और आलोचक भी टॉल्स्टॉयके 'अपनी रोटी शरीर-श्रमसे कमाने' के सिद्धान्तपर हमारे इस आग्रहको समाज-सेवाके आदर्शके विरुद्ध मानते है, और कहते है कि तुम्हारे आश्रमके कार्यकर्त्ता समाजकी जो सेवा कर सकते थे, वह इस सिद्धान्तके कारण नहीं कर सके। 'समाज-सेवा' करने के लिए मनुष्य यदि शरीर-श्रमसे अपनी रोटी कमानेके सिद्धान्तके मामलेमें कुछ समझौता कर ले तो यह कब और कहाँतक ठीक माना जा सकता है? 'होना' और 'करना' इन दोनोंके बीच यह जो भेद दिखाई देता है, वह अकसर क्या आभास-मात्र नहीं होता? और असलमें 'होना' ही क्या 'करना' नहीं है?

... प्रति मास प्रति मनुष्यका भोजन-खर्च ३ रु० और वस्त्रादिका खर्च १ रुपया आया है।

श्री किशोरलाल मशरूवालाके नाम एक सुशिक्षित और निःस्वार्थ कार्यकर्त्ताने जो पत्र लिखा है, यह उद्धरण उसीसे लिया गया है।[1] एक विशुद्ध-हृदय सेवकके प्रयत्नों और उसकी कठिनाइयोंका यह हूबहू चित्र है, और जो व्यक्ति सेवामय जीवन बितानेका प्रयत्न कर रहे है, उन सबको इससे कुछ सहायता मिलनेकी सम्भावना है।

प्रयत्न सराहनीय है। यह अच्छा है कि लेखक तथा उसके साथियोंको जब कोई भूल दिखाई देती है, तब वे उसे स्वीकारने और सुधारनेमें हिचकिचाते नही।

यह मैं नही जानता कि लेखकने इस पत्रमें जो प्रश्न पूछे है, उनका श्री किशोर-लालने क्या जवाब दिया है। पर इस पत्र-लेखकको जिस प्रकारके प्रश्नोंने परेशान कर रखा है, उनमें दिलचस्पी रखनेवाले आम पाठकोंकी सहायतार्थ उनके उत्तर देनेका प्रयत्न मैं अवश्य करूँगा।

ऐसा मालूम होता है कि शरीर-श्रमसे रोटी कमानेके सिद्धान्तके विषयमें कुछ गलतफहमी हो गई है। यह सिद्धान्त समाज-सेवाका विरोधी तो है ही नही। बुद्धिपूर्वक

१. यहाँ इसके कुछ अंश ही दिये गये हैं।

किया हुआ श्रम उच्चसे-उच्च प्रकारकी समाज-सेवा है। कारण यह है कि यदि कोई मनुष्य अपने शारीरिक श्रमसे देशकी उपयोगी सम्पत्तिमें वृद्धि करता है तो उससे उत्तम और हो ही क्या सकता है? 'होना' निश्चय ही 'करना' है।

श्रमके साथ जो 'बुद्धिपूर्वक किया हुआ' विशेषण लगाया है, वह यह बतलानेके लिए कि समाज-सेवामें श्रम तभी खप सकता है जब उसके पीछे सेवाका कोई निश्चित हेतु हो; अन्यथा यह कहना होगा कि हरएक मजदूर समाजकी सेवा करता है। एक प्रकारसे वह समाज की सेवा करता ही है, पर जिस सेवाकी यहाँ बात हो रही है, वह बहुत ऊँचे प्रकारकी सेवा है। जो मनुष्य सबके हितके लिए श्रम करता है, वह समाजकी सेवा करता है, और जितने से उसका पेट भर जाये उतनी मजदूरी पानेका उसे हक है। इसलिए इस प्रकारका शरीर-श्रम समाज-सेवासे भिन्न नही है। अधिकाश मनुष्य जो काम अपने शरीरके पोषणके लिए या बहुत हुआ तो अपने कुटुम्बके लिए करते हैं, उसे समाज-सेवक सबके हितके लिए करता है। इन सात आश्रमवासियोंको आज यह मालूम हो रहा है कि उन्हें अपने अन्न-वस्त्रके लिए मेहनत करने के पश्चात् दूसरी सेवा करनेका समय शायद ही रहता है। ये सेवक अगर अपने काममें कुशल होते, तो ऐसी बात कभी न होती। असलमें वे कार्यकुशल नही हैं। खेती-बाड़ीके मजदूरके रूपमें वे साधारण मजदूरोंकी बराबरी कर ही नही सकते। कारीगरोंकी कोटिमें भी वे नौसिखुए ही कहे जा सकते हैं। ईश्वरकी कृपासे प्रत्येक कार्यकर्त्ता अब यह जानता है कि सूत कातनेवाला अपने औजारोंको अगर बुद्धिके साथ काममें लाये तो अमुक समयमें वह सूतकी मात्रा सहज ही दूनी कर सकता है अर्थात्, उसकी चरखेकी आमदनी दूनी हो सकती है। यह बात अधिकांश वस्तुओंके सम्बन्धमें सत्य है। खेतीमें, इन्ही औजारोंके सहारे तरक्की करनेका क्षेत्र इतना विशाल है कि यदि प्रकृति बीचमें न पड़े तो किसान अपनी बुद्धिका उपयोग करके नित्य उतने ही घंटे काम करते हुए अपनी आमदनी सहज ही चौगुनी कर सकते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि आज जितनी आमदनीके लिए वह मेहनत करता है, उतनी मजदूरी करने की उसे जरूरत न रहेगी। इसलिए ये सेवक जब कुशलता प्राप्त कर लेंगे, तब आजकी अपेक्षा बहुत कम समयमें वे अपने अन्न-वस्त्रके लायक कमा लेंगे, और हरिजन-सेवा अथवा किसी दूसरे काममें वे अपनी शक्तिको बिना किसी बाधाके लगा सकेंगे। जिन्हें अपनी सीमित आयके भीतर अनेक जिम्मेदारियोंको निभाना है, उन साधारण गृहस्थोंके लिए यह समस्या जटिल हो सकती है; पर जिस त्यागी सेवकको महीनेमें केवल चार ही रुपयेकी जरूरत है, उसका तो चार रुपया कमानेकी मेहनत-मजदूरी कर लेनेके बाद बहुत-सा समय बच सकता है।

लेकिन प्रति मनुष्य तीन रुपये मासिकमें मनुष्यका पेट क्या सचमुच भर सकता है? डॉ० तिलकने बम्बईके लिए जो ५)का हिसाब बाँधा है, अगर वह सही है, तो गाँवके रहन-सहनके लिए ये तीन रुपये ठीक ही है। और डॉ० तिलकने भोजनकी जो सूची दी है, उसमें मैं अपना निजी अनुभव जोड़ दूँ तब तो कोई कठिनाई रहती

ही नही। डॉ० तिलकने गाँवकी खुराकमें दूधके चूर्णको शामिल नही किया है। पर वे यह कहते है कि बिना दूधके काम चल ही नही सकता। इन आश्रमवासियोने दूधका जो त्याग कर दिया था, वह उनकी भूल थी। यह सही है कि करोड़ों मनुष्योंको दूधकी एक बूंद भी नसीब नही होती। पर ऐसी तो और भी अनेक चीजें है जो उन्हें नहीं मिलतीं। अगर हमें सेवा करने के लिए जीवित रहना है तो उन्हें छोड़नेका हमें साहस नही करना चाहिए। इसलिए जिनके बिना हमारा काम चल ही नही सकता, ऐसी चीजें हम न छोड़ें और गाँववालोको इसमें मदद दें कि वे अपने लिए भी उन चीजोको पैदा कर लें। अनछना और बिना पालिशका गेहूं, चावल, बाजरा, ज्वार आदि अनाज और ऐसी हरी भाजियाँ, जो कच्ची ही खाई जा सकती है, और दूध, और गाँवोंमें पैदा होनेवाले आम, अमरूद, जामुन, बेर आदि मौसमी फल स्वस्थ जीवनके लिए जरूरी है। नीमकी पत्ती तो शायद हरी भाजियोकी रानी कही जा सकती है। नीमकी पत्तियाँ भारतमें सर्वत्र मिल सकती हैं। और, मनुष्यके खाने लायक अनेक प्रकारकी ऐसी घास भी है जिसका हमें पता नही। इमली सब जगह मिलती है। यह भी फेंक देनेकी चीज नही है। पर इमलीके विरुद्ध एक तरहका जो पूर्वग्रह है, उसे समझना कठिन है। कीमती नीबूओंकी जगह मैं अब इमली काममें लाने लगा हूँ, और इससे मुझे बहुत ही लाभ हुआ है। आहार-विषयक सुधार शोध का एक अपरिमित क्षेत्र है और इसके ऐसे बड़े-बड़े परिणाम निकल सकते हैं, जो संसार और खासकर भारतके भूखों मरनेवाले करोड़ों मनुष्योके लिए काफी महत्त्व रखते हैं। इसका यह अर्थ हुआ कि स्वास्थ्य और सम्पत्ति दोनोंकी ही उनसे प्राप्ति हो सकती है। रस्किनके कथनानुसार तो ये दोनों चीजें एक ही हैं। इस छोटे-से आश्रमके सदस्योंकी यह धारणा बिलकुल सही है कि वे सदा सन्मार्गपर चलकर बड़ीसे-बड़ी समाज-सेवा करेंगे। उनकी सेवाकी सुगंध वहाँ आस-पास फैलेगी और वह संक्रामक सिद्ध होगी। कालान्तरमें यह सेवा-भावना समस्त भारतमें और फिर अखिल विश्वमें व्याप्त हो जायेगी। इस सेवामें एकके कल्याणमें सबका कल्याण निहित है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-६-१९३५

१८१. पत्र: नारणदास गांधीको

बडौदा
१ जून, १९३५

चि० नारणदास,

. . .[1] के बारेमें क्या तुम कुछ जानते हो? . . .[2] के अनुसार तो ये बहनें भारी व्यभिचारिणी हैं। इसमें तनिक भी सचाई हो तो यह बात मुझे मालूम तो होनी ही चाहिए। उसके बाद . . .[3] को वहाँ रखनेके बारेमें भी विचार करना होगा। इसलिए इस सम्बन्धमें मेरा मार्गदर्शन करना।

हरिलालको कोई ठीक धन्धा ढूँढनेमें मदद दो। उसका चुनाव मेरे मनको जँच नहीं रहा है। आज मैं बड़ौदामें हूँ। यहाँका कन्या-विद्यालय देखने आया हूँ। रसिक[4] मुझसे मिला था। मानना होगा कि उसने अच्छे अंक पाये हैं। बाल और तनसुखके[5] बारेमें भी ऐसा ही है।

सोमवारको वर्धा पहुँचूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

हरिलालके पत्रको फिर पढ़नेपर मालूम होता है कि तुम तो उसे पाठशालामें लेनेको तैयार हो। यदि तुम्हें उसपर इतना विश्वास हो तो मुझे तो यह बात अच्छी ही लगेगी। केशूके साथ बात करना शेष है। मैंने उससे वर्धा आनेको कहा है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४४८ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१, २ और ३. नाम छोड़ दिये गये हैं।

४. वा० गो० देसाईके भतीजे।

५. तनसुख भट्ट।

१८२. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

१ जून, १९३५

भाई खम्भाता,

आपकी बीमारीके बारेमें खबर तो मिलती ही रहती है। अब कैसे हैं, मुझे लिखियेगा। राजकुमारीने कुछ समाचार दिया, उससे जिज्ञासा और बढ़ गई है। आपको चंगा हो जाना चाहिए। वहाँ क्या उपचार हो रहा है? शरीरकी स्थिति चाहे जैसी हो किन्तु आशा है, मन तो प्रसन्न होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५५६) से। सी० डब्ल्यू० ५०३१ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

१८३. पत्र : अमृतकौरको

बोरसद
२ जून, १९३५

प्रिय अमृत,

मैं वर्धा २ की बजाय ३ तारीखको पहुँचूँगा। वर्धा पहुँचनेके बाद मैं तुम्हें पत्र लिखनेके और कागज तथा लिफाफे भेज दूँगा।

मेरा खयाल है कि दुर्घटनाका असर अबतक खत्म हो चुका होगा।

तुम्हारी पूनियोंका क्या हाल है?

हाँ, मैं खम्भाता-दम्पतिको बहुत अच्छी तरहसे जानता हूँ। वे दोनों बहुत अच्छे कार्यकर्त्ता हैं। मैं उनके बारेमें चार्लीके पत्रका उत्सुकतासे इन्तजार कर रहा हूँ। मुझे उनका पता भेजना। साथका पत्र खम्भाता-दम्पतिको दे देना या डाकसे भेज देना।

मीराका कहना है कि वर्धा इस समय भट्ठीकी तरह गर्म है। तुलनामें बोरसद काफी अच्छा है।

तुम सबको प्यार।

बापू

[पुनश्च :]

चार्लीसे कहना कि खाँ साहब उन्हें अपना प्यार भेजते हैं।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७१४) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६८७० से भी

१८४. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
३ जून, १९३५

प्रिय अमृत,

सुबह यहाँ पहुँचनेपर मुझे तुम्हारा पत्र तथा नमूने प्राप्त हुए।

मैं डॉ० गोपीचन्दका पत्र लौटा रहा हूँ।

अगर डॉ० जी० के विचारोंसे अलग तुम यह मानती हो कि पुरी खादीको चुंगीकी छूट दिलानेमें समर्थ हुए हैं, तो उनके साथ इसका श्रेय तुम्हें भी मिलना चाहिए।

बाजार जानेमें तन्दुरुस्तीका नुकसान होता दिखे तो मत जाओ।

मैं तुम्हें आकारमें उन नमूनोंके अनुसार पत्र लिखने के गाँवमें बने कागज भेजने की उम्मीद रखता हूँ। नमूनेके अनुसार रंगके कागज कमसे-कम अभी कुछ दिन और नहीं भेज सकूँगा।

तुम सबके लिए प्यार। अगर मेरी छोटी सखी लज्जासे लाल न हो जाये तो उसे मेरा चुम्बन।

बापू

[पुनश्च :]

अभीतक खम्भाताके सम्बन्धमें चार्लीकी तरफसे कोई समाचार नहीं आया।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७१५) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६८७१ से भी

१८५. पत्र : कमलनयन बजाजको

३ जून, १९३५

चि० कमल,

१. कम बोलना।

२. सबकी सुनना लेकिन सही हो वही करना।

३. हर मिनटका हिसाब रखना और जिस क्षणका काम हो, वह उसी क्षण करना।

४. गरीबके समान रहना। धनका अभिमान कभी मत करना।

५. पाई-पाईका हिसाब रखना।

६. ध्यानपूर्वक पढ़ाई करना।

७. इसी प्रकार कसरत करना।

८. मिताहारी रहना।

९. डायरी लिखना।

१०. बुद्धिकी तीव्रताकी अपेक्षा हृदयका बल करोड़ों गुना कीमती है; अतः उसका विकास करना। उसके विकासके लिए 'गीता'का, तुलसीदासका मनन आवश्यक है। 'भजनावली'[1] रोज पढ़ना। प्रार्थना रोज दोनों समय करना।

११. अब सगाई की है तो तू खूंटेसे बँध गया है। मनको दूसरी स्त्रीकी तरफ कभी न जाने देना।

१२. मुझे अपने कार्यके विवरणका एक पत्र हर हफ्ते लिखा करेगा तो तेरा कल्याण होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१९६) से।

१. देखिए खण्ड ४४, पृ० ३९४-४८२।

१८६. पत्र : नारणदास गांधीको

३ जून, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं आज ही पहुँचा हूँ। बा बोचासणमें रुक गई है। यहाँ तो भट्टी सुलग रही है। लोग कहते हैं कि ऐसा लगभग पूरे महीने रहेगा।

हरिलालके विषयमें तो तुम्हें लिख ही चुका हूँ। वह तुम्हारी देख-रेखमें रहे, यह मुझे अच्छा लगेगा। . . .[1] के विषयमें लिखना। केशू यहीं है। आज मौनवार है। कल उससे बात करूँगा। पाठशालाके न्यासपत्रके बारेमें मुझे याद है। समय मिलते ही उसे निबटा दूँगा। मैथ्यूका पत्र आया है। इसके अनुसार उसे कुछ ही दिनोंमें वहाँ पहुँच जाना चाहिए। मैंने उसे लिखा था कि वहाँ पहुँचकर जब वह अपने काममें खरा सिद्ध होगा तभी उसे यात्रा-व्ययका हिसाब चुकाया जायेगा। मेरा खयाल है, बहुत करके यह भी तुम्हें लिख चुका हूँ।

आशा है, विजया अब बिलकुल ठीक हो गई होगी।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४४९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१८७. पत्र : हीरालाल शर्माको

वर्धा
३ जून, १९३५

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला। पासपोर्टकी अर्जीकी नकल वापिस करता हूं। मनीओरडरमें से जो तुमारे लेना था सो क्यों नहीं काटा? पुस्तकोंका और दूसरा मेरे खातेमें रखो और जो गवाहके बारेमें पैसे बचे हैं सो मेरे जमा करो। बादमें लेन-देन होगी। इतना हिसाब तो रख सकते हो ना?

५,००० के बारेमें जो अच्छा लगे सो करो। यदि कोई तुमको अपना नाम नहीं बताता है तो मानो कि वह डरता है। फोड़े मिट्टीके प्रयोगसे ही दुरस्त हुए कि और कुछ लगाना पड़ा था?

बापुके आशीर्वाद

१. नाम छोड़ दिया गया है।

[पुनश्च :]

यहां भी गरमी वहुत तेज़ है। २४ घंटोंतक। भूसावलमें ४ घंटे ठंहरना पड़ा। लेकिन थर्ड कलास वेइटीग रुममें नहीं। १५-१७ की सालोंमें थर्ड क्लास वेइटींग रुमका मुझे काफी तजर्वा मिला था।

वापु

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १६५ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे

१८८. तार : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

वर्धा
४ जून, १९३५

एन्ड्रयूज
मनोर विला
शिमला

खम्माताके सफल ऑपरेशनसे खुशी हुई। प्यार कहिए।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०९) से। सी० डब्ल्यू० ५०३२ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

१८९. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

४ जून, १९३५

चि० अम्बुजम्,

मुझे कल यहाँ पहुँचनेपर तुम्हारा पत्र मिला। जानकर खुशी हुई कि तुम सब पहाड़पर हो और पिताजी की तन्दुरुस्ती रोज-रोज सुधर रही है। मैं उम्मीद करता हूँ कि तुम यह पूरा माह तो वहीं गुजारोगी।

हाँ, यहाँ वहुत गर्मी पड़ रही है। लोग कहते है कि जून-भर ऐसी ही गर्मी रहेगी।

बा बोचासण गई है; हाँ, वह स्थान अपेक्षाकृत काफी ठण्डा है।

मेरा वजन अभी १०४ पौण्डतक पहुँचकर स्थिर हो गया है।

अगर कमलाबाई यहाँ आनेके लिए उत्सुक है, तो मुझे उसे साथ रखने में खुशी होगी। पहले वही इस बारेमें मुझे लिखे। पर, इस गर्मीमें वह अभी यहाँ न आयें तो अच्छा हो। जुलाईके महीनेमें मौसम काफी ठण्डा हो जायेगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०) से; सौजन्य : एस० अम्बुजम्माल

१९०. पत्र : शास्त्रीको

४ जून, १९३५

प्रिय शास्त्री,

मै निश्चयपूर्वक नही कह सकता कि अपने घरमें होनेवाली हर चोरीकी सूचना हमें देनी ही चाहिए। इसलिए मैं तो वैसी असाधारण परिस्थितियोके अलावा चोरीकी सूचना नही दूँगा। और चोरके रँगे हाथो पकड़े जानेपर भी हमेशा मुकदमा चलाना आवश्यक नही है। इसकी शिक्षा यह है कि हमारे पास कीमती चीजें होनी ही नही चाहिए और अगर है तो हमें उनकी रखवालीके लिए दिन-रात अपना चौकीदार रखना चाहिए। तुम्हें अपने पड़ोसियोंसे मैत्री कायम करनी चाहिए और नौकरोंसे अपनापन। स्त्रियोको कोई आभूषण नहीं पहनना चाहिए; यदि सोने, चाँदी या मोती वगैरहका हो तो मंगलसूत्र भी नही।

ढेंकी अच्छा प्रयोग है। लेकिन अपनी जरूरतका धान तो तुम्हें खुद कूटना चाहिए। वह सबसे सस्ता पड़ता है:

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१९१. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

४ जून, १९३५

भाई वल्लभभाई,

मुझे तुमको लिखना तो था सूरतसे ही, परन्तु वहाँ वक्त कहाँसे मिलता? रास्तेमें लिखना असम्भव था और कल लिख ही न सका। वापसीका सफर कठिन रहा। भुसावलमें मुश्किलसे जगह मिली। रात बैठे-बैठे बीती।

अपनी आँतोका इलाज तुरन्त करो। अभी तो सिर्फ कृमि ही है और तुरन्त अच्छे हो सकते हो। समय मत गँवाओ।

कानूगाने[1] तुम्हारी प्रेरणासे आम भेजे है। गफ्फार खाँको आम मृदुला[2] भेज रही होगी।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
आबू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७०

१९२. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

४ जून, १९३५

चिं० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला। शंकरलाल और जेराजानीको[3] जो लिखा है सो पढ़ गया। उन दोनोंको मैंने लिखा है। लेकिन तुमको मैं दूसरी ही बात लिखना चाहता हूं। हमारी तो उंछवृत्ति होनी चाहीये अर्थात् जो दूसरोंको चाहीये सो हमें नहीं। हमको खादीसे प्रेम है और मोह कभी नहीं। हमें ऐसा अभिमान भी नही कि हम ही सबसे अच्छा कर सकते हैं। इसलिए यदि बरकमतामें यदि हम आसानीसे काम न कर सके तो उसे छोड दें। इससे भी मैंने तो दूसरी बात बताई है। हमारे लिये अब व्यापार नही है। हम तो स्वावलंबी खादीका प्रचार चाहते है। बाजारू खादी

१. डॉ० बलवन्तराय कानूगा, अहमदाबादके प्रसिद्ध डॉक्टर।
२. मृदुला साराभाई।
३. विठ्ठलदास जेराजाणी।

बनी तो क्या, न बनी तो क्या? बाजारू खादीसे हम खादीको पैगाम नही सिद्ध कर सकते हैं और वह खादी तो चली ही समजो।

इतना कहते हुए भी मैं कहूंगा कि जबतक यह सत्य तुमारी समजमें न आवे तबतक तुमारे जैसे करना है ऐसे किया करो। इसी कारण मैंने जेराजानी और बेंकरको लिखा है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सतीशबाबुका लंबा खत आया था। उस बारेमें कुछ कहना नही था इसलिये लिखा नही है।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७१०)से।

१९३. पत्र : एस० एल० सोखेको

वर्धा
५ जून, १९३५

प्रिय कर्नल सोखे,[1]

आपको मालूम होगा कि सरदार पटेलके साथ मैंने बोरसद-ताल्लुकेके कई गाँवो के घरोको खास तौरसे इस बातकी जाँच करने के लिए देखा कि चूहों और पिस्सुओंको नष्ट करने के लिए कैलसिडके उपयोगके कारगर होनेकी क्या सम्भावना है। मैंने एक ही नजरमें देख लिया कि यह लगभग असम्भव है; हाँ, अगर आप यह मानते हों कि ईंटके मजिलदार घरोमें, जिनमें वायुरोध की व्यवस्था नही है, पंपसे कैलसिड छिड़कनेपर वह हर कोने-अंतरे और फर्शकी दरारोमें प्रवेश कर जायेगा तो बात और है। इसी तरह घरोसे मिट्टीके बड़े-बड़े कच्चे-पक्के बरतनोको भी निकालकर नही फेंका जा सकता और इन बरतनोंके नीचे और आसपास चूहोको शरण मिलती है। इनके सम्बन्धमें मुझे तो केवल यही एक कारगर उपाय दिखता है कि फर्शको ऐसा बनाया जाये जिससे उसमें चूहोंके रहने की कोई गुंजाइश नही रह जाये। जब दक्षिण आफ्रिकामें पहले-पहल महामारीका प्रकोप हुआ तो इसी तरीकेको अपनाया गया और वह सफल भी रहा। तरीका यह था कि सभी कच्चे फर्शोंको तोड़ दिया जाता था, हालाँकि इसमें दीवारोको बिलकुल बचाकर रखा जाता था। फिर फर्शोंको पक्का बना दिया जाता था और ऐसी व्यवस्था कर दी जाती थी जिससे चूहोके रहने की कोई गुंजाइश न रह जाये। काफी मात्रामें पत्थर या ईंट और सीमेंटका उपयोग करके यह काम सस्तेमें और आसानीसे कर लिया जाता था। मकान बनवानेवाले एक अनुभवी ठेकेदारसे परामर्श कर डॉ० भास्कर पटेलने नये और चूहारोधक फर्श बनानेके कई कमखर्च तरीके निकाले हैं। इस उद्देश्यसे पर्चे जारी किये जा चुके है। अगर आप

1. हाफकिन इन्स्टीट्यूट, बम्बईके निदेशक।

इस तरीकेको अपनी स्वीकृति दे दें तो उससे इसे अतिरिक्त उत्तेजन मिलेगा और आपके मार्ग-दर्शनमें उसकी कमियाँ दूर करके उसे पूर्ण भी बनाया जा सकेगा।

अगर आपको कैलसिडके प्रयोगके बारेमें कुछ और कहना हो या चूहारोधक घर बनानेके तरीकेकी आलोचनामें कुछ कहना हो तो आप अपनी आलोचना भेजनेमें संकोच न करेंगे। आपको जो भी आलोचना भेजनी हो या सलाह देनी हो, उसका सरदार और मैं दोनों स्वागत करेंगे।

यहाँ मैं यह भी बता दूँ कि कैलसिडके प्रयोगकी सम्भावनाकी जाँचके लिए जो एजेंट मेरे बोरसदमें रहते हुए वहाँ गया था, उसने कुछ घरोंका निरीक्षण करके डॉ० पटेलको बताया कि उनमें कैलसिडका प्रयोग नहीं हो सकता। मैंने यह भी पाया कि डॉ० भास्कर पटेल द्वारा तैयार किये गये विशेष एमलशनका ठीक प्रयोग और फिर गंधकका धूआँ कर देना पिस्सुओंको नष्ट करने की दृष्टिसे काफी कारगर सिद्ध हुआ है।

यहाँ मैं यह बताये बिना नहीं रह सकता कि आपने सरदारको और मुझे जितनी अच्छी तरह घुमाकर अपना संस्थान दिखाया, उसके लिए हम दोनों आपके आभारी हैं।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१९४. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

५ जून, १९३५

चि० रुक्मिणी,

गिरिराजने तेरा नाम दिया था, किन्तु मैं समझा, दामोदरदासकी कोई सम्बन्धी होगी। आज तेरा पत्र पढ़कर आश्चर्यचकित रह गया। अभीतक तेरी तबीयत खराब होनेकी मुझे कोई खबर नही थी। तेरा पत्र ही नही आया। इससे मैंने मान लिया था कि तुम दोनों खूब मजेमें होगे। अब वहाँ चंगी हो जाना। मुझे लिखती रहना।

केशू कलतक मेरे पास था। वह बम्बई गया है। वहाँ मोटरका काम सीखनेकी सोचता है। नवीन[1] यहीं है। वह बम्बईमें राधासे[2] मिला था। बा बोचासणमें ही रह गई। रामदास बम्बईमें है।

बापूके आशीर्वाद

श्री० रुक्मिणीदेवी बजाज
शक्ति आश्रम
पो० आ० राजपुर, देहरादून

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७११) से; सौजन्य : बनारसीलाल बजाज

१. व्रजलाल गांधीके पुत्र।
२. रुक्मिणीकी बड़ी बहन।

१९५. पत्र : प्रभावतीको

५ जून, १९३५

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र मिला। मैं जयप्रकाशको लिख रहा हूँ। यह पत्र तू लिफाफेमें उसके पास भेज देना। तूने तो भरसक प्रयत्न किया। तू भविष्यमें भी उसे लिखती रहना। यदि जयप्रकाश अपनी तबीयतका खयाल नहीं रखता तो तू क्या कर सकती है? तेरा यह एक वर्ष पूरा हो जाये, उसके बाद तेरे भविष्यका विचार अवश्य करना होगा। उस समय यह अभीष्ट होगा कि तू जयप्रकाशके साथ रहे। उसके लिए अपने हाथसे रसोई करे तथा उसके शरीरका खयाल रखे। किन्तु अभी इस बातका विचार निरर्थक है। मेरा वजन जितना था उतना ही है। सख्त गर्मी पड़ रही है।

अपना स्वास्थ्य वहाँ बिगाड़ना नहीं। सिताबदियारा दो-चार दिनके लिए हो आये तो अच्छा हो। कुछ दिन जयप्रकाशके साथ रह आई, यह अच्छा किया। तेरी छुट्टी मंजूर हो गई है। विवाहके दूसरे ही दिन चल पड़ना। विवाहमें जितनी सादगी रखी जा सके, रखना।

यहाँ नये आये हुए लोगोंमें तो एक चित्रे ही है। अमतुस्सलाम फिलहाल यहाँ है ही। बहुत काम करती है। देवराज[1] आ गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५०) से।

१९६. आइए, प्रार्थना करें

वर्धागंज

६ जून, १९३५[2]

जब कोई मनुष्य गिर पड़ता है तो वह अपने उद्धारके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करता है। तमिल भाषामें एक कहावत है कि वह निराधारोंका आधार है। क्वेटाकी इस भयंकर विपत्तिको[3] देखकर मानव-बुद्धि स्तम्भित रह जाती है। इसके आगे हमारे पुनर्निर्माणके तमाम प्रयत्न बेकार हैं। इस महानाशके विषयमें सम्पूर्ण सत्य शायद कभी मालूम न हो सकेगा। जो बेचारे इस दुर्घटनामें मर गये, उन्हें फिरसे जीवन-दान नहीं दिया जा सकता।

१. गांधीजी का टंकक।
२. बॉम्बे क्रॉनिकल, ७-६-१९३५ से।
३. ३१ मई, १९३५ का भूकम्प।

पर मनुष्य तो अपना प्रयत्न सदा जारी रखेगा ही। जो बच गये हैं उन्हें सहायता अवश्य मिलनी चाहिए। जहाँतक सम्भव है, वहाँतक पुनर्निर्माणका कार्य भी अवश्य किया जायेगा। पर यह सब और इसी प्रकारका और भी काम ईश्वर-प्रार्थनाका स्थान नहीं ले सकता।

मगर प्रार्थना की ही क्यों जाये? अगर कोई ईश्वर है तो क्या उसे इस भयंकर दुर्घटनाका पता न होगा? उसे क्या इस बातकी आवश्यकता है कि पहले उससे प्रार्थना की जाये तब कहीं वह अपने कर्तव्यका पालन करेगा?

नहीं, ऐसी बात नहीं है, ईश्वरको याद दिलानेकी कोई जरूरत नहीं। वह तो घट-घटका वासी है। बिना उसकी आज्ञाके एक पत्ता भी नहीं हिल सकता। हमारी प्रार्थना तो सिर्फ इसलिए है कि हम अपने अन्तरका शोधन करें। प्रार्थनाके द्वारा तो हम खुद अपनेको यह याद दिलाते हैं कि उसके अवलम्बके बिना हम सब कितने असमर्थ और असहाय हैं। हमारा कोई भी प्रयत्न तबतक पूर्ण नहीं कहा जा सकता, जबतक कि उसमें प्रार्थनाका पुट न हो, जबतक हम निश्चित रूपसे यह स्वीकार न कर लें कि जिस प्रयत्नके पीछे ईश्वरका आशीर्वाद न हो, वह कितना ही अच्छा क्यों न हो, निष्फल जाता है। प्रार्थनासे हम विनम्र बनते हैं। वह हमें आत्मशुद्धिकी ओर ले जाती है, अन्तःनिरीक्षण करनेके लिए प्रेरणा देती है।

जो बात मैंने बिहारके भूकम्पके[1] समय कही थी, उसे मैं आज भी कहूँगा। हरएक भौतिक विपत्तिके पीछे कोई-न-कोई ईश्वरीय अभिप्राय रहता है। एक समय ऐसा आ सकता है जब पूर्ण विज्ञानकी बदौलत पहलेसे ही भूकम्प आनेकी बात हमें उसी तरह मालूम हो जाये जिस तरह कि ग्रहण पड़नेकी खबर पहले ही हो जाती है। मानव-बुद्धिकी यह एक और विजय होगी। पर ऐसी एक नहीं असंख्य विजयोंसे भी आत्माकी शुद्धि नहीं हो सकती, और बिना आत्मशुद्धिके सब व्यर्थ है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिस प्रकार हम बिहारकी विपदाको भूल गये हैं, उसी प्रकार क्वेटाकी इस महाविपदाको भी भूल जायेंगे। आन्तरिक शुद्धिकी आवश्यकताको समझनेवाले लोगोंसे मैं अपनी इस प्रार्थनामें शामिल होनेको कहूँगा कि हे प्रभो, तू मुझपर ऐसी कृपा कर जिससे मैं तेरी भेजी विपत्तियोंमें अन्तर्हित तेरे अभिप्रायको समझ सकूँ, उनके फलस्वरूप नम्र बन सकूँ और समय आनेपर स्वयंको तेरे समक्ष खड़ा होनेके योग्य बना सकूँ, तथा बिना किसी भेद-भावके अपने समस्त मानव-बन्धुओंके कष्टोंमें भागीदार बननेको सदा तैयार रह सकूँ।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-६-१९३५

१. १५ जनवरी, १९३४ का भूकम्प; देखिए खण्ड ५७।

१९७. पत्र : नारायणदास रतनमल मलकानीको

६ जून, १९३५

प्रिय मलकानी,

मुझे बोरसदमें तुम्हारा पत्र मिला था। अजीब बात है कि ठक्कर बापाने मुझसे उससे भी पहले मिलकर तुम्हारी शिकायत की थी। उनका खयाल था कि मैंने तुम्हारे द्वारा कही गई इकतरफा बातोंपर भरोसा कर लिया है। मैंने उन्हें बताया कि तुमने जो-कुछ कहा, मेरे तारका उससे कोई सम्बन्ध नहीं था और मैंने उनकी बात सुने बिना कोई राय नहीं बनाई है। कुछ भी हो, तुम्हें और मुझे ठण्डे दिलसे सोचना चाहिए। ठक्कर बापा कितने भी नाराज क्यों न हों, उनके मनमें कुछ नहीं होता। सच्चे या काल्पनिक कारणोंसे उनके मनमें जो गुबार जम जाता है, उसे वे इस तरह साफ करते हैं। मेरी सलाह है: वे कुछ भी कहें, उसपर ध्यान मत दो और मतभेद रहनेपर भी वे जैसा कहते हैं, वैसा करो। हमें उनका मन तो खट्टा होने ही नहीं देना चाहिए।

ऐसा बरताव करो, जैसे वे अब भी पदासीन हों।

आशा है, तुम्हारा घाव अब पूरा भर गया होगा।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५२)से।

१९८. पत्र : मनु गांधीको

६ जून, १९३५

चि० मनु,

मैंने तो तेरे दोनों पत्र भाईको[1] भेजे हैं। तुझे भेजा उनका कार्ड बुरा था। मैंने भाईको लिखा है। यह प्रकरण दुःखद होता जा रहा है। भाईसे डरना तूने छोड़ दिया, यह अच्छा किया।

तू कहती है, तुझे मेरा कहना मानना है। सब मामलोंमें न? सब मामलोंमें माने, तो तुझे मोढ़ जातिमें शादी करने का विचार छोड़ देना चाहिए। मैं अवश्य तेरा विवाह अच्छी जगह कर दूंगा। ऐसी जगह, जहाँ तू पूर्ण सुखी हो। मैं जो

१. हरिलाल गांधी; मनु गांधीके पिता।

पसन्द करूँगा, उस पसन्दगीमें केवल तेरा हित ही कारण होगा, और कुछ नहीं। हरिलाल मुझे भयानक बातें लिख रहा है। मेरी तो इस समय यह इच्छा है कि तू मेरे पास हो। हरिलालने मुझे जो लिखा है, मैं उसके बारेमें पूछताछ कर रहा हूँ, उसमें भी तेरी मदद चाहिए। लेकिन तुझे मेरे पास रहना पसन्द हो, तभी तेरा आना मुझे अच्छा लगेगा। तेरे शौक बढ़ गये हों, तो मैं तुझे सन्तोष नहीं दे सकूँगा, यह भी स्पष्ट है। अतः जो तुझे अच्छा लगे, सो करना। मुझे जो लिखे, सो भी स्पष्ट लिखना। तू स्वतन्त्र है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १५४३) से; सौजन्य: मनुबहन एस० मशरूवाला

१९९. पत्र: नारणदास गांधीको

वर्धा
६ जून, १९३५

चि० नारणदास,

साथमें हरिलालको लिखे पत्र हैं; उन्हें पढ़ जाना। इसमें तुम्हारा समय क्यों लूँ? लेकिन और कोई चारा नहीं है। यह प्रकरण मैं शीघ्र ही समाप्त कर दूँगा। लेकिन थोड़ी वेदना तो तुम्हें भोगनी ही पड़ेगी।

केशूसे बात हुई थी। अब तो वह वहाँ पहुँच गया होगा। कारखाना तो अब वह छोड़ देगा, फिर इस कारखानेका क्या करोगे? वह मोटर और रेडियोका काम सीखेगा। मैं समझता हूँ, बम्बईमें वह अपने लिए कुछ सहायता जुटा लेगा। देखता हूँ, हमें संतोक[1] और राधाका खर्च उठाना पड़ेगा।

केशूसे यह पूछना तो भूल ही गया कि उसकी अबतक की शोध क्या बेकार हो जायेगी। जब बातचीत थोड़े समयमें निबटानी होती है तो कभी-कभी ऐसी महत्त्वकी बातें भी रह जाती हैं। जो मुद्दे मैं साफ नहीं कर सका, उन्हें तुम करवा लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८४५१ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. स्वर्गीय मगनलाल गांधीकी पत्नी।

२००. पत्र : वि० ल० फड़केके विद्यार्थियोंको

६ जून, १९३५

मामासाहबके विद्यार्थियो,

तुम लोगोंके नाम-धाम जाने बिना जवाब नहीं दिया जा सकता। इस प्रकार बिना पते-ठिकानेके पत्र कभी नहीं लिखना चाहिए। ऐसे पत्र लिखना तुम्हें किसने सिखाया?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८३२)से।

२०१. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

६ जून, १९३५

चिं० नर्मदा,

अब मुझे सन्देह हो रहा है कि तू मुझे ठीक समझी भी है या नहीं। मैंने तो तेरा हित समझकर ही जो देखा, वह शम्भुशंकरको लिखा था। तू अच्छी और नम्र बन।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७७९)से; सौजन्य : रामनारायण एन० पाठक

२०२. पत्र : कृष्णचन्द्रको

६ जून, १९३५

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारा पत्र मिला। नीमके बारेमें पत्र मिल जायगा तो भेज दूंगा। नीम कभी गरम नहीं लगता है। उपवासी लोग भी नीम खा लेते हैं। लेकिन मैं तो चाहता हूं कि, दूध जितना ले सकते है इतना ले लो। गायका सबसे अच्छा है। सब चिंता छोड दो। मैंने तो कहा हीं है एक वर्ष जो वाचनके उपवासका है सो यहां व्यतीत किया जाय। दिल चाहे तब आ जाओ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२७२)से।

२०३. जयरामदास दौलतरामके नाम तारका मसौदा[1]

[६ जून, १९३५ या उसके पश्चात्][2]

जयरामदास दौलतराम
मार्केट रोड
हैदराबाद

जनतासे कहिए कि अभी आन्दोलनका समय नहीं आया। स्थानीय और उच्च अधिकारियोंसे व्यक्तिगत रूपसे मिला जाये। आग लगानेकी योजनाके कारण पता कीजिए। अपनी लाचारी महसूस होनी चाहिए।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

२०४. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

वर्धा
७ जून, १९३५

प्रिय चार्ली,

तुम्हारा पत्र न पानेसे मेरे चिन्तित हो उठनेका कोई सवाल नहीं है। क्योंकि, अगर चिन्ताके योग्य कोई बात होती, तो बावजूद हमारे बीच राजकुमारीकी मार्फत सम्पर्कके तुम पत्र लिखनेमें सुस्ती न करते।

वाइसरायके साथ हुए मेरे पत्र-व्यवहारकी नकल नत्थी है। यह सिर्फ तुम्हें जानकारी देनेके लिए भेज रहा हूँ, इसपर किसी तरहकी कार्रवाई करनेके लिए नहीं। चीजें अपनी गतिसे आप होती रहेंगी। ज्यादातर उम्मीद तो इसी बातकी है कि वे किसीके वहाँ जानेकी बात मंजूर नहीं करेंगे।[3]

१ और २. यह जयरामदास दौलतराम और जे० बी० कृपलानीकी ओर से संयुक्त रूपसे भेजे गए ४ जूनके एक तारके उत्तरमें था। उनका तार गांधीजी को ४ जूनको मिला था। तारमें बताया गया था कि अधिकारियोंकी ओर से अड़चन डाले जानेके कारण क्वेटाके भूकम्प-पीड़ितोंको सहायता पहुँचानेका काम किस प्रकार असम्भव हो रहा था।

३. भूकम्पके बाद क्वेटामें मार्शल ला लागू कर दिया गया था और किसीको भी शहरमें आनेकी अनुमति नहीं थी; देखिए पिछला शीर्षक और "पत्र: पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको", १०-६-१९३५ तथा "पत्र: अमृतकौरको", १३-६-१९३५।

मुझे उम्मीद है कि किताबका[1] तुम्हारा काम ठीक चल रहा होगा और तन्दुरुस्ती ठीक बनी होगी।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९८६)से।

२०५. पत्र : अमृतकौरको

७ जून, १९३५

प्रिय अमृत,

तुम्हारे शरीरके क्षीण होते जानेका कारण मेरी समझमें आ गया है। तुम हर चीजको सांगोपांग करना चाहती हो। बेशक, साधकको करना तो ऐसा ही चाहिए। लेकिन कोई भी साधक, जितना वह कर सकता है, उससे अधिक कार्य अपने सिर लेनेके लिए बाध्य नहीं है। क्या जाने, तुम्हें अपनी प्रवृत्तियोंमें भाग लेनेकी इजाजत देकर मैंने ठीक किया है या नहीं। ईश्वर तुम्हारी रक्षा करेगा। तुम शिमलाके सभी सामाजिक समारोहोंमें भाग लेना कम कर दो। हो सकता है, देखनेमें ऐसा लगे कि तुम जिन प्रवृत्तियोंमें लगी हुई हो, उनका इससे कुछ नुकसान हो, पर उसकी परवाह नहीं करनी है। भाग लेना बन्द करके अपने समय और शक्तिकी बचत करो।

अब खादीकी बात करता हूँ। पंजाबके सभी खादी-भण्डार नुकसानमें नहीं चल रहे हैं। शिमलाका तो बराबर घाटेमें चलता रहा है। इसमें शक नहीं कि उसके प्रबन्धमें खामी है। लेकिन शिमलाके लोग खादीको तुच्छ नजरसे देखते हैं और वहाँ लोगोंकी एक जमात ऐसी है जो खादी पहननेसे डरती है। खादी पहननेवाला व्यक्ति लोगोंकी नजरोंमें चढ जाता है। माल [रोड] पर एक स्वदेशी-भण्डार खोलने का विचार आकर्षक तो है, पर उसे अंजाम देनेमें जोखिम है। स्वदेशी वस्तुएँ कितनी भी अच्छी हों, तुलनामें हलकी ठहरती हैं। इन्हें भडकीला बनाने के विचार की उपयोगिताके बारेमें मेरे मनमें सन्देह है। मैं कला और भड़कीलेपनको अलग-अलग मानता हूँ। रूढ लोक-रुचिका ध्यान रखनेवाली दुकानोंकी खिडकियोमें आदमी जो-कुछ देखता है, वह कला नहीं है। वास्तविक सौंदर्यकी चीजें बनवाना और उन्हें शिमलाकी माल रोडकी दुकानोकी भड़कीली चीजोंके साथ-साथ रखना मेरी समझमें बड़ी खर्चीली योजना है और कमसे-कम इस समय तो उस लोभको संवरण ही करना चाहिए। जो दुकान तुम्हारे पास है, उसीमें तुमसे जो हो सकता है, सो करो। उसे और अच्छा बनाओ। उसमें स्वदेशी वस्तुएँ भी रखने लगो। उसे अपनी रुचिके अनुसार जमाओ और कोई दूसरी महँगी जगह लेनेसे पहले वहाँ अनुभव प्राप्त करो। जब तुम जुलाई या अगस्तमें यहाँ आओगी, तब दूसरे विषयोके साथ हम इस विषयपर भी चर्चा करेंगे। वैसे, जितनी जल्दी आ सको, उतना अच्छा।

१. इंडिया एण्ड ब्रिटेन।

क्वेटाके भयानक भूकम्पके बारेमें मैंने जो सोचा या किया है,[1] उस सम्बन्धमें तुम्हें सभी कुछ पढ़नेको मिलेगा। चार्लीको भेजा गया मेरा पत्र[2] भी देखना। उसे मालूम होना चाहिए कि अकेला चना भाड़ नही फोड़ सकता। मेरी पद-यात्रा फिरसे शुरू होनेपर उसे मेरी तलाश उड़ीसा या ऐसी ही किसी जगह करनी पड़ेगी। तैयारीके तौरपर इस बीच मैं १२ मीलके लगभग पहाड़ियोंपर घूम-फिर लेता हूँ।

मैं फालसेके[3] विश्लेषणकी राह देख रहा हूँ।

पत्र लिखने के कागज और लिफाफे बिलकुल तैयार हैं। कुछ पूनियाँ भी तैयार हैं। मैं काफी तादादमें ये भेजना चाहता हूँ। भेजते समय मैं हरएक वस्तुका उत्पादन-मूल्य भी साथ भेजनेकी उम्मीद करता हूँ। जो कागज और पूनियाँ अभीतक भेजी गई हैं, उनका मैंने कोई हिसाब नहीं रखा है। उसके बारेमें तुम्हें फिक्र करने की कोई जरूरत नही है।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५३७) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६३४६ से भी

२०६. पत्र: नारणदास गांधीको

७ जून, १९३५

चि० नारणदास,

साथमें दो पत्र हैं। ध्यानसे पढ़ना। दोनों भाई साथ बैठकर विचार करना और अपनी राय मुझे बताना। मैं बिलकुल नही समझ पा रहा हूँ कि क्या करूँ। . . .[4] का . . .[5] के साथ पतन हुआ हो तो भी मेरे लिए बहुत है। इसे मैं भयंकरसे-भयंकर बात मानूँगा। . . .[6] यह आरोप तो लगाता ही है। क्या उसके पास इसका कोई प्रमाण है? इस गन्दगीमें पड़े बिना तुम्हारा छुटकारा नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एस० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४५२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. देखिए "आइए, प्रार्थना करें", ६-६-१९३५।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. शमशेरसिंह द्वारा; देखिए "पत्र: अमृतकौरको", २०-५-१९३५।

४, ५ और ६. नाम छोड़ दिये गये हैं।

२०७. पत्र : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको

७ जून, १९३५

भाई पुरुषोत्तमदास,

अपने पत्रमें तुमने जो-कुछ कहा है, मैं समझ गया। मैं तो यह जानना चाहता हूँ कि इस समय क्या किया जा सकता है। क्या किया जाये कि हम ऐसी मुद्रा-नीति चालू करा सकें जो देशके लिए हितकर हो? हम सब भरसक प्रयत्न करते रहें, इस विचारका सहारा मैं नहीं लेना चाहता। बादल सिरपर मँडरा रहा हो तब मात्र प्रयत्न काफी नहीं है। क्वेटामें जो भूकम्प आया, उसके खिलाफ बेचारे क्वेटा-वासियोंका प्रयत्न किस काम आया होगा। मेरी दृष्टिमें तो आजकल राजनीतिक भूकम्प ही चल रहा है। उसे रोकनेमें हम असमर्थ सिद्ध हो रहे हैं। इसलिए मैं तो भविष्यको सँवारनेकी कोशिशमें लगा हुआ हूँ।

ग्रामोद्योगोंकी झंझटमें मैं तुम्हें नहीं डालना चाहता। इतना ही आश्वासन देता हूँ कि मेरा यह कार्य सोने-चाँदीकी रक्षाके इस दूसरे कार्यके आड़े नहीं आयेगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास पेपर्स, फाइल संख्या १५९/१९३५; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२०८. सच्चा सम्बन्ध

जो सुशिक्षित लोग आश्रम चला रहे हैं अथवा गाँवोंमें बसनेकी इच्छा रखते हैं किन्तु जिनके शरीर काम-काजके अभावमें अशक्त या क्षीण हो गये हैं और इसलिए जिन्हें शारीरिक श्रम करते हुए कठिनाई मालूम पड़ती है तो भी जिन्हें ग्राम-सेवक बनना है — उनका यह कहना है कि यदि उनके साथ एक भी साथी न हुआ तो उन्हें वहाँ सूना-सूना-सा मालूम होगा। जो लोग आश्रमको किसानों, ग्वालों और कारीगरोंकी बस्तीमें परिणत करना चाहते हैं उन्हें चाहिए कि वे अपने यहाँ मजदूरी पर स्त्री-पुरुषोंको रखें और उनके साथ ऐसा बरताव करें गोया कि वे आश्रमवासी ही हैं। इस तरह वे अपने नौकरोंकी घरेलू और आर्थिक स्थिति समझेंगे, और उन्हें वे जो मजदूरी देंगे उससे अगर उनका काम निकलता होगा तो ही वे उन्हें नौकरी पर रखेंगे। वे खुद उनके जीवनमें इस तरह रस लेंगे मानो वे आश्रमवासी ही हों।

मजदूरोंके साथ अगर इस प्रकारका बरताव किया जाये, तो यह सम्भव है कि जो मजदूरी वे मजदूरोंको देंगे, बदलेमें उन्हें उससे अधिक ही मिल जायेगा। इस प्रकारके व्यवहारसे यह भी देखनेमें आयेगा कि वे मजदूर अपने ऊपर बरसाये हुए प्रेमका जवाब प्रेमसे ही देंगे।

इस योजनाके अनुसार आश्रमका संस्थापक अपनी तरहसे रहेगा, और मजदूर अपनी तरहसे। मैंने देखा है कि संयक्त भोजनालय अक्सर आश्रमकी अच्छीसे-अच्छी शक्तिको खा जाता है, और आश्रमवासियोंके बीच कलह और द्वेषका अड्डा भी बन जाता है। जब फकत मजदूर ही नौकर रखे जायेंगे, तब यह नौबत बिलकुल ही नही आयेगी। मजदूरोंको जिस तरहका खाना खानेकी आदत पड़ी होती है, उसे वे छोड़ते नहीं, और उसे खाकर वे तन्दुरुस्त भी रहते हैं। पढ़े-लिखे आदमियोंके स्वाद कुछ भिन्न और अक्सर कृत्रिम हो गये हैं। मजदूरोंका खाना अगर वे खाने लगें तो उनका स्वास्थ्य ही गिर जाये।

मेरे कहने का मतलब यह नहीं है कि संयुक्त भोजनालयका प्रयोग विफल सिद्ध हुआ है। जहाँ आदर्श समान होते हैं और जहाँ सब लोग यह मानते है कि उनमें आपसमें पूण बन्धुभाव होना चाहिए वहाँ संयुक्त भोजनालयका होना जरूरी है। मगर मजदूरोंसे अभी बहुत वर्षोंतक यह आशा नही रखी जा सकती।

मैंने ऊपर जिस योजनाको रखा है उसमें पाखण्डके लिए कमसे-कम गुंजाइश है। बुद्धि और श्रमके बीच यह योजना स्वाभाविक एकता स्थापित कर सकती है। दोनों एक-दूसरेकी क्षमताको बढ़ायेंगे। इसके अलावा यह भी मुमकिन है कि इस प्रकार जो आश्रम चलाया जायेगा, यह तुरन्त स्वावलम्बी बन जायेगा, और उसका विकास भी तेजीसे होगा।

जो इस नयी योजनाका प्रयोग करेंगे, उन काल्पनिक आश्रमोंके लिए तो यह बहुत अच्छा है। पर जो ग्राम-सेवक अपने जीवनमें पहली ही बार गाँवोंमें बसने जाता है, वह क्या करे? मेरी यह योजना कुछ आवश्यक हेरफेरके साथ उसपर भी लागू होती है। जिन लोगोंके बीचमें उसे बसना है उनसे वह भिन्न प्रकारका मनुष्य है, ऐसा खयाल उसे नहीं रखना चाहिए। जिन ग्रामवासियोंके बीच वह काम करे, उन्हें उसे अपने मित्र और साथी समझना चाहिए। अपनी आवश्यकताके अनुसार जिनकी सेवाकी उसे जरूरत पड़े उन्हें वह, उनकी खुशी हो तो, अपने यहाँ काममें लगा ले। और अगर उसमें ग्रामवासियोंके अनुकूल पड़नेवाली पर्याप्त बुद्धि है तो वह उन सभी ग्राम-वासियोंको पैसा देकर कामपर रख सकता है जो आज मजबूरन बेकार बने बैठे रहते हैं और जो, यदि सम्भव हो तो, अपने इस बेकार समयका उपयोग खुशी-खुशी करना चाहेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-६-१९३५

२०९. पत्र : तहमीना खम्भाताको

वर्धा
८ जून, १९३५

प्यारी बहन,

तुम्हारा ब्योरेवार पत्र पढकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ। मुझे समाचार देती रहना। आशा है, हर रोज सुधार हो रहा होगा। दीनबन्धु वहाँ है, यह अच्छी बात है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६०९)से।

२१०. पत्र : जमनालाल बजाजको

[९ जून, १९३५ के पूर्व][1]

चि० जमनालाल,

तुम नैनीतालमें सबसे मिल आये; ठीक किया। मैं चाहता हूँ कि तुम पूरे जून मास पहाड़पर रहो। तुमने १५ के बादका जो प्रोग्राम बनाया है, वह ३० जून बाद करना। कान अभीतक पूरे तौरसे साफ नहीं हुआ, यह ठीक नही लगता। क्या बम्बई खबर देते रहते हो? खबर न दी हो तो अब पूरा विवरण भेजो। वह क्या कहता हैं, यह जानना चाहिए। यदि वे हाथ खीच लेना चाहते हो तो भले ही खीच लें। कान बहना बन्द होना चाहिए।

ओगिल्वीको पत्र लिखनेमें शायद तुमने जल्दबाजी की हो, वह तुम्हारे स्वास्थ्यकी दृष्टिसे। उसकी स्वीकृति आ जाये तो मुझसे मिलकर उससे मिलने जाओगे, ऐसी आशा करता हूँ।

डेनमार्कके उस दोस्तको लिखा पत्र इसके साथ है। उसने तो अपना पता बम्बईका दिया है।

मेरीबहन कल आ रही है। मद्रालसाकी प्रगतिके बारेमें तुम चुप हो।

कमलनयन चला गया। वह काफी उत्साहित था। गंगादेवी बगीचेमें आ गई है। मैं खानसाहबसे[2] अच्छी तरह मिल पाया। उनकी तबीयत खराब तो बहुत है, पर मजेमें थे। हम लोगोकी भेंटसे उन्हे बहुत अच्छा लगा। सबको बहुत याद कर रहे

१. जमनालालजी ने पत्रके ऊपर मिलनेकी तिथि '९ जून' लिख छोड़ी थी।

२. खान अब्दुल गफ्फार खाँ।

थे। उन्हें नासिक या यरवडा बदलनेको लिखा है। अब जो हो सो ठीक। अब्दुल गनीके बारेमें कुछ चिन्ता जरूर थी।

[अ० भा० ग्राम] उद्योग-संघका काम धीमा पर नियमित रूपसे चल रहा है। उसका रूप बन रहा है। बाकी सब ठीक है।

एन्ड्रयूज शिमलेमें हैं। अपनी पुस्तक लिख रहे हैं। अधिकारियोंसे इस वक्त मिलना बन्द कर रखा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७१) से।

२११. पत्र : लीलावती आसरको

वर्धा
९ जून, १९३५

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला। तेरे लिए शिक्षककी व्यवस्था कर रहा हूँ। यह काम मैं मगनभाईको[1] ही सौंपूंगा। उन्हें तू अपने अंग्रेजी तथा गुजरातीके ज्ञानका परिचय देते हुए एक पत्र लिख। अंग्रेजीमें क्या पढ़ा है, गुजरातीमें क्या पढ़ा है, व्याकरणका कितना ज्ञान है, आदि सब लिख भेजना। पत्र मुझे भेजना, अक्षर सुन्दर लिखना, चाहे पत्र लम्बा हो जाय तो हर्ज नहीं। अंग्रेजीमें भी पत्र लिखना। यह पत्र लिखना मगनभाई के पतेपर। इसे तू अपनी अंग्रेजीकी शिक्षाका आरम्भ समझना, पत्रका उत्तर तुझे तुरन्त मिलेगा। वे अंग्रेजी और गुजरातीमें सुधार करके फिर बतायेंगे कि क्या करना चाहिए। पंक्तियोंके बीचमें स्थान रखना और हाशिया भी छोड़ना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३१) से। सी० डब्ल्यू० ६६०६ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१. मगनभाई प्रभुभाई देसाई

२१२. पत्र : जमनालाल बजाजको

९ जून, १९३५

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। दासके नाम पहुँच साथमें है।

वाइसरायको दो पत्र लिखे, जिनकी नकल साथ है। जवाबमें इन्कार आ गया है: अब जब सबको क्वेटासे नीचे भेज दिया है तो उतरनेवालो की सँभाल रखने के अलावा कुछ करने को नही रहता।

तुम नीचे उतरनेमें जल्दी न करना। इस महीनेके अन्ततक तो वहाँ जरूर रहना। यहाँ तो अब भी भट्टी सुलग रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७२) से।

२१३. पत्र : क० मा० मुंशीको

९ जून, १९३५

भाई मुंशी,

जमीयतराम काकाके निधनसे आपका तो एक बड़ा सहारा जाता रहा।

सीकरके[1] सम्बन्धमें अमृतलालने मुझे पत्र लिखा था। और अधिक समझे बिना कमेटीकी आवश्यकताके बारेमें मैं कुछ निर्णय नहीं कर सकता। मुझे भय है, इससे कोई शुभ परिणाम नही निकलेगा। मेरी आशंका झूठी हो, तो मैं उसे पहले समझ लूँ, फिर निर्णय करूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५७५)से; सौजन्य: क० मा० मुंशी

१. जयपुर रियासत-स्थित, जहाँ सरकारकी ज्यादतियोंके विरुद्ध सत्याग्रह शुरू किया गया था।

२१४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

९ जून, १९३५

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिला . . .।[1]

क्वेटाके मामलेमें अब क्या किया जाये? सरकार सभी कार्यकर्त्ताओंको निकाल रही है, इसलिए वहाँ जानेकी बात ही नहीं उठती। जहाँ घायल या बिना घरबार-वाले लोग पहुँच रहे हैं, वहाँ तो लोग मदद दे रहे हैं। इससे ज्यादा हम क्या कर सकते हैं? राजेन्द्रबाबूको जैसा तार मिला है वैसा ही मुझे भी कल मिला है। अब तो हमारे लिए मौन धारण करने की बात ही रह जाती है।

भारत-मंत्रीके कार्यालयमें जो तब्दीली हुई[2], उसे मैं शुभ चिह्न नहीं मानता हूँ। तुमने सप्रू साहबका प्रमाणपत्र देखा होगा। किसके आगे हम दुखड़ा रोयें? उन्होंने ही इस बिलकी निन्दा की थी। अब वे ही इसका स्वागत कर रहे हैं।

राजेन्द्रबाबू १२ तारीखको आ रहे हैं। चार घंटे ठहरेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७०-७१

२१५. पत्र : विजया एन० पटेलको

९ जून, १९३५

चि० विजया,

यहाँ मजूरी करने आनेकी अपेक्षा तू अपना अध्ययन आगे बढ़ा, यही उचित है।

पति-पत्नीमें से एक भी यदि परस्पर भाई-बहनके समान रहना चाहे, किन्तु एक घरमें रहकर ऐसा न कर सकें तो उनका कर्त्तव्य हो जाता है कि वे अलग-अलग रहें।

बापूके आशीर्वाद

विजयाबहन नारणभाई पटेल
वरड, वाया बारडोली, तपती

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०५८)से। सी० डब्ल्यू० ४५५० से भी; सौजन्य : विजया एम० पंचोली

१. साधन-सूत्रमें यह अंश छोड़ दिया गया है।
२. अभिप्राय लॉर्ड जेटलैंडकी जगह सर सैम्युअल होरकी भारत-मंत्रीके रूपमें नियुक्तिसे है।

२१६. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

९ जून, १९३५

चि० ब्रजकृष्ण,

इस बार तुमने मुझे बड़ी सजा की। हमेशा तुमारे खत की इंतेजारी, हमेशा नाउमीदी। मरनेके इरादेसे आदमी थोड़े ही मरता है! काश्मीरका खतम होनेके बाद यहाँ आ जाओ। काम तो दे दूंगा। और देखें क्या होता है। क्वेटा तो किसीको जाने ही नही देते है।

प्रभावती आजकल सावली है, बा बोचासण।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३८)से।

२१७. पत्र : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको

वर्धा
१० जून, १९३५

भाई पुरुषोत्तमदास,

तुम्हारा पत्र मिला। यह अनुमान तुमने मेरे किन शब्दोंसे किया कि मुझे बुरा लगा है।

ग्रामोद्योग संघके विषयमें तो मैंने तुम्हें अभय-दान दिया है और प्रसंगवश थोड़ा-सा विनोद-भर किया है।

तुमने मुझे पत्र लिखा, यह बात मुझे बहुत अच्छी लगी। लिखते रहना। मेरी चमडी इतनी नाजुक तो कभी थी ही नही कि मुझे झट बुरा लग जाये और यदि कभी थी भी तो मुझे इतने प्रहारक मिल चुके हैं कि मेरी नजाक़त उन्होंने रहने नहीं दी। इसलिए मेरी ओरसे निर्भय रहना।

मेरा प्रश्न यह नही था कि हमें किस तरहकी रिआयतें चाहिए; प्रश्न यह था कि हमारी जो हानि हो रही है उसे किस तरह रोका जाये? मेरी कठिनाई यह है कि इस समय हमारी बात सुननेवाला कोई नही है। हम ऐसा कौन-सा कदम उठायें कि जिससे यह हानि होने ही न पाये?

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीसे : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास पेपर्स, फाइल संख्या १५९/१९३५; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२१८. पत्र : कुँवरजी के० पारेखको

१० जून, १९३५

चि० कुँवरजी,

तुम्हारा और मनुका पत्र भी मिला। मनुने यहाँ आनेका निश्चय किया है, यह मुझे बहुत अच्छा लगा। १५ के सवेरे कान्ति या कनु उसे लेने स्टेशन जायेंगे। तुमने और भी जो लिखा है, मैं समझ गया हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२२) से।

२१९. पत्र : आलमगीरको

वर्धा
११ जून, १९३५

प्रिय आलमगीर,

मैं मुसलमानोंको अपने प्राणोंकी तरह प्यारा मानता हूँ या उनसे घृणा करता हूँ, इस बातका उत्तर तो खुद तुम्हें ही दे सकना चाहिए। यदि तुम्हें इस बारेमें कोई शक है, तो मैं पत्र के द्वारा इसका समाधान नहीं कर सकूँगा। तुम्हें मेरी सारी जिन्दगीका अध्ययन करना चाहिए और उसीमें से उत्तर पानेका प्रयत्न करना चाहिए।

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

२२०. पत्र : वसुमती पण्डितको

११ जून, १९३५

चि० वसुमती,

तेरा पत्र मिला। तुझे कब्ज रहता है, यह ठीक नही है। नीमकी पत्ती और इमली खानी चाहिए। इमली तो वहाँ बहुत मिलती है। साफ करके खाना।

नारणदासकी बड़ी इच्छा है कि तू राजकोट जाये। अगर वहाँ तेरी जरूरत न हो तो यह अच्छा ही होगा कि तू राजकोट चली जाये। वह जगह माफिक न आये तो भाग आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४००)से। सी० डब्ल्यू० ६४६ से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

२२१. पत्र : निरुपमा पंगालकरको

११ जून, १९३५

चि० निरुपमा,

तुमारा खत मिला है। तुमारे रुदनको रोकनेका इलाज है। तुम अब बालक है। तुमारे तीन-चार वर्ष तक जाहेरमें बोलना ही नहीं। अभ्यास करना। जब बड़ी होगी तब अपने-आप बोलेगी और तुमारे सयमसे तुमारी शक्ति बढ़ेगी।

बापूके आशीर्वाद

श्री निरुपमा पंगालकर[1]
सुदामा कुटीर
उडीपी
डाकखाना कटपदी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२२६)से।

१. पोस्टकार्ड पर पता अंग्रेजीमें है।

२२२. पत्र : हीरालाल शर्माको

११ जून, १९३५

चि० शर्मा,

मैं तो जानता हूँ पासपोर्टमें छे २ माससे भी अधिक वीते है। देखें तुमारा क्या होता है? पैसेके बारेंमें मै नहीं समजा हूं। पासपोर्ट आनेपर कपडोंका देखा जाय और घडी इ० का भी। पेजामा-कुड़ता आच्छा लिबास है। करेलेका समजा।[1] ठीक है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १६७ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे

२२३. पत्र : नारणदास गांधीको

[११ जून, १९३५के पश्चात्][2]

चि० नारणदास,

. . .[3] के मामलेकी तहतक पहुंच सको तो अच्छा हो। मेरा तो इसकी जडतक पहुंचे बिना छुटकारा ही नहीं है। बड़ौदा कन्या विद्यालयकी छाप तो मुझपर अच्छी ही पड़ी है। लेकिन एक दिनके निरीक्षणसे मनपर पड़ी छापके आधारपर हम कोई निष्कर्ष नहीं निकाल सकते। हमें और गहरे उतरना है।

रमणीकलाल और किशोरलाल मुझे लिखेंगे। इस सम्बन्धमें वसुमतीसे तो बात कर ही चुका हूँ। उसे तुम लिखो तो अच्छा हो। रमणीकलालको भी लिखना।

पुरुषोत्तमके स्वास्थ्यपर चोरवाड़की आबोहवाका कोई असर हुआ है या नहीं? जमनाको कोई लाभ हुआ है क्या? क्या विजया अच्छी हो गई? मैथ्यूको कुछ ही दिनोंमें वहाँ पहुँच जाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४५४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. शर्माजी की पत्नीने उनकी विदेश-यात्राके लिए करेले और कुछ अन्य सब्जियाँ सुखाकर तैयार की थीं।

२. वसुमती पण्डितके उल्लेखसे। नारणदास गांधी चाहते थे कि वे राजकोट जायें; देखिए "पत्र : वसुमती पण्डितको", ११-६-१९३५।

३. नाम छोड़ दिये गये हैं।

२२४. पत्र : शिवसेवक तिवारीको

वर्धा
१२ जून, १९३५

भाईश्री तिवारीजी,

आप लोग चन्दा इकट्ठा करनेका यत्न कर रहे हैं, सुनकर मुझे आनन्द होता है।

मो० क० गांधी

श्री शिवसेवक तिवारी[1]
हिन्दी साहित्य सम्मेलन
इन्दौर

वीणा, श्रद्धांजलि अंक, अप्रैल-मई १९६९

२२५. तार : जमनालाल बजाजको

वर्धा
१३ जून, १९३५

सेठ जमनालालजी
भुवाली

सम्भव हो तो माहके अन्ततक वहीं रहो।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १६४

१. शिवसेवक तिवारी स्वागत समितिके संयुक्त मंत्री थे।

२२६. पत्र : अमृतकौरको

१३ जून, १९३५

प्रिय अमृत,

तुम्हारा पत्र पढ़कर मेरी आँखें भर आईं। शुद्ध मन तथा निःस्वार्थ भावनासे की गई सेवाको परमात्माका आशीर्वाद जरूर मिलेगा।

अगर मैं क्वेटा जाता तो तुम दोनोंको भी साथ ले जानेमें मुझे खुशी होती। लेकिन यह होना नहीं था।

हाँ, तुम मुझे खादी-भण्डारको हटाकर माल[1] ले जानेकी आवश्यकताको समझा कर लिखो।

क्योंकि मैं बायें हाथसे लिख रहा हूँ इसलिए अधिक लिखना सम्भव नही है। दायें हाथको आरामकी जरूरत है।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५३८) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६३४७ से भी

२२७. पत्र : नारायणदास रतनमल मलकानीको

१३ जून, १९३५

प्रिय मलकानी,

मैंने बापाके सम्बन्धमें पत्र[2] तुम्हें पहले ही लिख दिया है।

अब मुझे पानी-फण्डके बारेमें तुम्हारा पत्र मिला है। मैं फिर लिखूंगा। मैंने जुगलकिशोर बिड़लाका एतराज भी देखा है। क्या पहली बार उनके नामका इस्तेमाल उनकी इजाजतके बिना ही किया गया था? अगर उसके लिए उनकी इजाजत पहले ही ले ली गई थी तो दूसरी बार उसके इस्तेमालको गलत नहीं कहा जा सकता। लेकिन अगर पहली बार उसका इस्तेमाल उनकी इजाजतके बिना ही हुआ, तब

१. मुहल्लेका नाम; देखिए "पत्र: अमृतकौरको", ७-६-१९३५।

२. देखिए "पत्र: नारायणदास रतनमल मलकानीको", ६-६-१९३५।

मेरी समझमें उसका जवाब देना कठिन है। मैंने उन्हें खत लिखा था। उन्होंने कहा है कि वे बादमें पैसे चुका सकते हैं।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१७)से।

२२८. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

१३ जून, १९३५

भाई विट्ठलदास,

तुमने तो बहुत बड़ा प्रश्न उठाया है। जब तुम्हारे मनमें यह प्रश्न था, तब जो प्रणाली तुमने अपनाई है, वह दोषयुक्त कही जायेगी। जो कारण तुम अब बता रहे हो, यही कारण यदि उन्हें अलग करने का था, तो उन्हें अलग तो किया जा सकता था, किन्तु दूसरी ही तरहसे। अब तो प्रश्न यह है: गणात्रांको[1] दिये गये नोटिसमें जो कारण बताया गया है, क्या सचमुच यही कारण नोटिस देनेका था?

जो नोटिस दिया गया, वह दोषयुक्त तो है ही। यदि काकूभाईको कोई आश्वासन दिया गया था, तो उसका पालन किया जाना चाहिए। अन्य लोगोंका व्यवहार खराब तो था ही, किन्तु यदि वे उसके लिए माफी माँगें तो उन्हें वापस बुला लेना चाहिए। यदि यह सब तुम्हें पसन्द हो तो मैं नयी नीति निर्धारित करने के प्रश्नको तुरन्त हाथमें ले सकता हूँ और इसका नोटिस भी तुरन्त दे सकता हूँ। मेरी रायमें यह प्रश्न बड़े महत्त्वका है। इसका शुद्ध निर्णय कर सकने के लिए भी यह जरूरी है कि पहले ये मौजूदा बादल छाँट दिये जायें। इन बातोंका पूर्ण निर्णय हुए बिना इतने महत्त्वका काम ठीक तरहसे सुलझाया नहीं जा सकेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७८८) से।

1. अखिल भारतीय चरखा संघ, बम्बईके; देखिए "पंच-निर्णय", १८-६-१९३५।

२२९. पत्र : नारणदास गांधीको

वर्धा
१४ जून, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। देखता हूँ कि तुम्हें . . . के[1] किस्सेकी झंझटमें डालना ही नहीं चाहिए।

साथके पत्रपर नजर डालकर पहुँचा देना। देखते रहना कि क्या होता है। मनु तो कल मेरे पास आ जायेगी।

केशूके बारेमें समझ गया। वर्कशॉपका क्या हुआ? जो यन्त्र बनाये गये हैं, क्या उनका उपयोग किया जा सकेगा?

धीरूका पत्र मिला था, किन्तु उससे मुझे संतोष नहीं हुआ। पण्डितजी का पत्र इसके साथ है। गजाननका खर्च जितना पण्डितजी कहते हैं, चुका देना। मैं धीरूको पत्र लिखनेवाला हूँ। क्या तुम्हें खर्चके विषयमें फिरसे विचार करना आवश्यक लगता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८४५३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२३०. पत्र : प्रभावतीको

१४ जून, १९३५

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र मिला। बाबाजी का पत्र तुझे मिला होगा। विवाहके बाद तुरन्त चल पड़ना। जयप्रकाशका पत्र मुझे मिला है। सरदारके विषयमें तेरा सन्देश मुझे कुमारप्पाने दिया। वियोगीजी[2] के साथ पढ़ाई चल रही है। श्रीनगरमें कोई कताई या बुनाई करता है? न करता हो तो तुझे विचार करना चाहिए। श्रीनगर तो गाँव-जैसा ही है। तुझे घरसे आरम्भ करना चाहिए। श्रीनगरमें तुझे समय भी काफी मिलता होगा।

१. नाम छोड़ दिया गया है।
२. वियोगी हरि।

वहाँ तेरा दैनिक कार्यक्रम क्या है, सो लिखना। अमतुस्सलाम यही है। मेरा ठीक चल रहा है। बारडोलीसे लक्ष्मी[1] यहाँ आयेगी। मनु भी आ रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५२)से।

२३१. बातचीत : एक हरिजन-सेवकसे[2]

[१५ जून, १९३५ के पूर्व]

हमें सदियोसे जमे हुए पूर्वाग्रहोको जीतना है, इस लक्ष्यको दृष्टिमें रखते हुए राष्ट्रके जीवनमें तुम्हारे ये चार वर्ष किस गिनतीमें आते है और कालके अपार सागरमें तुम्हारा यह एक जीवन भी क्या है? और हम पर्याप्त परिश्रम कर चुके है क्या? क्या हम काफी कष्ट झेल चुके है? बुकर टी० वाशिंग्टनका[3] ही उदाहरण ले लो। जितने कष्ट वाशिंग्टनने उठाये थे, क्या उतने कष्ट हममें से किसीने उठाये हैं? हम लोग हरिजनोके दुःखोका वर्णन तो करते है, पर क्या हमने कभी उनके इन दुःखोमें खुद भाग लिया है? हरिजन इतने चतुर तो है ही कि वे देख सकते है कि भूखे हम लोग नही मरते, भूखसे तो वे मरते हैं। हमें स्वच्छ-मीठा पानी मिल जाता है, पर उन बेचारोको तो गन्दे पोखरोसे ही पानी भरना पडता है।

तुम कहते हो कि हरिजन सेवक सघ तुम्हें पैसा नही देता। सघकी दृष्टिसे यह ठीक ही है। हमने आरम्भ ही गलत सिरेसे किया है। हम अपने बलपर खडे रहने के बजाय बाहरकी सहायतापर निर्भर रहते चले आ रहे है। अब ऐसा समय आ गया है, जब हमें दूसरोके भरोसे चलना छोड देना चाहिए। बच्चोको किसी बरामदे या उनके छप्परोमें ही बिठाकर क्यो न पढाया जाये, और इस तरह पाठशालाका विकास स्वाभाविक रीतिसे क्यो न किया जाये? छात्रालयके लिए जितने अनाज या साग-भाजीकी जरूरत पडे, उतनी उन्हीकी मददसे क्यो न वही-का-वही पैदा कर ली जाये? इस तरह आपके छात्रालयका खर्चा बहुत-कुछ कम हो सकता है। मान लीजिए, त्रिवेन्द्रम्की कोई पाठशाला वहाँसे कोसो दूर दिल्लीपर निर्भर करे, यह बात समझमें आनेवाली तो नहीं है। यह तो बडी ही अस्वाभाविक चीज है। शुरू-शुरूमें हो सकता है कि ऐसा करनेकी जरूरत रही हो। पर अब इस बाहरी सहायताकी

१. लक्ष्मी मारुतिदास शर्मा।

२. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र)से उद्धृत। यह हरिजन-सेवक अपनी संस्थाओंके लिए हरिजन सेवक संघसे पर्याप्त आर्थिक सहायता प्राप्त नहीं कर सका था और सेवाकार्यके अपने चार वर्षोंमें वह अपने काममें योग देनेके लिए नवयुवकोंको भी आकर्षित नहीं कर सका था।

३. अमेरिकाके प्रसिद्ध नीग्रो शिक्षा-प्रचारक। युवावस्थामें उन्हें बहुत कष्ट उठाना पड़ा था।

दरकार नहीं होनी चाहिए। ऐसी पाठशाला चलानेवाला आदमी अगर दिल्लीसे वेतन पाता हो तो वह वहाँ वालों के लिए परदेशी-जैसा ही होगा। अगर वह हरिजनोंमें अच्छी तरह घुल-मिल जायेगा तो वे जरूर उसे अपनी दो रूखी-सूखी रोटियाँ दे देंगे, और भूखों तो कदापि नहीं मरने देंगे। हर वक्त केन्द्रीय बोर्डकी ओर दृष्टि डालनेमें कोई सार नहीं है। केन्द्रीय बोर्ड तमाम कामको सुन्दर रीतिसे चलाता रहेगा, पर साधन-सामग्री तो प्रान्तीय संघोंको ही जुटानी होगी। लेकिन मेरा मन नित्यप्रति इतने नये सत्योंका आविष्कार कर रहा है और मुझे कुछ ऐसा लगता है कि हमें यह पैसा इकट्ठा करनेकी झंझट भी अब छोड़ देनी चाहिए। अगर हमारे पास पैसा नहीं है, तो काम रुक नहीं सकता। खोजने की कला-भर चाहिए, अन्य साधन-सामग्री हमारे पास बहुत पड़ी हुई है।

और हरिजनोंके विषयमें हम हताश क्यों हों? प्रतिज्ञा लेकर उसे पालनेवाले आदमी बहुत ज्यादा नहीं हुआ करते। हमने ही क्या अपनी सब प्रतिज्ञाओंका पालन किया है? और उन्हें मुर्दार मांस खानेकी जो आदत पड़ गई है, उसके बारेमें हमें इतना अधिक व्याकुल होनेकी क्या जरूरत है? हम यह तो चाहते ही हैं कि उनकी यह बुरी आदत छूट जाये, पर इस तरह अधीर होनेसे काम चलनेका नहीं। जब अनेक सवर्ण हिन्दू मांसाहार करते हैं तो हरिजनोंका मुर्दार मांस खाना स्वाभाविक ही है। कत्ल किये हुए जानवरका मांस और मुर्दार मांस, इन दोनोंमें शायद ही कोई रासायनिक भेद हो। आपको याद होगा कि डॉ० देशमुखने मुझे लिखा था कि कत्ल किये जानवरोंका ताजा मांस और ताजा मुर्दार मांस इन दोनोंका फर्क समझ पाना असम्भव है। और जहाँतक तर्कका सवाल है वह हरिजनोंके ही पक्षमें जाता मालूम होता है। एक पैसेवाला हिन्दू अपने खानेके लिए बकरा जिबह करा सकता है, पर बेचारा गरीब हरिजन क्या करे? तुम उसे जिन्दा बकरा भी नहीं देते, और संयोगसे मरे हुए बकरेका मांस उसे मिलता है, तो वह भी नहीं खाने देते हो। नहीं; हमें यह समझना चाहिए कि हरिजनोंमें ऐसी एक भी बुरी आदत नहीं है कि जिसके मूलमें हमारा दोष न हो। प्रायश्चित्त सब हमें ही करना है। करोड़ों सवर्ण हिन्दू मांसाहार त्याग दें, तो हरिजन मुर्दार मांस खाना आज ही छोड़ देंगे।

प्रश्न: क्या हम उनसे यह कह सकते हैं कि वे अपने गंदे और टूटे-फूटे घर छोड़कर हमारे मुहल्लोंमें आकर बस जायें?

उत्तर: इस बातको कहना आसान है, पर करना कठिन है। सब सवर्ण हिन्दू अगर सुधारक हो जायें, तो फिर आपका यह प्रश्न उठे ही नहीं। आज अगर हरिजन सवर्णोंके मुहल्लोंमें जाकर रहने लगें तो उनपर जो बीतेगी उससे उनकी रक्षा करना सुधारकोंके बसकी बात नहीं। पर मैं यह जरूर कहूँगा कि जहाँ हरिजनोंपर हमेशा ही अत्याचार होता रहता हो — जैसाकि नाटारोंकी ओर से होता है — तो हरिजन वह स्थान छोड़कर चले जायें।

प्र०: हरिजनोंके उपनयन-संस्कारके विषयमें आपकी क्या राय है? जनऊ उन्हें पहनाया जाये?

उ० : नहीं; इसका तो यह अर्थ होता है कि हरिजन नीचे है और उन्हें ऊँचा बनाना है। नीचापन तो उनमें जरा भी नही है। उनमें जो नीचापन दिखाई देता है वह हमारे ही घोर नीचपनकी परछाईं है। मान लीजिए कि मेरा एक लड़का रोगी है, तो मैं उसका क्या करूँगा? क्या मै उसे त्याग दूंगा? उसे नीचा मानूंगा? नही, मुझे यह विचार करना पड़ेगा कि यह बालक मेरे ही पापोसे दुःख भोग रहा है, और इसलिए मुझे उसकी खास सार-सँभाल रखनी चाहिए। पर हरिजनोंके विषयमें तो मै यह अक्षरशः मानता हूँ कि वे हम लोगोसे बहुत ऊँचे है। हमने उनके ऊपर अत्याचार करने में कुछ उठा नही रखा, तो भी वे हमारे साथ बने रहे और अब भी वे हमें नही छोड रहे है। जिस धर्मके कुछ अनुयायी हरिजनोसे यह कहते हो कि तुम्हारे लिए इस धर्ममें स्थान नही, उस धर्मको हरिजन अब भी मानते हैं, यह मुझे महान् आश्चर्यकी बात मालूम होती है। नही, जिस उच्चासनपर हम सैकड़ो वर्ष अहकारवश आसीन रहे, उससे हमें अब उतरना ही चाहिए और उनके साथ हमें अपना स्वाभाविक स्थान लेना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-६-१९३५

२३२. प्रार्थनाका रहस्य

मैंने चंद पक्तियाँ लिखकर[1] लोगोको क्वेटाके भूकम्पके सम्बन्धमें प्रार्थना और प्रायश्चित्त करनेकी सलाह दी थी। उसके सम्बन्धमें इधर कुछ निजी पत्र-व्यवहार हुआ है। एक पत्र-लेखकने पूछा है :

> बिहारके भूकम्पके समय आपने निःसंकोच कहा था कि इसे सवर्ण हिन्दुओंको अपने अस्पृश्यता-रूपी पापका दण्ड मानना चाहिए। तब यह क्वेटाका इससे भी अधिक भयानक भूकम्प किस पाप का दंण्ड है?

लेखकको उक्त प्रश्न पूछनेका अधिकार है। जिस प्रकार बिहारके विषयमें मैंने अपना मत खूब विचारपूर्वक प्रकट किया था, उसी प्रकार क्वेटासे सम्बन्धित यह लेख भी मैंने विचारपूर्वक ही लिखा है। प्रार्थनाका यह आमन्त्रण निश्चय ही आत्माकी व्याकुलताका द्योतक है। प्रार्थना पश्चात्तापका एक चिह्न है। प्रार्थना हमारे अधिक अच्छे, अधिक शुद्ध होनेकी आतुरताको सूचित करती है। प्रार्थनापरायण मनुष्य भौतिक विपत्तियोको दैवी दण्ड समझता है। यह दण्ड व्यक्तियो तथा राष्ट्रो, दोनोके लिए होता है। ऐसे सभी दण्ड लोगोको एकसमान नहीं चौंकाते। कुछ दण्डोका प्रभाव तो केवल व्यक्तियोपर ही पड़ता है। दूसरे कुछ दण्डोका असर जनसमूहो अथवा राष्ट्रोपर मामूली-सा ही होता है। क्वेटाकी-जैसी विपत्तियाँ हमें स्तब्ध कर देती हैं। रोज-रोज आनेवाली सामान्य आपत्तियोंके प्रति अत्यन्त परिचयके कारण मनमें अवज्ञा

१. देखिए "आइए, प्रार्थना करें", ९-६-१९३५।

का भाव आ जाता है। भूकम्प यदि नित्य होता रहता तो उसकी तरफ हमारा ध्यान भी न जाता। क्वेटाके इस भूकम्पसे भी हमारा मन उतना विचलित नहीं हुआ है जितना कि बिहारके भूकम्पसे हुआ था।

लेकिन समस्त संसारका कुछ ऐसा अनुभव है कि जब भी विपत्ति आती है, तब समझदार मनुष्य विनम्र होकर भगवान्‌का स्मरण करने लगता है। वह यह मानता है कि ईश्वरने यह मेरे पापोंका दण्ड दिया है, और इसलिए अब मुझे अपना आचरण और भी अच्छा बनाना चाहिए। उसके पाप उसे अत्यन्त निर्बल बना देते हैं और अपनी उस निर्बलतामें वह प्रभुको अधीर होकर पुकारता है। इस प्रकार करोड़ों मनुष्योंने अपनेपर पड़ी हुई विपत्तियोंका अपनी आत्मशुद्धिके लिए उपयोग किया है। राष्ट्रोंने भी विपत्ति पड़नेपर ईश्वरसे मदद माँगी है, इसके भी उदाहरण मिलते हैं। उन्होंने भगवान्‌के आगे विनम्र बनकर प्रार्थना, प्रायश्चित्त और आत्मशुद्धि के दिवस नियत किये हैं।

मैंने कोई नयी या मौलिक बात नहीं सुझाई है। आजकलके जमानेमें, जबकि अश्रद्धा लोगोंके लिए फैशनकी वस्तु बन गई है, स्त्री-पुरुषोंसे पश्चात्ताप करने के लिए कहा जाये तो उसमें कुछ साहसकी जरूरत तो पड़ती ही है। पर मैं साहसके लिए किसी श्रेयका दावा नहीं करता; क्योंकि मेरी कमजोरियों और विचित्रताओंको तो सब जानते ही हैं। जिस तरह मैं बिहार और बिहारवासियोंको जानता हूँ, उसी तरह अगर मैं क्वेटाको जानता होता तो क्वेटाके पापका उल्लेख मैं अवश्य करता, यद्यपि यह सम्भव है कि जिस प्रकार अस्पृश्यताका पाप अकेले बिहारका पाप नहीं था, उसी प्रकार वह पाप भी केवल क्वेटाका ही न रहा हो। किन्तु हम सब — शासक और जनता — यह मानते हैं कि हमें ऐसे अनेक व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय पापोंका जवाब देना है। अतः यह उन सबको प्रायश्चित्त, प्रार्थना और नम्रताके लिए आमन्त्रण है। सच्ची प्रार्थनासे अकर्मण्यता कदापि उत्पन्न नहीं होती। उससे तो निरन्तर निष्काम कर्म करने के लिए शक्ति तथा उत्साह उत्पन्न होता है। स्वार्थका विचार कर आलसी बनकर बैठा रहनेवाला मनुष्य आत्मशुद्धि कभी कर ही नहीं सकता। आत्मशुद्धि तो निःस्वार्थ रीतिसे उद्यम करनेवाला व्यक्ति ही कर सकता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-६-१९३५

२३३. भयंकर बरबादी

राहा (असम)से श्री अन्नदाबाबू लिखते है:[1]

मुझे आशा है कि अन्नदाबाबूने जिस भयानक बरबादीकी बात बतलाई है उसे असमके कतिपय कार्यकर्त्ता दूर कर देंगे। बिनौलोको अगर वहाँ यो ही फेंक देते हैं तो कोई नवयुवक उन्हें इकट्ठा करके उनसे कुछ पैसा कमा सकता है, क्योंकि बाजारमें बिनौलेके अच्छे दाम मिल जाते हैं। इसमें अज्ञानी लोगोको शिक्षा देनेकी ही बात है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-६-१९३५

२३४. सत्यानाशी जूआ

मेरे एक मित्रने मुझसे यह कितनी ही बार कहा कि बम्बईमें तथाकथित उच्च वर्गके लोगोंमें जो विशेष प्रकारका जूआ या सट्टा जोरोंसे प्रचलित है, उसपर आप सर्वसाधारणका ध्यान जरूर आकर्षित करे। अपने उन मित्रकी तरह मुझे भी इस बुराईपर पूरा और हार्दिक दुःख है, पर मुझे इसपर कुछ लिखने की हिम्मत नही पडती थी। मुझे ऐसा लगता था कि इस विषयपर मेरा कुछ लिखना बिलकुल व्यर्थ होगा, क्योकि मुझे यह आशा नही थी कि इसे लिखने के बाद इस बुराईको दूर करने का मै कोई अच्छा संगठित रचनात्मक प्रयत्न आरम्भ कर पाऊँगा। इस बुराईपर कुछ लिखूं या नही, इस उधेड-बुनमें मै पडा था कि सरदार पटेलने मेरी तलबी की और मुझे बोरसद जाना पडा। गुजरातके गाँवोको यह जूआ कैसा तबाह कर रहा है, इसकी बडी-बडी भयंकर कहानियाँ मुझे सरदार पटेल और उनके स्वयसेवकोने बोरसदमें सुनाई। यह 'सत्यानाशी जूआ वहाँ प्रचण्ड दावानलकी तरह फैलता जा रहा है। बिना कोई उद्योग-धन्धा किये ही हरएक आदमी धनी बनने के लिए आतुर हो रहा है। जुआरी यह दलील देता है कि 'कोई-न-कोई तो अमुक मालके निश्चित भावका सही-सही अन्दाज लगा ही लेगा, फिर मै क्यो सट्टेसे दूर रहूँ?'

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने लिखा था कि असमके उस भागके गाँवोंमें प्रचलित तेल पेरनेकी रीति बहुत ही पुराने किस्मकी है, जिसमें बहुत-सारा तेल नष्ट हो जाता है और वहाँके लोग अक्सर बिनौलोंको तो यों ही फेंक देते है। पत्र-लेखकका सुझाव था कि अ० भा० च० सं० को गाँवमें एक घानी स्थापित करनी चाहिए जिसका गाँवके लोग मुफ्तमें या थोडी खली देकर उपयोग कर सकें।

और सर्वनाशको गले लगाने दौड़ पड़ता है। एक समय गुजरातके जो घर सुखी और सम्पन्न थे, वे अब दिन-दिन तबाह होते जा रहे हैं।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि जूएकी यह बुराई, हम उसे जो भी नाम दें, है बहुत पुरानी — शायद उतनी ही पुरानी जितनी कि स्वयं मनुष्य-जाति। उसके बाहरी रूप और नाम भले ही बदलते रहे हों किन्तु उसके सार-तत्त्वमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

इस जूएके विरुद्ध कानून जरूर होना चाहिए। पर अगर किसी कानूनके पीछे लोकमत न हो तो वह कोई अर्थ नहीं रखता। इसलिए लोकसेवकोंके लिए यह आवश्यक है कि जिस तरह उन्होंने प्लेगके दौरान या भूकम्प-पीड़ितोंको राहत पहुँचानेके समय खूब डटकर उद्योग किया, उसी तरह इस सत्यानाशी जूएको उखाड़ फेंकने के लिए भी वे कमर कसकर तैयार हो जायें। जबतक इस दुर्व्यसनका जड़-मूलसे नाश न हो जाये, तबतक उन्हें सन्तोष नहीं मानना चाहिए। एक तरहसे तो यह जूआ प्लेग या भूकम्पसे भी बुरा है, क्योंकि यह हमारी अन्तरात्माको नष्ट कर देता है। और जिसकी आत्मा नष्ट हो चुकी, वह पृथ्वीपर भार-रूप ही है। इसमें सन्देह नहीं कि प्लेग या भूकम्पके संकटके विरुद्ध लड़ना जितना आसान है, इस महारिपुसे लोहा लेना उतना आसान नहीं है। जहाँ प्लेग और भूकम्पका संकट दूर करने में थोड़ा-बहुत सहयोग पीड़ित जनोंका भी मिल जाता है, वहाँ इस जूएमें जूएके शिकार खुद ही आपत्तिको आमन्त्रित करते हैं और उसे गले लगाते हैं। जुआरीका जूआ छुड़ाना शराबीकी शराबखोरी छुड़ानेके समान है। इसलिए यह महा कठिन काम है। लेकिन इस बुराईको मिटाने का प्रयत्न तो हमें करना ही है। बम्बई नगरको तो इसने जैसे ग्रस लिया है। गाँवोंकी ओर भी अब इस दुष्टने अपना पंजा फैलाना शुरू कर दिया है। गाँवोंके लिए यह निश्चय ही खतरेकी घंटी है। कोई भी देशभक्त इस खतरेकी घंटीको सुनकर बेखबर रहनेका साहस नहीं कर सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-६-१९३५

२३५. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

वर्धा
१५ जून, १९३५

चि० अम्बुजम्,

तुम्हारा पत्र मिला।

मुझे उम्मीद है कि किचीको[1] अब बुखार नहीं है। उसे क्या हुआ है? जब तुम वहाँ नहीं होती तो वह किसके पास रहता है? अपना वक्त वह किस तरहसे गुजारता है? क्या उसके पास ऐसी कोई चीज या कोई व्यक्ति रहता है जिसके साथ उसका मन बहल जाता हो?

कमलाने मुझे चिट्ठी लिखी थी। कितना अच्छा हो अगर तुम उसके साथ आ सको।[2] लेकिन मुझे मालूम है कि तुम्हें इस समय अपने पिता या किचीको अकेला नहीं छोड़ना चाहिए।

हाँ, क्वेटाका विनाश दिलको हिला देने वाला है। उसके सम्बन्धमें मैंने जो-कुछ भी लिखा है, उसपर तुम्हें विचार करना चाहिए।

प्रभा अपने पिताके साथ है। वह जुलाईमें लौटेगी। अमतुस्सलाम यहीं है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०१)से; सौजन्य : एस० अम्बुजम्माल

२३६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१५ जून, १९३५

भाईश्री वल्लभभाई,

भाई बलवन्तरायके[3] साथ चर्चाके दौरान बात निकलनेपर मैंने उनसे कहा है कि देवचन्दभाई[4] काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्की कार्यसमितिकी बैठक नहीं बुलाते, इसके पीछे तुम्हारा हाथ है; और तुम्हारे इस निर्णयको मैंने भी उचित माना है।

१. कृष्णस्वामी।
२. देखिए "पत्र : एस० अम्बुजम्मालको", ४-६-१९३५।
३. बलवन्तराय मेहता।
४. वढवाणके श्री देवचन्द पारेख।

भाई बलवन्तराय कहते हैं कि पोरबन्दरमें लगाई गई मर्यादाका उल्लंघन कोई नहीं करना चाहता। मैंने कहा कि अगर ऐसा विश्वास तुमको दिला सकें, तो शायद तुम अपना विरोध वापस ले लो। इसके अतिरिक्त तुमसे बात कर लेनेकी सलाह भी मैंने बलवन्तरायको दी है।

ये और कुछ अन्य लोग सीकरके[1] मामलेमें यहाँ आये हैं। इस बारेमें मेरी राय भाई बलवन्तराय बतायेंगे। जल्दी ही अच्छे हो जाओ।[2]

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
८९, वार्डन रोड
बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७१-७२

२३७. सन्देश: चित्तरंजनदास स्मारक-भवनके उद्घाटनपर

[१६ जून, १९३५के पूर्व][4]

मुझे खेद है कि इस माहकी १६ तारीखको होनेवाले समारोहमें मैं उपस्थित नहीं हो सकूँगा। मैं उसके लिए हर प्रकारकी सफलताकी कामना करता हूँ। इस अवसरपर उपस्थित लोग अगर इस बातपर विचार करें कि हमने देशबन्धुके जीवनके जिन गुणोंको सराहा है, उन्हें आचरण द्वारा अपने जीवनमें उतारना ही एक सच्चे स्मारककी स्थापना करना है, तो कितना अच्छा परिणाम निकले!

[अंग्रेजीसे]
अमृत बाजार पत्रिका, १८-६-१९३५

१. देखिए "पत्र: क० मा० मुंशीको", ९-६-१९३५।

२. वल्लभभाई पटेलको पीलिया हो गया था।

३. केवड़ातला श्मशान घाटपर जो स्मारक बनाया गया था, उसका उद्घाटन नीलरत्न सरकारने किया था।

४. चित्तरंजनदासकी दसवीं बरसी १६ जून, १९३५को थी।

२३८. पत्र : जी० सीताराम शास्त्रीको

१६ जून, १८३५

प्रिय सीताराम शास्त्री,

मैं गुड़का शर्बत इस्तेमाल करके देखूंगा और उसके प्रभावके सम्बन्धमें आपको सूचित करूँगा। अलबत्ता गुड़का शर्बत कितने लम्बे अर्सेतक [बिना बिगड़े] रह सकता है, इस विषयमें मुझे कोई जानकारी नही हो पायेगी।

हृदयसे आपका,
बापू

श्रीयुत सीताराम शास्त्री
विनय आश्रम
डाकखाना चाँदले, जिला गुन्टूर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९१७१)से; सौजन्य : जी० सीताराम शास्त्री

२३९. पत्र : मोहनलालको

वर्धा
१६ जून, १९३५

प्रिय मोहनलाल,[1]

आपका पत्र मिला। जो मुद्दा आपने उठाया है उसकी चर्चा 'हरिजन' में नही की जा सकती। मैं समझता हूँ, डॉ० गोपीचन्दका विचार बिलकुल ठीक है। मै बस एक कदम और आगे जाकर कहूँगा कि संघके सदस्योकी हैसियतसे हमें सरकारसे कुछ करवाने के लिए कोई आन्दोलन नही चलाना चाहिए। हमारा क्षेत्र ऐसे कार्योंतक ही सीमित है जो हम सरकारी सहायताके बिना कर सकते हैं। सरकार द्वारा इस सम्बन्धमें उठाये हर कदमकी हमें कद्र तो करनी ही चाहिए। अगर कभी सरकार हमारा सहयोग मांगे तो हमें इसमें सहयोग देनेकी पूरी स्वतन्त्रता है। लेकिन सरकार की आलोचना करना या सरकारको कोई कार्रवाई करनेपर मजबूर करने के लिए मंचोंसे आन्दोलन चलाना हमारे कार्य-क्षेत्रसे बाहरकी बात है। इस स्थितिकी अवधारणा किसी स्थायी नीतिके रूपमें नही की गई है, लेकिन मुझे इसमें कोई सन्देह

१. पंजाब हरिजन सेवक संघके मन्त्री।

नहीं है कि फिलहाल तो अनुसरण करने लायक यही एक ठीक नीति है। हमें यह समझना चाहिए कि फिलहाल हरिजन यह तय नहीं कर पाये हैं कि उन्हें क्या करना चाहिए। पहले हमें उनका पूरा विश्वासभाजन बनना है। उसके बाद ही हम सरकारको अपनी इच्छित दिशामें प्रवृत्त होनेको प्रभावित कर सकते हैं। मैं मान लेता हूँ कि यह पत्र आप डॉ० गोपीचन्दको भी दिखायेंगे।

आपका,

श्रीयुत मोहनलालजी
लाजपत भवन
लाहौर

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

२४०. पत्र: मुहम्मद अजमल खाँको

१६ जून, १९३५

प्रिय मित्र,

चार दिन पहले प्राप्त आपके पत्र और आज मिली आपकी पुस्तकके लिए धन्यवाद। मैं उर्दू तेजीसे नहीं पढ़ सकता और मैं चाहे जितना चाहूँ लेकिन उसे पढ़नेके लिए आज मेरे पास अवकाश नहीं है। अभी मैंने आपकी पुस्तक अपने साथ ठहरे एक मुसलमान दोस्तको दे दी है। उनके पढ़ लेनेके बाद मैं उसे पढ़नेकी कोशिश करूँगा और यदि मैं कभी अपनी कोशिशमें सफल हो सका तो निश्चय ही आपको अपनी राय भेजूंगा। आपको शायद मालूम नहीं होगा कि 'हरिजन' में मैं किसी पुस्तककी समीक्षा नहीं करता।

हृदयसे आपका,

मौलवी मुहम्मद अजमल खाँ
इंस्टिटयूट ऑफ डिवाइन ट्रुथ्स
डेरा, इलाहाबाद

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

२४१. पत्र : मुहम्मद अबूसालेह ए० निजामीको

१६ जून, १९३५

प्रिय मित्र,

चमड़ा कमानेपर लिखी गई आपकी पुस्तक मैं पढ़ गया। बहुत असम्बद्ध और अपूर्ण है। बहुत-सी बातोंका कोई जिक्र ही नहीं है। पुस्तक ऐसी नहीं है जिसके सहारे कोई सीखनेवाला आदमी बिना किसी शिक्षककी सहायताके प्रयोग कर सके। प्रयोगमें लाई जानेवाली वस्तुओंका आपने ठीक अनुपात नहीं बताया। मैं सलाह दूँगा कि आप इसके परिच्छेद फिरसे लिखें और पुस्तकको जितनी है, उससे बहुत अधिक तथ्यपूर्ण बनायें। पुस्तक मोटी हो, यह जरूरी नहीं है; लेकिन सारे तथ्य ठीक-ठीक दिये जायें, यह आवश्यक है। चमड़ा कमानेवाला कैसे पानीका उपयोग करे, इसके बारेमें आपने बहुत कम कहा है। लेकिन मैंने तो इस विषयपर जितना साहित्य पढ़ा है, सबमें पानीकी किस्मपर ज्यादासे-ज्यादा जोर दिया गया है। और अन्तमें, आपने पुस्तककी जो कीमत रखी है उसका प्रकाशन-व्ययसे कहीं कोई मेल ही नहीं बैठता। आपकी पुस्तक चन्द धनी लोगोंके लिए नहीं बल्कि बहुत-से गरीबोंके लिए है।

हृदयसे आपका,

मुहम्मद अबूसालेह ए० निजामी
बड़ौदा

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

२४२. पत्र : डॉ० एम० बी० गोडबोलेको

१६ जून, १९३५

प्रिय गोडबोले,[1]

मैं तो समझ रहा था कि बहुत पहले आप जो पुस्तक मेरे पास छोड़ गये थे वह आपको लौटा दी है। तय यह हुआ था कि आपके पूना जाते समय रास्तेमें पुस्तक आपको दे दी जायेगी। पता नहीं कैसे, यह हो नहीं सका। आशा है, अब पुस्तक मिल गई होगी। आपका पत्र प्राप्त होते ही भेज दी गई थी।

जहाँतक उस यंत्रका सम्बन्ध है, वह मैंने आजमाइशके लिए श्री किशोरलाल मशरूवालाको दिया था। वे दमेके मरीज हैं और उनसे मैंने आपका परिचय भी कराया था। वे उसे आजमाते रहे हैं और मैंने उनसे आजमाइशका लिखित विवरण

१. बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें औद्योगिक रसायनके प्राध्यापक।

देनेको कहा है। मिलते ही मैं आपको भेज दूंगा। जहाँतक मेरी रायका-सम्बन्ध है, मैं समझता हूँ कि यह लोगोंकी श्वास-क्षमता मापनेका बहुत सरल-सा उपकरण है और इसलिए यह स्कूलों और अस्पतालोंमें, जहाँ बच्चों या रोगियोंके फेफड़ोंकी क्षमताकी जाँचकी जरूरत पड़ती है, इसका उपयोग हो सकता है।

साथमें श्रीयुत किशोरलालका विवरण है।

हृदयसे आपका,

डॉ० एम० बी० गोडबोले
पोस्ट बॉक्स १९, पूना

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

२४३. पत्र: एल० के० किर्लोस्करको

१६ जून, १९३५

प्रिय मित्र,

मैं आपकी मशीनके बारेमें लिखे अपने पत्रके[1] उत्तरकी आशा कर रहा था। जैसाकि मैं पहले ही कह चुका हूँ, मैं आपसे एक मशीन खरीदना चाहूँगा, ताकि लम्बे अर्सेतक उसकी आजमाइश कर सकूं। जो काम मैं सोच रहा हूँ वह काम अगर यह मशीन करती है तो सम्भव है कि आपसमें तय की गई कीमतपर मैं इसे बड़ी तादादमें खरीदूं। और जो चाहते हैं वह कीमत अगर आपको नहीं मिल पाती तो जिस बड़े सुझावपर हमने आरम्भिक चर्चा की थी, उसपर कैसे अमल किया जा सकता है, यह तय करने के लिए मैं आपके साथ उस सुझावपर ज्यादा विस्तारसे चर्चा करना चाहूँगा।

मेरे नाम लिखा सर डैनियल हैमिल्टनका[2] पत्र आपके देखने के लिए भेज रहा हूँ। अगर आप समझते हों कि जिस उद्देश्यसे वे चाहते हैं उस उद्देश्यके लिए आप उन्हें अपने चरखेका चित्र दे सकते हैं तो आप उसे मुझको या उनके पत्रमें दिये गये पतेपर सीधे उनको भेज सकते हैं।

हृदयसे आपका,

एल० के० किर्लोस्कर
किर्लोस्करवाड़ी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१. देखिए खण्ड ६०, पृ० ३२०।
२. गोसावा जमींदारी, सुन्दरवनके।

२४४. पत्र : हीरालाल शर्माको

१६ जून, १९३५

चि० शर्मा,

तुम्हारा खत मिला। पंदरहा दिनकी मर्यादा यह कुछ चीज नही है। बडोको भी पंदरहा दिनमें पासपोर्ट नही मिलता। अबी ही एक डा०[को] पासपोर्ट मिला। वह अठारह महिनेके बाद।

तुम्हारा यहाँ आना यह अलग बात है। तुम्हारे आनेके बाद द्रौपदी और बच्चो का क्या? क्या वह भाईयोंके साथ रहेगी? सब हाल मुझको बराबर दे दो। यहाँ आनेका निश्चय हो जायगा तो भी मैं कमरा नही दे रखूंगा। तुम्हारे आनेके बाद अलग कमरेका देखा जायगा। लेकिन वह भी पासपोर्टके बारेमें निर्णय होनेके बाद। अगर पासपोर्ट मिल भी जाय तो क्या अलग कमरा लेवें? आनेके पहिले तुम्हारे कलेक्टरको लिखना होगा या उनके पास जाना होगा और कहना होगा कि कुछ तहेकिकात करना है तो वर्धा खत भेजे। उसको पूछा भी जाय कि उत्तरकी कब आशा की जाय?

मांके बारेमें लिखा है वह मैं नही समझा हूँ। रामगोपालने शिकायत तो काफी भेजी है लेकिन उसमें कुछ है नही। ऐसा ही उत्तर भेज दिया गया है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १६९ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे

२४५. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
१७ जून, १९३५

चि० मेरी,

तुम्हारा पोस्टकार्ड पाकर बड़ी खुशी हुई। ठक्करे बापाने एक पत्र भेजा था। मैं चाहता हूँ कि कुछ दिनोंतक मुझे रोज समाचार प्राप्त होता रहे।

यहाँ सब कुशल है।

सबका प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०४५) से। सी० डब्ल्यू० ३३७५ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

२४६. पत्र : नारायणदास रतनमल मलकानीको

१७ जून, १९३५

प्रिय मलकानी,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं बिहार-रिपोर्टका अध्ययन करूँगा और तब शायद फिर कुँओंके सम्बन्धमें पत्र लिखूँ।[1] उम्मीद है कि 'हरिजन' के अगले अंकमें पानी-फण्डके बारेमें भी लिखूँ।

राव बहादुर एम० सी० राजाने जो पत्र तुम्हें लिखा है, उसकी एक नकल उन्होंने मुझे भी भेजी है। उन्होंने गणेशनकी बड़ी तारीफ की है। मेरे खयालसे तुमने उस पत्रका उत्तर दे दिया होगा।

लगता है कि गणेशनने सभीको निराश किया है। ठक्कर बापा तो उसपर जरा भी विश्वास नहीं करते। और अब शास्त्रीका भी भ्रम टूट गया है। और, मैं समझता हूँ, इसी तरह संघकी मद्रास-शाखाके अध्यक्ष और मन्त्रीका भी।

सस्नेह,

प्रो० मलकानी
दिल्ली

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६०) से।

१. देखिए "हरिजनोंके लिए कुएँ", २२-६-१९३५।

२४७. पत्र : वसुमती पण्डितको

१७ जून, १९३५

चि० वसुमती,

यदि शिवाभाईके[1] पास सचमुच तेरे लिए काम हो और वे चाहते हों कि तू उनके पास रहे, तो तूने तो वहाँ एक वर्ष बितानेकी प्रतिज्ञा की ही है। अतः शान्त-चित्तसे आनन्दपूर्वक अपनी प्रतिज्ञाका पालन कर और जो काम सौंपा जाये, उसे सावधानीसे कर। कब्ज दूर करने की कोशिश करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

लक्ष्मी और मनु आ गये हैं।

श्री वसुमतीबहन,
वल्लभ विद्यालय,
बोचासण

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४०१) से। सी० डब्ल्यू० ६४७ से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

२४८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१७ जून, १९३५

भाईश्री वल्लभभाई,

टोटका तो टोटका ही है। लग गया तो तीर, वर्ना तुक्का तो है ही। अब तो यदि सिर्फ रसदार फलोंपर कुछ दिन बिताओ तो फिर न दवा चाहिए, न कुछ और। दस्त न आये तो एनीमा लेना ही चाहिए। कमोड काममें न लेना तो तुम्हारी ज्यादती ही कही जायेगी। इससे बीमार और सेवा करनेवाले दोनोंको सहूलियत होती है। कमोड इस्तेमाल करना तो शुरू कर ही दो।

एन्ड्रयूज कल यहाँ आ रहे हैं। एक-दो दिन रहकर चले जायेंगे।

आजकल यहाँ तरह-तरहके मनुष्योंकी अच्छी भीड़ है। कुमारप्पाके भाई भारतन आये हैं।

१. शिवाभाई गोकुलभाई पटेल, बोचासण वल्लभ विद्यालयके आचार्य।

वसुमती वोचासण छोड़नेकी तैयारीमें थी। उससे शिवाभाईने ठहर जानेका आग्रह किया है। मैंने लिखा है कि यदि सचमुच ही उसकी जरूरत हो, तो खुशीसे वह एक वर्षके लिए वहीं रहे। इस बारेमें तुम्हें कुछ सुझाना हो तो मणिसे[1] कह देना। फिलहाल मैं तुम्हारे पत्रकी आशा नहीं करता। बीमारी तुरन्त मिटनी ही-चाहिए।

अच्छे होनेपर यहाँ आ जाना। राजेन्द्रबाबू तो आयेंगे ही। जमनालाल भी जुलाईमें पहुँच जायेंगे। उस समय ठंडक भी काफी होगी। अब वैसी सख्त गरमी तो नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२: सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७२-७३

२४९. पत्र: नारायणदास रतनमल मलकानीको

वर्धा
१८ जून, १९३५

प्रिय मलकानी,

रविवारको जो पत्र लिखवाया था, वह अभी भेजा नहीं गया है। इसलिए, इस पत्रको भी उसीके साथ भेज रहा हूँ।

श्रीमती नेहरू द्वारा तुम्हें लिखा गया पत्र, जो तुम मुझे भेजनेवाले थे और जिसे वापस भी चाहते थे, खोजनेपर मुझे कहीं नहीं मिला। इसलिए उस पत्रकी तलाश तुम अपने ही कागजोंमें करो। उसकी मुझे आवश्यकता नहीं पड़ेगी। उसमें लिखी बातोंका मैं अन्दाज लगा लूँगा और आशा है 'हरिजन'के किसी अंकमें महिला-सम्मेलनके बारेमें कुछ लिख भी सकूँगा।

तुम देखोगे कि आगामी अंकसे मैं कूप-निधिके बारेमें लगभग हर सप्ताह कुछ-न-कुछ लिख रहा हूँ। मैं पंजाब-रिपोर्टके बारेमें पहले ही लिख चुका हूँ। इस समय बिहार-रिपोर्ट मेरी फाइलमें है और मेरा खयाल है, गुजरात-रिपोर्ट भी। इनमें से कोई एक आगामी अंकमें जायेगी।

मैं सेठ जुगलकिशोरको भी पत्र लिख चुका हूँ। मैंने उन्हें लिखा है कि उन्हें अपने नामके उल्लेखका बुरा नहीं मानना चाहिए और यह कि उसकी शुरुआत ठक्कर बापाने प्रशंसाके उत्साहमें सर्वथा निश्छल भावसे कर दी थी। मैंने उनसे यह भी कहा है कि अगर उन्हें अब भी कूप-निधिके साथ अपना नाम संयुक्त करने में कोई बड़ी आपत्ति है, तो उसे बाजाप्ता हटा दिया जायेगा। इसलिए, अगर इस

१. मणिबहन पटेल।

बारेमें तुमने उन्हें कुछ नहीं लिखा है तो जबतक मैं तुम्हें कुछ न लिखूं, तुम्हें उस सम्बन्धमें किसी प्रकारकी चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

डेविड-छात्रवृत्ति कोषके सम्बन्धमें तुम्हें डेविड नामको बनाये रखने में एतराज क्यों है? अगर कोई उस नामसे परहेज करना चाहता है तो वह उसे हरिजन छात्र-वृत्ति कोष कहे। "नाममें क्या धरा है? गुलाबको कोई भी नाम दे दो, वह फिर भी महकेगा।"

बजट बनाने के लिए दी गई टिप्पणीका मैंने अभी अध्ययन नहीं किया है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६१)से।

२५०. पत्र : सी० जी० जगन्नाथदासको

१८ जून, १९३५

प्रिय जगन्नाथदास,

आपने नग्नतापर विस्तारसे मुझे पत्र लिखकर ठीक ही किया है।[1] जहाँतक सिद्धान्तका प्रश्न है, मुझे आपसे सहमति जतानेमें कोई संकोच नहीं है। पर सिद्धान्त हमेशा ही व्यावहारिकतामें परिणत करने योग्य नहीं होते। तथ्यपूर्ण गणितशास्त्र आदिमें भी, जैसे ज्यामितिमें, सिद्धान्तोंपर पूरी तरह व्यवहार नहीं हो पाता। ज्यामितिशास्त्रका काल्पनिक समकोण कोई भवन नहीं बना सकता, लेकिन राज तथा बढ़ई लगभग सही समकोणकी सहायतासे अनेक भव्य भवनोंका निर्माण करते हैं। पश्चिमी जगत् और भारत, दोनोंमें व्यवहारतः नग्नताको प्रतिष्ठा नहीं है। मेरी समझमें यह मानकर चलना कि सभी पुरुष तथा स्त्रियाँ मनसे पवित्र होते हैं, एक बहुत बड़ी गलती होगी। इसीलिए मैं इसे खतरनाक मानता हूँ।

हृदयसे आपका,
बापू

श्रीयुत सी० जी० जगन्नाथदास
४५९, मिन्ट स्ट्रीट
पार्क टाउन, मद्रास

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०९१)से।

१. सी० जी० जगन्नाथदासने १५ जूनके अपने पत्रमें नग्नताको अपनानेके सम्बन्धमें अपनी दलील दी थी। तर्क करते हुए उन्होंने कहा था कि वस्त्र-धारण करना अप्राकृतिक तथा अस्वास्थ्यकर है और इस प्रथाको त्याग देना चाहिए, जिससे प्रकाश और वायु-सेवनके लिए त्वचा सारी बाधाओंसे मुक्त हो जाये।

२५१. पत्र : शार्दूलसिंह कवीश्वरको

१८ जून, १९३५

प्रिय कवीश्वर,

अपवाद केवल डॉ० खानसाहबको ही रहने दिया जाये। डॉ० गोपीचन्दको औपचारिक रूपसे किसी संस्थासे जोड़े बिना आप उनसे, बेशक, जितनी सहायता ले सकते हैं, लें। आप यकीन मानिए कि अगर उन्हें दोनोंसे औपचारिक रूपसे सम्बद्ध कर दिया गया तो किसी-न-किसीको नुकसानमें रहना ही पड़ेगा। यद्यपि वृक्षकी शाखाएँ मूलतः एक ही हैं, लेकिन वृक्षपर उनका अलग-अलग अस्तित्व आवश्यक और उचित है और वे अपनी-अपनी जगहोंपर क़ायम रहकर और अपने-अपने कर्त्तव्योंका पालन करते हुए मूलकी पूरी सेवा करती हैं। मैं जानता हूँ कि हमारे पास सच्चे सेवकोंकी भारी कमी है और यह कमी तबतक बनी रहेगी जबतक कि हम उनपर एकाधिक जिम्मेदारियाँ डालकर अपने मनमें यह भ्रम पालते रहेंगे कि सभी जिम्मेदारियोंका ठीक निर्वाह हो रहा है। अगर आप मेरी दलीलसे सहमत हैं तो आप डॉ० गोपीचन्दसे जरूरी मदद पाकर ही सन्तुष्ट रहेंगे और उन्हें संसदीय बोर्डसे औपचारिक तौरपर नहीं जोड़ेंगे। औपचारिक सम्बन्धके न होनेसे विवेकशील व्यक्तिको ऐसी स्वतन्त्रता प्राप्त रहती है जो वैसा सम्बन्ध होनेसे नहीं मिल सकती। आप मानते हैं न?

हृदयसे आपका,

सरदार शार्दूलसिंह कवीश्वर
चैम्बरलेन रोड
लाहौर

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

२५२. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

१८ जून, १९३५

चि० अम्बुजम्माल,

तुम्हारी इस परीक्षाकी घड़ीमें मेरे सम्पूर्ण हृदयका स्नेह और संवेदना तुम्हारे साथ है। ईश्वर दयालु है। वही तुम्हें शक्ति देगा। यह अच्छा हुआ कि तुमने माता-पिताको सूचना नहीं दी और ऑपरेशन तत्काल करवा लेनेका साहस दिखाया। अगर डॉक्टर इजाजत दे तो कीचीको भी कोडाइ क्यों नहीं ले जाती?

तुम्हें बंगलोरके पतेपर एक पत्र भेजा था। अगर अबतक न मिला हो तो अपने समयसे मिल ही जायेगा।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य; नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२५३. पंच-निर्णय

१८ जून, १९३५

अखिल भारतीय चरखा संघ, बम्बईकी दूकानके कार्यकर्त्ताओंकी, वहाँके एजेंटके विरुद्ध शिकायतके सम्बन्धमें, दोनों पक्षोंकी सहमतिसे मैं इस दुःखद प्रकरणमें पड़ा हूँ।

दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत किये गये कागज-पत्र मैं पढ़ गया हूँ।

श्री गणात्राको दिया गया नोटिस दोषयुक्त था। नोटिसके बदले पूरा वेतन देकर दोष दूर किया जा सकता है।

नोटिस देनेके बाद कार्यकर्त्ताओंने जो व्यवहार किया और जो लेख और पत्रक लिखे वे इतने अशिष्ट थे, जो खादी-सेवकको शोभा नहीं देते। ऐसे व्यवहारसे कोई संस्था चल नहीं सकती। अतः उन सेवकोंको अलग कर देनेका एजेंटको अधिकार था।

किन्तु यदि ये कार्यकर्त्ता संलग्न परिशिष्टमें बताये अनुसार लिखकर खेद प्रकट करें, तो एजेंटको चाहिए कि श्री गणात्रा-सहित सबको बिना कुछ भी वेतन काटे वापस ले लिया जाये।

यह प्रस्ताव, कार्यकर्त्ताओंके प्रतिनिधि श्री रतुभाई देसाईके हाथमें पहुँचनेके ७२ घंटेके भीतर यदि ये कार्यकर्त्ता खेदप्रकाशका पत्र प्रस्तुत न करें, तो वे नौकरीपर नहीं लिये जा सकेंगे और उन्हें दिया गया नोटिस बहाल रहेगा।

एजेंटकी राय है कि खादी-भण्डारमें जितने कार्यकर्त्ता हैं, उतने कार्यकर्त्ताओंका भार वहन करने की शक्ति भण्डारमें नहीं है। मेरे उपर्युक्त निर्णयसे भण्डारकी व्यवस्थामें रद्दोबदल करने, सेवकोंकी संख्यामें कमी करने अथवा वर्तमान वेतनमें कटौती करने की बातमें कोई रुकावट नहीं आती। सभी खादी-भण्डारोंकी वर्तमान नीतिके सम्बन्धमें कितने ही सुझाव देनेका मेरा खुदका विचार है, जिन्हें यहाँ बतानेकी आवश्यकता है।

मैं आशा करता हूँ कि कार्यकर्त्ता खुशी-खुशी खेदप्रकाश-पत्र पर हस्ताक्षर करेंगे और भण्डारमें अपना स्थान ग्रहण करेंगे।

यदि बर्खास्त हुए सब कार्यकर्त्ता उपर्युक्त निर्णय स्वीकार न करें, तो जो कार्यकर्त्ता इसे स्वीकार करें, एजेंट उन्हींको कामपर वापस ले लें।

मो० क० गांधी

परिशिष्ट

श्री गणात्राको बर्खास्तगीका नोटिस मिलने के बाद उन्होंने और हमने जिस तरहका व्यवहार किया, वह खादी-सेवकको शोभा नहीं देता। हमने जो पत्र लिखे, उनमें अशिष्टता थी। अपने इस व्यवहारके लिए हमें खेद है। आगे कभी ऐसा व्यवहार न करें, इसके लिए हम प्रयत्नशील रहेंगे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एल० ९७८९) से।

२५४. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

१८ जून, १९३५

भाई विट्ठलदास,

यह रहा मेरा निर्णय[1]। इसे तुम्हीं रतुभाईको बुलाकर दिखाना और इसकी नकल उन्हें दे देना। मुझे लगता है, यही ठीक होगा। उन भाइयोंसे खूब मिठाससे पेश आना। समूची नीतिका प्रश्न मैं तुरन्त हाथमें लूँगा। इस सम्बन्धमें अपने विचार व्यवस्थित करके टाँक लेना। यदि तुम्हारा दिमाग और शरीर इस मामलेमें न चले तो मुझे बताना। मैं तो इसे तुरन्त हाथमें लेना चाहता हूँ।

इन भाइयोंको कामपर लगानेके बाद तुम जब चाहो आ सकते हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७९०) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२५५. पत्र : रतुभाई देसाईको

१८ जून, १९३५

प्रिय रतुभाई,

मैंने निर्णयका मसविदा[1] तैयार कर लिया। उसकी नकल भाई विट्ठलदास तुम्हें देंगे। समय बचानेके खयालसे तुम्ही वहाँ जाकर वह नकल ले आना।

निर्णयका तात्पर्य यह है कि गणात्रा-सहित तुम सब लोग यदि क्षमाप्रार्थना नही करते तो तुम्हारा तुरन्त विनाश हो जायेगा। मैंने इस आशासे उक्त निर्णय दिया है कि तुम सब लोग एक कुटुम्बकी तरह रहोगे और भण्डारकी मार्फत ऐसी निष्ठासे खादीकी सेवा करोगे जैसी तुमने पहले नही की। भण्डारकी व्यवस्थाके सम्बन्धमें तुम्हें जो कहना हो सो मुझे तुरन्त लिख भेजना। इस मामलेको मैं तत्काल हाथमें ले लूंगा। भण्डार किसी व्यक्ति विशेषका नही है। यह तो मेरे और तुम्हारे लिए सेवाका साधन है। उसकी व्यवस्थाके सम्बन्धमें सुझाव देनेका तुम्हें भी उतना ही अधिकार है, जितना मुझे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

२५६. पत्र : सोहनलाल ओबेरायको

१८ जून, १९३५

भाई सोहनलाल,

तुमने ठीक ही लिखा है। जैसे तुमारी बहनके हाल हुए है ऐसे बहूत लड़कीयोके होंगे। मैं कुछ लिखनेकी[2] कोशीश करूंगा। मेरी आशा है कि तुमारा प्रयत्न सफल होगा।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

क्या तुमारे पास अच्छी पुनियां नही रहती हैं? अच्छी रुइ नही रहती है?

श्री सोहनलाल ओबरोई
ए० आई० एस० ए० डिपो
आदमपुर, जि० जालन्धर

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८६३) से।

१. देखिए "पंच-निर्णय", १८-६-१९३५।
२. देखिए "टिप्पणियाँ", २२-६-१९३५ के अन्तर्गत 'असहाय विधवाएँ'।

२५७. तार: गृह-सचिवको

१९ जून, १९३५

खानसाहबसे मिलनेकी इजाजत देनेके लिए मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूँ। मुझे यह कहते हुए अफसोस हो रहा है कि जबतक अंग्रेजीमें बातचीत करने की शर्त नही हटाई जाती, मैं इस इजाजतका इस्तेमाल नही करूँगा। मैं वादा करता हूँ कि घरेलू बातों और तन्दुरुस्तीके अलावा किसी विषयपर मैं कोई बात नहीं करूँगा। सरदारने मुझे बताया है कि जब उन्हें खानसाहबसे मिलनेकी इजाजत दी गई थी, तब उन्होंने हिन्दुस्तानी जबानमें बातचीत की थी। मैं प्रार्थना करता हूँ कि अंग्रेजीमें बातचीत करने की शर्तको हटा लिया जाये।[1]

गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई

२५८. पत्र: रा० र० दिवाकरको

१९ जून, १९३५

प्रिय दिवाकर,

इस मुलाकातसे मुझे कोई हैरानी नही हुई। इस समय जो परिस्थिति है उसमें मुझे उससे कुछ बेहतर होनेकी उम्मीद भी नहीं है। किसान लोगोंके कमजोर पड़ जानेसे मुझे दुःख नही होता, क्योंकि यह एक आम बात हो गई है। नेताओंने भी कोई बहुत अच्छा काम नहीं किया है। इसमें गलती किसीकी भी नही है। नेताओं और किसानोंसे जितना अच्छा काम बन पड़ा, उन्होंने किया। यह बहुत कीमती सबक है। अगर हममें से कुछ लोग भी चारो ओर फैली कमजोरी और अँधेरेके बावजूद सत्य और अहिंसामें अपने विश्वासको अडिग बनाये रखें, तो सब ठीक हो जायेगा।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई

१. गृह-सचिवने इसे मान लिया था।

२५९. पत्र : अमृतकौरको

दुबारा नहीं पढ़ा

वर्धा
१९ जून, १९३५

प्रिय अमृत,

कोई व्यक्ति अगर अपनी सच्ची असहायावस्थाको निस्संकोच भावसे स्वीकार कर ले तो यह बात उसे कायर नहीं बनाती; बल्कि हो सकता है यह उसके साहसी बनने की शुरुआत हो। मैं तुम्हारी बातको सही मानकर यह लिखवा रहा हूँ। बायें हाथसे लिखना मुझे अच्छा लगता है; लेकिन उस हाथसे मैं उतनी आसानी और तेजीके साथ नही लिख पाता जितना दायें हाथसे।

चार्लीने ठीक वक्तपर तुम्हारा पत्र मुझे दे दिया है। जिस प्रकारसे तुम चाहती हो मैं अपने हस्ताक्षर करके फोटोकी प्रतियाँ लौटा रहा हूँ।

मुझे कृष्णलाल गोस्वामीकी याद नही है। हो सकता है, जब मैं बाहर था तब वे आश्रममें रहे हों। चार्लीका कहना है कि आश्रममें उनसे मिलने की साफ-सी याद उन्हें है। माधवको उनकी बिलकुल याद नहीं है। चरखेके बारेमें तुमसे उन्होने जो-कुछ भी कहा है, वह सही दिखाई देता है और इससे यह जान पड़ता है कि उन्हें कताई-कलाके सम्बन्धमें कुछ ज्ञान है। पूनियाँ मैं चार्लीके साथ भेज रहा हूँ। मुझे बताना कि तुम्हें वे कैसी लगी। तुम्हें तकुए तो वही बनवा लेनें चाहिए। अगर तुम्हें बढ़िया फौलाद न मिले तो वे साधारण लोहेके भी बन सकते हैं। अगर ठीक तरहसे बनाया जाये, तो इससे कोई खास फर्क नही पड़ता। बनावट ठीक हो तो कमजोर तकुएपर भी उतनी ही अच्छी कताई हो जाती है। लेकिन नौसिखुएके हाथोमें घटिया लोहेका बना तकुआ फौलादसे बने तकुएकी बनिस्बत जल्दी खराब हो सकता है।

मैं तुम्हें पत्र लिखनेके ४५० कागज और लगभग इतने ही लिफाफे भी नौ बण्डलोंमें बाँधकर भेज रहा हूँ। मैं पचास-पचासकी सख्यामें तह करके हाथसे बने किसी सादे कागजकी खूबसूरत जिल्द बँधवाकर उन्हें तैयार करवाने ही जा रहा था कि तुम्हारा पत्र आ गया। तुमने कहा था कि मैं बिना जिल्द बँधवाये ही कागज भेजूं क्योकि तुम्हें खिड़कियोको सजाने के लिए उनकी आवश्यकता है। तुमने कीमतके बारेमें भी पूछा है। जो बण्डल चार्लीके साथ तुम्हारे पास भेज रहा हूँ वह, और एक वह जो इससे पहले तुम्हें भेजा गया था, जिस कागजसे बने हैं उसके मैंने १२ रुपये दिये थे। थोडे-से सफे जो बच गये थे, उनका मैंने इस्तेमाल किया है। अब भी १५० पन्ने मेरे पास बाकी हैं। इन्हें बनाने में जो श्रम पड़ता है, वह

नहीं गिना है और लिफाफे बनाने के लिए जो लेई वगैरा तैयार की गई थी, उसकी कीमत भी नहीं लगाई है। लेई वगैरा तो बहुत सस्तेमें बन जाती है। मेहनत कितने की बैठी, इसका अन्दाज आज तो नहीं लगा सकता। दो या तीन लोगोंने कुछ दिन इस कामको किया था। मैंने उन्हें इस कामको करने के समयका हिसाब रखने को नहीं कहा था। अब मैंने तुम्हें कागजों और लिफाफोंकी कीमत खुद ही तय करने योग्य काफी बातें लिख दी हैं। तुम्हें चाहिए कि तुम उन्हें कमसे-कम १२ रुपयेमें बेचो। लेकिन तुम जैसा चाहो, कर सकती हो। पूनियोंके बारेमें मैं कुछ भी नहीं कह सकता, क्योंकि मुझे सिर्फ रुईके पैसे ही देने पड़ते हैं। रुई खादी-भण्डारसे खरीदी गई थी। लेकिन जो तैयार माल तुम्हें भेजा गया है, उसका मैंने कोई हिसाब नहीं रखा। कच्चे मालकी कीमत डेढ़ रुपयेसे अधिक नहीं हो सकती।

जहाँतक क्वेटा सहायता-निधिकी बात है, मैंने कहा था कि इस समय तुम जो-कुछ भी एकत्र कर सको, वह अपने पास रखो। बादमें मैं शायद इस सम्बन्धमें तुम्हें कोई निर्देश दूँ। सहायताका यह काम कुछ समयतक चलेगा। निश्चय ही, जबतक इस दिशामें तुम्हारा अपना कोई विचार नहीं बनता, मेरी सलाहका तभीतक महत्त्व है। जैसे ही तुम यह समझ जाओगी कि तुम्हें अनुदान कहाँ खर्च करना है, तुम निस्संकोच भावसे उसे वहाँ खर्च करोगी।

एक बातके बारेमें मैं चन्दा करने के लिए अवश्य कहूँगा, और वह है हरिजन कूप-निधि। 'हरिजन' के इसी अंकमें मैंने इसकी चर्चा की है।[1] उसे देखना।

तसवीरोंकी हदतक तुम जिस तरहसे चाहो उनका उपयोग कर सकती हो। वे तुम्हारी सम्पत्ति हैं। मैं समझता हूँ कि तुमने अपने उन दो पत्रोंमें, जिनका उत्तर मैंने नहीं दिया था, जो भी बातें पूछी थीं, उनका इस पत्रमें जवाब मिल गया है। दायें हाथमें कोई खास तकलीफ नहीं है। यथोचित विश्राम देनेसे वह बिलकुल ठीक हो जायेगा।

तुम दोनोंको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७१६)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६८७२ से भी

१. देखिए "हरिजनोंके लिए कुँए", २२-६-१९३५।

२६०. एक पत्र

१९ जून, १९३५

प्रिय बहन;

मैं जिम्मेदारीके साथ नहीं कह सकता कि उद्धरण सही है। लेकिन मेरी कठिनाई एक मूलगामी कठिनाई है। मैं किस जीससका विश्वास करूँ? आपकी कल्पनाके जीससका या अपनी कल्पनाके जीससका तुम कहोगी कि "बाइबिलके जीससका।" तब प्रश्न उठता है, "किसकी व्याख्याके अनुसार?" जिस मार्गपर ईश्वर मुझे ले जाता है, उस मार्गपर चलकर मैं अपनी कठिनाई सुलझा लेता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई

२६१. पत्र: लीलावती आसरको

१९ जून, १९३५

चि० लीलावती,

तेरे पत्र मिले हैं। काम चल रहा है।[1] गुजरातीकी जाँच तो मगनभाई कर रहे हैं। अंग्रेजी किसी औरको सौंपनी पड़ेगी। तेरा काम मैं पक्का कर दूंगा।

तेरे पास अंग्रेजी और गुजरातीकी कौन-कौन-सी पुस्तकें हैं, लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५७६) से। सी० डब्ल्यू० ६५४८ से भी, सौजन्य: लीलावती आसर

१. देखिए "पत्र: लीलावती आसरको", ९-६-१९३५।

२६२. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

वर्धा
२० जून, १९३५

भाईश्री खम्भाता,

तुम्हारा पत्र और दो चैक मिले। तुम्हारी इच्छानुसार करूँगा। तुमने अस्पतालमें जो कष्ट भोगे, वे आश्चर्यमें डालते हैं। जो-जो तुमने देखा, उसे अंग्रेजीमें लिख डालो और दीनबन्धु एन्ड्रयूजको दिखाओ। इसके बाद उसे उसके प्रबन्धकको भेज देना। यदि वह इसपर ध्यान नहीं देगा तो हम अगला कदम उठायेंगे। यह अस्पताल किसका है, इसका कर्त्ताधर्ता कौन है, यह सब पूछकर मुझे नाम और पता लिख भेजो। तुमने तो जैसे-तैसे निर्वाह कर लिया, पर गरीब लोग क्या करेंगे? तुम्हारे तो सीता-जैसी सती पत्नी है, इसलिए तुम्हारी उत्तम परिचर्या होती रही। किन्तु जिसके कोई नहीं है और जिसकी ईश्वर पर आस्था नहीं है, उसका क्या हाल होगा? इसलिए अस्पतालमें तुम्हें जो अनुभव हुए हैं, उनकी सूचना उचित स्थानपर तो भेजनी ही चाहिए। आशा है, तुम्हें रोज-रोज अधिकाधिक आराम होता जा रहा होगा।

तुम सबको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५५८) से। सी० डब्ल्यू० ५०३३ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

२६३. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

वर्धा
२० जून, १९३५

चि० नरहरि,

पण्डितजी चाहें तो संगीतकी कक्षा खोलें। खर्च तो ठीक लगता है। विवरण-पत्रिका के लिए पाठ्यक्रमका होना आवश्यक है। अमुक अवधिमें तथा प्रति वर्ष विद्यार्थी कितना सीखेगा, यह विस्तारपूर्वक बारीकीसे बताया जाना चाहिए।

यदि वनमालाका बुखार उतर गया हो, तो भी खुराकमें मैंने जो बताया है, यदि वही रखो तो उससे लाभ ही होगा। तुमने अपने लिए मर्यादा बाँध ली, यह

तो अच्छा ही किया। यदि बाहर इस आग्रहकी रक्षा न की जा सके, तो कोई हर्ज नहीं। वनमालाको नित्य घूमने जाना चाहिए और स्नान तो लेना ही चाहिए।

नये [बाल] मन्दिरमें कितने छात्र-छात्राएँ भरती हुई हैं? शिक्षक कौन-कौन हैं? हर महीने कितना खर्च आयेगा?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

क्या जयाबहन अभी वहाँ है? वे क्या पढ़ाती हैं?

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०८०) से।

२६४. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
२१ जून, १९३५

चि० मेरी,

तुमने मुझे शुभ समाचार दिया है। मैं आशा करता हूँ कि कल और अच्छा समाचार मिलेगा। तुम किस जगह ठहरी हो? आरामसे तो हो?

आश्चर्य है कि मार्गरेटको मेरा कोई पत्र नहीं मिला। मैंने अपनी फाइल देखी। उसमें उसका पत्र नहीं मिला। जान पड़ता है कि वह फाड़ दिया गया है। जबतक उत्तर नहीं दिया जाता, मैं पत्रोंको फाड़ता नहीं। उसे मेरा प्यार देना और कहना कि मुझे फिर पत्र लिखे, मैं उसका तुरन्त उत्तर दूंगा। यहाँ सब कुशल है।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

मीराने मुझे तुम्हारा पत्र दिखाया है। के० के जुलाईमें किसी भी दिन आनेकी सम्भावना है। शायद वह एक माहतक ठहरे। अब मीराके लिए पत्र लिखना आवश्यक नहीं रहा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०४६) से। सी० डब्ल्यू० ३३७६ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

२६५. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

२१ जून, १९३५

चि० प्रेमा,

तेरे सुन्दर पत्रका उत्तर तुरन्त नहीं दिया जा सकता था। और जब दायाँ हाथ आराम चाहे, तब काम पूरा हो ही नहीं सकता।

मेरी बातें ऐसी नही होतीं, जिन्हें लिखकर पूछूँ। ऐसी बातें तो मैंने पूछी ही हैं। तत्काल पूछने लायक बातें उसी समय खत्म हो जाती हैं।

तुझे बोरसद ले जानेमें मेरा उद्देश्य यह था कि भविष्यमें ऐसा काम करने में तुझे सरल मालूम हो और तुझे यह भी बताना था कि महामारीके निवारणमें मेरा ही हाथ था।

भूकम्पका पापके साथ क्या सम्बन्ध है, यह तो मैं 'हरिजन' में लिख चुका हूँ।[1] उसे पढ़ लेना। बिहारमें किसीको क्रोध नहीं आया था; इतना ही नहीं बल्कि सबने समझ लिया था कि यह पापका फल था। ऐक्यके सिद्धान्तसे यह सब फलित होता ही है।

सर्पादिके विषयमे भी मैंने 'हरिजन' में[2] लिखा है। उसे पढ़ लेना। आजकल लिखे जानेवाले 'हरिजन' के लेख न पढ़ती हो, तो मैं उन्हें ध्यानपूर्वक पढ़ जानेका सुझाव दूंगा। उसकी प्रतियाँ तेरे पास आती तो हैं न?

जो पति अत्यन्त दुःख पा रहा हो, जिसे सेवासे भी राहत नहीं मिल सकती, उसकी मृत्यु साधनेमें मुझे पाप नजर नहीं आता।[3] परन्तु पतिको होश हो तो उससे पूछ लेना चाहिए। वह अति दुःख पाते हुए भी जीना चाहे तो उसे जीने देना चाहिए।

मालिक ट्रस्टी बनें, इसका अर्थ यह है कि अपनी कमाईका अमुक भाग रखकर बाकी सब गरीबों, अर्थात् राज्य अथवा ऐसी ही किसी लोकोपयोगी संस्थाको दे दें।

यदि सब लोग अपनी पूरी कमाई राज्यको दे दें, तो किसीको उद्यम करने की प्रेरणा नही मिलेगी और मनुष्य केवल जड़ यन्त्र बन जायेगा।

धनिक लोगोके साथ मेरा सम्बन्ध रहने ही वाला है। उन्हें मैं दुष्ट नहीं मानता। और गरीबोंको फरिश्ते नहीं मानता। पूर्व और पश्चिममें बहुत-से ऐसे धनिक मौजूद हैं, जो परोपकारके लिए कमाते हैं। वे पूजाके योग्य हैं। मैं ऐसे बहुत-से गरीबोंको जानता हूँ जिनका संग त्याज्य है। मेरी कल्पनाके स्वराज्यमें शेर और

१. देखिए "प्रार्थनाका-रहस्य", १५-६-१९३५।

२. देखिए "जीव-मात्र एक हैं", २२-६-१९३५।

३. समाचार प्रकाशित हुआ था कि किसी अभिनेत्रीने गोली मारकर कैंसरसे ग्रस्त अपने पतिका जीवन समाप्त कर दिया था।

बकरी साथ-साथ एक ही सरोवरमें पानी पियेंगे। यह निरी कल्पना ही रहे, तो भी क्या? मुझे क्या चाहिए, यदि यह भी मैं न जानूँ तो मै प्रयत्न काहेके लिए करूँगा?

यह तो सच है कि मै मनुष्योको अच्छी तरह नही परख पाता, परन्तु जो दूसरे को परखनेका दावा करते हैं, वे भी कहाँ परख पाते है? इसलिए अपने अज्ञानके लिए मुझे खेद नही है। मनुष्योको नहीं परख पाता, इसीलिए उनपर विश्वास रखता हूँ।

यदि तुझसे कोई मेरे विषयमें पूछे तो तुझे उत्तर देना ही चाहिए, यह जरूरी नही है। तू ऐसा क्यो नही कहती कि 'मुझे जवाब देना नही आता; उनका काम और विचार मुझे पसन्द है। जो हमें पसन्द हो, उसके पसन्द होनेके कारण हमेशा थोड़े ही बताये जा सकते है? इसलिए प्रश्न तो आप उनसे ही पूछिए।' यदि इस प्रकारका उत्तर दे, तो तू बहुत-सी झंझटोसे बच जाये। मुझसे ली हुई होने पर भी जिस वस्तुको तू पचा सकी हो वह तो तू जरूर दूसरोंको दे सकती है। परन्तु जो वस्तु हमने पचा ली, वह दूसरेकी नही, हमारी ही हो गई। जो हमारी हो गई हो उसके बारेमें शका नही होती और उसके बारेमें हमारे पास जवाब भी बहुत होते ही है।

आज इतना ही काफी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३७४) से। सी० डब्ल्यू० ६८१३ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

२६६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२१ जून, १९३५

भाई वल्लभभाई,

मैंने जरा भी धीरज नहीं छोड़ा। परन्तु वैद्योकी बात मेरे गले नही उतरती। वे नीमहकीम-जैसे होते है। उनकी दवा लग जाये तो तीर। इसमें फँसकर अच्छे भी कैसे हों? हिन्दुस्तानमें प्रख्यात वैद्य तो गणनाथ सेन है। उनका भी यही हाल समझो। इनके पास कुछ दवाइयाँ होती जरूर है, परन्तु उनका असर खत्म होने पर सब शून्यवत् हो जाता है। इसमें तुम्हें फँसानेमें कँपकँपी छूटती है। मै देखता हूँ कि मालवीयजी और मोतीलालजी भी अन्तमें डाक्टरोंकी शरण गये। लेकिन यदि तुम अच्छे हो गये हो, तब तो मुझे कुछ कहना ही नहीं है। महादेवको जब इच्छा हो बुला लेना . . .।[1]

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो — २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७३

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२६७. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२१ जून, १९३५

चि० कृष्णचन्द्र,

भले प्रातःकालमें शक्ति न रहे कुछ पीनेके बाद आवेगी, बादमें घुमना। सोनेके समय पेट खाली होना चाहीये।

रामनामका जप कुछ भी सेवाकार्य करते हुए करना मुझे तो उत्तम लगता है। बाकी जिसको ऐसे शांति न मीले वह भले एकांतमें बैठकर शांति लेवे।

सच्ची प्रतिष्ठा वह जो सत्यादिके पालन करते हुए सेवासे आती है।

भले-बुरे कृत्यका कर्ता भगवान भक्तोंके लिये ही है न? अभिमानी अभक्त तो मानता है 'मैं ही हूं'। अर्जुन रूपी देहधारी इस देहमें चलता हुआ युद्ध भली भांति करता ही रहता तो अवश्य 'गीता' की कोई जरूरत न थी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२७३) से।

२६८. बातचीत : क्वेटाके एक आगन्तुकसे[1]

[२२ जून, १९३५ के पूर्व]

आगन्तुक : पर प्रार्थना क्यों, सेवा क्यों नहीं? क्या सेवा ही प्रार्थनाका सबसे प्रभावकारी रूप नहीं है?

गांधीजी : अवश्य, अगर सेवाका द्वार हमारे लिए खुला होता। मगर ऐसे लाखों मनुष्य हैं जो भूकम्पसे बचे हुए मनुष्योंकी सेवा करने में बिलकुल ही असमर्थ हैं। इसलिए इस दैवी प्रकोपकी बात करने के बजाय उन्हें अपने अन्तरमें झाँक कर देखना चाहिए और आत्मशुद्धि करनी चाहिए। प्रार्थना आत्मशुद्धिके लिए एक आमन्त्रण है।

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। प्रश्नकर्त्ताका नाम नहीं दिया गया है। उसने क्वेटाके भूकम्पके सिलसिलेमें गांधीजी द्वारा लिखित प्रार्थना की आवश्यकतासे सम्बन्धित लेख बहुत रुचिपूर्वक पढ़ा था और गांधीजी को यह बतानेके लिए कि भूकम्पसे कैसा विनाश हुआ है, वह उनके पास क्वेटासे आया था।

किन्तु सेवा-रहित, कोरी प्रार्थना क्या निरर्थक नहीं है?

मैं यहाँ प्रार्थनाके बाहरी प्रदर्शनकी बात नहीं कर रहा हूँ। मैं तो आत्मनिरीक्षण और आत्मशुद्धिकी बात करता हूँ। इसकी हम सभीको जरूरत है। जाग्रतावस्थाका अपना सारा समय अगर हम सेवा-कार्यमें लगाते रहते, तो मुझे कुछ नहीं कहना था। पर यह बात है नहीं। और जब सेवा-कार्यमें हमारा सारा समय नहीं लग रहा है, तब आत्मशुद्धि करने के लिए भगवान्‌का नाम हम ले तो वह व्यर्थ जानेका नहीं।

मुझे ऐसा दिखता है। जहाँतक इस विपत्तिसे उबर निकलनेवालो का सम्बन्ध है — जिनमें हमारे आदमी और आरम्भके दो दिन उद्धारकों-रक्षकोंका काम करनेवाले टॉमी भी शामिल है — मैं समझता हूँ उन्हें प्रार्थना करने की सख्त जरूरत है, क्योंकि जब विपत्ति आती है उस क्षण तो हम स्तम्भित रह जाते हैं और प्रार्थना तथा मानव-भ्रातृत्वकी दुहाई देने लगते है, लेकिन दूसरे ही क्षण हम भूल जाते है कि ऐसी कोई विपत्ति भी आई थी। शीघ्र ही लोभ-लालच और लूट-खसोटकी प्रवृत्ति हमपर हावी हो जाती है और फलत: भूकम्प-जैसी विपत्तियोंसे हममें कोई सुधार नही होता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-६-१९३५

२६९. एक बातचीत[1]

[२२ जून, १९३५के पूर्व]

गांधीजी: यह चरखा[2] मशीन नहीं है क्या?

[समाजवादी:] मैं इस मशीनकी बात नहीं करता। मेरा मतलब तो बड़ी-बड़ी मशीनोंसे है।

आपका मतलब क्या सिंगरकी सीनेकी मशीनसे है? उसे भी ग्रामोद्योगकी प्रवृत्तिने संरक्षण दे रखा है। जो मशीनें हजारो आदमियोको श्रम करने के अवसर से वञ्चित नही करती, बल्कि जो व्यक्तिको उसके श्रममें मदद देती हैं और उसकी कार्यशक्तिको बढाती हैं और जिन मशीनोंको मनुष्य अपनी इच्छासे बिना उनका गुलाम हुए चला सकता है, उन सब मशीनोको हमारे इस आन्दोलनने अभयदान दे रखा है।

लेकिन बड़े-बड़े आविष्कारोंके विषयमें, आप क्या करेंगे? क्या आप बिजलीका सम्पूर्ण बहिष्कार कर देंगे?

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। लेखकके अनुसार मशीनोंके पक्षधर एक समाजवादी सज्जनने गांधीजी से पूछा कि क्या ग्रामोद्योग आन्दोलनका उद्देश्य मशीन-मात्रको ही निकाल बाहर करना नहीं हैं।

२. गांधीजी उस समय चरखा चला रहे थे।

ऐसा किसने कहा? अगर हरएक गाँवके प्रत्येक झोंपड़ेमें बिजली पहुँचाई जा सके, और लोग अपने औजारोंको बिजलीकी सहायतासे चलायें, इसपर मुझे कोई आपत्ति नहीं। लेकिन तब पावर-हाउस पर ग्राम-समाज या सरकारका आधिपत्य रहेगा, जैसाकि आज गोचर-भूमिपर है। किन्तु जहाँ बिजली न हो और मशीनें भी न हों, वहाँके बेकार बैठे हुए लोग क्या करें? आप उन्हें काम देंगे या आप यह चाहेंगे कि कामके अभावमें उनके मालिक उन्हें बाहर कर दें?

मनुष्य-मात्रके लाभके लिए विज्ञानके जो आविष्कार हैं, उन सबको मैं अत्यन्त मूल्यवान समझता हूँ। आविष्कार भी किस्म-किस्मके हैं। एक साथ हजारों आदमियोंका संहार कर सकनेवाली जहरीली गैसोंकी मुझे चिन्ता नहीं। सार्वजनिक उपयोगके जो काम मनुष्यके हाथकी मेहनतसे नहीं हो सकते उनके लिए भारी मशीनोंका उपयोग अवश्य किया जा सकता है। उन सबपर आधिपत्य सरकारका रहना चाहिए और उनका उपयोग केवल लोक-कल्याणके लिए ही होना चाहिए। जो मशीनें अनेक मनुष्योंको निर्धन बनाकर थोड़े-से मनुष्योंको धनवान बनाने के ही लिए हैं अथवा जो बहुत-से आदमियोंकी उपयोगी मजदूरी छीन लेने के लिए बनाई गई हैं, मेरे विचारमें उनके लिए स्थान नहीं हो सकता।

समाजवादीके नाते आप भी तो यह नहीं चाहेंगे कि मशीनोंका अन्धाधुन्ध उपयोग किया जाये। छापेकी मशीनको ही लें। उसे कौन बन्द करता है? डाक्टरके चीर-फाड़के औजारोंको लें। ये औजार हाथसे कैसे बन सकते हैं? इनके लिए बड़ी-बड़ी मशीनोंकी जरूरत तो रहेगी ही। मगर आलस्य मिटाने के लिए तो इसे छोड़कर दूसरी कोई मशीन है ही नहीं। आपके साथ बात करते हुए भी मैं इस मशीनको चला रहा हूँ और देशकी सम्पत्तिमें थोड़ी-सी वृद्धि भी कर रहा हूँ। इस मशीनको कौन हटा सकता है?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-६-१९३५

२७०. टिप्पणियाँ

असहाय विधवाएँ

एक सज्जनने, जिनके कई स्वजन क्वेटाके भूकम्पमें मर गये हैं, १७ वर्षकी एक युवतीकी दशाका वर्णन करते हुए एक बड़ा हृदय-विदारक पत्र लिखा है। यह युवती अपने पति, दो महीनेका एक बच्चा, ससुर और देवर, यानी ससुरालके सभी स्वजनों को क्वेटाके भूकम्पमें गँवा बैठी है। पत्र-लेखक सज्जन कहते हैं कि यह लड़की किसी तरह बच गई, और जो कपड़े उस वक्त उसके तनपर थे वही पहने हुए यहाँ आई है। यह बहन उनके चाचाकी लड़की है। उस भाईकी समझमें यह नहीं आता कि उसे किस तरह सान्त्वना दी जाये, और उसका क्या किया जाये। यह बात नहीं कि उस बहनको खुद कोई नुकसान न पहुँचा हो। उसके पैरमें चोट आई है, यद्यपि

सद्भाग्यसे उसकी हड्डी टूटनेसे बच गई है। पत्र समाप्त करते हुए उक्त सज्जन लिखते हैं :

> मैंने उसे उसकी माँके पास लाहौरमें रख दिया है। लड़की तथा दूसरे रिश्तेदारोंके सामने मैंने धीरेसे जब यह चर्चा छेड़ी कि अगर इसका पुनर्विवाह कर दिया जाये तो कैसा रहे, तब कुछ लोगोंने तो मेरी बातको सहानुभूतिके साथ सुना और कुछने नाराजगी प्रकट की। मुझे विश्वास है कि जो दशा मेरी इस चचेरी बहनकी हुई है, वैसी ही दशा यहाँ अनेक लड़कियोंकी हुई होगी। क्या आप इन अभागिनी विधवाओंके लिए प्रोत्साहनके दो शब्द लिखेंगे?

मैं नहीं जानता कि जहाँ सदियों पुराने पूर्वग्रहोंको दूर करने का सवाल है उनके विषयमें मेरी कलम या आवाजका क्या असर पड़ सकता है। मैंने यह बीसियों बार कहा है कि प्रत्येक विधुरको पुनर्विवाह करने का जितना अधिकार है, उतना ही अधिकार प्रत्येक विधवाको भी है। हिन्दू-धर्ममें स्वेच्छासे पाला हुआ वैधव्यव्रत जहाँ अमूल्य आभूषण-स्वरूप है, वहाँ मजबूरन पाला गया वैधव्यव्रत अभिशाप-स्वरूप है; और मुझे तो यह लगता है कि अनेक तरुण विधवाएँ, यदि वे भयसे मुक्त हों, तो बिना किसी संकोचके अपना पुनर्विवाह करना चाहेंगी। और यहाँ जिस भयसे मुक्तिका असली सवाल है वह यह नहीं कि उन्हें विवाह करने से जबरदस्ती रोका जायेगा, बल्कि वह तो हिन्दू-समाज के लोकापवादका भय है। इसलिए क्वेटाकी इस दुखिया बहनकी-सी स्थितिमें जो अभागिनी तरुण विधवाएँ हों, उन्हें पुनर्विवाह करने के लिए हर तरहसे समझाना चाहिए, और उन्हें ऐसा अभयदान दे देना चाहिए कि अगर वे फिरसे विवाह करना चाहती हों तो समाजमें उनकी जरा भी निन्दा नहीं होगी। इतना ही नहीं, बल्कि उनके लिए योग्य वर खोज देनेका भी पूरा प्रयत्न होना चाहिए। यह काम किसी संस्थाके किये नहीं हो सकता। यह तो खुद उन सुधारकोंको करना चाहिए, जिनके कुटुम्ब या सम्बन्धियोंमें स्त्रियाँ विधवा हो गई हों। उन्हें अपने-अपने दायरेमें संयम और गुरुताके साथ जोरदार प्रचार-कार्य करना चाहिए। और जहाँ-जहाँ उन्हें इस काममें सफलता मिले, वहाँ उन्हें उसे अधिकसे-अधिक प्रकाशमें लाना चाहिए। भूकम्पमें जो स्त्रियाँ विधवा हो गई हैं, उन्हें सच्ची राहत केवल इसी तरह दी जा सकती है। यह मुमकिन है कि इस विपत्तिका स्मरण जबतक लोगोंके मनमें ताजा बना हुआ है, उसी बीच उनकी सहानुभूति आसानीसे प्राप्त की जा सकती है। और एक बार अच्छे बड़े पैमानेपर यह सुधार आरम्भ हो जाये, तो ऐसी भीषण विपत्तिके अतिरिक्त बीमारी आदि के कारण अपने पतिको खो बैठनेवाली बहनों के लिए यदि उनकी इच्छा हो तो, पुनर्विवाह करना आसान हो जायेगा।

तीन सेवा-संघ

खादी-सेवा, ग्राम-सेवा और हरिजन-सेवा, इन तीनों सेवाओंके नाम ही भिन्न वास्तवमें ये तीनों हैं एक ही। ये विशुद्ध परोपकारी संस्थाएँ हैं, और दरिद्रनारा-

यणकी सेवाके अतिरिक्त इनका दूसरा कोई भी ध्येय नहीं है। करोड़ों दरिद्रनारायणोंमें हरिजन सबसे अधिक पद-दलित हैं। हरिजनोंकी सेवामें सभीकी सेवा आ जाती है। ईश्वरके नामपर हरिजनको पिलाया हुआ एक कटोरा पानी मनुष्य-जातिके समस्त दीन-दलितोंको पिलानेके बराबर है।

जिन संघोंने इस प्रकारकी शुद्ध सेवाकी कल्पना कर रखी है, उनके साथ पूंजी और श्रमका विचार जोड़ना ही गलत है। अवैतनिक अध्यक्षसे लेकर वैतनिक चपरासियों तक, सब सेवक ही हैं। प्रत्येक संघका पैसा उसके ट्रस्टका है। इन संघोंके व्यवस्थापक-बोर्ड समय-समय पर जो नियम बनाते हैं, उनके अनुसार ही वैतनिक या अवैतनिक सेवकोंको चलना पड़ता है। जहाँ केवल कर्त्तव्यकी ही कल्पना है, वहाँ अधिकारका प्रश्न ही नहीं उठता। इसलिए इन सेवा-संघोंमें कार्य करनेवाला जो भी व्यक्ति अपने लिए किसी विशेष सुविधा या अधिकारका विचार करेगा, उसे किसी-न-किसी दिन निराश ही होना पड़ेगा। कारण यह है कि इन सेवा-संघोंमें धीरे-धीरे उनकी आर्थिक स्थिति सुधरनेकी कोई आशा नहीं; बल्कि वह समय आ गया है या आनेवाला है, जब आर्थिक लाभका त्याग हमें दिन-दिन अधिकसे-अधिक करना पड़ेगा। 'जब लिये गये कर्जेकी अदायगी दान माना जाने लगेगी तभी कर्त्तव्य-पालनको पुण्य-कार्य कहा जायेगा।' कर्त्तव्य-पालनका पुरस्कार कर्त्तव्यके पालनमें ही है। इन सेवाओंमें जो सन्तोष है, उसमें तो कोई सन्देह ही नहीं। पर वह सन्तोष कर्त्तव्य-पालनका है। यह सच है कि सबने इन कामोंको विशुद्ध सेवा-भावसे प्रेरित होकर नहीं अपनाया है। इसीलिए इन तीनों सेवा-संघोंमें जो सबसे पुराना है उसमें यदा-कदा कुछ गड़बड़ देखनेमें आती है। इस गड़बड़को दूर करने का एकमात्र मार्ग यह है कि हमें बार-बार अपने मनमें इस बातका स्मरण करना चाहिए कि हम लोग इन सेवा-संघोंमें अधिकार प्राप्त करनेकी नीयतसे नहीं, किन्तु दरिद्रनारायणके प्रति अपना कर्त्तव्य पालनेके लिए ही प्रविष्ट हुए हैं। हमारे ऊपर किसीका आधिपत्य है तो एक दरिद्रनारायणका; और फिलहाल अगर हम किसीको अपनेसे बड़ा मान रहे है, तो हम स्वेच्छासे ऐसा करते हैं, क्योंकि हम यह भली-भाँति जानते हैं कि बिना अनुशासनके कोई संस्था चल ही नहीं सकती। अनुशासनके लिए किसी एक मुख्य व्यवस्थापकका होना जरूरी है। वह प्रधान व्यवस्थापक केवल समकक्षोंमें प्रथम है। और एक विशुद्ध सेवक होनेके कारण, सबका प्रमुख बनने के लिए उसे अपने सब साथियोंमें अधिकसे-अधिक नम्र होना चाहिए। उसका यह प्रमुख पद दूसरोंकी सहमतिपर निर्भर है। लेकिन जबतक वह इसपर रहे, तबतक उसे यह आशा रखनेका अधिकार है कि उसके दूसरे तमाम साथी उसके प्रति पूर्ण हार्दिक निष्ठा रखें और बिना किसी शिकायतके उसकी आज्ञाका पालन करें।

[अंग्रेजी से]
हरिजन, २२-६-१९३५

२७१. जीव-मात्र एक हैं

गत मास मैं कुछ दिनोंके लिए बोरसद गया था। वहाँ मैंने अपने कई भाषणोंमें यह कहा था कि यद्यपि मैं यह मानता हूँ कि प्लेगके कीटाणुओंसे ग्रस्त चूहे और पिस्सू भी मेरे लिए सगे हैं, और जीनेका जितना अधिकार मुझे है उतना ही अधिकार उन्हें भी है, तो भी डॉ० भास्कर पटेलके चूहे और पिस्सू मारनेके प्रयत्नका मैं बिना किसी संकोचके समर्थन करता हूँ।

एक संवाददाताने, जिसे मेरी यह चूहों और पिस्सुओंसे सगेपनकी बात सुनकर आश्चर्य हुआ, पर जिसने यह परवाह नहीं की कि मैंने किस सन्दर्भमें यह बात कही थी, झटसे मेरी वह बात तार द्वारा अपने अखबारको सूचित कर दी। सरदार पटेल की तीक्ष्ण दृष्टि उस अनुच्छेदपर जा पड़ी, और उससे जो हानि होनेकी सम्भावना थी उसे सुधार देनेके लिए उन्होंने मुझसे कहा। मगर उन्होंने जो काम मुझे सौंप रखा था उससे मुझे फुर्सत नहीं थी, इसलिए मैंने यह कहकर लिखने की बात टाल दी कि जिन लोगोंका इस बातके साथ सम्बन्ध है वे कभी मेरे कहने का गलत अर्थ नहीं लगायेंगे।

लेकिन सरदारका कहना ठीक निकला। यह अर्धसत्यवाली खबर तारसे लन्दन भेज दी गई। वहाँ जो लोग यूरोपमें मेरी प्रतिष्ठाकी रक्षाके विषयमें चिन्तित रहते हैं, उन्हें वह अनुच्छेद पढ़कर क्षोभ हुआ; यद्यपि इतना तो वे समझते थे कि इस सगेपनके दावेमें मैंने बहुत-कुछ मर्यादाएँ तो रखी ही होंगी। उन्होंने मेरे पास उस अनुच्छेदकी कतरन लेकर भेज दी। अब कमसे-कम उन प्रेमी मित्रोंकी खातिर ही मैं बाध्य हूँ कि अपनी स्थितिको साफ कर दूँ, यद्यपि जो अर्धसत्य एक बार चल निकला, उसे एकदम कैसे रोका जा सकता है?

मैं जिन लोगोंके आगे वहाँ भाषण दे रहा था, वे उन जंगली जानवरोंको भी नहीं मारते, जो नित्य ही उनकी खेतीका नाश करते रहते हैं। जबतक सरदारने चूहों और पिस्सुओंका उन्मूलन करने के अभियानमें अपने प्रचंड प्रभावका पूरा उपयोग किया था, उस समयतक बोरसद ताल्लुकेके लोगोंने एक भी चूहा या पिस्सू नहीं मारा था। लेकिन सरदारका उन लोगोंपर बहुत बड़ा उपकार था, इसलिए उनकी बातका विरोध वे नहीं कर सकते थे, और उन्होंने डॉ० भास्कर पटेलको चूहों और पिस्सुओंका संपूर्ण संहार निर्बाध रीतिसे करने दिया। बोरसदमें जो काम हो रहा था उसकी मुझे रोज-ब-रोज खबर मिलती रहती थी।

जो काम वहाँ हुआ था उसका अनुमोदन करने के लिए ही सरदारने स्वभावतः मुझे आमन्त्रित किया था। कारण, यह काम अब भी जारी रहना था, हालाँकि लोगोंको अब यह काम बिना बाहरी मददके खुद करना था। इसलिए इस कामके

प्रति अपने अनुमोदनपर जोर देनेके लिए मैंने अहिंसा अर्थात् जीव-मात्रकी अवध्यता तथा एकता-विषयक अपनी अटल श्रद्धा अत्यन्त स्पष्ट शब्दोंमें सुना दी।

किन्तु श्रद्धा और कर्मके बीच यह विरोध क्यों? विरोध तो बेशक है ही। जीवन एक उच्चाकांक्षा है। उसका ध्येय पूर्णता अर्थात् आत्म-साक्षात्कारके लिए प्रयत्न करना है। अपनी निर्बलताओं या अपूर्णताओंके कारण हमें आदर्श नीचा नहीं करना चाहिए। मुझमें निर्बलता और अपूर्णता दोनों ही हैं। मुझे उनका दुःखद भान है। अपनी उन निर्बलताओं और अपूर्णताओंको दूर करने में सहायता देनेके लिए सत्य-रूप ईश्वरके समक्ष मेरे हृदयसे मूक पुकार प्रतिक्षण उठती रहती है। मैं यह मानता हूँ कि साँप, बिच्छू, बाघ और प्लेगके चूहों तथा पिस्सुओंसे मुझे डर लगता है। मुझे यह भी स्वीकार करना चाहिए कि खतरनाक दिखाई देनेवाले डाकुओं और हत्यारोंसे भी मुझे डर लगता है। मैं यह जानता हूँ कि मुझे इनमें से किसीसे भी नहीं डरना चाहिए। पर यह कोई बुद्धिकी बहादुरीका काम नहीं है। यह तो हृदयका व्यापार है। सिवा ईश्वरके और सबका भय त्याग देनेके लिए वज्र-सा कठोर हृदय चाहिए। अपनी निर्बलताओंके कारण बोरसदके लोगोंको मैं यह सलाह तो नहीं दे सकता था कि आप लोग घातक चूहों और पिस्सुओंको न मारें। पर मैं यह जानता था कि यह छूट मानवीय निर्बलताको ध्यानमें रखकर दी जानेवाली एक छूट है।

तो भी अहिंसा और हिंसा-सम्बन्धी विश्वासोंमें उतना ही अन्तर है, जितना कि उत्तर और दक्षिण दिशामें है, या जितना अन्तर जीवन और मृत्युके बीचमें है। मनुष्य अहिंसा, अर्थात् प्रेम-धर्मके समुद्रमें जब अपने भाग्यकी नौकाको छोड़ देता है, तो वह विनाशका दायरा नित्य कम करता जाता है, और उतने अंशमें जीवन और प्रेमका क्षेत्र बढ़ाता जाता है। जो मनुष्य हिंसा अर्थात् घृणामें विश्वास रखता है वह क्षण-क्षण विनाशका क्षेत्र विस्तृत करता जाता है, और उतने अंशमें मृत्यु तथा घृणाको बढ़ाता है। यद्यपि बोरसदवासियोंके आगे मैंने अपने सगों-जैसे चूहों और पिस्सुओंके विनाशका समर्थन किया, तो भी मैंने उन्हें जीव-मात्रके प्रति दिव्य प्रेम-धर्मका महान् सिद्धान्त शुद्ध रूपमें बतलाया। यद्यपि इस जन्ममें उस सिद्धान्तका पालन पूर्णतया मैं नहीं कर सकता, तो भी इसपर मेरी अटल श्रद्धा तो रहेगी ही। मेरी प्रत्येक असफलता मुझे उस सिद्धान्तके पूर्ण आचरणके अधिकसे-अधिक समीप ले जाती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-६-१९३५

२७२. पशुओंके खाद्यके रूपमें मल का उपयोग

अपने बाल्यकालमें पोरबन्दरमें मैंने गायोंको अक्सर मनुष्योंका मल खाते हुए देखा था। मेरे मनमें इससे बड़ी वितृष्णा हुई थी और आजतक मैं उसे भूल नहीं पाया हूँ। लेकिन एक पत्र-लेखकने मुझे यह बताया है कि सतारा जिलेमें यह आम बात है। वहाँके ग्वाले मनुष्योंका मल अधिक मात्रामें प्राप्त करने के लिए पैसे खर्च करते हैं, जिससे यह उनके मवेशियोंको बराबर मिलता रहे। उसने मुझे बताया कि गायोंको मल खिलानेसे दूधकी मात्रा बढ़ जाती है। पत्र-लेखककी बातकी सचाईमें सन्देह करने के लिए मेरे पास कोई आधार नहीं था, सो मैंने अपने एक चिकित्सक मित्रसे कहा कि इस विषयमें किसी विशेषज्ञकी सम्मति प्राप्त करें। हतप्रभ कर देनेवाली वह सम्मति निम्न प्रकार है:

> साधारणतया मलके अन्दर पोषण प्रदान करनेवाला सैलूलोज तथा नाइट्रोजन होता है। मलमें निहित खास तत्त्व विटामिन 'बी' है; इसका पशुके शरीरपर सम्भवतः अनुकूल असर पड़ता है। मलमें विटामिन 'बी' रहता है, यह बात कूपरने (१९१४) में बताई थी। उसने मलसे बनाई शराबसे बीमार कबूतरोंकी चिकित्सा की थी। यह एक आम राय है कि बछड़ेको ठीक दूध मिलता रहे, इसके लिए गायको काफी मात्रामें विटामिन 'बी' दिया जाना चाहिए (देखिए 'मोनोग्राफ ऑन विटामिन्स', प्रकाशक — पिकेट टॉम्सन रिसर्च लेबोरेटरी, लन्दन)।
>
> यह बहुत सम्भव है कि मल खानेवाली जिन गायोंको यह विटामिन अधिक मात्रामें मिल जाता है, उन्हें अधिक दूध उतरने लगता है।
>
> भूख कम लगना या खुराकका ठीकसे हजम न होना इस बातका प्रमाण है कि खुराकमें विटामिन 'बी' की कमी है और यह बहुत मुमकिन है कि जिन गायोंको हरे चारेकी खुराकके साथ खाद्य पदार्थके रूपमें मल भी मिलता है, विटामिन 'बी' प्राप्त होने से उनकी भूख तीव्र हो जाती है, जिससे उनमें चर्बीकी अधिक मात्रा बनने लगती है तथा घास-पातमें रहनेवाली शर्करा अधिक ठीक ढंगसे पचकर उन्हें हृष्ट-पुष्ट बना देती है।
>
> जहाँतक मनुष्यके मलमें साधारणतः निहित सूक्ष्म जीवाणुओं आदिका सम्बन्ध है, कहा जा सकता है कि उनमें से अधिकांश मृत या मृतप्राय होते हैं और जो थोड़े-से जीवित रहते भी हैं, वे गायके पेटके गैस-युक्त रसमें मिलने पर मर जाते हैं।

इस प्रकार मनुष्यके मलका पशुके लिए एक लाभदायक खाद्य होनेका रासायनिक प्रमाण मिल जाता है। लेकिन उसे लेकर उत्पन्न होनेवाली मनोवैज्ञानिक आपत्ति तो बनी हीं रहेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-६-१९३५

२७३. हरिजनोंके लिए कुएँ

यद्यपि भूकम्प-पीड़ित क्वेटाकी काली छाया अब भी मेरे हृदयपर पड़ रही है, तो भी देशके उदार दानियोंसे यह कहने में मुझे न तो दुःख है, न संकोच कि उन्हें इन पृष्ठोंमें प्रकाशित हरिजन कूप-कोषके लिए चन्दा देनेकी अपीलका तुरन्त उचित उत्तर देना चाहिए। क्वेटाका सहायक तो आज सारा संसार है, पर हरिजनोंके मददगार थोड़े ही हैं। क्वेटाका एक भी पीड़ित मनुष्य न तो प्यासा मर रहा है, और न उसे मजबूरन ऐसा गन्दा पानी पीना पड़ रहा है जिसे लोग अपने पशुओंको भी पिलाना पसन्द न करेंगे।

ऐसी भारी विपत्तियोंके आनेपर हमें अपना विवेक नहीं गँवा बैठना चाहिए। शायद कुछ मामलोंको छोड़कर लोगोंकी रँगरेलियाँ एक क्षणके लिए बन्द नहीं हुई हैं। क्वेटाकी मुसीबतका यह सारा बोझ क्या गरीब हरिजनके ही घायल कन्धों पर पड़ना चाहिए? हरिजनोंको पीनेका स्वच्छ पानी देने के लिए दाताओंने जिस आर्थिक सहायताका संकल्प कर लिया था, उस सहायताका रुख अगर उन्होंने दूसरी तरफ मोड़ दिया, तो उन्हें अन्तर्यामी ईश्वरकी अदालतमें गबनके अपराधियोंके रूपमें हाजिर होना पड़ेगा। इसलिए उचित तो यह होगा कि वे अपने निजी बजटको, न कि परमार्थके बजटको, फिरसे देखें और उसीमें उचित काट-छाँट करें, और हरिजन-कूप-कोषके निमित्त जो रकम वे प्रायश्चित्तस्वरूप संकल्प कर चुके हों, उसमें से तो एक पाई भी वे इधरसे उधर न करें।

प्रार्थनाके लिए जो अपील की गई है, वह बिना किसी अर्थ या अनुभवके नहीं की गई। अन्तस्तलसे निकली हुई प्रार्थना मनुष्यको शक्ति और साहस देती है, उसे नम्र बनाती है और उसे उसका अगला कर्त्तव्य भी बताती है।

पाँच बड़ी-बड़ी नदियाँ-जिस प्रान्तमें बह रही हैं, उस पंजाबके हरिजनोंकी जल-सम्बन्धी आवश्यकताओंका विवरण पाठक पढ़कर देखें। क्या यह शर्मकी बात नहीं है कि पंजाबके धनी लोग हरिजनोंके लिए स्वच्छ पानीका प्रबन्ध नहीं कर सकते? कूप-कोषके लिए जो यह एक लाख रुपयेकी तुच्छ अपील निकाली गई है उसमें जल्दसे-जल्द एक लाखसे ऊपर ही रुपया आ जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-६-१९३५

२७४. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

वर्धा
२३ जून, १९३५

चि० नरहरि,

मैं पहले भाई बेलचन्दको लिखूंगा, फिर तुम्हें लिखूंगा। साथका पत्र भगवानको दे देना। गायोसे सम्बन्धित काम कैसा चल रहा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०८१) से।

२७५. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
२३ जून, १९३५

चि० मेरी,

अगर तुम्हें वहाँ रहना माफिक आ रहा हो, तो जबतक वे तुम्हें वहाँ रहने दें, तुम वहीं रहो। मैं चाहता हूँ कि तुम वहाँसे मजबूत और तन्दुरुस्त होकर वापस आओ। उनसे पूछो कि फल तुम्हें क्यों माफिक नहीं आते।

मैं अभी पाँच महीने और वर्धासे बाहर नहीं जाऊँगा, ऐसी सम्भावना है।

हाँ, छोटेलाल वैसे ही हैं जैसाकि तुमने बताया है।

स्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०४७) से। सी० डब्ल्यू० ३३७७ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

२७६. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

२३ जून, १९३५

भाई विट्ठलदास,

एक घरसे और दूसरा दुकानसे लिखा, तुम्हारे दोनों पत्र मिले।

तुम्हें अखबारोंमें कुछ नहीं भेजना है। जब मन मिलेंगे तब जरूरत हुई तो भेजेंगे।

रतुभाईने जो किया, वह खेदजनक है। उसे लिख रहा हूँ। तुम अब मुझसे पूछे बिना कोई कदम न उठाना। धीरज रखना। निश्चिन्त रहना। कटौतीके बारेमें भी हम दोनों मिलकर सोचेंगे। वल्लभदासको बुलाऊँगा। अपनी समूची योजना भेजना। जरूरत हुई तो रतुभाईको बुलाऊँगा।

लक्ष्मीदासके बारेमें भी जो करो, मुझसे सलाह करके करना। इस समय जब सब-कुछ इस तरह हो रहा है, तब खूब सोच-विचारकर करना होगा।

यह काम करते हुए अपनी तबीयत जोखिममें मत डालना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७९१) से।

२७७. पत्र : पद्माको

२३ जून, १९३५

चि० पद्मा,

तेरे पत्रका उत्तर कार्डसे देकर दरिद्रनारायणके लिए पैसा बचा रहा हूँ। तुम सबका काम बहुत अच्छा चल रहा है। खूब पढ़ लेना, लेकिन शरीरको खूब कसना और मेहनत करना मत छोड़ना। यहाँ तो शरीरश्रम ही चल रहा है, जैसाकि तू 'हरिजनसेवक' में पढ़ती होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१५१) से। सी० डब्ल्यू० ३५०७ से भी; सौजन्य : प्रभुदास गांधी

२७८. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

२३ जून, १९३५

भाई मूलचन्द,

तुम्हारा खत मिला है।

तुम्हारा किस्सा करुण है, लेकिन उसीको धर्मवर्धक बना सकते हैं। करुणा धर्मकी पोषक है। धर्मकी परीक्षा भी कठिन समयमें हो सकती है। पत्नी जब पतिकी अनुगामिनी नही रहती है तब सहधर्मिणी तो कहांसे हो सकती है? विधर्मिणी बनने का उसको अधिकार है। जैसा पतिको। लेकिन जब पत्नी विधर्मिणी बनती है तब पतिके सहयोगकी अथवा सहवासकी आशा नही रख सकती है। पतिके तर्फसे पोषण मीलनेका उसे पूर्ण अधिकार है। जो पति अपनी पत्नीके प्रति निर्विकार रह सकता है, और अन्य स्त्रियोके प्रति निर्विकार रहा है और भविष्यमें रह सकता है, उसको पत्नीका सहवास छोडने का उक्त अवसरमें अधिकार है। इसलिये तुमसे अलग रहकर अपनी इच्छानुसार चलने का उसको पूर्ण अधिकार होना चाहिये। ऐसा करने में रोषको कोई स्थान नहीं है। पत्नीको एक भी कटु वचन न कहा जाय। प्रेमभावसे उसे धर्म बताकर असहयोग किया जाय।

रह जाती है बात बच्चोकी। जबतक बच्चे १६ वर्षकी उम्रके नही हुए है तबतक अधिकार तुम्हारा ही रहता है। उसके बाद किसके साथ रहना और किसकी बात मानना वह बच्चोपर निर्भर है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८३७) से।

२७९. पत्र : अवधेशदत्त अवस्थीको

२३ जून, १९३५

चि० अवधेश,

माता, पिता, पत्नी आदिके प्रति जो धर्म है उसका त्याग करके समाज-सेवा कभी हो नही सकती है। वह धर्म सेवा-धर्मका विरोधी नही है। माता, पिता आदि [के] प्रति क्या धर्म है, उसकी क्या मर्यादा है यह जानना आवश्यक है। पत्नीका पालन करना और जहातक वह सहधर्मिणी रह सकती है, वहांतक संयममें रहकर उसको साथ देना पतिका धर्म है। मात-पिता अपग है और धनहीन है, उनके और

कोई पुत्र नहीं है, इस हालतमें उनका पोषण और उनकी सेवा करने का धर्म प्राप्त होता है।

बकरीका दूध लेता हूं क्योंकि लाचार बन गया था। व्रतके कारण गाय-भैंसका तो ले ही सकता न था। व्रतका संकुचित अर्थ करते बकरीका दूध लेनेकी छूटी ले ली।

यदि अंगारसे पकाकर कुछ न लेना है तो फलाहारसे ही निपटारा हो सकता है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२१३) से।

२८०. पत्र : श्रीनाथसिंहको

२३ जन, १९३५

भाई श्रीनाथसिंह,

आपका पत्र मिला। श्री सूर्यनारायणजी को समिति का निर्णय सम्मेलन दफ्तरसे ही भेजा जाय। उनका पत्र दफ्तरमें भेजने में भी मेरा यही आशय था।

सम्मेलनके आगामी अधिवेशनके बारेमें मैं नागपुरवालों से वार्तालाप कर रहा हूं। उसके बारेमें भी तुम्हारा पत्र आ गया है।

मो० क० गांधी

श्री श्रीनाथसिंह
मंत्रीजी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन
पो० आ० बाक्स ११
इलाहाबाद, प्रयाग

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६६२) से। सी० डब्ल्यू० २९७४ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा

२८१. तार: हीरालाल शर्माको[1]

वर्धा
२५ जून, १९३५

डॉ० शर्मा
खुर्जा

तार मिला। आ जाओ, यद्यपि दूसरे जहाजकी तारीख मालूम नही है। मालूम कर रहा हूँ।

बापू

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृष्ठ १७० के सामने प्रकाशित अंग्रेजीकी प्रतिकृतिसे

२८२. पत्र: एफ० मेरी बारको

२५ जून, १९३५

चि० मेरी,

जानकर खुशी हुई कि तुम दिन-ब-दिन अच्छी होती जा रही हो। इसलिए, अगर जाँचकी दृष्टिसे वे कभी-कभी बुखार लाना भी जरूरी समझें तो मैं समझता हूँ, हमें इसपर शिकायत नही होनी चाहिए।

छोटेलाल अभी नही आये। हकीमकी दवाईसे कोई फायदा नही हुआ। मुझे उसकी उम्मीद भी नहीं थी।

सस्नेह,

बापूके आशीर्वाद[2]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०४८)से। सी० डब्ल्यू० ३३७८ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार

१. यह हीरालाल शर्माके २५ जून, १९३५ के ही तारके उत्तरमें भेजा गया था। वह तार इस प्रकार था: "पासपोर्ट मंजूर हो गया है। तारसे सूचित करें कि क्या मैं कलकत्ते [से प्रस्थान करने] के लिए टिकट ले लूँ।"

२. मूलमें हस्ताक्षर हिन्दीमें हैं।

२८३. पत्र : एल० के० किर्लोस्करको

२५ जून, १९३५

प्रिय मित्र,

इस मशीनमें आपकी कोई दिलचस्पी नहीं रह गई, इसका मुझे दुःख है। मेरे सुझावमें[1] किसी नये खर्चकी कोई बात नहीं है; इतना ही नहीं, उसमें एक ऐसी तजवीज है जिसपर आपका कोई खर्च नहीं बैठेगा। अगर इस कामपर कुछ और खर्च बैठे तो वह कर दिया जाये और सम्भव है, उस खर्चका परिणाम यह हो कि पुरस्कार जीतने के लिए आपने जो पुष्कल प्रयत्न किया उसपर हुए वास्तविक खर्चका भी आंशिक या पूरा भुगतान हो जाये।

जब हम वर्धामें मिले थे तब मैंने आपसे कहा था और अब फिर इस बातको दुहरा रहा हूँ कि मैंने जो न्यूनतम बातें सुझाई थीं, यदि मशीन उनकी दृष्टिसे उपयुक्त साबित होती है तो मैं एक ऐसे अनुबन्धके अधीन आपको मशीनोंका आर्डर देना चाहूँगा, जिससे आपका उठाया खर्च धीरे-धीरे पूरा हो जाये। फिलहाल इस प्रस्तावका संघसे[2] कोई सरोकार नहीं है, क्योंकि यह विचार पूरी तरह मेरा है। अगर हम किसी हदतक सन्तोषजनक समझौतेपर पहुँच गये तो मैं इस प्रस्तावमें संघकी रुचि भी जगानेकी कोशिश करूँगा।

मैंने इस बातको भी ध्यानमें रख लिया है कि आप सर डैनियल हैमिल्टनको अपनी मशीनका खाका नहीं दे सकते।

आपका,

श्रीयुत एल० के० किर्लोस्कर
किर्लोस्करवाड़ी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. देखिए "पत्र : एल० के० किर्लोस्करको", १९-६-१९३५।
२. अखिल भारतीय चरखा संघ; देखिए "चरखे में सुधार", २७-६-१९३५ भी।

२८४. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

दुबारा नहीं पढ़ा

२५ जून, १९३५

चि० अम्बुजम्माल,

दाहिने हाथको आराम दे रहा हूँ लेकिन साथ ही पत्र-व्यवहारको समयसे निवटानेकी भी चिन्ता हैं, इसलिए यह पत्र बोलकर ही लिखवाना पड रहा है।

मुझे ऐसा भय था कि माताजी अपनेको रोक नही पायेंगी। वे और तुम दोनों मिलकर इस बातके लिए अधिकसे-अधिक प्रयत्न करो कि तुम्हारे पिताजी के उपचारमें कोई व्यवधान न पडे। मै आशा करता हूँ कि कीचीका घाव अब भी भर रहा होगा। मैं जानता हूँ कि खूब तन्दुरुस्त लोगोंके लिए भी ये छोटे-मोटे आपरेशन कितने तकलीफदेह होते हैं। घाव पुरनेमें काफी समय लगता है।

क्वेटाके भूकम्प-पीड़ितोंके लिए भेजा तुम्हारा दान मैं अपने पास रख रहा हूँ। ठीक समय आनेपर उसका उपयोग करूँगा। जब तुम्हें झंझटोसे छुटकारा मिल जायेगा तब चाहूँगा कि तुम हरिजन कूप-कोषके लिए चन्दा उगाहो। और तुम शुरुआत अपने माता-पितासे कर सकती हो। यह पुण्य-कार्य है और इसलिए हरएक को व्यक्तिगत रूपसे यह पुण्य अर्जित करना है। मैं मानता हूँ, तुम इसके बारेमें 'हरिजन' में सब-कुछ पढ़ती रहती होगी।

हाँ, यहाँ बरसात आ गई है और इसलिए तापमान काफी कम हो गया है।

स्नेह।

बापू

श्री अम्बुजम
फेयरीफाल्स व्यू
कोडाइकनाल आब्जर्वेटरी

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२८५. पत्र : नारणदास गांधीको

२५ जून, १९३५

चि० नारणदास,

हरिलाल फिर पटरीसे उतर गया जान पड़ता है। वह नौकरी छोड़ बैठा है। तुमने उसे काम देनेका वादा तो किया है, लेकिन क्या यह ठीक किया है? वह अगर सरासर झूठ बोलता हो तो तुम्हारे किस काम आयेगा? इधर तो उसके पत्र मुझे तनिक भी सन्तोषजनक नहीं लगते।

मैथ्यू कैसा चल रहा है? उसे शारीरिक श्रमका कोई काम तो दिया ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४५५.से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२८६. पत्र : इन्दौरके दीवानको

[२६ जून, १९३५ के पूर्व][1]

प्रिय मित्र,

शायद आपको मालूम हो कि ईस्टरके दौरान मैंने हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी कार्यवाहियोंकी[2] अध्यक्षता की थी। सम्मेलनमें एकलिपि-परिषद्की स्थापना की गई। मुझे मालूम हुआ है कि महाविभवने श्री लतीफीकी उस योजनापर सम्मतियोंके संग्रहका आदेश दिया है, जिसमें उन्होंने रोमन लिपिमें आवश्यक सुधार करके उसे सभी भाषाओंके लिए अपनानेकी तजवीज पेश की है। इस सम्बन्धमें राज्यके पास जो कागजात हों वे आप मुझे कुछ समयके लिए दे सकें तो आभारी होऊँगा।

फिर, राज्यके कुछ हिन्दी प्रकाशन और देवनागरी लिपिके भी कुछ प्रकाशन हैं। वे उपलब्ध करा दें तो कृपा होगी।

और अन्तमें, अगर राज्यमें हिन्दीके प्रयोगके सम्बन्धमें जारी किये गये सभी परिपत्रोंकी प्रतिलिपियाँ भी मिल सकें तो मैं उन्हें प्राप्त करना चाहूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री दीवान साहब

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. २० से २३ अप्रैलतक इन्दौरमें आयोजित, देखिए खण्ड ६०, पृ ४८६-९६।

२८७. पत्र : इन्दौरके दीवानको

वर्धा
२६ जून, १९३५

प्रिय मित्र,

मेरे पत्रका आपने इतनी तत्परतासे उत्तर दिया, इसके लिए आभारी हूँ। जो पुस्तकें और कागजात मैंने माँगे थे, सब मिल गये हैं। इस भेंटके लिए क्या आप लिपि-परिषद्‌का धन्यवाद स्वीकार करेंगे?

अब मुझे संयोजक काकासाहब कालेलकरका एक स्मरण-पत्र मिला है, जिसमें उन पुस्तकोंकी एक सूची है जिनकी उन्हें अपने शोध-कार्यके लिए जरूरत है। ये पुस्तकें भेजी जा सकें तो आभारी होऊँगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

२८८. पत्र : ओ० वी० अलगेसनको[1]

२६ जून, १९३५

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। जैसा आप कहते हैं, काश मेरी कलम या शब्दोंका वैसा प्रभाव होता।

दैनिक समाचार-पत्रोंमें निकलनेवाली पहेली-प्रतियोगिताओंके बारेमें आपने जो-कुछ कहा है, वह एक हदतक ठीक ही है। लेकिन यह जुएके मुकाबले, जिसपर मैं अपने विचार प्रकट करता रहा हूँ,[2] अधिक सूक्ष्म है। फैशनके रूपमें रूढ़ हो जानेपर भी जुआ एक बुरी चीज ही माना जाता है। पहेली-प्रतियोगिताको बुरा नहीं माना जाता। इसलिए इस बुराईसे निबटनेका मुझमें साहस नहीं है।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-७-१९३५

१. पत्र-लेखकने तमिलनाडुकी अनेक साहित्यिक पत्रिकाओं द्वारा आरम्भ की गई पहेली-प्रतियोगिताओंकी ओर गांधीजीका ध्यान खींचा था और प्रार्थना की थी कि वे इस बुराईकी हरिजनमें लेख लिखकर भर्त्सना करें, क्योंकि वह भी जुएका ही एक रूप है।

२. देखिए "सत्यानाशी जूआ", १५-६-१९३५ तथा "टिप्पणियाँ", २९-६-१९३५।

२८९. पत्र : एफ० मेरी बारको

२६ जून, १९३५

चि० मेरी,

छोटेलाल अभी-अभी पहुँचे हैं। मैंने कुकरके सम्बन्धमें लिखा गया अनुच्छेद मीराको पढ़कर सुनाया। उसे इस बारेमें कुछ भी याद नहीं है। वह उसे खोज तो रही है, लेकिन अभी तक वह मिल नहीं पाया है। तुम उसे लेकर चिन्तित मत होना। अगर तुम उसके सम्बन्धमें कुछ और विवरण भेज सको और तुम्हारा पत्र मिलने तक वह मुझे न मिले, तो खोजनेमें आसानी होगी।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०४९) से। सी० डब्ल्यू० ३३७९ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

२९०. पत्र : सी० जी० जगन्नाथदासको

२६ जून, १९३५

प्रिय जगन्नाथदास,

आप नग्नताके सम्बन्धमें लिखे मेरे पत्रको[1] प्रकाशित करें, इसपर मुझे कोई एतराज नहीं है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०९३) से।

१. देखिए "पत्र : सी० जी० जगन्नाथदासको", १८-६-१९३५।

२९१. पत्र : लीलावती आसरको

२६ जून, १९३५

चि० लीलावती,

यह रहा तेरा पहला पाठ।[1] अब तू गुजराती तो मगनभाईको सीधे भेज सकती है। मुझे भेजना चाहे तो वैसा करना।

इसे लौटाने में देर हुई है। तीन दिन मेरे पास पड़ा रहा। पहले-पहलका मामला था, सो मगनभाईको भी देर लगी।

अंग्रेजीका पाठ लगता है, कहीं गुम हो गया है। खोज करा रहा हूँ। वह नहीं मिला तो नया पाठ बनाकर भेजूंगा। यह काम अब मेरे हाथमें रहेगा।

जो समझमें न आये, यदि वह पूछती रहेगी तो खूब उन्नति करेगी।

यदि तू २० छात्रोंकी कक्षामें हो तो तेरे हिस्से शिक्षकका १/२० ध्यान आये। पत्र द्वारा प्रत्येक विद्यार्थीको अलग-अलग व्यक्तिगत ध्यान मिलता है। उद्यमी विद्यार्थीको पत्र-शिक्षणसे बहुत लाभ होता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३३) से। सी० डब्ल्यू० ६६०८ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

२९२. पत्र : लीलावती आसरको

२६ जून, १९३५

चि० लीलावती,

तेरे अंग्रेजी अभ्यास मिल गये हैं। उन्हें सुधारकर वापस भेज दिया है। मगनभाईने जो कहा है, वह इसपर भी लागू होता है। अपने अक्षर सुधार। कलमसे लिख। धीमे लिख। तेरी अंग्रेजी, जैसी मैं सोचता था, उससे अच्छी है। जल्दी सुधर जायेगी। तेरे पास जो पुस्तकें हैं उनकी सूची आनेके बाद लिखूंगा कि अभ्यासके लिए कौन-सी पुस्तक काममें लानी चाहिए। अभी तो पाठमालाका पहला भाग ले और

१. लीलावती आसर अंग्रेजीके अपने अभ्यास सप्ताहमें एक बार गांधीजी को भेजा करती थीं जिन्हें वे अपने संशोधनों और टिप्पणियोंके साथ लौटा दिया करते थे। कुछ सामान्य संशोधन यहाँ छोड़ दिये गये हैं।

उसे शुरू कर दे। पहले पाठ सरल लगेंगे। जहाँसे कठिन लगें, वहाँसे तर्जुमा करना शुरू कर देना। जो भाव समझमें न आये, उसे पूछने में बिलकुल संकोच न करना। प्रभावतीकी पाठमालाका पहला भाग यहाँ है, इसलिए पृष्ठ संख्या टाँक देना काफी होगा। सुधारोंको ठीक तरहसे समझ लेना। जो समझमें न आये तो फिर पूछना।

मैथ्यूका क्या हाल है? वह क्या काम करता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३२) से। सी० डब्ल्यू० ६६०७ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

२९३. पत्र: बनारसीलाल तथा रुक्मिणी बजाजको

२६ जून, १९३५

चि० बनारसीलाल तथा रुक्मिणी,

तुम दोनोंके पत्र मिले। रोग-मात्रको शुरू होते ही निर्मूल कर देना चाहिए। आशा है, देवेन्द्रके टांसिल ठीक हो गये होंगे। बम्बई जाते समय वर्षा होते हुए जाओगे, यह खुशीकी बात है।

बापूके आशीर्वाद

श्री बनारसीलाल बजाज
ठठेरी बाजार
बनारस सिटी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१५९) से।

२९४. पत्र: पुरुषोत्तम एल० बावीशीको

२६ जून, १९३५

भाई पुरुषोत्तम,

तुम्हारा पत्र मिला।

चरखेमें मैं तो चमत्कार देखता ही हूँ।

तुम्हारा खेतीका प्रयोग सफल हो। उसके सम्बन्धमें मुझे जो लिखने लायक हो, लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२९) से। सी० डब्ल्यू० ४७४८ से भी; सौजन्य: पुरुषोत्तम एल० बावीशी

२९५. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

२६ जून, १९३५

चि० नरहरि,

भाई वेलचन्दका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। यदि यह तुम्हें ठीक लगे तो वह जहाँ हो वहाँ भेज देना। लक्ष्मीदाससे मैंने बात की थी। भाई वेलचन्द काम पर वापस आ जाये, उसका यह आग्रह मुझे उचित लगता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०८२) से।

२९६. पत्र : वनमाला एन० परीखको

२६ जून, १९३५

चि० वनमाला,

अब तेरा शरीर ठीक हो गया है तो उसे ऐसा ही बनाये रखने का प्रयत्न करना। यदि नमक और दाल छोड़ने से तुझे लाभ हुआ हो तो उन्हें न लेने पर दृढ़ बनी रहना। जिससे शरीर स्वस्थ रहता हो, ऐसे ही भोजनसे जितना स्वाद चाहिए प्राप्त कर लेना।

हस्तलिखित पत्रिकासे तुम सबको क्या लाभ होगा, मैं समझ ही नहीं सका, तो फिर मेरे आशीर्वादकी क्या कीमत है? फिर भी हो सकता है, उससे तुम्हें कुछ निर्दोष आनन्द प्राप्त हो। अत, आशीर्वाद चाहिए ही, तो लो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८४) से। सी० डब्ल्यू० ३००७ से भी; सौजन्य : वनमाला एम० देसाई

२९७. पत्र: जेठालाल गो० सम्पतको

२६ जून, १९३५

भाई जेठालाल,

'सत्यानासी'[1] से सम्बन्धित जानकारी 'हरिजनबन्धु' में भेजी है। मैंने तेलके बीजोंकी जाँच कर ली है। तेलवाले बीजोंकी खोज करूँगा और मिले तो तेल भी निकालूँगा। तुम्हारे दूसरे पत्रकी राह देखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री जेठालाल गोविन्दजी
अनन्तपुर
डाकखाना रेहली
जिला सागर

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९८५२) से; सौजन्य: नारायण जेठालाल सम्पत

२९८. पत्र: नारणदास गांधीको

वर्धा
२७ जून, १९३५

चि० नारणदास,

हरिलालको सारे पत्र यदि तुम्हारी मार्फत भेजता हूँ तो इसमें एक प्रयोजन है। प्रयोजन यह है कि तुम छान-बीनके काममें हिस्सा न बँटाओ तो भी इससे तुम्हें यह जानने का मौका मिलेगा कि उसके साथ तुम्हें कैसा सम्बन्ध रखना चाहिए। हरिलालको लिखे मेरे पत्रो से तुम देखोगे कि यह प्रश्न मेरे लिए बहुत महत्त्वका हो गया है। लेकिन इन पत्रोंका पढ़ने के बावजूद हरिलालके सम्बन्धमें तुम्हारे मनपर जो छाप पड़े तुम तो उसीके मुताबिक बरताव करना। अगर तुम्हें उसको खिलाना-पिलाना पड़ता हो तो तुम चाहो तो उससे कोई ऐसा काम लो जिसमें किसी तरहका खतरा न हो। लेकिन ऐसा न समझना कि तुम्हें उससे कोई-न-कोई काम लेना ही है या उसके साथ सम्बन्ध रखना ही है। रक्त-संबंधकी भी मर्यादा होती है। यह संबंध हमें अनीतिकी ओर प्रवृत्त करे, यह नही होने देना चाहिए। यदि कोई परांया आदमी हरिलालकी

१. एक वनस्पति। यह "दारूडी" शीर्षकसे ३०-६-१९३५ के हरिजनबन्धुमें प्रकाशित हुआ था।

स्थितिमें पड़ जाये तो उसके प्रति हमारा जो धर्म होगा, हरिलालके प्रति भी उससे कुछ अधिक करने का धर्म नहीं हो सकता। बल्कि परायेके प्रति शायद कुछ अधिक उदारता दिखाई जा सकती है, लेकिन हरिलालके प्रति कृपणता ही। मतलब यह कि जहाँ जितना अधिक रक्त-सम्बन्ध हो, वहाँ सख्ती भी उतनी ही अधिक बरती जानी चाहिए। ऐसा करके ही हम शुद्ध न्याय कर सकते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एम० एम० यू० / २) से। सी० डब्ल्यू० ८४५६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२९९. पत्र : काकुभाईको

२७ जून, १९३५

भाई काकुभाई,

खादी-प्रतिष्ठानमें रहनेवाले रतुभाई आदि कार्यकर्त्ताओंका कहना है कि तुमने उन्हें आश्वासन दिया था कि खर्चमें की जानेवाली कटौतीके कारण किसी भी कार्यकर्त्ताकी छँटनी नहीं की जायेगी। क्या तुमने किसीको ऐसा आश्वासन दिया था? इन लोगोंने ऐसा ही कहा है और छपवाया भी है। मैंने तुमसे यह प्रश्न इसलिए पूछा है कि नयी नीतिके कारण भण्डार [के काम] में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन तो करने ही पड़ेंगे। . . .[1]

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

३००. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

२७ जून, १९३५

भाई विट्ठलदास,

तुम्हारा पत्र मिला। अभी गणात्राको नोटिस मत देना। टाइपिंगकी जरूरत न हो तो उससे टाइपिंगके सिवाय जो काम लेना हो, सो लेना। टाइपिंगका काम भी हो तो अवश्य लेना। दूसरे परिवर्तनोंके सम्बन्धमें भी अपनी ही ढीलके कारण ढील समझना। ऐसे परिवर्तन जो मुझे सूझेंगे, तो शंकरलालसे पत्र-व्यवहार करके भी किये जा सकेंगे। जमनालालजी तो ७ तारीखको आ ही जायेंगे। अतः सब-कुछ तुम्हारी सुविधापर ही निर्भर करता है। मेरा झुकाव खासी कटौतीके पक्षमें है। इसलिए इस सम्बन्धमें मैं तुम्हारी पूरी मदद करूँगा।

१. साधन-सूत्रमें पत्र अधूरा है।

हेमप्रभादेवीका आरोप है कि तुमने उनके पाससे खादी प्रतिष्ठानका माल लेना मंजूर किया था, और फिर इंकार कर दिया। यह प्रश्न मैंने पहले भी पूछा था किन्तु इसका उत्तर देना, लगता है, तुम भूल ही गये।

शंकरलालकी तबीयत खराब है, इसलिए मेरी इच्छा है कि जबतक बने वह ऊटीमें ही रहें। अतः उन्हें जल्दी वापस बुलाने का लोभ मत करना। जैसे-तैसे काम चलाना हमारा कर्त्तव्य है।

साथका पत्र काकूभाईको[1] भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७९२) से।

३०१. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२७ जून, १९३५

भाई वल्लभभाई,

महादेव वहाँ हो या न हों, इसलिए तुम्हें ही लिखवाया है। मुझे विवरण[2] मिल गया और मैंने पढ़ लिया। मैं दूसरी डाकका इन्तजार कर रहा था किन्तु वह भी नहीं आई। बा भी पत्र लेकर नहीं आई इसलिए बादमें तार दिया।

मुझे विवरण जरा भी पसन्द नहीं आया। उसमें केवल तथ्य न देकर हकीकतों और दलीलोंको मिला दिया गया है। पहला अनुच्छेद ही अटपटा लगा, इसलिए मैंने तार दिया। अभी यानी ४ बजे डाक मिली और मैं यह लिखवा रहा हूँ। मैं देखता हूँ कि हमारी समिति नियुक्त करने की बात तुम्हें पसन्द आई है। इससे मुझे प्रसन्नता हुई, क्योंकि मैं मानता हूँ कि यह समिति हमें काफी मदद दे सकती है। डाक्टरोंकी राय तो स्वतन्त्र मानी ही जायेगी। बात तुम्हारे गले उतर गई है, इसलिए अधिक लिखने की जरूरत नहीं रह जाती। जो बयान तैयार हो, उसे मेरे देख लेनेके बाद ही भेजा जाये तो अच्छा होगा।

महादेवके पास सारी तफसीलें आ गई हों, तो बयान भले यहाँ तैयार करवा सकते हैं अथवा महादेवको एक दिन और रोकने की जरूरत मालूम हो तो रोक लेना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७४

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. बोरसद प्लेग-निवारण कार्य-सम्बन्धी।

३०२. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
२८ जून, १९३५

चि० मेरी,

ईश्वरको धन्यवाद, कुकर आखिर मिल ही गया।[1] क्या तुम कोई और चीज भी यहाँ छोड़ गई थी? छोटेलाल बुधवारको वापस आये हैं। अगर तुम्हारा स्वास्थ्य वहाँ सुधर रहा हो, खाने-पीनेका ठीक प्रबन्ध हो और किसी व्यक्तिको कोई कष्ट दिये बिना अगर तुम वहाँ ठहरी रह सकती हो तो तुम कुछ दिन और वहीं रहो, ताकि पूरी तरह स्वस्थ हो जाओ।

मेरी चेजलीका विचार है कि वह ७ जुलाई या उसके आसपास यहाँ आयेगी और कुमारी इघमको[2] भी साथ लायेगी।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

मैं जो तुम्हें प्राय: लिखता रहता हूँ वह इसलिए कि तुम्हारे पत्रोंमें जवाब देने योग्य बातें रहती हैं।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०५०) से। सी० डब्ल्यू० ३३८० से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

३०३. पत्र : नारायणदास रतनमल मलकानीको

२८ जून, १९३५

प्रिय मलकानी,

साथमें 'हरिजन' के एक ग्राहकका दिया यह पहला दान भेज रहा हूँ। तुम्हें हरिजन' में प्रकाशनके लिए दाताओंकी सूची मुझे हर हफ्ते भेजते रहना चाहिए।

श्रीयुत जुगलकिशोरने[3] मुझे एक बड़ा अच्छा लम्बा पत्र भेजा है। वे शीघ्र ही अच्छा खासा दान देनेवाले हैं।[4] कोषके सम्बन्धमें नामका उपयोग करना बन्द

१. देखिए "पत्र : एफ० मेरी बारको", २६-६-१९३५।

२. मेरी इंघम, मेरी चेजलेके निमंत्रणपर ग्राम-सेवाका कार्य करने के लिए इंग्लैण्डसे आई थीं।

३. जुगलकिशोर बिड़ला।

४. यहाँ साधन-सूत्रमें कुछ भूल जान पड़ती है, जिसे सुधारकर अनुवाद किया गया है।

कर दो और उसके लिए, जैसा मैंने किया है, उसी तरह सिर्फ हरिजन कूप-कोष नामका इस्तेमाल करो।

बापू

संलग्न पत्र : १ (चेक)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६२) से।

३०४. पत्र : लीलावती आसरको

दुबारा नहीं पढ़ा

२८ जून, १९३५

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला। तू थोड़ा-धीरज धर। सब व्यवस्थित हो जायेगा, तब नियम-पूर्वक काम चलेगा।

अब तुझे हफ्तेमें एक पत्र लिखना चाहिए। तेरे मनमें आये तो, दो पाठ भी लिख सकती है, एक गुजरातीका और एक अंग्रेजीका। लेकिन वहाँ से रवाना एक ही दिन करना, जिससे टिकटकी बचत हो। तेरा पत्र आने के बाद तीन दिनकी अवधि मगनभाईको और मुझे चाहिए, इससे तू डाकका अन्दाज कर सकती है। यहाँ यदि तेरा पत्र पहुँचने का दिन हमेशा एक हुआ, तो तुझे डाक मिलने का दिन भी हमेशा एक रहेगा।

यदि वजन बढ़ने के साथ-साथ शक्ति भी बढ़ती जाये तो वजन बढ़ने से घबराना नहीं चाहिए। तेरा वजन आसानीसे ११० पौंड हो सकता है।

मेरा लेख[1] तू ठीक समझी है। बालविधवाएँ समाजके दबावमें पड़कर संयम पालने का प्रयत्न करे, इसकी अपेक्षा उन्हें पुनर्विवाह करने को प्रेरित किया जाये, यह मैं ज्यादा ठीक मानता हूँ। जिनमें तीव्र वैराग्य होगा वे तो मना ही करेंगी, और उनका वैधव्य उन्हें शोभा देगा।

अंग्रेजी पुस्तकोंमें तू अभी 'नेलसन रीडर' लेना। उसमें से हर हफ्ते १५ पंक्तियाँ सुन्दरसे-सुन्दर अक्षरोंमें लिख भेजना और उनका तर्जुमा भी सुन्दरसे-सुन्दर अक्षरोंमें लिख भेजना। कागज एक ही आकारके लेना, जिससे अन्तमें तू उन्हें सींकर अपने पास रख सके।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५७५) से। सी० डब्ल्यू० ६५४७ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१. देखिए "टिप्पणियाँ", २२-६-१९३५।

३०५. पत्र : नवीन गांधीको

२८ जून, १९३५

चि० नवीन,

तेरा पत्र मिला। तेरी पढ़ने की अभिलाषाको मैं स्तुत्य मानता हूँ। किन्तु मुझे भय है, कि मैं इस मामलेमें तेरी कोई सहायता नही कर सकूँगा। मैं तुझे जितना भी समय दूँगा, वह मुझे कम ही लगेगा और ऐसी स्थितिमे तो 'न घरके रहे न घाटके' वाली कहावत चरितार्थ होगी। अत या तो तू अहमदाबादके विनयमन्दिरमें दाखिल हो जा या फिर राजकोट अथवा भावनगरके हाईस्कूलमें। तेरे हाईस्कूलमें जानेकी बात मुझे नही पुसाती, किन्तु मै तेरी लालसाको तुष्ट करना चाहता हूँ। इसके अतिरिक्त मुझे और कोई रास्ता नजर नही आता। यदि तू मेरे पास आ जाये तो अग्रेजी और गणित पक्का करने में मैं तेरी यथाशक्ति सहायता करूँगा किन्तु मुझपर किसी तरहकी शर्त नहीं थोपी जा सकती। मुख्य वस्तु तो यहाँका कार्य है, अर्थात् सेवा मानकर ही जो-कुछ किया जा सके सो करना। तेरा मेरे पास रहना ही सर्वोत्तम है। मुझे यही पसन्द भी है किन्तु मेरे पास रहनेका मतलब है — सेवाधर्म सीखना और उसमें प्रगति करना। यहाँतक कि ज्ञान-वृद्धि भी उसीके लिए करनी चाहिए।

मुझे निःसंकोच लिखता रह। यदि तू मुझे लिखेगा तो मैं तेरा पथ-प्रदर्शन करनेका प्रयत्न करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

३०६. श्रमयज्ञ

'गीता' में कहा है, "आरम्भमें यज्ञके साथ-साथ प्रजाको उत्पन्न करके ब्रह्माने उनसे कहा, 'इस यज्ञके द्वारा तुम्हारी समृद्धि हो; यह यज्ञ तुम्हारी कामधेनु हो।' जो इस यज्ञको किये बिना खाता है वह चोरीका अन्न खाता है।" और बाइबिलका वचन है: "तू अपने पसीनेकी कमाई खा।" यज्ञ अनेक प्रकारके हो सकते है। उनमें एक श्रमयज्ञ भी हो सकता है। यदि सब लोग अपनी रोटीके लिए ही परिश्रम करे और उससे अधिक अर्जित न करें, तो दुनियामें अन्नकी कमी न रहे, और सबको अवकाशका काफी समय भी मिले। न तब किसीको जनसख्याकी वृद्धिकी शिकायत रहे, न कोई बीमारी आये, और न मनुष्यको कोई कष्ट या क्लेश ही सताये। यह श्रम उच्चसे-उच्च प्रकारका यज्ञ होगा। इसमें सन्देह नही कि मनुष्य अपने शरीर या

बुद्धिके द्वारा और भी अनेक काम करेंगे, पर उनका वह सब श्रम लोक-कल्याणके लिए किया गया प्रेममूलक श्रम होगा। उस स्थितिमें न कोई राव होगा न कोई रंक, न कोई ऊँच होगा न कोई नीच, न कोई स्पृश्य रहेगा न कोई अस्पृश्य।

भले ही यह एक अलभ्य आदर्श हो, पर इस कारण हमें अपना प्रयत्न बन्द कर देनेकी जरूरत नहीं। यज्ञके सम्पूर्ण नियमको — और याद रहे कि यह हमारे जीवनका मूलभूत नियम है — पूरा किये बिना भी अगर हम अपने नित्यके निर्वाहके लिए पर्याप्त शारीरिक श्रम करेंगे तो उस आदर्शके बहुत-कुछ निकट तो हम पहुँच ही जायेंगे।

यदि हम ऐसा करेंगे तो हमारी आवश्यकताएँ बहुत कम हो जायेंगी, और हमारा भोजन भी सादा बन जायेगा। तब हम जीनेके लिए खायेंगे, न कि खानेके लिए जियेंगे। इस बातकी यथार्थतामें जिसे शंका हो, वह अपने परिश्रमकी कमाई खानेका प्रयत्न करे। अपने पसीनेकी कमाई खानेमें उसे स्वाद ही कुछ और मिलेगा, उसका स्वास्थ्य भी सुधर जायेगा, और उसे यह मालूम हो जायेगा कि जो बहुत-सी विलासकी चीजें उसने अपने ऊपर लाद रखी थी, वे सब बिलकुल फिजूल थी।

मनुष्य अपने बौद्धिक श्रमकी कमाई क्यों न खाये? नही, यह ठीक नहीं है। शरीरकी आवश्यकताओंकी पूर्ति शारीरिक श्रमसे ही होनी चाहिए। बाइबिलका यह वचन कि "सीजरका प्राप्य सीजरको दीजिए" कदाचित् इस सन्दर्भमें भी सही लागू पड़ता है।

केवल मस्तिष्कका, अर्थात् बौद्धिक श्रम तो आत्माके लिए है, और उससे मिलनेवाला सन्तोष भी उसके बाहर नही, उसीमें मिल जाता है। उसमें पारिश्रमिक मिलने की इच्छा नही करनी चाहिए। आदर्श राज्यमें डॉक्टर, वकील आदि समाजके हितके लिए ही काम करेंगे, अपने लिए नही। शारीरिक श्रमके नियमपर चलने से समाजमें एक शान्तिमय क्रान्ति पैदा होगी। अस्तित्वके निमित्त संघर्षके स्थानपर पारस्परिक सेवाकी प्रतिस्पर्धा स्थापित करने में मनुष्यकी विजय होगी। पाशविक नियमका स्थान मानवी नियम ले लेगा।

ग्रामोंकी ओर जानेका अर्थ यह है कि निश्चित रीतिसे शरीर-श्रमके धर्मको, उसके सारे फलितार्थोंके साथ, स्वेच्छापूर्वक स्वीकार कर लिया जाये। आलोचक इस पर यह कहते हैं कि "करोड़ों भारतवासी आज गाँवोंमें ही तो रहते हैं, तो भी उन बेचारोंको वहाँ पेटभर भोजन नसीब नही होता, और भूखो मर रहे हैं।" बात तो यह बिलकुल सत्य है। सद्भाग्यसे हम यह जानते हैं कि वे इस नियमका पालन वहाँ स्वेच्छासे नही कर रहे हैं। अगर उनकी चले तो ऐसा शारीरिक श्रम वे कभी न करें, बल्कि वे किसी नजदीकी शहरकी ओर निकल भागें और वहाँ जगह मिल जाये तो वही बस जायें। मालिकका हुक्म जब जबर्दस्ती बजाया जाता है, तब उसे परवशता या दासताकी स्थिति कहते हैं। और पिताकी आज्ञाका जब स्वेच्छासे पालन किया जाता है, तब वह आज्ञा-पालन पुत्रत्वका गौरव है। इसी तरह शरीर-श्रमके नियमका जब विवशतासे पालन किया जाता है तब उससे दरिद्रता, रोग और असन्तोष उत्पन्न होता है। यह गुलामीकी अवस्था है। उसका स्वेच्छासे पालन किया

जायेगा, तब उससे अवश्य ही सन्तोष और आरोग्यका लाभ होगा। और आरोग्य ही तो सच्चा धन है। चाँदी-सोनेके ये टुकड़े सच्ची सम्पत्ति नहीं हैं। ग्रामोद्योग संघ इसी स्वेच्छामूलक शारीरिक श्रमकी दिशामें एक प्रयोग है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-६-१९३५

३०७. चरखेमें सुधार

सावली खादीका एक अच्छा उत्पत्ति-केन्द्र है। वहाँ जाँच-पड़ताल करनेपर यह मालूम हुआ है कि कतैया औसतन एक घंटेमें एक पाईसे अधिक नहीं कमाता। सद्भाग्यसे या तो उसकी कमाईके कुछ अन्य साधन हैं, या उसके कुटुम्बके दूसरे लोग अधिक कमाईका कोई दूसरा धन्धा करते हैं। लेकिन इतने ज्ञानसे सन्तोष मानकर बैठे रहना खादी-सेवकको नहीं पुसा सकता। उसे ऐसे उपाय सोचने चाहिए जिनसे कतैया अधिक पैसा कमा सके। इसके तीन मार्ग हैं — (१) मजदूरी अधिक देना और व्यापारकी खादीके दाम बढ़ाना; (२) ओटनेवाले, धुननेवाले और बुननेवाले से कहा जाये कि वे अपनी कमाईमें से कुछ हिस्सा निकालकर कतैयेको दे दें; और (३) मौजूदा चरखेमें सुधार करना, तथा कतैयेको यह सिखाना कि वह कातनेमें ज्यादा सावधानी बरते।

यदि यह अन्तिम मार्ग सम्भव न हो तो पहले दो मार्गोंमें से एक-न-एक तो ग्रहण करना ही होगा। लेकिन मौजूदा चरखेमें और कतैयेकी पद्धतिमें सुधार अवश्य किया जा सकता है। किर्लोस्कर कम्पनीका प्रयत्न परीक्षामें अगर बिलकुल ठीक उतरा होता, तो कतैयेकी मजदूरी आसनीसे नौ पाईतक पहुँच जाती। पर ऐसा नहीं हुआ। चरखा संघके पास जितने चरखे आये थे, उनमें किर्लोस्कर कम्पनीका चरखा सर्वश्रेष्ठ था, लेकिन परीक्षकोंने गाँवोंकी झोपड़ियोंकी दृष्टिसे जो कसौटी रखी थी, उसपर वह ठीक-ठीक नहीं उतर सका। वह चरखा मौजूदा चरखोंका स्थान नहीं ले सका। हमें आशा है कि किर्लोस्कर कम्पनी या दूसरे अन्वेषक इस प्रयत्नको छोड़ नहीं देंगे। पारितोषिक यद्यपि हटा लिया गया है, तो भी मुझे इसमें सन्देह नहीं कि अगर कोई भी अच्छा प्रयास होगा तो संघ उसकी परीक्षा करने के लिए हमेशा तैयार रहेगा, और अगर वह चरखा सचमुच छोटा और चलनेमें हल्का हुआ तो उसपर पूरा पारितोषिक दिया जायेगा। किन्तु उस सुन्दर दिवसके आनेतक — और कहा नहीं जा सकता कि वह कभी आयेगा भी या नहीं — हमें इस मौजूदा चरखेमें अवश्य सुधार करना चाहिए। श्री शंकरलाल बैंकर तकुएकी गतिकी तरफ अपना सारा ध्यान दे रहे हैं। यह एक आवश्यक सुधार है। यह मालूम हुआ है कि चरखेके एक पहियेको एक बार घुमाने से तकुएके बहुत कम — सिर्फ ३५ — चक्कर होते हैं। नतीजा यह आया है कि घंटेमें औसतन सौ गज सूत निकल जाये तो निकल

जाये, डेढ़ सौ से अधिक तो निकल ही नहीं सकता। अधिकसे-अधिक गति ८०० गजतक पहुँची है। अगर तकुएके वेगमें सुधार हो जाये, तो सूतका औसत और मजदूरी आसानीसे दूनी हो सकती है। पतला तकुआ और पतली माल काममें लाने से तथा तकुएकी गर्रीका घेरा कम कर देने से यह हो सकता है। सुधार आसानीसे किस प्रकार हो सकते हैं, इसके ये तो केवल यहाँ दृष्टान्त दिये गये हैं।

लेकिन जबतक खादी-सेवक कताई-शास्त्रमें कुशल नहीं बनेंगे तबतक कुछ भी सुधार नही हो सकता। उनमें शास्त्रीय तथा व्यावहारिक दोनों ही प्रकारका ज्ञान होना चाहिए। उन्हें मौजूदा चरखोंकी अत्यन्त सादी बनावटका और उनके हरएक पुर्जेके उपयोगका अध्ययन करना चाहिए। उन्हें स्वयं ओटने, धुनने और कातनेकी कलामें प्रवीण होना चाहिए। इसके अलावा उन्हें कतैयेके हितमें अधिकसे-अधिक दिलचस्पी लेनी चाहिए।

इसका मतलब यह हुआ कि खादी-सेवा संघकी रचना नये सिरेसे होनी चाहिए। यह काम जितनी जल्दी हो उससे हम सबको उतना ही लाभ होगा। हम जब यह जानते हैं कि कतैयेके काममें आसानीसे सुधार हो सकता है, तब हमें उसके लापरवाहीसे किये हुए कामसे सन्तोष नही मानना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-६-१९३५

३०८. टिप्पणियाँ

जूएका व्यसन

बम्बईसे एक सज्जनने जूएकी बढ़ती हुई बुराईके बारेमें एक करुणाजनक पत्र लिखा है। नीचे पत्रके महत्त्वपूर्ण अंशोका स्वतन्त्र अनुवाद दिया जा रहा है:

> यह दुष्ट व्यसन जिस तरह गुजरातके गाय-जैसे भोले-भाले किसानोंको चौपट कर रहा है, उसी तरह इसने अच्छे-अच्छे पदवीधारियों, बैरिस्टरों, डॉक्टरों व्यापारियो और राष्ट्रीय चरित्र और नीतिके पहरेदार अध्यापकोंतक पर अपना मायाजाल फैला रखा है। सुनते हैं कि खुद पुलिस-विभागतक के आदमी इस बुराईमें फँसे हुए हैं। स्त्रियों और सुकुमार वयके बच्चोंको तथा अंधे भिखारियोंको भी यह निगोड़ी लत लग गई है। और यहाँके अखबार भी इस दुष्ट व्यसनकी विज्ञापनबाजीपर पनप रहे हैं। कुछ सुधारक इस दिशामें प्रयत्न कर भी रहे हैं, पर कोई असर नहीं हो रहा है। दिन-दिन बढ़ती हुई गरीबी और तज्जनित बेकारी ही क्या इसका कारण नहीं है?

मेरा ऐसा खयाल नही है। इसमें सन्देह नही कि जूएके प्रचारमें बेकारीसे उत्तेजन मिलता है। पर इसके कारण कुछ और भी गहरे होने चाहिए। जूएके इस

विकट जालमें जो तमाम वर्गोंके लोग फँसे हुए हैं, इस बातसे ही हमें सतर्क हो जाना चाहिए, और इस व्यसनके कारणोंकी खोज ज्यादा गहराईसे करनी चाहिए।

शक्कर बनाम गुड़

शक्करकी तुलनामें गुड़ आहार-शास्त्रकी दृष्टिसे ज्यादा अच्छा है, इसके पक्षमें नये-नये प्रमाण मिलते ही जा रहे हैं। श्री शकरलाल बैंकरने, जो आजकल ऊटीके आसपासके इलाकेमें घूम रहे हैं, अपने एक रसायनशास्त्री मित्र द्वारा तैयार की गई नीचे दी जा रही तालिका भेजी है। इस तालिकामें उक्त रसायनशास्त्रीको शक्कर और गुड़के जो भी नमूने विश्लेषणके लिए सौंपे गये थे, उनमें से हर किलोग्राममें कितना मिलिग्राम ताँबेका अंश प्राप्त हुआ, यह बताया गया है:

सिंगनेल्लूर शक्कर	०.६१
अस्का शक्कर	१.९३
गुड अनकापल्ली	७.४८
गुड़ सिंगनेल्लूर	७.६७
छोआ	५.७
मिसरी (गन्नेकी)	४.९८
मिसरी (ताड़की)	७.४०

इस तरह गुड़के स्थानपर शक्करका उपयोग पैसेकी दोहरी बरबादी है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-६-१९३५

३०९. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
२९ जून, १९३५

चि० मेरी,[1]

लगता है कि तुम वहाँ काफी लम्बे असतक रहोगी। पर तुम वहाँ जितना जरूरी है, उतना अवश्य रहना।

वहाँ मौसम कैसा है? तुम्हारे वार्डमें कुल कितने लोग हैं?

एक-दूसरेके बिस्तरोंके बीच कितना फासला है?

खानेके लिए वे तुम्हें क्या देते हैं?

सस्नेह,

बापूके आशीर्वाद[2]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०५१) से। सी० डब्ल्यू० ३३८१ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार

१ और २. सम्बोधन और हस्ताक्षर हिन्दीमें हैं।

३१०. पत्र : बलीबहन एम० अडालजाको

२९ जून, १९३५

चि० बली,

तेरे दोनों पत्र मिले। तू धीरज धारण करके बैठी रह। अन्तमें सत्य अवश्य प्रकट होगा। हरिलाल सभी मर्यादाएँ तोड़ रहा है। तुझे जवाब देनेकी कोई जरूरत नहीं है। वह जो-कुछ करे, वकीलकी मार्फत उससे अपना बचाव अवश्य करना। उसके कारनामोंका बुरी तरह भंडाफोड़ करने का तुझे पूरा अधिकार है। दबनेकी कोई जरूरत नहीं है, न एक भी पैसा उसे देना चाहिए। मैं तो उसे लिख ही रहा हूँ। नोटिस वापस भेज रहा हूँ, और जो पत्र तूने वापस माँगा है, वह भी।

बा कल दिल्ली जा रही है। लक्ष्मीकी प्रसूति होनेवाली है इसलिए उसने मनुको बुलाया है। मनु स्वयं ही जाना चाहती है, सो जाने दे रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०५१) से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला

३११. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

वर्धा
३० जून, १९३५

प्रिय चार्ली,

अन्य कागजोंके साथ तुम्हारे पत्र ठीक वक्तपर मिल गये हैं। इस बारेमें मैं अगाथाको कुछ नहीं लिखूंगा। उसके पत्रका यह वाक्य तुम्हें याद होगा — "हम चाहते है कि महात्माजी द्वन्द्वसे ऊपर रहें। क्या, मेरा यह सोचना सही है कि पिछले वर्षकी घटनाओंने उन्हें कमजोर कर दिया है?" अगर तुम समझते हो कि घटनाओंसे मैं कमजोर नहीं हुआ और मैं द्वन्द्वसे परे बना हूँ तो मेरी ओरसे तुम उसे आश्वस्त करो और कहो कि मैं "पूरी परिस्थितिसे निराश नहीं हूँ।" हाँ, रेतकी नींवपर आशाके किले नही बनाता। विश्वासकी चट्टानपर स्थित सत्य ही प्रतिकूल लहरोंमें भी अडिग खड़ा रहता है। किसी भारतीयके इंग्लैण्ड जानेकी बातको लेकर मेरे मनमें कोई बडा उत्साह नही है,[1] तो मेरे पास इसके कुछ बड़े ही ठोस कारण हैं। जो श्रेष्ठ लोग हमारे

१. देखिए "पत्र : अगाथा हैरिसनको", १-५-१९३५।

बीचमें हूँ, उनके लिए यहाँ जरूरतसे ज्यादा काम पड़ा हुआ है और मेरे मनमें यह बात बिलकुल साफ है कि जब हम यहाँका अपना काम ठीक तरहसे समझ कर लेंगे तब इंग्लैण्ड और भारतके बीच सच्ची मित्रता कायम हो जायेगी। वे भारतीय, जो अहिंसामें विश्वास करते हैं, जबतक इस बातको प्रमाणित नहीं कर देते कि राजनीतिक रूपसे जाग्रत भारतीयोंके मनमें अंग्रेजोंके प्रति घृणा नहीं है और उनके मनमें उत्कट प्रेम न सही, पर एक सद्भावनाका भाव अवश्य है, तबतक उन्हें इंग्लैण्ड कदापि नहीं जाना चाहिए। आज राजगोपालाचारी इस बातको प्रमाणित नहीं कर सकते। और इस बातसे क्या फायदा कि वे अंग्रेजोंके पास जाकर यह कहें कि तुम अपने कर्त्तव्यका पालन करो, जबकि भारतीय मनकी उच्चादर्शहीन प्रवृत्तिसे मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकते और शेष मानवताकी तरह उनसे घृणा करते हैं, जो उनकी समझमें उनके दुःखके कारण हैं? तुम मेरी बात ठीकसे समझ रहे हो न? मैं अगाथाके पत्रमें लिखे सिर्फ एक वाक्यका उत्तर इतने विस्तारसे इसलिए लिख रहा हूँ कि मैं उसके मनकी पीड़ाको महसूस करता हूँ और उसे तथा उन सबको, जो उसीकी तरह महसूस करते हैं, कुछ सुकून देना चाहता हूँ।

शिमलाकी घटनाको तुम्हें शायद कुछ और दिनोंतक बर्दाश्त करना पड़े। लेकिन अगर कोई तुम्हारी निन्दा करता है तो उससे तुम्हारा क्या बिगड़ता है? तुमने ठीक बात कही[1] और तुम्हारे सन्तोषके लिए इतना काफी है।

तुम्हारे पत्रके शेष अंश तथा साथ भेजे गये कागजोंके बारेमें मेरा खयाल है, तुम उत्तरकी अपेक्षा नहीं रखते। उम्मीद है कि खम्भाताका स्वास्थ्य निरन्तर सुधर रहा होगा। उसने अस्पतालके प्रबन्धके सम्बन्धमें जो शिकायत की है, उसकी जाँच-पड़ताल करना।

एक चीज जरूर कहना चाहता हूँ। अगाथाके पत्रकी वजहसे तुम अपना कार्य-क्रम मत बदलना। जो होता है सो हो। जिस तरहका कठिन परिश्रम अगाथा कर रही है, उसे देखते हुए यह इच्छा करना ठीक ही है कि उसे कुछ राहत दी जाये। लेकिन यह तो तुम्हारे वहाँ पहुँचनेपर ही हो सकता है। फिलहाल तो उससे कहो कि इतनी जल्दी न मचाये और व्यर्थकी चिन्ता न करे।

तुम सबको स्नेह।

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९८९) से।

१. अगाथा हैरिसनको लिखे अपने ७ जूनके पत्रमें सी० एफ० एन्ड्रयूजने क्वेटाके भूकम्पपर "अखबारोंको जारी की गई सरकारी विज्ञप्तियोंमें प्रजातिगत भेद-भाव" का उल्लेख करते हुए कहा था कि "...अखबार मृत, घायल या बच निकलनेवाले अंग्रेजोंके नामोंसे भरे पड़े थे, और भारतीय सिविल अधिकारियों तकके नाम नहीं दिये गये थे। शिमलाका वातावरण विद्युतवत् था।... उनके मस्तिष्कमें तनिक भी सामान्य बुद्धि नहीं दिखाई देती।...वे इस भ्रामक विश्वासमें पड़े हुए हैं कि भारत-भरके सारे भारतीय, जो-कुछ हुआ है, उसपर खुश हैं और सिर्फ एक ही व्यक्ति परेशान है और प्रजातिगत भावनाको भड़का रहा है — वह है सी० एफ० एन्ड्रयूज।" (चार्ल्स फ्रीअर एन्ड्रयूज, पृ० २८२)

३१२. पत्र : हीरालाल शर्माको

३० जून, १९३५

चि० शर्मा,

तुम्हारे दो खत मिले। कोनसलके पास विज़ाकी तजवीज चल रही है। इसीके लिए तुम्हारे कलकत्ता जाना नहीं होगा, ऐसी मेरी उम्मीद है। डा० कैलोगका उत्तर नहीं आया है। आना चाहिये था। मैं दूसरी तजवीज करूंगा। श्री प० के खतमें कुछ है नहीं। मैंने उसको लिखा है कि उसके खतपर मैं कोई ध्यान नहीं दे सकता हूं मैंने इसमेंसे कोई चीजपर वज़न नहीं दिया है। इसलिए तुमको भी इस बारेमें कुछ नही लिखा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १७२-७३

३१३. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

वर्धा
१ जुलाई, १९३५

चि० अम्बुजम्,

विवाह निर्विघ्न सम्पन्न हो और कृष्णस्वामी तथा उसकी पत्नीको सुखी और सेवामय सुदीर्घ जीवन प्राप्त हो। आशा है, शनिवारतक किचीकी उँगली बिलकुल ठीक हो जायेगी।

कुआँ-कोषके बारेमें कोई जल्दी नहीं है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०२) से; सौजन्य : एस० अम्बुजम्माल

३१४. पत्र : क० मा० मुंशीको

१ जुलाई, १९३५

भाईश्री मुंशी,

यदि प्रेमचन्दजी को कीर्तिक (गुडविल) के लिए कुछ देना पड़े[1] तो मैं व्यक्तिगत रूपसे स्वतन्त्र पत्र निकालना पसन्द करूँगा। हिन्दी लेखक तो हमें मिल ही जायेंगे।

यदि प्रेमचन्दजी सेवा-भावसे इस कामको हाथमें लें तभी हम उन्हें निबाह सकते हैं। हमें उतावली नहीं करनी चाहिए। जब निर्णय हो जायेगा तभी हम गुरुदेवसे भिक्षा माँगेंगे। मुझे स्वयं तो उन्हें लिखते हुए संकोच होता है क्योंकि उनकी इच्छा न होनेपर शायद लिहाजकी वजहसे [वे लिखनेको तैयार हो जायें]। किन्तु समय आनेपर मैं महादेवसे लिखवा दूँगा या फिर तुम लिख देना। तुम्हारे पत्रकमें मेरा नाम तो कहीं-न-कहीं रहेगा ही और उससे [मेरे द्वारा] निमन्त्रण दिये जानेका उद्देश्य पूरा हो जायेगा।

आशा है, पचगनीमें रहने से तुम्हें फायदा पहुँचा होगा।

'हंस' का प्रकाशन शुरू करने से पहले पैसेकी व्यवस्था कर लेना भी आवश्यक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७५७६) से; सौजन्य: क० मा० मुंशी

३१५. पत्र : नारणदास गांधीको

१ जुलाई, १९३५

चि० नारणदास,

हरिलालको लिखा मेरा पत्र[2] पढ़ लेना। उससे तुम शायद अपने कर्तव्यको समझ सकोगे। अभी मैं आज्ञा देनेको तैयार नहीं हूँ, किन्तु मुझे लगता है कि वली,[3] कुमी[4] और मनु सही हैं। यदि तुम्हें ऐसा लगता हो कि वे गलती पर हैं तो मुझे

१. तात्पर्य प्रेमचन्द और क० मा० मुंशीके संयुक्त सम्पादकत्व और स्वामित्वमें प्रकाशित होनेवाले हंस नामक हिन्दी मासिकके कीर्तिकसे है।

२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है; तथापि देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", ३-७-१९३५।

३ व ४. वली मणिलाल अडालजा और कुमी तुलसीदास मनियार, हरिलाल गांधीकी सालियाँ।

चेताना। यदि वे तुम्हें सही लगती हों और हरिलाल अपने दोष स्वीकार नहीं करता तो तुम उसे कदापि नही रख सकते। अब उसे किसी भी हालतमें सार्वजनिक कोषसे सहायताके रूपमें कुछ नही दिया जाना चाहिए। हाँ, वह काम करके अवश्य पा सकता है। इसमें मेरा सुझाव आ जाता है। इसपर विचार करके तुम्हारा मन जो कहे सो करना।

मैथ्यूका पत्र इसके साथ है। प्रेमाके पत्र ही ऐसे होते हैं कि उनके लिए उपयुक्त उत्तर सहज ही निकल आता है।

कारखाने (वर्कशाप)का क्या हुआ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४५७ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

३१६. पत्र : हीरालाल शर्माको

१ जुलाई, १९३५

चि० शर्मा,

कलकत्तेसे खत आया है।[1] स्टीमर १० अगस्टके आसपास जायगी। लिखते हैं तुमारे दस-बार[2] दिन पहले जाना होगा। अमेरीकाके वीसाके बारेमें वे ठीक कर देंगे। तुमारे पर वह छपा हुआ किसने भेजा था?[3] निश्चयसे खबर चार-पांच रोजमें आयंगे।

दरीयाकी[4] परवा नहीं है, जाना कलकत्तेसे ही है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १७२ और १७३ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे

१. शायद हीरालाल शर्माकी विदेश-यात्राका खर्च उठानेवाले बिड़ला-बन्धुओंका लिखा पत्र।

२. बारह।

३. हीरालाल शर्माके एक मित्रने उन्हें कलकत्ताके एक अखबारकी कतरन भेजी थी, जिसमें उनके विदेश-यात्राके इरादेकी खबर छपी थी।

४. समुद्र।

३१७. पत्र : जी० सीताराम शास्त्रीको

वर्धा
२ जुलाई, १९३५

प्रिय सीतारामं शास्त्री,

लगता है, खादी संस्थानम्की रिपोर्टोंमें कुछ नहीं होता, इसलिए आपको मेरी सलाह है कि आप हर महीने रिपोर्ट न भेजें। रिपोर्ट तभी भेजें जब जय या पराजयके अर्थमें उनमें कुछ नया या उल्लेखनीय हो। हर तफसीलकी ओर सावधानी पूर्वक ध्यान देनेसे ही उच्चस्तरकी कार्य-कुशलता आती है। किसी घड़ीकी यन्त्र-प्रणालीमें एक पेंचके ढीलेपनसे भी सारा सन्तुलन उलट जाता है, तब फिर सोचिए कि मानसिक प्रक्रियापर यह बात कितनी अधिक लागू होती होगी। और मानसिक क्रियाका सही होना या उसका कार्य-कुशल होना इस बातपर निर्भर है कि हम अपने दैनिक जीवनमें कितने सही ढंगसे अपना काम करते है।

अब अदला-बदलीके बारेमें ४५० रुपयेसे भी काम चलेगा। लेकिन राशिको सौकी गणनामें यानी ५०० क्यो न रखा जाये? मैं समझता हूँ, स्वर्ण-पदक अनावश्यक है। पुरस्कार जीतनेवालेको संस्थानम्के खद्दरको चुननेकी छूट दी जा सकती है, लेकिन निर्णायक कोई अर्थशास्त्री होना चाहिए। इसलिए मैं श्रीयुत कुमारप्पाका नाम सुझाता हूँ। मैं नही समझता कि कई निर्णायकोंकी जरूरत है। आप कोई और नाम भी तय कर सकते हैं। रामदास पन्तुलु शायद बेहतर नाम हो। प्रतियोगियोको अधिक संख्यामें आकृष्ट करनेकी दृष्टिसे नामके बारेमें सोचना शायद सार्थक हो सकता है। और अन्तमें, आप खुद कोई छोटा-सा नोट लिखकर भेज दें। फिर मैं अपने ढंगसे उसे सँवारकर प्रकाशित करूँगा।

छठी भारत भाग्य यात्राका विवरण[1] मैं नहीं छाप रहा हूँ। यह तो उसी पुरानी चीजकी पुनरावृत्ति होगी। लोगोके लिए इतना जान लेना ही काफी है कि यह विनय आश्रमका स्थायी अंग बन गया है। अगर आपके पास काफी कार्यकर्त्ता हो, मैं चाहूँगा कि आप कुछको गाँवोमें भेजिए — हर गाँवमें एकको। इससे कार्यकर्त्ताओंमें जरूरत पडनेपर अपनी सूझ-बूझसे काम लेनेकी क्षमता और स्वावलम्बन आयेगा। इस तरह हमें तरह-तरहके अनुभव प्राप्त होंगे। यह ग्रामोद्धार-कार्य अत्यन्त कठिन है। अगर आप 'हरिजन' के पृष्ठोंको ध्यानसे पढ़ते हैं तो यह बात समझते होंगे।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य . प्यारेलाल

१. जी० सीताराम शास्त्री द्वारा "ग्राम-सेवाके सन्देशके प्रचार" के लिए संगठित की गई कार्यकर्त्ताओंकी "तीर्थयात्रा"। पहली "यात्रा" २७ दिसम्बर, १९३४ से १३ जनवरी, १९३५ तक चली थी। "दूसरी तीर्थयात्रा" के विवरणके लिए देखिए खण्ड ६०, पृ० ३६०-६२।

३१८. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

दुबारा नहीं पढ़ा

२ जुलाई, १९३५

चि० नरहरि,

महादेव कल रात बम्बईके लिए रवाना हो गया। तुम्हारा पत्र मैं वहीं भेज रहा हूँ।

क्या तुम हरिसिंहके किसी सम्बन्धीको जानते हो? तुमने उसे खबर तो दी ही होगी? उसका अग्निसंस्कार तो किया ही गया होगा; उसमें कौन गया था? हरिसिंह कहाँ सोता था? क्या वह सोने लायक ठीक जगह है? वह खाटपर सोता था या जमीनपर? मैं तो यह मानता हूँ कि सभी आखिरी घड़ी आ जानेपर ही दम तोड़ते हैं किन्तु उस घड़ीका पहलेसे पता न चल पाने और मृत्यु अप्रिय होनेके कारण व्यक्तिका इलाज कराने के सिवा और कोई चारा नहीं है। इस दृष्टिसे विचार करें तो जब यह पता ही न चल पा रहा हो कि किसने काटा है तब उसे साँपका डसा मानकर ही उपचार की व्यवस्था करनी चाहिए। उसे तुरन्त डॉक्टरके यहाँ तो ले जाया ही जा सकता है किन्तु यदि हम वैसा न करें तो बंध बाँधकर, जहाँ काटने का सन्देह हो, उस जगहपर नश्तरसे खून निकालकर उसमें परमेगनेट भरकर, गीली मिट्टी थोपकर और पीड़ितको जगाये रखकर उसका उपचार कर सकते हैं। मुँहमें अँगुली डालकर या नमक मिला गरम पानी पिलाकर उसे वमन भी कराया जा सकता है। यदि काफी मात्रामें नमक मिलाया जायेगा तो तुरन्त वमन हो जायेगा। इसके अतिरिक्त यदि कुछ अन्य उपाय भी हों तो उन्हें डॉक्टरसे जान लेना चाहिए।

भगवानजी से कहना कि उनका पत्र मिल गया है। उनके प्रश्न तो मुझे याद नहीं है, अतः वे पुनः लिखें।

बापूके आशीर्वाद

श्री नरहरि द्वा० परीख
हरिजन आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०८३) से।

३१९. पत्र : शिवाभाई जी० पटेलको

मगनवाड़ी, वर्धा
२ जुलाई, १९३५

चि० शिवाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। लगता है, शुरुआत तो अच्छी हुई है। मेरे विचारसे हमारे ग्रामोद्योगमें भैंस या भैंसके घीका कोई स्थान नहीं है। जो काम नियमित रूपसे चल ही रहे हैं उनमें हाथ डालने से भला क्या लाभ? हमें व्यापार तो करना ही नहीं है।

जो लोग गो-सेवाको अपना धार्मिक कर्त्तव्य समझते हैं, वे भैंसका प्रचार कदापि नहीं करेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५१५) से। सी० डब्ल्यू० ४३१ से भी; सौजन्य: शिवाभाई जी० पटेल

३२०. पत्र : वसुमती पण्डितको

२ जुलाई, १९३५

चि० वसुमती,

तेरा पत्र मिला। तेरा वहाँ एक वर्षतक दृढ़तापूर्वक आसन जमाये रखना मुझे तो बहुत ही अच्छा लगा। यदि तेरा मन प्रफुल्लित होगा तो उसके साथ-साथ शरीर भी अपने-आप सुधरेगा और स्वस्थ रहेगा। जो काम तुझे सौंपा गया है, वह तो अच्छा ही है। तुझे अपनी रुचिके अनुसार कुछ-न-कुछ नया सीखते ही रहना चाहिए किन्तु अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखते हुए। आश्चर्यकी बात है कि प्रभावती अबतक नहीं आई। साथका पत्र शिवाभाईको दे देना।[1] वा दिल्ली गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४०२) से। सी० डब्ल्यू० ६४८ से भी; सौजन्य: वसुमती पण्डित

१ देखिए पिछला शीर्षक।

३२१. पत्र : नारणदास गांधीको

२ जुलाई, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारे एक प्रश्नका उत्तर देना रह गया था।

वजुभाईने[1] जो लिखा है उसका उत्तर देना आवश्यक है या नहीं? फुरसत मिलनेपर मुझे तुम्हारा उत्तर अवश्य मिलना चाहिए। फिलहाल तो एक और विस्तृत लेख मुझे मिल गया है। उसे पढ़ लेनेके बाद मैं तुम्हें भेजूँगा। इसे पढ़कर दोनों लेखोंके उत्तर मुझे भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४५८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३२२. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

वर्धा
३ जुलाई, १९३५

प्रिय सतीश बाबू,

यह पत्र मुझे बोलकर ही लिखवाना पड़ेगा, क्योंकि बायें हाथसे मैं इतना अधिक पत्र-व्यवहार नहीं निबटा सकता। साथमें दो पत्र भेज रहा हूँ। इनमें से एकमें जिन पुस्तकोंके नाम दिये गये हैं, उन्हें क्या आप ढूंढ़कर निकाल सकते हैं? और एक अमेरिकी पत्रिकासे नकल की गई फायर-प्रूफ प्रोसेसकी जाँच क्या आप करेंगे? उत्तर देते समय दोनों पत्र लौटा दें।

अब बड़कामताके बारेमें जो यह छोटा-मोटा तूफान मचाया गया है, उसके सम्बन्धमें इस अभियानपर भी इतना जोर क्यों? क्या यह खादीकी भलाईके लिए है? मैंने गुण-दोषोंका विवेचन नहीं किया है, हालाँकि जहाँतक खादी प्रतिष्ठानकी बिक्रीका सम्बन्ध है, मैंने जेराजाणीको लिखा है। उसका उत्तर भी आ गया है, जो इस आशयका है कि जो-कुछ भी किया गया, विश्वनाथकी पूर्ण स्वीकृतिसे किया गया।

१. वजुभाई शुक्ल, राजकोट राष्ट्रीय शालामें शिक्षक और जमनादास गांधीके सहयोगी।

बड़कामताके बारेमें अन्नदा शंकरलालको बहुत कटु पत्र भेजते रहे हैं। शंकरलाल वे पत्र मुझे देते रहे हैं। उनका अध्ययन करने का समय मेरे पास नहीं है। मैंने प्रफुल्लसे मामला तय कर देनेका अनुरोध किया। उनका यह तार आया है: "हेमप्रभादेवी, सतीशबाबू से मिला। वे इन कदमोंको उचित बताते हैं। इसलिए बडकामता प्रतियोगिता जारी रहेगी। हेमप्रभादेवीका रुख ऐसा था कि मुझे विस्तृत चर्चा करने की हिम्मत नही हुई।" क्या आप चाहते हैं कि मैं सारे मामलेकी तहकीकात करूँ या अन्नदासे कोई समझौता कर लेंगे?

श्रीयुत सतीशचन्द्र दासगुप्त
कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकलसे . प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य : प्यारेलाल

३२३. पत्र : श्रीमती एस० श्रीनिवास अय्यंगारको

३ जुलाई, १९३५

प्रिय बहन,

मैं दाहिने हाथको आराम दे रहा हूँ, इसलिए बोलकर ही लिखाना पडेगा, क्योंकि बायें हाथसे धीरे-धीरे ही काम हो सकता है। आगामी रविवार आपके लिए एक महान् दिन है। ईश्वर आपपर और आपके स्वजनोंपर कृपा करे और वर-वधूका कल्याण करे। वह उसे स्वस्थ, शक्तिशाली और सेवामय दीर्घ जीवन दे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजीसे . अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३२४. पत्र : नारणदास गांधीको

मगनवाड़ी
३ जुलाई, १९३५

चि० नारणदास,

जेठालालका[1] पत्र काफी दिनोंसे मेरे पास पड़ा है, किन्तु मैं उसे आज ही पढ़ पाया हूँ। उक्त पत्रकी नकलें उसने वल्लभभाई आदिको भेजी हैं। उसने इसके पहले नानाभाईको पत्र लिखा था और नानाभाईने उसका पत्र मुझे भेज दिया था। नानाभाईने उसे जो उत्तर दिया था, लगता है, उसमें कहीं गलतफहमी हुई है। उसे मामलेको स्पष्ट कर देना चाहिए। जब उसका पत्र मुझे मिला तो मैंने जेठालालको लिख दिया कि वह जो लिखना चाहे सो लिख दे। उसके उत्तरमें साथका पत्र मिला है। इसमें से बहुत-सी बातोंका उत्तर तो मैं स्वयं ही दे सकता हूँ किन्तु इतना काफी नहीं है। तुम्हारा आधिकारिक उत्तर मेरे पास होना चाहिए। अतः वह भेज देना। हरिलालका पत्र कल मिला था। मैं उससे कुछ समझ नहीं सका।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४५९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३२५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

३ जुलाई, १९३५

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। महादेवने तुम्हें व्यर्थ ही घबराहटमें डाल दिया है और खुद भी घबरा रहा है। मैंने तो केवल हरिलाल गांधीको चेतावनी दी थी कि वह मेरे साथ दाँव-पेच न खेले और यदि खेलेगा तो शायद मुझे खो बैठेगा। उसने दाँव-पेंच खेला दीखता है, इसलिए लगता है, वह स्वयं ही चेत गया है। नारणदासका ऐसा पत्र आया है कि दो दिन हुए वह भाग गया है। इसलिए यदि वह वापस न आया तो उसे भागे हुए आज पाँच दिन हो गये। उसके भागने से मुझे जरा भी आघात नहीं पहुँच सकता। इस तरह भागदौड़ तो वह करता ही रहता था। उसके जीवनमें

१. जेठालाल जोशी; राज्य-सभाके भूतपूर्व सदस्य तथा पहले राजकोट राष्ट्रीय शालाके शिक्षक।

परिवर्तनका कुछ आभास हुआ था। इसलिए मैंने उसके बारेमें आशा अवश्य बाँधी थी। परन्तु ढोंग कबतक चल सकता है? तुम बिलकुल निश्चिन्त रहो। मैं जल्दबाजीमें हर्गिज कदम नही उठाऊँगा। अब तो कोई कदम उठाने की बात भी नही रही। यों अन्य प्रकारसे स्वास्थ्य अच्छा ही है और काफी सावधानी बरतते हुए चल रहा हूँ। अन्तमें तो 'हरि करे सो होय।' जबतक उसे मुझसे सेवाकार्य लेना है, तबतक कोई हानि नही होगी। और जब समय आ जायेगा, तब कोई भी उपाय काम नही देगा। हिन्दुस्तानका तो श्रेय ही है। मुझे कही भी निराशाका चिह्न नजर नही आता। ईश्वर सब अच्छा ही करेगा।

अच्छे हो जानेपर शायद यही मुकाम करना ठीक होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७५

३२६. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

३ जुलाई, १९३५

चि० नरहरि,

विद्यालयके सम्बन्धमें तुम्हारा पत्र मैं पढ गया। जयाबहनको कितना वेतन दिया जाता है? हमारी शिक्षा-पद्धतिमें ऐसा कोई-न-कोई दोष अवश्य होगा जिसकी वजहसे हमारे यहाँ जो पच्चीस बहनें हैं, उनमें से तुम एकको भी प्रशिक्षित नही कर सके। और यदि ऐसा हो तो हम यह आशा कैसे कर सकते हैं कि ऐसी कोई बहन हमें बाहरसे मिल जायेगी जो हमारी शिक्षा-पद्धतिमें ठीक बैठ सके? मुझे तो लगता है कि हमने जैसा बोया है वैसा काटेंगे। तुम यह बिलकुल मत सोचना कि 'हम' में मैं स्वयं अपनेको औपचारिकतावश गिनता हूँ। अपनी अपूर्णताको मैं अच्छी तरह समझता हूँ। मैं अपनेको शिक्षक तो मानता हूँ किन्तु 'निरस्त पादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते' की तरह। इतना लिखनेके बाद मैं सिर्फ यही कहना चाहता हूँ कि जैसी बहन तुम चाहते हो वैसी बहन हमें अपनेमें से ही तैयार करनेका निश्चय करना चाहिए। यह कोई . . .[1]

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. साधन-सूत्रमें पत्र अधूरा है।

३२७. पत्र : वैकुण्ठ एल० मेहताको

३ जुलाई, १९३५

भाई वैकुण्ठ,

महादेव तो वहीं है। उन्हें लिखा तुम्हारा पोस्टकार्ड मैंने पढ़ा।

मैंने लल्लूभाईका आपरेशन सफलतापूर्वक होनेका शुभ समाचार भी पढ़ा। आशा है, अब वे अच्छे होंगे।

सेठ मथुरादासके साथ हुई [तुम्हारी] बातचीतके बारेमें महादेवने मुझे बताया। उसका मैं यह अर्थ लगाता हूँ कि वे प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर कर देंगे।

बापूके आशीर्वाद

श्री वैकुण्ठ मेहता
सेंट्रल कोऑपरेटिव बैंक
बम्बई

गुजरातीकी नकलसे : वैकुण्ठ एल० मेहता पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३२८. पत्र : कृष्णचन्द्रको

दुबारा नहीं पढ़ा

३ जुलाई, १९३५

चि० कृष्णचन्द्र,

हमारे हृदयमें देव-दानव, सत्य-असत्य, ज्ञान और अज्ञान, ज्योति और तमसके बीचमें द्वन्द्व युध्ध[1] चल रहा है। उसमें जहांतक हमें झूझ[2] सके वहांतक झूझें[3] लेकिन कभी अपनी शक्तिके बहार नहीं। अर्जुन अपनी शक्तिके बहार जा रहा था, भगवानने उसे रोका। जैसे कि अहिंसा उत्तम है लेकिन अगर मैं सांपका भय छोड़ नहीं सकता हूं उस हालतमें क्या-क्या करूं? मनसे तो उसे मार चूका हूं कर्मसे मारने से हिचकीचा जाता हूं तब धर्म कहता है कि तुम तुम्हारा स्वभावके मुताबिक

१. युद्ध।
२. और ३. जूझ।

मार। उसे नही मारने का व्यवसाय व्यर्थ है। वैसे ही ब्रह्मचर्य और गृहस्थाश्रमका दृष्टान्त बन सकता है। नैष्ठिक ब्रह्मचर्य अवश्य अच्छा है लेकिन जो अपने विकारको नहीं दबा सकता है, गृहस्थाश्रममें प्रवेश करें। नैष्ठिक ब्रह्मचर्य मिथ्या व्यवसाय माना जाय। इसमें दो विरुध्ध[1] बात नहीं आती लेकिन पृथक्क[2] धर्मकी बात आती है।[3]

हा, प्रार्थना आवश्यक है ही है। उसीमें निरतर जब स्वाभाविक वस्तु बन सकता है। नीमकी पत्तियां कम मात्रामें लेना पड़ेगा। तो ऐसा ही किया जाय।

शरीरके बारेमें और तो यहा आ जाओगे तभी मुझको पता चलेगा। अभी हृदय दौर्बल्य होना ही नहीं चाहिये। मेरे पास रहने से शांति मिल सकती है ऐसा जब मानते हैं तो पीछे फौरन आ जाना चाहिये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२७५) से।

३२९. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
४ जुलाई, १९३५

प्रिय अमृत,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरे नाम तुम्हारे पत्र तो प्रेमपत्र-जैसे ही होते है—मेरा खयाल है, तुम भी इनपर हर बार घंटे-भरसे कम न लगाती होगी, हालाँकि तुममें आशु और तीव्र लेखनकी क्षमता है। अब तो हम लोग एक-दूसरेको अच्छी तरह जान गये हैं, इसलिए तुम बखूबी ऐसा कर सकती हो कि जब जरूरी हो तभी लिखो और इस तरह अपना समय बचाओ। वैसे मैं तुम्हारे लम्बे पत्रोंकी बड़ी कद्र करता हूँ, लेकिन तुम महत्त्वपूर्ण बातें बताते हुए सिर्फ एक पोस्टकार्ड ही लिख दिया करो तो मेरे लिए काफी होगा।

पूनामें तुम्हारे लिए काम निश्चित कर दिया गया है। क्या तुम पूना आते हुए या वहाँसे लौटते हुए अथवा आते-लौटते दोनो अवसरोंपर वर्धा होती जाओगी? इन दिनों मौसम पहलेसे काफी ठंडा है।

तुम्हारा पत्र मैंने कुमारप्पा[4] को दिखा दिया है। अगर तुम रिक्शावाहकोंसे सम्पर्क स्थापित कर सको तो यह बहुत बडी बात होगी। वे बड़ी आसानीसे कात-बुनकर अपनी अल्प आयमें कुछ वृद्धि कर सकते हैं।

१. विरुद्ध।

२. पृथक्।

३. देखिए "आदर्श और व्यवहार", १३-७-१९३५।

४. जे० सी० कुमारप्पा, अक्तूबर १९३४ में संस्थापित अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके संगठन-कर्ता और मन्त्री।

मुझे खेद है कि कृष्णराव तुम्हारे यहाँसे जा रहा है। मगर आखिरमें तो तुम्हें अपने ही भरोसे रहना होगा। भले ही तुम्हारे हाथ इतने मजबूत न हों कि तुम धुनकी सँभाल सको, लेकिन तुम्हें पींजनेकी क्रिया आ जायेगी, यह अच्छा ही है। उसे जान लेनेके बाद तुम दूसरोंकी पिंजाईके कामको सुचारु रूप दे सकोगी और उसकी ठीक देख-रेख कर सकोगी। अगर तुम्हारे यहाँकी लड़कियाँ कताई सीखें तो उनसे पिंजाई करवाने का भी आग्रह रखना। जबतक वे पिंजाई न करेंगी, कताई भी नियम-पूर्वक कभी नही कर पायेंगीं। और पूनियोंके लिए दूसरोंपर निर्भर रहना बुरी बात है। अगर वे एक तरहका कताई-क्लब बना लें तो फिर आपसमें कामका बँटवारा भी कर सकती हैं। कुछ लड़कियाँ ओटाई कर सकती है और कुछ पिंजाई; पूनियाँ कई लड़कियाँ बना सकती हैं और कताई सब कर सकती हैं।

क्वेटा-राहतके लिए तुम्हारे पास जो कपड़े हों, उन्हें तुम डॉ० गोपीचन्दको[1] पंजाबमें आये शरणार्थियोके लिए भेज सकती हो। हाँ, अगर शिमलामें भी शरणार्थी हों तब तो तुम उन कपड़ोंको उनके बीच वहीं बाँट सकती हो। अलबत्ता मैं यह जरूर सोचता हूँ कि शिमलामें तो बहुत सम्पन्न शरणार्थी ही होंगे, जबकि लाहौरमें सबसे गरीब लोग इकट्ठे हुए होगें।

पैसा मै रोक रखूंगा। इसे किसी ऐसे स्थानको भेजा जा सकता है जहाँ अभी की जा रही उगाही खर्च हो जाये। ऐसी विपत्तियाँ आती हैं तो प्रारम्भमें तो सदैव अच्छी-खासी राशि जमा हो जाती है।

तुम्हें जो कागज और लिफाफे भेजे हैं, उन्हें बेचने के लिए तुम्हें अपने घरसे बाहर जानेकी जरूरत नही है। उनकी कीमत पानेकी मुझे जल्दी नही है। और आखिरमे अगर वे वहाँ बिक ही न सकें तो भी उन्हें बिना किसी घाटेके बेच सकने में यहाँ कोई कठिनाई न होगी। मैं जानता हूँ कि उनपर जितना मुनाफा तुम हासिल कर सकती हो उतना हम नही कर सकते, लेकिन तब भी उन्हें बेचने के लिए तुम बहुत ज्यादा मेहनत तो कभी मत करना।

तुमको जो पूनियाँ भेजी है वे ३० अंकके तार देने लायक हैं, इसलिए उनसे कमसे-कम २५ अकके तार तो निकलने ही चाहिए।

साथका पत्र एन्ड्रयूजको दे देना।

स्नेह।

बापू

श्री० राजकुमारी अमृतकौरबहन
मैनोरविले, शिमला

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५३९) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६३४८ से भी

1. डॉ० गोपीचन्द भार्गव।

३३०. पत्र : एस० श्रीनिवास अय्यंगारको

४ जुलाई, १९३५

प्रिय मित्र,

आपका पत्र पाकर बडी प्रसन्नता हुई। मुझे पूरी उम्मीद है कि जबतक आप बिलकुल ठीक नही हो जाते और आपका स्वास्थ्य सामान्य नही हो जाता, तबतक आप कोडाईकनाल नही छोडेंगे।

दो दिन पहले मैंने अम्बुजमकी मार्फत अपना आशीर्वाद भेजा था।[1] उसीसे मुझे शादीकी तिथि मालूम हुई थी। आज श्रीमती अय्यंगार और कृष्णस्वामीको भी लिखा है।[2] आपकी शुभकामनाओके लिए धन्यवाद।

हाँ, मै बिलकुल स्वस्थ-प्रसन्न हूँ। दोनोको मै ईश्वरकी कृपा मानता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एस० श्रीनिवास अय्यंगार
"श्रीनिकेतन"
कोडाईकनाल

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७५२) से; [illegible] संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३३१. पत्र : एस० अम्बुज[illegible]

[illegible]

चि० अम्बुजम,

साथमें दो पत्र भेज रहा हूँ—एक [illegible] लिए। माताजी को तुम्हारे पिताजी की [illegible] बड़ा मधुर पत्र मिला है।

[illegible]

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल [illegible] पुस्तकालय

१. देखिए "पत्र : एस० [illegible]" [illegible]

२. देखिए "पत्र : श्रीमती [illegible]" [illegible]

३३२. पत्र : अमृतलाल नानावटीको

४ जुलाई, १९३५

भाई अमृतलाल,

तुम्हारे छोटे भाईके देहान्तका समाचार पढ़कर सहज ही दु:ख तो हुआ। किन्तु यदि देखा जाये तो बहुत-से सहयोगी होनेके कारण कहीं-न-कहींसे किसी-न-किसीकी मृत्यु या जन्मके समाचार तो मिलते ही रहते हैं। अत: सुख-दु:ख इस तरह समान हिस्सोंमें बँट जाते हैं कि यह कहना भी अतिशयोक्तिपूर्ण-सा लगता है कि मुझे दु:ख हुआ। इसके अतिरिक्त यदि हम मृत्युके बारेमें विवेकपूर्वक विचार करें तो यह कोई ईश्वरीय कोप नहीं बल्कि जन्मसे छुटकारेके रूपमें ईश्वरका दिया हुआ एक उपहार ही है। इस बौद्धिक ज्ञानके कारण मेरी भावनाएँ बुरी तरह कुण्ठित हो गई हैं। तुम भी मेरे इस ज्ञानमें हिस्सेदार बनकर अपने दु:खको भूल जाना और सेवा-कार्यमें और भी सजग बनने का प्रयास करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१०) से।

३३३. पत्र : प्रभावतीको

५ जुलाई, १९३५

चि० प्रभा,

इस बार तूने काफी कष्ट दिया। दो पंक्तियोंका एक पोस्टकार्ड लिखने में तुझे समय ही कितना लगता? आशा है, तूने बाबूजी से अनुमति तो ले ली होगी। जैसी परिस्थिति तू बताती है, उसे देखते हुए तो तेरा वहाँ रह जाना आवश्यक था ही। यहाँ रोज़ वर्षा हो रही है। मेरा भोजन वही है जो पहले था। मेरी तबीयत अच्छी है किन्तु मैंने अपना वजन नहीं लिया है। बा और मनु दिल्ली गई हैं। इस बीच राजेन्द्रबाबू एक बार यहाँ हो गये। अम्तुस्सलाम अभी यहीं है। बारडोलीसे लक्ष्मी[1] यहाँ आ गई है।

और अधिक लिखनेका समय नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५१) से।

१. मारुति शर्माकी पत्नी।

३३४. पत्र : लीलावती आसरको[1]

वर्धा
५ जुलाई, १९३५

चि० लीलावती,

यदि ये सुधार और टिप्पणियाँ समझमें न आयें तो मुझसे पूछ लेना। अपनी लिखावट और सुधारना। अक्षर बड़े लिखना और शब्द अलग-अलग रखना।

[तेरे पाठोंको सुधारने में] मुझे कोई परेशानी नही होती। किन्तु मै कोई अन्य शिक्षक नियुक्त कर दूंगा। इस बीच [अपने पाठ] मुझे भेजती रहना।[2]

१ सामान्यत कहा जा सकता है कि सजीव वस्तुओके लिए 'एस' का प्रयोग किया जाता है और निर्जीव वस्तुओंके लिए 'ऑफ' का; जैसे, "ए मैन्स लैग" किन्तु "ए लैग ऑफ ए टेबल।"

२. 'हैड' का प्रयोग ऐसी क्रियाके लिए किया जाता है जो अगला काम आरम्भ होनेके पहले ही समाप्त हो चुकी हो; जैसे "ही हैड ईटन व्हेन आई वेन्ट टु हिम"; किन्तु "ही एट ऐट १० ओ'क्लाक"। 'हैड ईटन' पूर्णभूत है और 'एट' सामान्यभूत।

३. 'हैव' का प्रयोग सहायक क्रियाके अतिरिक्त मूल क्रियाके रूपमें भी किया जाता है। मुख्यत यह क्रिया अधिकार या सम्बन्धका बोध कराती है; जैसे "ही हैज ए वाक्स"—अधिकार, "ही हैज ए सन"—सम्बन्ध।

किसी क्रियाके पूर्ण हो जानेपर 'हैव' के रूपोका प्रयोग किया जाता है किन्तु जब उसका प्रयोग भूतकालको सूचित करने के लिए किया जाये तो 'बी' के रूपोका प्रयोग किया जाता है। उदाहरणोके लिए दूसरी टिप्पणी देखो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२५४) से। सी० डब्ल्यू० १०१२७ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर।

१. लीलावती गुजराती पाठोंका अंग्रेजीमें अनुवाद करके हर सप्ताह गांधीजी को भेजा करती थीं, जिन्हें वे अपनी टिप्पणियों और सुधारोंके साथ लौटा दिया करते थे। इनमें से कुछ सामान्य सुधार यहाँ छोड दिये गये हैं।

२. इसके बादका अंश लीलावतीके पत्रके हाशियेमें लिखा हुआ है।

३३५. पत्र : जानकीदेवी अग्रवालको[1]

५ जुलाई, १९३५

प्रिय भगिनी,

मैंने तो मूलचन्दजी से लिखा है कि किसी तरह तुम्हारेपर बलात्कार न किया जाय।[2] न तुम्हारे उनपर बलात्कार करना चाहिये। तुमको जो कुछ खाना, पीना चाहती है उसकी स्वतन्त्रता होनी चाहिये। लेकिन मूलचंदजी के धर्मका स्वीकार नहीं कर सकती है तो उससे अलग रहकर अपनी इच्छानुसार चल सकती है। ऐसी हालत में भी तुमको खानेका खर्च देनेका मूलचन्दजी का धर्म बन्द नहीं होता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८३६) से।

३३६. हरिजन-सम्मेलन

१६ जूनको मैसूर राज्य हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधानमें मैसूरमें हरिजन-सेवकोंका एक सम्मेलन आयोजित किया गया। मैसूर राज्यके दीवान सर मिर्जा इस्माइलने तदर्थ निम्नलिखित सन्देश भेजा :

> यह जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि गत वर्षके कार्योंके परिणामका पुनरावलोकन तथा भावी कार्य-पद्धति निर्धारित करने के लिए मैसूर-राज्य हरिजन सेवक संघ उन कार्यकर्त्ताओंके एक सम्मेलनका आयोजन कर रहा है जो दलित वर्गोंके — या अधिक प्रचलित नामका प्रयोग करें तो हरिजन वर्गोंके — उद्धारके सत्कार्यमें लगे हुए हैं। कहने की जरूरत नहीं कि मैं सम्मेलनके हर सम्भव दृष्टिसे सफल होनेकी कामना करता हूँ। जैसाकि सर्वविदित है, महाविभव महाराजा और उनकी सरकारकी तीव्र इच्छा है कि उनकी समस्त प्रजाका — वह चाहे जिस जाति, धर्म अथवा प्रजातिकी हो — कल्याण हो और वह समृद्ध बने। इसलिए हरिजनोंके सामाजिक एवं शैक्षणिक उत्थानकी प्रवृत्तियोंको महाविभवकी सरकारकी सहानुभूति सदा प्राप्त रही है और भविष्यमें भी रहेगी,

१. मूलचन्द अग्रवालकी पत्नी।

२. देखिए "पत्र : मूलचन्द अग्रवालको", २३-६-१९३५।

यद्यपि उनकी प्रजामें हरिजनोंका अनुपात बहुत कम ही है। सरकारने हरिजन-समुदायकी दशा सुधारने के लिए हालके वर्षोंमें कई कदम उठाये गये हैं। इस कार्यमें जनता तथा हरिजन सेवक संघ-जैसी संस्थाओंका सहयोग स्वागत-योग्य है। इस समुदायके सामाजिक जीवनका धरातल ऊपर उठाकर और उसे राज्यके सामाजिक जीवनमें अपनी भूमिका निभाने में समर्थ बनाने के उसके प्रयत्नोंकी पूर्ण सफलताकी कामना करता हूँ।

सम्मेलनने स्थानीय महत्त्वके अनेक प्रस्ताव पास किये, जिनमें से कुछ नीचे दे रहा हूँ :

यह सम्मेलन सरकारसे अनुरोध करता है कि निम्नलिखित अतिरिक्त सुविधाएँ देने कृपा करे।

(१) इर्विन नहर-क्षेत्र और वाणी विलास सागरमें भी कृषक बस्तियाँ बसानेके लिए भूमि।

(२) गाँवोंमें हरिजन बस्तियोंके विस्तारके लिए स्थान।

(३) गाँवोंमें रहनेवाले हरिजनोंके निमित्त पीनेके पानीके कुओंकी व्यवस्था के लिए बजटमें स्पष्ट रूपमें एक राशि निर्धारित करना।

(४) जिन हरिजन छात्रावासोंको राजकीय सहायता प्राप्त है उनके अनुदानमें वृद्धि करना, हरिजनोंको छात्रवृत्तियाँ देना तथा खेल-कूदकी सुविधा और पुस्तकालयके लिए लगनेवाले शुल्कोंको माफी।

(५) हाईस्कूल तथा कॉलेजकी परीक्षाएँ पास करनेवाले हरिजनोंको नौकरीमें प्राथमिकता।

(६) राज्यके हरिजनोंके नैतिक तथा भौतिक उत्थानकी देखरेखके लिए एक विशेष अधिकारीकी नियुक्ति, जिसके लिए एक कर्मचारी वर्ग और धनकी व्यवस्था हो।

(७) एक शैक्षणिक न्यास-कोषका प्रारम्भ किया जाना और एक सलाहकार समितिका गठन।

(८) मैसूरकी हरिजन लड़कियोंके लिए निःशुल्क खाने-रहने की सुविधावाले एक छात्रावासकी स्थापना।

(९) जितने भी मन्दिर 'मुजराई' विभागके प्रबन्धके अधीन हैं उन सबमें हरिजनोंको प्रवेश और पूजा करने की अनुमति देना।

हमें आशा करनी चाहिए कि अधिकारीगण ये उचित माँगें स्वीकार कर लेंगे और इस राज्यमें हरिजनों तथा अन्य लोगोंके बीच पूरी तरहसे बराबरीका दर्जा कायम कर दिया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-७-१९३५

३३७. खादीका लक्ष्य

खादीका लक्ष्य इतना ही नहीं है कि वह शहरके लोगोंके लिए मिलके कपड़ेसे होड़ लेनेवाली किस्म-किस्मकी रंग-बिरंगी खादी जुटा दे और इस तरह दूसरे उद्योगों की भाँति चन्द कारीगरोंको रोजगार दे दे। उसका लक्ष्य तो यह है कि वह खेतीका एक पूरक उद्योग बन जाये। यह लक्ष्य अभी पूरा नही हुआ है।

इस लक्ष्यकी पूर्तिके लिए खादीको स्वावलम्बी बनाना होगा, और उसके उपयोगका चलन गाँवोंमें फैलाना होगा। जिस तरह गाँववाले अपनी रोटी या चावल खुद पका लेते हैं उसी तरह उन्हें अपने उपयोगकी खादी भी खुद ही तैयार करनी है। उसके बाद खादी बच रहे, तो उसे बेच सकते हैं। जबतक खादी-सेवा संघका रंग-ढंग नहीं बदलता और चरखा संघ अपनी नीतिमें परिवर्तन नही करता, तबतक खादीका यह लक्ष्य सिद्ध होनेका नहीं।

खादी तैयार होनेके पहले कपासकी जो-जो प्रक्रियाएँ होती हैं, उन सबका ज्ञान खादी-सेवा संघके प्रत्येक सदस्यको होना चाहिए।

स्वावलम्बी खादीपर जब जोर दिया जायेगा, तब व्यापारिक उद्देश्यसे उतनी ही खादी बनेगी जितनी खादीकी शहरवालों को असलमें जरूरत होगी। तब व्यापारिक खादी चरखा संघके हाथमे केन्द्रित रहने के बजाय निजी तौरपर व्यापार करनेवाले व्यापारियोंके हाथमें चली जायेगी।

खादीको व्यापारकी वस्तु बनाने के प्रयत्नमें चरखा संघ अबतक बाजार-भावका खयाल रखकर चला है। इसलिए कताईकी मजदूरी दूसरी सभी किस्मोंकी मजदूरीकी अपेक्षा कम रही है। इस मजदूरीकी दर भी अलग-अलग प्रान्तोंमें अलग-अलग रही है। इसलिए विभिन्न प्रान्तोंकी खादीके भावोंमें भी फर्क रहा है। जिनका ध्येय महज मुनाफा कमाने का है, उनके लिए तो एक-दूसरेका गला काटनेवाली प्रतिस्पर्धाका आश्रय लेना, बल्कि उसे उत्तेजनतक देना भी ठीक है; मगर जिन संस्थाओंका एकमात्र हेतु करोड़ों निर्धनोंकी सेवा करना है, उन्हें ऐसी प्रतिस्पर्धामें पड़ना नही पुसा सकता। बिहारकी कत्तिनको गुजरातकी कत्तिनसे कम मजदूरी क्यों मिले? निःसन्देह प्रान्त-प्रान्तका रहन-सहन जुदा-जुदा होनेके कारण वहाँ प्रचलित दरोंमे भी फर्क पड़ता है। पर संघका काम तो वस्तु-स्थितिको चुपचाप स्वीकार कर लेनेसे नही चल सकता। यदि स्थिति न्यायसंगत नही है तो संघको उसे बदलना होगा। कोई कारण नही कि एक घंटेकी कताईकी मजदूरी एक घंटेकी बुनाईकी मजदूरीसे कम हो। सादी बुनाईकी अपेक्षा कताईमें अधिक कुशलताकी आवश्यकता पड़ती है। सादी बुनाई केवल एक यान्त्रिक प्रक्रिया है। किन्तु सादीसे-सादी कताईके लिए भी हस्तकौशलकी आवश्यकता पड़ती है। तो भी बुनकरको फी घंटे कमसे-कम दो पैसे मिलते हैं और कतैयेको

सिर्फ एक पाई ही मिलती है। धुनियेको भी उससे अच्छी —करीब-करीब बुनकरकी-जितनी ही — मजदूरी मिलती है। इस वस्तु-स्थितिके ऐतिहासिक कारण हैं। पर यह बात नहीं कि ऐतिहासिक होनेकी वजहसे ही वे न्याय्य भी हैं। अब वह समय आ गया है, जब सघको उसकी देख-रेखमें किये जानेवाले सभी प्रकारके श्रमके पारिश्रमिकको स्थायी नहीं तो कमसे-कम एक-सा तो बना ही देना है। इस नीतिके कार्यान्वयनके लिए अनेक स्थानोपर बुनकरोसे अपनी मजदूरी कम करने को भी कहना पड़ सकता है। ऐसा समय तो शायद कभी न आये जब सब बुनकर खुद अपनी खुशीसे दरोको समान बनाने की प्रक्रियाको स्वीकार कर ले। पर यदि सब प्रकारके उत्पादक-श्रमकी मजदूरीकी दरकी समानताका सिद्धान्त सही है तो सघको इस आदर्शके अधिकसे-अधिक नजदीक पहुँचनेका प्रयत्न करना चाहिए। एक ही बारमें यह सब न हो सके तो भी कतैयेके पूरे एक घटेके ठीक कामकी मजदूरीकी दरमें उचित वृद्धि करके इस दिशामें आरम्भ तो कर ही देना चाहिए। विनोबा अपने छात्र-छात्राओको पढ़ाने के साथ-साथ नित्य लगभग नौ घटेके हिसाबसे कातने का प्रयोग कर रहे हैं। एक घंटेमें वे जितना सूत कातते है, उसे एक घंटेके उत्पादनका मानक समझना चाहिए, और कतैयेको उसके हिसाबसे मानक मजदूरी मिलनी ही चाहिए। मुझे आशा है कि विनोबाके परिश्रमके परिणामोको मैं शीघ्र ही प्रकाशित करूँगा।

मेरी योजनाके लिए इतना तो जरूरी है ही कि खादी-सेवकका कातनेवाले के साथ घनिष्ठ सम्पर्क हो। जो संस्था मजदूरीकी दरमें आशातीत वृद्धि करेगी, वह इसकी भी खोज-खबर रखेगी कि जो पैसा वह श्रमिकोको देती है, वह किस तरह खर्च हो रहा है। अगर वह पैसा शराबखोरी या शादी-व्याह आदिमें फिजूल बरबाद हो रहा हो तो उनकी मजदूरी बढा देना व्यर्थ ही होगा। खादीका काम करीब-करीब अस्पृश्यता-निवारणके कामकी ही तरह है। उच्च कहलानेवाले वर्गोंने नीचेके वर्गोंकी इतनी अधिक उपेक्षा की है कि लोग जीनेकी कला ही भूल गये। उनकी यह धारणा बन गई है कि उन्हें तो विधाताने सिर्फ मेहनत-मशक्कत करनेके लिए ही पैदा किया है। इन ऊँचे वर्गवालो को अपने कुकर्मोका दण्ड न मिले, यह कैसे हो सकता था? उन्हें भी सजा मिली। वे भी तो जीनेकी कला नहीं जानते। उन्हें अगर आज 'निम्न वर्ग' से सहायता मिलना बन्द हो जाये, तो आज ही उनका नाश हो जाय। 'निम्न वर्गों' के प्रति 'उच्च वर्गो' ने जो दुर्व्यवहार किया है उसके लिए उन्हें प्रायश्चित्त करने को आमन्त्रित करके इस दोहरी दुरवस्थाको सुधारना ही खादीका ध्येय है।

ग्रामोद्योगके क्षेत्रमें लगे कार्यकर्त्ताओको भी इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि जिन उद्योगोको उन्होने पुनरुज्जीवित किया है, उनमें काम करनेवाले ग्रामवासियोको सघ द्वारा नियत न्यूनतम मजदूरी मिले।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-७-१९३५

३३८. डायरी लिखनेके बारेमें[1]

तुम्हारी तबीयत कैसी रहती है, इसकी एक-एक बात ब्योरेवार तुम्हारी डायरीमें दर्ज रहनी चाहिए। तुम अगर अपने तमाम कामको घंटोंमें बाँट सको, तो एक-एक घंटेके कामका ब्योरा भी उसमें होना चाहिए। तुम्हारी डायरी तुम्हारे मनकी आरसी होनी चाहिए। उसमें तुम्हारे भले-बुरे विचारों और स्वप्नो, सबका उल्लेख रहना चाहिए। अच्छे या बुरे जो भी काम तुमने किये हों, उनका भी उसमें उल्लेख होना चाहिए। यह डायरी-रूपी आईना आत्मशुद्धिमें सहायता करता है। मनुष्यका पेट साफ रहे तो शरीर निश्चय ही अच्छा रहेगा। वह बाह्य शौच है। जिस तरह शरीरके आरोग्यके लिए बाह्य शुद्धि आवश्यक है, उसी तरह आत्माके आरोग्यके लिए अन्तःशुद्धिकी आवश्यकता है। सच कहा जाये तो अन्तःशुद्धि जितनी अधिक होती है, वाह्य शुद्धि साधने के लिए उतना ही कम प्रयत्न अपेक्षित होता है। अर्थात् हमारा अन्तर शुद्ध हो तो बाहरकी शुद्धि तो आप ही हो जायेगी। क्या यह नही सुना है कि योगीके शरीरसे सुगंध निकलती है। सुगंधका अर्थ यहाँ दुर्गन्धका अभाव है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-७-१९३५

३३९. टिप्पणियाँ

हरिजनोंके कुओंके निमित्त निधिका संग्रह

दिल्ली प्रदेशके हरिजनोंके लिए कितने कुओंकी आवश्यकता है, इसका एक अनुमान इस सप्ताह प्रकाशित किया जा रहा है। पाठक इस बातको लक्ष्य करेंगे कि भंगी जातिके हरिजनोंके लिए कुओंका क्या मतलब होता है। उन्हें उन कुओंका भी उपयोग नही करने दिया जाता जो दूसरी जातियोंके हरिजनोंके लिए अलग कर दिये गये हैं। यह सच है कि यह स्थिति केवल दिल्ली प्रदेशमें ही नही है। लेकिन दूसरी जगहोंमें भी यह शिकायत है, इससे तो इस विशेष परमार्थ-कार्यका महत्त्व और अधिक उजागर होता है। आशा है, प्रान्तीय संघके प्रधान स्थानीय रूपसे चन्दा एकत्र करेंगे। चन्देकी इन राशियोंको सम्बन्धित प्रान्तोंमें ही उनकी आवश्यकताओंके अनुसार इस मदमें खर्च करनेके लिए अलग रखा जा सकता है।

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। गांधीजी आश्रमवासियोंकी डायरियाँ देख रहे थे। एकने उनसे पूछा कि "मुझे अपनी डायरीमें क्या लिखना चाहिए और क्या नहीं?" इसपर गांधीजी ने यह सलाह दी।

तमिलका पावन ग्रंथ

तिरुवल्लुवर एक तमिल सन्त थे। अनुश्रुतियोंसे ज्ञात होता है कि वे हरिजन बुनकर थे। उनका जीवन-काल ईस्वी सन्‌की पहली शताब्दी बताई जाती है। उन्होंने प्रसिद्ध 'तिरुक्कुरल'—अर्थात् पवित्र नीति-वचनो—की रचना की। तमिल लोग इसे तमिल भाषाका वेद कहते हैं और एम० एरियलके अनुसार यह "मानव-चिन्तनकी एक उच्चतम और शुद्धतम अभिव्यक्ति," है। इसमें कुल १,३३० नीति-वचन हैं। इनका अनुवाद कई भाषाओंमें हुआ है। अंग्रेजीमें तो इसके कई अनुवाद सुलभ हैं। सबसे हालमें इसका अनुवाद हरिजनो तथा अन्य लोगोके सेवार्थ शेरमादेवी आश्रमकी स्थापना करनेवाले स्वर्गीय वी० वी० एस० अय्यरने किया। राष्ट्रको शेरमादेवी आश्रम तथा यह पुस्तक भेंट करके वे चल बसे। अब शेरमादेवी आश्रम हरिजन सेवक संघके हाथोमें है। अनुवादके दूसरे संस्करणकी लगभग हजार प्रतियाँ अब भी पड़ी हुई हैं। मूलत पुस्तकका मूल्य ५ रुपये रखा गया था। अब घटाकर ढाई रुपये कर दिया गया है। पुस्तकमें एक विस्तृत प्रस्तावना भी है, जिसे स्वयं अनुवादकने लिखा है। इससे प्राप्त होनेवाला पैसा हरिजन-सेवामें लगाया जायेगा। पाठकोकी रुचि जगाने के लिए मैं यहाँ दो वचन उद्धृत कर रहा हूँ, जो खास तौर पर चुने हुए नही, बल्कि यहाँ-वहाँसे यो ही उठाकर दे दिये गये हैं :

> अपने प्राण बचानेके लिए भी किसी अन्य जीवका प्राणहरण न करो, क्योंकि अपने प्राण तुम्हें कितने प्यारे हैं।

अब गोल्डस्मिथकी इन पंक्तियोसे इसकी तुलना कीजिए .

> घाटियोंमें उन्मुक्त फिरनेवाली भेड़ोंमें से भी किसीका वध किया जाये, यह मुझे स्वीकार नहीं, क्योंकि जो शक्ति मुझपर दयाकी वृष्टि करती है, उसने मुझे उनपर भी दया करना सिखाया है।

दूसरा वचन है :

> मृत्यु तुम्हारे लिए निद्राके समान है,
> और जीवन निद्राके बादकी जागृतिकी तरह।

अब इसको वर्ड्सवर्थकी इस पक्तिसे मिलाकर देखिए :

> मृत्यु मात्र निद्रा है—विस्मृतिकी एक अवस्था।

मंत्री, तमिलनाडु हरिजन सेवक संघ, तेप्पाकुलम, त्रिचनापल्लीके नाम निवेदन भेजकर पुस्तक मँगाई जा सकती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-७-१९३५

३४०. पत्र : एफ़० मेरी बारको

वर्धा
६ जुलाई, १९३५

प्रिय मेरी,

(जब बापूको मालूम हुआ कि मैं आपके लिए इस पत्रमें "कुमारी बार" सम्बोधनका प्रयोग करने जा रही हूँ तो उन्होंने आग्रह किया कि ऐसा न करके मैं आपके बप्तिस्मावाले नामसे ही आपको सम्बोधित करूँ।)

यह पत्र मैं उन्हींकी ओरसे लिख रही हूँ। आपका इसी २ तारीखका पत्र उन्हें मिला। वे चाहते हैं कि जबतक डॉक्टर यह न कह दें कि आप बिलकुल स्वस्थ हो गई हैं और अब अपने काममें फिर लग सकती हैं तबतक आप मिरजसे न हटें। वे आपके इस विचारसे बिलकुल सहमत हैं कि जब आप लौटें तो पूना होकर लौटने के बजाय सिकन्दराबाद होकर ही लौटें। बापूका यह भी विचार है कि आपके दाँतों और आँखोंको फिर वही विशेषज्ञ देखें जिन्होंने पहले इलाज किया था। लिहाजा जब भी आपसे बने, आप उनसे जरूर सलाह लीजिए।

मेरिया पीटर्सनके पत्रके सम्बन्धमें बापूने मुझसे यह लिखने को कहा है कि इनके डेनमार्क जानेकी कोई सम्भावना नहीं है। . . .

सस्नेह,

आपकी,
अमृतकौर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०५२) से।

३४१. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

६ जुलाई, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले। मलेरियाको खत्म कर देनेकी कठिनाईको मैं समझता हूँ। यदि चारो ओर गन्नेके खेत हों तो यह कार्य निश्चय ही कठिन है। किन्तु मच्छरोंके स्वभावकी एक विशेषता है कि वे एक सीमासे आगे नहीं जा सकते। अत: यह सम्भव है कि तुम्हारे स्थानसे सौ एकड़ दूर खड़ी फसलका असर तुमपर न हो। चाहे जो हो किन्तु तुम्हें तो अपने आसपास कहीं भी पानी या सीलन नहीं होने देनी चाहिए। और मकान टेकरीपर बने होनेके कारण पानी यों भी इकट्ठा नहीं हो सकता।

खुराक हलकी होनी चाहिए। सलाद आदिकी कच्ची पत्तियाँ खानी चाहिए। कब्ज कभी नही होने देना चाहिए। मच्छरदानी इस्तेमाल करनी चाहिए। मुझे लगता है कि यदि इतनी सावधानी बरती जाये तो मलेरियासे बचा जा सकता है। मुझे इस बातका आश्चर्य है कि लक्ष्मी मेरे कते सूतकी खादी भेज सकी। तो अब मुझे कुछ भेजना है न? मैं यह मानता हूँ कि यदि तुम दोनो सीताको पढ़ाने के लिए समय नहीं निकाल पाते तो तुम्हारे जीवनमें कही कोई बड़ी कमी है। इच्छा या अनिच्छा-पूर्वक यदि तुम सन्तानको जन्म देनेके उत्तरदायित्वको स्वीकार करो तो उनके शरीर और मन आदिको संस्कारपूर्ण बनाना भी तुम्हारा कर्त्तव्य है। अतः चाहे जितना काम क्यो न हो फिर भी तुम्हे कुछ समय अवश्य निकालना चाहिए। यह ईश्वरकी कृपा है कि बच्चे जाने-अनजाने शिक्षा पाते ही रहते हैं। तुम चाहो या न चाहो किन्तु तुम्हारे आचार-विचारका अनुकरण बच्चे अवश्य करेंगे। इस दृष्टिसे भी माता-पिताको अपना आचार-विचार सर्वथा शुद्ध रखना पड़ता है। यदि तुम्हारा भाषण शुद्ध होगा तो बच्चोका भी शुद्ध होगा। यदि तुम प्रार्थना करते होगे तो तुम्हारे बच्चे भी प्रार्थना अवश्य करेंगे। तुम जिस तरह और जो खाओगे-पिओगे, वही वे भी खायेंगे-पियेंगे। अब सिर्फ अक्षर-ज्ञान कराना बाकी रह जाता है। इसमें कितना समय लगेगा? यदि थोड़ी-सी सावधानी बरती जाये तो खेल-ही-खेलमें बच्चोको शिक्षा दी जा सकती है। जरूरत इस बातकी है कि हमारा जीवन थोड़ा विचारमय हो। इस बातका दृढ़ निश्चय होना चाहिए कि बच्चोंको तुम्हें ही शिक्षा देनी है। तुम उन्हें जो सिखाना चाहते हो, उसका थोड़ा-सा ज्ञान तुम्हें पहले प्राप्त कर लेना चाहिए। इस प्रकार खाते-पीते, उठते-बैठते, घूमते-फिरते बच्चोको ऐसा अमूल्य ज्ञान प्राप्त हो जायेगा जो वे पाठशालाओमें कभी नही पा सकते। यदि तुम गपशपमें अपना समय गँवाने के बदले इस प्रकार अपना समय बिताओ तो उससे तुम्हारे ज्ञानमें भी वृद्धि होगी और तुम्हारा जीवन अपेक्षाकृत व्यवस्थित हो जायेगा।

सोराबजी और उनके व्यवहारको भूल जाना। सोचकर देखो, तो हलवेकी घटना मनोरंजक है। इस प्रकारकी निन्दासे तुम्हें मनोरंजन करना सीख लेना चाहिए।

लगता है, हरिलाल फिर बहक गया है[1] या गाड़ी रास्तेपर आई ही नही थी और वह सिर्फ दम्भ करता हुआ ही आया था। किन्तु उसपर इतना गम्भीर आरोप लगाने के बदले मैं यह मान लेता हूँ कि अब वह बहक गया है। अभी तो यह मेरा वहम है। बादमें जो हो सो सही, जो होगा वह थोड़े दिनोमें सामने आ जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८३९) से। सी० डब्ल्यू० १२५१ से भी, सौजन्य : सुशीला गांधी

१. देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", ३-७-१९३५।

३४२. पत्र : लीलावती आसरको

६ जुलाई, १९३५

चि० लीलावती,

तेरा बहुत विचित्र और दु:खद पत्र मिला। दो दिन पहले ही तेरा आशा-भरा पत्र मिला था जिससे मेरे मनपर यह छाप पड़ी थी कि तू बिलकुल स्वस्थ हो गई है। किन्तु आजके पत्रसे तो ऐसा लगता है, मानों यह किसी दूसरी ही लीलावतीने लिखा हो। दो ही दिनमें इतना उलट-फेर कैसे हो गया? तू राजकोटमें अपनी इच्छासे रही है। मैंने तो तुझे बम्बईमें रहकर भी पढ़नेका सुझाव दिया था। मैंने सदा यह चाहा है कि तू अपनी सामर्थ्यसे अधिक कुछ भी न करे। एकाएक इतनी अधिक निराशाका कौन-सा कारण आ पड़ा है? तुझे वहाँका वातावरण स्वार्थपूर्ण दिखाई देता है तो अन्यत्र भी वह मुश्किलसे ही भिन्न मिलेगा। अत: वातावरण तो तू स्वयं जैसा बनाना चाहेगी, वैसा ही बनेगा और वैसा ही रहेगा। धीरज रखना और शान्त हो जाना। किन्तु यदि तू धीरज और शान्ति खो चुकी हो तो राजकोट अवश्य छोड़ देना। तू सर्वथा स्वतन्त्र है। मेरे साथ किसीका सम्बन्ध होनेसे उसके पंख कटते नहीं बल्कि पंख न हो तो उसके नये पंख निकल आते हैं। अत: तुझे जिधर उड़ना हो, उधर उड़ सकती है। मेरे पास यहाँ रह सकने की बात एक अलग प्रश्न है। मौका आनेपर हम दोनो इस बारेमें विचार कर लेंगे। नारणदासका आश्रय तू कभी मत छोड़ना। यदि उसका आश्रय छोड़ेगी तो पछतायेगी। इससे अच्छा पथ-प्रदर्शक मैं तुझे नहीं बता सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३४) से। सी० डब्ल्यू० ६६०९ से भी, सौजन्य : लीलावती आसर

३४३. पत्र : नारणदास गांधीको

६ जुलाई, १९३५

चि० नारणदास,

इसके साथके पत्रोंको पढ़कर तदनुसार आवश्यक व्यवस्था कर लेना। लीलावतीको क्या हुआ है? उसकी आकुलताकी कोई सीमा ही नहीं है। वह भली लड़की है किन्तु उसपर विश्वास करके कुछ भी नहीं किया जा सकता फिर भी तुम उसके पास हो अतः मैं निश्चिंत हूँ।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४६० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३४४. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

६ जुलाई, १९३५

सुज्ञ भाईश्री,

यह पत्र मैं बायें हाथसे लिख डालना चाहता हूँ। चाहे जो हो किन्तु हमारी झोंपड़ियाँ तो यहाँ [भारतमें] ही शोभाप्रद हो सकती हैं। बाहर जाकर कहीं सुख थोड़े ही मिलनेवाला है? यह अच्छा हुआ कि इतनी परेशानियोंके बावजूद आप दो बार हरिजन-कथा पढ़ गये। अब जो होना हो सो भले हो। आप अपने स्वास्थ्यका तो ध्यान रखते हैं न? चिन्ता करने से परेशानी दूर नहीं होगी। आप यह जानते हैं न कि रमाबहन[2] आपके पार्श्वमें हैं? यह अन्तिम वाक्य मैं कुछ और तरहसे लिखना चाहता था किन्तु इस प्रकार लिखा गया। किन्तु यह अच्छा लगता है इसलिए मैं इसे बदलता नहीं। वे एक प्रकारकी दार्शनिक हैं किन्तु जिस प्रकार हम अपने पास बैठे हुए ईश्वरको नहीं पहचानते उसी प्रकार सच्चा आश्वासन देनेवाले मित्रको भी प्रायः हम नहीं पहचान पाते। अत. यदि उनकी उपस्थितिसे आपको

१. देखिए पिछला शीर्षक भी।

२. प्रभाशंकर पट्टणीकी पत्नी।

आश्वासन न मिलता हो तो जैसा मैंने ऊपरके वाक्यमें लिखा, उनके होते हुए चिन्ता किस बातकी है। आपके दुःखमें हिस्सा बँटानेवाली वे सही महिला हैं।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९४३) से। सी० डब्ल्यू० ३२६० से भी; सौजन्य : महेश प्र० पट्टणी

३४५. पत्र : नारणदास गांधीको

वर्धा
७ जुलाई, १९३५

चि० नारणदास,

अब तुम्हारे लिए हरिलालको और क्या समझाना बाकी रह गया है? किसीसे बलात् पुण्य थोड़े ही कराया जा सकता है? इसलिए मुझे लगता है कि पत्रोंके आदान-प्रदानके अतिरिक्त फिलहाल तुम्हारे करने को और कुछ रह ही नहीं गया है। जब ऐसा समय आये कि उसे फिर पश्चात्ताप हो तब देखना कि तुम क्या कर सकते हो।

कनुका[1] बुखार तो कबका उतर गया। तुम यह मानना कि वह यहाँ बिलकुल निश्चित है। कनुके बारेमें तुम्हें, जमना या पुरुषोत्तमको तनिक भी चिन्ता करने की जरूरत नहीं। मेरी नजरके सामने उसका सारा कामकाज चलता रहता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४६१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३४६. पत्र : अमृतकौरको

सोमवार, ८ जुलाई, १९३५

प्रिय अमृत,

मैंने तुम्हें जो कागज भेजा था, उसका शेषांश साथमें भेज रहा हूँ। मेरे बारेमें अखबारोंमें जो खबरें छपती हैं, उनपर तबतक विश्वास न करो जबतक यहाँसे उनकी पुष्टि न करा लो। मैं ४५ मिनटतक दर्दसे चीखता तो जरूर रहा। लेकिन दर्द बन्द होनेपर मुझे तनिक भी कमजोरी महसूस नहीं हुई और न मेरा वजन घटा। यह नीमकी पत्तियाँ अधिक लेनेसे हुआ था। मैं प्रयोग करके यह जानने की कोशिश कर रहा था कि वे अधिकसे-अधिक कितनी ली जा सकती हैं। ऐसे प्रयोग अपने

१. नारणदास गांधीके पुत्र।

ऊपर ही किये जा सकते हैं। मेरे प्रयोगोसे मुझे कभी कोई स्थायी हानि नही हुई है। मैंने अपने और अपने साथियोके कामकी वहुत-सी महत्त्वपूर्ण खोजें की है। शुरूके दिनोमें मेरे दाँतोको नुकसान पहुँचा, लेकिन उस प्रसगमें भी प्रयोगमें कोई दोष नही था। वह तो मेरे प्रारम्भिक दिनोके अज्ञानके कारण हुआ था। यदि हमारे डॉक्टरोको देशी आहार और औषधोकी विशेषताओका ज्ञान होता तो मुझ-जैसे लोगोका रास्ता सरल और आसान हो जाता।

मैं तुम्हारे लिए और कागज तैयार करवा दूंगा।

सच मानो, मैं बिलकुल ठीक हूँ।

आज, सोमवारको मुझे लिखने का काम खुद करना पड़ा।

तुम सबको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५४०) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६३४९ से भी

३४७. पत्र : क० मा० मुंशीको

८ जुलाई, १९३५

भाई मुंशी,

तुम्हारा लेख अच्छा है, लेकिन यह हिन्दीमें होना चाहिए। अंग्रेजीमें उसका अनुवाद होना चाहिए। ऐसा नही किया जाता तो वह एक गलत शुरुआत होगी। उत्तर भारतके लेखक अंग्रेजीको बर्दाश्त नही करेंगे। क्या तुमने यह स्पष्ट कर दिया है कि यह मासिक पत्रिका[1] हिन्दीमें छापी जायेगी? आशा है, अन्य भाषाओके लेख भी देवनागरी लिपिमें ही छापे जायेंगे। यदि मेरी यह मान्यता ठीक हो तो तुम्हें अपने लेखमें इसे स्पष्ट करना चाहिए।

परामर्श-समितिका विचार मुझे पसन्द आया। यदि मुझे इसका पदेन अध्यक्ष बनाया जाता है तो स्वीकृति या अस्वीकृतिका प्रश्न ही नही उठता। यदि मुझे नये सिरेसे अध्यक्ष नियुक्त किया जाता है तो निश्चय ही उसे स्वीकार करने में मुझे झिझक होगी। विद्वानोंके बीच मेरे लिए क्या स्थान हो सकता है? मैं तो अपने क्षेत्रमें ही रहना पसन्द करता हूँ।

यदि नये अध्यक्षका चुनाव सम्भव हो तो शान्तिनिकेतनके विधुशेखर शास्त्री या कर्वे विश्वविद्यालयके श्री जोशी इस सम्मानके उपयुक्त पात्र हैं। मैंने सुना है कि श्री जोशी बहुत बड़े विद्वान् हैं। मैं उनको व्यक्तिगत रूपसे नही जानता। मेरे इस सुझावपर तटस्थ भावसे विचार करना। मेरे इस संकोचका कारण झूठी विनय तो

१. हंस।

तनिक भी नहीं है। मेरी साहित्यिक योग्यता नहीं के बराबर है। मुझे सामान्य बुद्धि मिली है, इसलिए मुझमें जो थोड़ी-बहुत योग्यता है उसका ठीक उपयोग कर सकता हूँ। जब पुस्तिका भेजोगे तो उसकी एक छोटी-सी प्रस्तावना[1] लिख दूंगा। विज्ञापनके बारेमे यह कहना है कि अभी तो मैं उन्हें देखना चाहूँगा। हम उसपर धीरे-धीरे मर्यादाएँ लगाने की सोचेंगे। खुद मैं यह चाहूँगा कि सिर्फ पुस्तकें, शिक्षा आदिके ही विज्ञापन दिये जायें। साबुन या हाथकी बनी छड़ी या खादीसे किसी विशुद्ध साहित्यिक पत्रिकाका क्या सम्बन्ध हो सकता है। हाथकी बनी कलमों या कागज अथवा तसवीरोंके विज्ञापन देना तो ठीक रहेगा। विदेशी पुस्तकोंके विज्ञापन हम निस्संकोच स्वीकार कर सकते है। लेकिन मेरा यह आग्रह नही है कि इस विषयमें मेरे विचारोंके अनुसार ही बरता जाये। जो मर्यादाएँ लगानेपर मैं तुम लोगोंको बुद्धिपूर्वक समझाकर राजी कर पाऊँगा, वही मर्यादाएँ हम लगायेंगे। मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७५७८) से; सौजन्य: कन्हैयालाल माणेकलाल मुंशी

३४८. पत्र: सैयद कासिम अलीको

वर्धा
८ जुलाई, १९३५

भाई कासिम अली,

मैं लाचार हूं। नाटकसे नहीं लेकिन मूक सेवासे ही ग्रामसुधार हो सकता है। नाटक मेरे पास देखने में नहीं आता है। मुझको रजिस्टर भेजा था? मैं खोज कर रहा हूं। तुम्हारी माली हालत यदि खराब है तो तुम्हारे कुछ-न-कुछ उद्योग वहीं करना चाहिए। साहित्यसे पैसे पैदा करना यों भी उचित बात नहीं है।

मो० क० गांधी

सैयद साहब कासिम अली, विशारद
बैतूल

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९७५२) से।

१. देखिए "सन्देश: 'हंस' को", ५-८-१९३५।

३४९. पत्र : भी० रा० अम्बेडकरको

वर्धा
९ जुलाई, १९३५

प्रिय डॉ० अम्बेडकर,

आपको शायद मालूम होगा कि राजाराम भोले अभी मेरे साथ है। उसे क्या करना चाहिए, इस सम्बन्धमें वह मेरी सलाह चाहता है। उसके बुरे स्वास्थ्यका खयाल रखते हुए मैंने यह सलाह दी है कि अगर वह अपने खाने-कपड़ेके लिए . . .[1] लेकर कुछ हरिजन-सेवा करने में सन्तोष माने तो बेहतर होगा। दूसरा विकल्प है व्यवसायका रास्ता अपनाना। उसके यह राह अपनाने के रास्तेमें मुझे कठिनाई दिखाई देती है। उस हालतमें उसे नियमित रूपसे कुछ घंटे काम करना पड़ेगा और अधिकसे-अधिक काम करनेके लिए तैयार रहना होगा, लेकिन जिस आदमीको बराबर क्षय रोगसे ग्रस्त हो जानेका भय लगा हो उसके लिए ऐसा करना घातक होगा। किन्तु मैंने उससे कहा कि उसे आपकी सलाह लेनी चाहिए और आपसे ही मार्गदर्शन प्राप्त करना चाहिए। उसका कहना है कि वह आपको पहले ही लिख चुका है। मैं जानता हूँ कि समयपर उसे आपका उत्तर मिल जायेगा। लेकिन मैं चाहूँगा कि आप मेरी खातिर उत्तर भेजनेमें जल्दी करें, ताकि मैं राजारामको बतला सकूँ कि वह क्या करे।

हृदयसे आपका,

डॉ० अम्बेडकर

अंग्रेजीकी नकलसे . प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

३५०. पत्र : नारणदास गांधीको

मगनवाड़ी, वर्धा
९ जुलाई, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। हरिलालके आखिरी पत्रके बाद ही मैं तो आशा छोड़ बैठा था। मुझे भय है कि उसने पीना तो पहलेसे ही शुरू कर दिया था। जब उसने मलेरियाके बहाने ब्रांडी पीनेकी अनुमति माँगी थी तभीसे मैं यह मान बैठा था कि उसने फिर पीना शुरू कर दिया होगा। इसलिए मुझे गहरा या हलका धक्का पहुँचनेका प्रश्न ही नहीं उठता। वह मेरे पास आया इसलिए मैंने उसपर विश्वास

१. साधन-सूत्रमें कुछ अंश छोड़ दिया गया है।

कर लिया, और अब भी विश्वास करूँगा, किन्तु इससे अधिक और कुछ नहीं कर सकता।

तुमने 'तार न देकर अच्छा ही किया। उसे यहाँ भेजकर पैसे मत बरबाद करना। उसका जो होना होगा सो होगा।

लीलावतीका पत्र तो मैंने तुम्हें भेजा ही है, और उसका उत्तर भी भेजा है।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४६२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

३५१. पत्र: लीलावती आसरको

९ जुलाई, १९३५

चि० लीलावती,

आशा है, अब तू शान्त हो गई होगी। तू किस कारण अशान्त हो गई थी? यदि तू अपने स्वभावकी सीमाओंके बाहर जाकर कुछ न करे तो इतनी अधिक बेचैन नहीं रहेगी। भगवान् तुझे सुबुद्धि दे। प्रतिदिन प्रातः उठनेपर और रातको सोते समय उससे मानसिक स्थिरताकी याचना करना।[2]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३५) से। सी० डब्ल्यू० ६६१० से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

३५२. पत्र: हरिगोविन्द गोविलको

१० जुलाई, १९३५

भाई हरि गोविल,

तुमारे तरफसे पुस्तक मिल गई है। तुमारी धर्म-पत्निको धन्यवाद। दिल चाहे तब वह लिखें।

शब्दकोशके बारेमें और एक हिंदी शिक्षकके बारेमें जो कुछ कहते हो योग्य है। कुछ बन सकेगा तो करूंगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२२) से।

१. देखिए "पत्र: लीलावती आसरको", ६-७-१९३५।
२. देखिए "पत्र: लीलावती आसरको", ६-७-१९३५ भी।

३५३. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

वर्धा
१० जुलाई, १९३५

भाई सतीशबाबु,

तुम्हारा खत मिला है। बरकामताके विषयमें मैं हस्तक्षेप नहीं करूं ऐसा तो कैसे हो सकता है? जब चर्खा संघके पास खादी-कामके बारेमें कुछ भी शिकायत आ जाय तो उसका फैसला तो करना ही पड़ता है। शंकरलाल बिमार है और इस झगड़ेसे उनको गभराहट[1] भी हो गयी है। ऐसी हालतमें उन्होंने मुझे लिखा। अन्नदाके पत्र भी आने लगे हैं। इसलिए इस झगड़ेमें कुछ-न-कुछ करना तो होगा ही। मेरी सलाह है कि एक स्टेटमेन्ट तुम्हारे तरफसे भेजी जाय और एक अन्नदाके तरफसे। और उसके उत्तर एक-दूसरे दे दे। उसपर से दोनोको बुलाने पड़े तो बुलाऊंगा। अन्यथा वैसे ही निर्णय दे दूंगा। यह तो ठीक है न? हड्डीके बारेमें तो मुझे इन्दौरकी[2] पध्धति[3] अच्छी लगती है। थोडा-सा नाईट्रोजन जाता है उसमें क्या हर्ज है? संभाल रखकर हड्डीको अग्नि दी जाय तो आरामसे सामान्य चक्कीमें पीसने लायक हो जाती है। चूना पीसने की चक्कीमें सैकड़ो मन आटा बन सकता है और यह खाद बाजारमें जानेके लायक हो सकती है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७११) से।

१. घबराहट।
२. अप्रैलमें गांधीजी इस उद्योगको देखने गये थे।
३. पद्धति।

३५४. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

वर्धा
११ जुलाई, १९३५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी-अभी मिला। यह पत्र तेरी वर्षगाँठके दिन लिखा गया है, इसलिए आशीर्वाद तो ले ही ले।

कैसी है? कौन-सी वर्षगाँठ है, यह तो तू लिखती ही नही। तेरी शुभकामनाएँ अवश्य पूरी होंगी। शुभ प्रयत्न करनेवालों के प्रयत्न कभी निष्फल नही होते और अशुभ प्रयत्न करनेवालों के कभी फलते नही। यदि फलते दीखें तो वह केवल आभास-मात्र है।

शेष फुरसतमें लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३७५) से। सी० डब्ल्यू० ६८१४ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

३५५. पत्र : लीलावती आसरको

११ जुलाई, १९३५

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला। तू छुट्टियोंमें अवश्य आना। तब हम सोच-विचार कर लेंगे। वेतनके[1] बारेमें मैं नारणदासको लिख रहा हूँ। क्या तू जानती है कि मेरे साथ रहने का क्या मतलब है? इसका मतलब है मजूरिन बनकर रहना। मजदूरी करते हुए जो-कुछ सीखा जा सके, सो सीखना और जो खानेको मिले, सो खाना। यदि तू इसमें प्रसन्न रह सके तो चली आना। यहाँ तुझे अलगसे कोठरी नही मिलेगी। मेरे, बा या अन्य किसीके लिए भी यहाँका रहन-सहन कठोर है। किन्तु जब तू यहाँ आयेगी तो सब-कुछ स्वयं देख लेना। फिलहाल तो वहाँ रहते हुए शान्तिपूर्वक निर्धारित सेवा-कार्य करती रह।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१०७) से; सौजन्य : लीलावती आसर

१. देखिए अगला शीर्षक।

३५६. पत्र : नारणदास गांधीको

११ जुलाई, १९३५

चि० नारणदास,

हरिलालको तो अब हाथसे गया ही समझो। . . .[1] लीलावतीके पत्र मिलते रहते हैं। और उसके लिए एक पत्र इसके साथ है।[2] यदि शालाके कोषमें से उसे वेतन दिया जा सकता हो तो दे दो। यदि यही उसके सन्तापका कारण हो तो उसका उपाय करना।

मैथ्यूसे शारीरिक श्रमका काम अवश्य लेना। प्रत्येक कक्षा कितने समयकी होती है?

कनु आनन्दपूर्वक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४६३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३५७. पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

मगनवाड़ी, वर्धा
१२ जुलाई, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

अब तो अम्बालालभाई वहाँ पहुँच गये होंगे। वे एक बन्धन-जैसे बन गये हैं किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि मौका आनेपर उन्हें भिक्षाकी झोली भर देनेसे मुक्ति मिल गई है। इसलिए तुम जाना और उन्हें पूरा बजट समझा देना। वे जो दें सो ले लेना और जो कहें सो मुझे लिखना। शंकरलालके आनेपर मैं उनसे बात करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९६०) से। सी० डब्ल्यू० १२६ से भी; सौजन्य . परीक्षितलाल ल० मजमूदार

१. साधन सूत्रमें यहाँ कुछ अंश छोड़ दिया गया है।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

३५८. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

१२ जुलाई, १९३५

चि० हेमप्रभा,

तुमारा लंबा खत मिला। आनंद हुआ। इसके सिवा मैं तुमारा मानस नहीं समज सकता था। तुमारे खतमें क्रोध, आवेश और अभिमान है। ऐसा कहना कि चर्खा-संघके संचालकोंने बिगाड़ा है, प्रतिष्ठान ही ने सब-कुछ किया है तो भी प्रतिष्ठानको ही सब-कुछ सहना पड़ा है, अन्नदा इत्यादि द्वेष करते हैं — यह सब अनुचित विचार है और अभिमानजन्य है। इन सब बातोंका उत्तर मैं खतसे नहिं दूंगा। तुमारे यहां आ जाना है। तब तुमको शांति मिलेगी और मुझको भी। साथमें सतीशबाबूको लाना। वे न आ सकें तो कोई हरज नहीं। जो निर्णय करेंगे वह आवश्यकता होनेसे उनको बतायेंगे और अमल करेंगे। जितनी जल्दी से आ सकती है आ जाओ। यहां स्वास्थ्य भी अच्छा होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७१२) से।

३५९. सलाह : किशूको[1]

[१३ जुलाई, १९३५ के पूर्व]

निश्चय ही यह कपड़ा आपके लिए स्वदेशी है, पर यह वह कपड़ा नहीं है, जो आपको हिन्दुस्तानमें खरीदना चाहिए। 'जैसा देश वैसा भेस' यह कहावत कुछ निरर्थक नहीं है। जिस देशका हम नमक खाते हों, वहाँके रहन-सहन और रीति-रिवाजोंके अनुसार चलने का हमें जरूर प्रयत्न करना चाहिए। जब मैं दक्षिण आफ्रिकामें था, तब जहाँतक मुझसे हो सकता था, आफ्रिकाकी बनी हुई चीजोंको काममें लानेकी कोशिश किया करता था। इसलिए अगर आपको कोई खास आपत्ति न हो तो मैं

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक-पत्र) से उद्धृत। पत्रमें महादेव देसाईने बताया है कि आश्रममें किशू नामक एक जापानी भिक्षु ठहरे हुए थे। उन्हें कुछ कपड़ेकी जरूरत हुई तो वे बाजारसे सस्ता जापानी कपड़ा खरीद लाये। कपड़ेका बंडल देखकर गांधीजी ने उन्हें यह सलाह दी थी। देखिए "भाषण : वर्धा आश्रममें", २०-७-१९३५ के पूर्व।

तो आपसे खादी पहनने के लिए ही कहूँगा। खादी कुछ महँगी तो जरूर मिलती है, लेकिन तब आप जरूरतसे कुछ कम कपड़ेमें काम चलानेकी कोशिश कर सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-७-१९३५

३६०. आदर्श और व्यवहार[1]

हमारे अन्दर प्रकाश और अन्धकार, सत्य और असत्य, राम और रावणके बीच शाश्वत संग्राम चल रहा है। यह युद्ध तो हमें अपनी ताकत-भर जारी रखना ही है, पर हमें अपनी मर्यादाओंका हमेशा ध्यान रखना होगा। अर्जुन अपनी मर्यादाओं को भूलने ही वाला था कि भगवान् कृष्णने उसे ऐसा करने से रोका। अहिंसा जीवन का नियम है, पर यदि मैं साँपसे डरता हूँ तो उस समय मेरा क्या कर्त्तव्य है? मनसे तो मैं पहले ही साँपका वध कर चुका; सिर्फ मेरी शारीरिक निर्बलता ही बाधा दे रही है। उस समय मेरा धर्म कहता है कि 'उसे मार डाल। उसे मारनेसे बचने का तेरा जो यह मिथ्या प्रयत्न है वह त्याग दे।' यही बात ब्रह्मचर्य और गृहस्था-श्रमके विषयमें भी है। आजीवन ब्रह्मचर्य एक ऐसी वस्तु है जिसकी कामना हमें अपनी समस्त श्रद्धाके साथ करनी चाहिए, पर जो अपनी विषय-वासनाको काबूमें नहीं रख सकता, जिसका मन और इन्द्रियाँ कामतृप्तिके लिए तड़प रही हैं, वह तो निश्चय ही गृहस्थाश्रममें प्रवेश करके शुद्ध गृहस्थ-जीवन बिताये। उसके लिए आजीवन ब्रह्मचर्य-व्रतका प्रयास व्यर्थ है। आदर्शमें तो वह वही अखण्ड श्रद्धा रखेगा पर उस आदर्शतक वह आत्मसंयमकी क्रमिक साधनाके द्वारा धीरे-धीरे ही पहुँचनेका प्रयत्न करेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-७-१९३५

१. यह महादेव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से लिया गया है। इसके लिखे जानेका प्रसंग समझाते हुए महादेव देसाई कहते हैं: "जीव-मात्र एक हैं", २२-६-१९३५ शीर्षकसे लिखे लेखमें गांधीजी ने उन सभी प्रश्नोंके उत्तर दे दिये हैं जो उनके विश्वास और आचरणके बीच दिखनेवाले सतही अन्तरको लक्ष्य करके पूछे गये थे। उनसे निजी तौरपर पूछे गये ऐसे ही प्रश्नोंका एक उत्तर उन्होंने [शायद "पत्र: कृष्णचन्द्रको", ३-७-१९३५] भेजा जिससे उनकी- और जिज्ञासुओंकी स्थिति — यदि उसके और भी स्पष्ट किये जाने की गुंजाइश थी तो — स्पष्ट हो गई है।"

३६१. पंजाबके हरिजन और कुएँ

ऊपर दिया गया पत्र[1] मैं खुशीसे छाप रहा हूँ। पंजाब हरिजन सेवक संघके मन्त्री लाला मोहनलालसे इस पत्रके सम्बन्धमें यथोचित कार्रवाई करने के लिए कह रहा हूँ। कुओंके सम्बन्धमें हरिजनोंकी जो भी जरूरतें संघकी नजरमें आयेंगी, उन सबको पंजाब सफाई बोर्डके ध्यानमें अवश्य लाया जायेगा। हरिजन सेवक संघकी नीति सरकार द्वारा किये कार्यको दुबारा करने की नहीं, बल्कि जहाँ कहीं सम्भव हो, उससे रह गई कमीको पूरा करने की है। जहाँ जरूरत महसूस होती है, संघ वहीं कुएँ खुदवा रहा है। यहाँ मैं इस बातका उल्लेख कर दूँ कि ब्रिटिश भारतमें कानूनी तौरपर तो हरएक जगह हरिजनोंको यह अधिकार है कि सार्वजनिक कुओंका प्रयोग दूसरोंके साथ-साथ वे भी कर सकते हैं, लेकिन व्यावहारिक रूपमें होता यह है कि सवर्ण हिन्दू और कभी-कभी दूसरे लोग भी हरिजनोंको इनका इस्तेमाल करने से जबर-दस्ती रोक देते हैं। हरिजन लोग यदि इन कुओंका इस्तेमाल करने का साहस करें तो उन्हें सवर्ण हिन्दुओंके हाथों कठोर शारीरिक दण्डका भागी बनना पड़ता है। जहाँतक मेरी जानकारीका सम्बन्ध है, पंजाबमें स्थिति इससे भिन्न नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-७-१९३५

३६२. मानक मजदूरीकी आवश्यकता

अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघने अपने एजेंटों और दूसरे लोगोंके नाम निम्न-लिखित प्रश्नावली भेजी है, जिसके उत्तर प्रधान कार्यालय, वर्धाके पास आगामी १ अगस्तसे पहले पहुँच जाने चाहिए:

> यह प्रस्ताव किया गया है कि अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके आश्रयमें बनने या बिकनेवाली तमाम चीजोंके सम्बन्धमें हमें यह आग्रह रखना चाहिए कि उनको बनानेवाले ग्रामीण कारीगरोंको अपने श्रमका पूरा पारिश्रमिक मिले। इसके लिए कामकी मजदूरीका एक मानक निश्चित करना जरूरी होगा। यह मानक कामकी समान मात्राके लिए, स्त्री-पुरुष दोनोंके लिए, एक ही होना

1. पंजाब सफाई-बोर्डके सेक्रेटरी के० ए० रहमानका २८ जून, १९३५ का पत्र यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है। पत्र-लेखकने २७ जून, १९३५ के सिविल एण्ड मिलिटरी गजटमें पंजाबके हरिजनोंके लिए पीनेके पानीके विषयमें प्रकाशित एक लेख पढ़कर बताया था कि "गाँववालों को पीनेका पानी उपलब्ध करानेके लिए हालके वर्षोंमें लाखों रुपये खर्च किये गये हैं" और इस सम्बन्धमें "हरिजनों व गैर-हरिजनोंमें कोई भेदभाव" नहीं किया गया है।"

चाहिए। उसका आधार न्यूनतम निर्धारित उत्पादनके साथ आठ घंटेका कार्य-दिन माना जा सकता है। यह मजदूरी मालकी लागतमें शामिल हो जायेगी और कीमत इसके लिहाजसे मुकर्रर की जानी चाहिए। आम तौरपर शायद हम होड़वाले बाजारमें कीमतें तय न कर सकें, परन्तु उन चीजोंके लिए हम ऐसा कर सकते हैं, जो प्रतियोगिताके क्षेत्रमें नहीं आतीं और साथ ही उस मालके लिए भी हम ऐसा कर सकते हैं, जो अपने ऐसे विशेष गुणोंके कारण, जिनकी ग्राहक कद्र करते हैं, पसन्द किया जाता है।

यह प्रश्नावली नीचे लिखे मुद्दोंपर आपकी राय प्राप्त करने के लिए भेजी जाती है :

१. क्या आपको न्यूनतम दैनिक मजदूरी नियत कर देना और कीमतें तय करके मजदूरोंको वह मजदूरी प्राप्त होते रहने की निश्चित व्यवस्था कर देना व्यावहारिक प्रतीत होता है?

२. क्या हमें अपना अन्तिम मानक तय करके उसकी ओर बढ़ना चाहिए या एक न्यूनतम मानक अपनाकर काम शुरू कर देना चाहिए। और तब जैसे-जैसे सफलता मिलती जाये उसे बढ़ाते जाना चाहिए?

३. यह मानक किस आधारपर निश्चित किया जाये? क्या आप फिल-हाल केवल भोजनका विचार करके और यह समझकर कि कपड़ा अपने-आप तैयार कर लिया जाये, कोई निर्वाह-योग्य मजदूरी सुझा सकते हैं? क्या आध आना फी घंटा बहुत कम होगा?

अखिल भारतीय चरखा संघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ-जैसी परोप-कारी संस्थाओंके लिए इस व्यापारिक नियमका अनुसरण करना ठीक नहीं है कि सबसे सस्ता खरीदें और सबसे महँगा बेचें। चरखा संघने अवश्य ही सबसे सस्ता खरीदने की कोशिश की है। परन्तु इसकी चर्चा अन्यत्र की जायेगी।[१] खादीके विकासके अपने अनुभवका लाभ ग्रामोद्योग संघको देने की इच्छासे मैंने उसके प्रभावमें काम करने-वाले कारीगरोंको मिलनेवाली मजदूरीके बारेमें चर्चा छेड़ी। उसीके परिणामस्वरूप यह प्रश्नावली जारी की गई है।

यह तो पता लग ही चुका है कि एजेंटोंमें जरूरत की चीजें यथासम्भव कमसे-कम मूल्यमें तैयार करानेकी मनोवृत्ति होती है। काट-छाँट कारीगरोंकी कमाईमें न की जाये तो और किसकी कमाईमें की जाये? इसलिए यदि एक न्यूनतम दर तय न करे दी जायेगी तो ग्रामीण कारीगरोंको नुकसान पहुँचनेका पूरा डर है, हालाँकि उन्हींकी खातिर ग्रामोद्योग संघ कायम किया गया है।

धीरजके साथ सब-कुछ बर्दाश्त करनेवाले गरीब ग्रामवासियोंका हम बड़े लम्बे अर्सेसे शोषण करते रहे हैं। ग्रामोद्योग संघको परोपकारकी आड़में उस शोषणको और भी तीव्र नहीं कर देना चाहिए। उसका लक्ष्य यह नहीं है कि गाँवकी चीजें

१. देखिए अगला शीर्षक।

सस्तेसे-सस्तेमें तैयार की जायें, वल्कि यह है कि जीनेके लिए काफी मजदूरीपर बेकार ग्रामवासियोंको काम दिया जाये।

यह दलील दी जाती है कि ऐसे किसी कदमसे, जिससे गाँवोंमें बनी हुई वस्तुओं की कीमत बढ़ सकती है, वह हेतु विफल हो जायेगा जिसके लिए ग्रामोद्योग संघकी स्थापना हुई है। इसका कारण बताते हुए यह कहा जाता है कि कीमत बहुत ज्यादा होगी, तो गाँवोंमें बनी चीजोंको कोई नहीं खरीदेगा। किसी चीजकी वह कीमत ऊँची कैसे समझी जा सकती है जिस कीमतसे उत्पादकको केवल निर्वाह-योग्य मजदूरी मिले? हमें ग्राहकोंको यह शिक्षा देनी होगी कि वे लोगोंकी दुरवस्थाको समझें। यदि हमें करोड़ों मेहनतकशोंके साथ न्याय करना है, तो उन्हें अपने कामकी उचित मजदूरी देनी ही होगी। हमें इतनी मजदूरी उन्हें देनी ही चाहिए, जिससे उनका निर्वाह हो सके। हमें उनकी बेवसीका लाभ उठाकर ऐसी मजदूरी नहीं देनी चाहिए, जिससे एक बार भी उन्हें मुश्किलसे भरपेट खानेको मिले।

यह बिलकुल स्पष्ट है कि संघको मिलके मालसे स्पर्धा करने से इनकार कर देना चाहिए। जिस खेलमें हम जानते हैं कि हमारी हार होगी, उसमें भाग लेनेसे क्या लाभ? जहाँ बात पैसे की होगी वहाँ तो उत्पादकों और व्यापारियोंकी बड़ी-बड़ी पेढ़ियोंके मण्डल, चाहे वे स्वदेशी हों या विदेशी, मनुष्यके हाथोसे बनी वस्तुओंको होड़में कभी भी टिकने न देंगे। संघ जो करना चाहता है वह यही कि झूठे और मानव-कल्याणका खयाल न करनेवाले अर्थशास्त्रके स्थानपर सच्चे और मानव-हितका खयाल करनेवाले अर्थशास्त्रको प्रतिष्ठित किया जाये। मानवका धर्म विनाशकारी स्पर्धा नहीं, बल्कि जीवनदायी सहयोग है। सहृदयताकी अवहेलना करना यह भुला देना है कि मनुष्यकी भावनाएँ भी होती हैं। यदि हम ईश्वरके प्रतिरूप हैं, तो चन्द आदमियोंकी भलाई नहीं, अधिकांश की भलाई भी नहीं, बल्कि सबकी भलाई हमारे जीवनका लक्ष्य होना चाहिए।

ग्रामोद्योग संघ-जैसी परोपकारी संस्था उन समस्याओंपर विचार करने से बच नहीं सकती, जो इस प्रश्नावलीमें उपस्थित की गई है। यदि सच्चा हल अव्यावहारिक दिखाई देता हो, तो संघका प्रयत्न उसे व्यावहारिक बनाने का होना चाहिए। सत्य सदा व्यावहारिक होता है। इस तरह सोचें तो संघके कार्यक्रमको प्रौढ़-शिक्षणकी संज्ञा देना उचित ही होगा।

और यदि संघको अपने तत्त्वावधानमें काम करनेवाले कारीगरोंको निर्वाह-योग्य वेतन दिलाना है, तो उसे कारीगरोंके घरके आय-व्यय पर नजर रखनी होगी और यह देखना होगा कि एक-एक पाईका, जो उन्हें दी जाती है, क्या और कैसे उपयोग होता है।

सबसे कठिन प्रश्न तो न्यूनतम या निर्वाह-योग्य मजदूरी तय करने का है। मैंने यह सुझाया है कि किसी अच्छी योग्यतावाले कारीगरके बनाये हुए किसी खास माल की निश्चित मात्राको उसके आठ घंटेका कठिन परिश्रम मानकर उसकी आठ आने मजदूरी दी जाये। आठ आने एक सूचक-मात्र है, जो जीवनके लिए आवश्यक वस्तुओं

की एक निश्चित मात्राका संकेत करता है। यदि पाँच आदमियोंके परिवारमें दो पूरे काम करनेवाले हैं तो वे प्रस्तावित दरसे ३० रुपये मासिक कमायेंगे। इसमें छुट्टी या बीमारीका एक भी दिन हिसाबमें नही लिया गया है। पाँच खानेवालो के लिए ३० रुपये माहवार कोई बहुत बड़ी आमदनी नहीं है। इस प्रस्तावित प्रणालीमें स्त्री-पुरुष या छोटी-बडी उम्रका कोई भेद अनिवार्यतः नही रखा गया है। परन्तु जिनके पास प्रश्नावली भेजी गई है, वे अपने अनुभवके आधारपर इन प्रश्नोंके उत्तर दें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-७-१९३५

३६३. अखिल भारतीय चरखा संघ

जो बात अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके तत्त्वावधानमें काम करनेवाले कारीगरों पर लागू होती है, वही अ० भा० चरखा सघके प्रवृत्ति क्षेत्रमें काम करनेवाले कारीगरो पर भी लागू होती है। अन्तर केवल इतना ही है कि ग्रामोद्योग संघको पहलेकी किसी परम्परा-परिपाटीकी बाधाके बिना काम करना है। चरखा संघको अगर तमाम कारीगरोके लिए समान मजदूरीका नियम चलाना है तो उसे इन पन्द्रह वर्षोंसे चली आ रही परम्परा-परिपाटीको मिटाना होगा। अगणित कतैयोकी सहायता करने में उसे बुनकरो, जो कतैयोंके दसवें भागके बराबर हैं, और उनके बाद धुनियो, ओटनेवालो और दूसरे कारीगरोंकी समस्यासे निबटना होगा। प्रत्येक वर्गकी मजदूरीकी दरमें अन्तर है। बुनकरकी कमाई और कतैयेकी कमाईमें इतना अधिक अन्तर है कि उनमें समानता लाना असम्भव-सा मालूम होगा। कतैयेको जहाँ एक घंटेमें २ पाइयाँ मिलती है, वहाँ बुनकरको कमसे-कम एक आना और कभी-कभी दो आने भी मिलते है। कतैयेकी मजदूरीका दो पाईसे बारह पाईपर लाना बहुत बड़ा सवाल है — खासकर जब हमारा इस बातपर ध्यान जाता है कि कतैयोकी संख्या करीब डेढ लाख है।

मगर चरखा संघको अगर अपने विरदके योग्य बनना है तो उसे उचित काम करनेके लिए अपने अन्दर साहस जुटाना ही पड़ेगा। कठिनाइयाँ देखकर हमें हिम्मत नहीं हारनी है, बल्कि बहादुरीसे उनका सामना करना है। जो लोग दरिद्रनारायणके प्रति अपने प्रेमके कारण खादी खरीदते हैं, उनके बारेमें हमें यह भरोसा रखना चाहिए कि आजतक खादीकी जो कीमत उन्होंने दी है उससे अब अधिक भी देंगे। अगर यह साबित हुआ कि लोगोंपर हमारा ऐसा भरोसा करना गलत था तो खादीकी बिक्री चाहे जितनी गिर जाये, उसके लिए हमें तैयार रहना चाहिए। जो लोग खादीके प्रेमी है वे, खादी कितनी ही महँगी हो जाये, उसे जरूर खरीदेंगे — यदि उन्हें यह मालूम है कि खादी खरीदने में लगाये सौ रुपयेमें से पंचानवे रुपये दरिद्रनारायणकी जेबमें जाते है।

पर अन्तमें देखा जाये तो खादीका व्यापारिक उपयोग उसका गौण और छोटेसे-छोटा उपयोग है। ऐसे एक करोड़से अधिक मनुष्य, यानी नगर-निवासी नहीं निकलेंगे, जिन्हें खादी खरीदने की जरूरत पड़ेगी। इतने मनुष्योंको तो पूरा समय काम करनेवाले बीस लाख कारीगर आसानीसे और मजेसे उनकी जरूरतका कपड़ा दे सकते हैं। खादीका पहला ध्येय तो यह है कि किसानोंका वह एक पूरक उद्योग बन जाये। उन लोगोंको यह सिखाना है कि अपने उपयोगके लिए वे खुद अपना सूत कात लिया करें, और उसका कपड़ा भी खुद ही या तो बुन लें अथवा बुनकरोंसे बुनवा लिया करें। जिस तरह वे खुद अपना खाना पकाते हैं और खुद ही उसे खाते हैं, उसी तरह खुद ही खादी तैयार करें और खुद ही उसे खरीदें, अथवा यों कहिए कि खुद ही उसका उपयोग करें। इस काममें हमने अभीतक शायद ही सच्चे दिलसे हाथ लगाया हो। श्री बैंकर चुपचाप धीरे-धीरे इस प्रकारका परिवर्तन कर रहे हैं। जब कि उधर यह परिवर्तन किया जा रहा है, हमें कतैयेको उसका पर्याप्त पारिश्रमिक देकर उसके प्रति अपना फर्ज पूरा करना चाहिए। उन्हें मजदूरीमें नित्य आठ आने दिये जायें या इससे कम? चाहे जो सीमा बाँध दी जाये, पर उतना पैसा पानेकी योग्यताके लिए कतैयेको प्रति घंटा कितना सूत कातकर देना चाहिए? यही प्रश्न ओटनेवालों, धुनियों, बुनकरों और खादीके दूसरे तमाम कारीगरोंके सम्बन्धमें हमें हल करना है।

खादीमें जो लोग दिलचस्पी लेते हैं, और खादी-शास्त्रका जिन्हें जरा भी ज्ञान है, क्या वे मजदूरीकी दरमें इस प्रस्तावित परिवर्तनके सम्बन्धमें अपनी सम्मति भेजने की कृपा करेंगे? यदि वे इस परिवर्तनके पक्षमें हों, तो वे यह भी लिखें कि मजदूरी की कमसे-कम क्या दर वे निश्चित करते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-७-१९३५

३६४. सदस्य सचेत हो जायें

श्रीयुत कुमारप्पाने मेरे पास निम्नलिखित सूचना प्रकाशनार्थ भेजी है:

> साधारण सदस्योंको याद दिलाया जाता है कि उन्हें संघके ११ वें उपनियमके अनुसार बराबर हर तीसरे महीने अपने कामकी रिपोर्ट मन्त्रीके पास भेजनी है। वह उपनियम यह है:
>
> "संघके प्रत्येक साधारण सदस्यको अपने कामकी तिमाही रिपोर्ट मन्त्रीके पास इस तरह भेजनी होगी कि सम्बन्धित तिमाही की अवधि पूरी होनेके बाद एक महीनेके अन्दर प्रधान कार्यालयमें पहुँच जाये। यदि किसी साधारण सदस्यके कामकी रिपोर्ट लगातार तीन तिमाहियोंतक न आयेगी, तो वह संघका सदस्य नहीं रह जायेगा।"

जिन साधारण सदस्योंने अबतक रिपोर्ट न भेजी हो, उनसे यह प्रार्थना है कि वे ३० जून, १९३५ तकके कामकी रिपोर्ट तुरन्त भेज दें।

श्रीयुत कुमारप्पा एक सजग मन्त्री हैं, और वैसे ही संघके अध्यक्ष श्री जाजूजी भी हैं। वे दोनों यह मानते हैं कि किसी भी संस्थाके नियमोंका या तो कड़ाईके साथ पालन होना चाहिए या फिर उन्हें रद कर देना चाहिए। इस उचित नियमके रद किये जानेकी चूंकि जरा भी सम्भावना नहीं है, इसलिए मुझे आशा है कि संघके सदस्य इस नियमका शब्दश: और भावनात: भी पालन करें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-७-१९३५

३६५. पत्र : छगनलाल जोशीको

वर्धा
१३ जुलाई, १९३५

चि० छगनलाल (जोशी),

तुम्हारा पत्र स्वागतके योग्य है। मैं यह मानता था कि अब तुममें और नारणदासमें ठीक पटने लगी है। किन्तु देखता हूँ कि यह मेरी भूल थी। यह बहुत ही अच्छा हुआ कि तुमने साफ-साफ पत्र लिखा। वहाँकी पाठशालाके सम्बन्धमें मेरे पास एक पत्र आया है। मैं जाँच-पड़ताल कर रहा हूँ। तुम्हारे मनमें जो-कुछ है, क्या उसे तुमने नारणदासके सामने रखा? तुम्हारे पत्रसे मैं देखता हूँ कि तुम्हारा झुकाव छोड़कर चले गये शिक्षकोंकी ओर है। क्या तुम यह जानते हो कि उनकी माँग क्या है? क्या तुमने इस सबके बारेमें भाई नानालालके साथ विचार-विमर्श किया है?

बापा[1] लिखते हैं कि अब तुममें और भाई जीवणलालमें अच्छा समझौता हो गया है। किन्तु तुम्हारे पत्रसे सन्देह होता है। जो हो सो मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३२) से।

१. अमृतलाल वि० ठक्कर।

३६६. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१३ जुलाई, १९३५

भाई घनश्यामदास,

तुम्हारा लम्बा पत्र मिला है। अच्छा है। मुझे तो कहीं गलती प्रतीत नहीं होती है। लेकिन मुझे पूरा डर है कि जब कुछ शर्तें करने लगेंगे तब कुछ नहीं होगा। जैसे कैदीयोंको छोड़ना, डेटेन्युको छोड़ना, अंडामान बंध करना, सत्याग्रहीयोंकी जमीन वापिस करना, आज ऐसी बातें करना शायद अनुचित माना जाय। यह सब जिसके साथ मशविरा करें वह भले करे। आजका वायुमण्डल कायम रहेगा तो मुझे समझौताकी कोई आशा नहीं है। तुमारे साथ मीठी बातें करते हैं उसमें इतना अभ्यहार रहता मालूम होता है कि वस्तुस्थिति जैसी है वह ऐसे ही स्वीकृत होगी। यदि यह डर सच्चा है तो समझौताका होना असंभव है। इससे अधिक इस वखत नहीं कह सकता हूं। इसका यह अर्थ नहीं है कि जो प्रयत्न कर रहे हो उसे छोड़ दिया जाय। तुमारा प्रयत्न तो चलना ही चाहिये; जैसे चल रहा है। परिणाम तो ईश्वर के ही हाथमें है। तबियत अच्छी होगी।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९७२ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

३६७. पत्र : लक्ष्मीनिवास बिड़लाको

१३ जुलाई, १९३५

चि० लक्ष्मीनिवास,

तुमारा खत मिला है। पिताजी पर खत इसके साथ है। एरमेलसे[1] भेज दो। सब अच्छे होंगे।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०११ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. हवाई डाक।

३६८. पत्र : हीरालाल शर्माको

वर्धा
१४ जुलाई, १९३५

चि० शर्मा,

इसके साथ मी० ग्रेगका खत है। उससे पता चला कि वहां कैसे हाल हैं। इसकी कुछ चिन्ता नहीं है। फी देना पडेगा तो देंगे। यहां एक भाई आये थे। वह कहते हैं आजकल कैलागकी ख्याति इतनी नही है जितनी दूसरोंकी। मैं उनके नाम ठाम इत्यादि [का पता] करूंगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१५१) से।

३६९. पत्र : लेसीको

वर्धा
१५ जुलाई, १९३५

प्रिय श्री लेसी,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपका प्रश्न इतना महत्त्वपूर्ण है कि मैंने उस विषयपर आपके नामका उल्लेख किये बिना 'हरिजन' में एक लेख प्रकाशित करने का साहस किया है। मैं उस लेखकी एक अग्रिम प्रति इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। शनिवारको इसके प्रकाशनके पहले आप सार्वजनिक रूपसे इसका कोई उल्लेख नही करेंगे, ऐसी मैं आशा करता हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

३७०. पत्र : प्रभावतीको

१५ जुलाई, १९३५

चि० प्रभावती,

तेरे दोनों पत्र मिले। बाबूजी की अनुमति लेकर तू जबतक चाहे तबतक वहाँ रहना। अब तू जल्दी ही मिलनेवाली है इसलिए अधिक नहीं लिखता। तुझे वहाँसे क्या लाना चाहिए, ऐसी किसी चीजका नाम मुझे नहीं सूझ रहा है। वल्लभभाईसे तो अवश्य मिलेगी न? रामदास भी बम्बईमें है। उसका पता है: १ ऐश लेन, फोर्ट।[1]

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बा दिल्लीमें है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४४७) से।

३७१. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

१५ जुलाई, १९३५

भाई खम्भाता,

तुमने अस्पतालके बारेमें जो पत्र लिखा है, उसकी नकल मुझे भेज देना। आशा है, दिन-दिन तुम्हारा स्वास्थ्य सुधरता जा रहा होगा।

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६१०) से। सी० डब्ल्यू० ४४०० से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

१. पता अंग्रेजीमें है।

३७२. पत्र : लीलावती आसरको

१५ जुलाई, १९३५

१. जब 'हैव' का अर्थ प्राप्त करना हो तो अनेक स्थानों पर 'गैट' का प्रयोग किया जा सकता है; जैसे, "आई मस्ट हैव इट" या "आई मस्ट गैट इट"।

२. 'मस्ट' और 'हैव' के प्रयोगमें कुछ बहुत अन्तर नहीं है।

३. "इफ यू हैड डन दिस" अथवा "हैड यू डन दिस" भी कह सकते हैं; अर्थात् यदि हम 'इफ' के बदले 'हैड' का प्रयोग करें तो उसका भी वही अर्थ होगा। प्रयोग करने से यह और अच्छी तरह समझमें आ जायेगा।

४. जिस संज्ञासे गिनी जा सकनेवाली वस्तुका बोध होता है उसके पहले 'आर्टिकल' (उपपद) अवश्य लगाना चाहिए। 'ए' का अर्थ हम 'एक' मानें, इसलिए 'द' का प्रयोग बहुवचनमें किया जा सकता है।

जहाँ 'दैट' का प्रयोग हो वहाँ 'द' का प्रयोग किया जा सकता है; जैसे 'द' या "दैट मैन हूम यू नो इज हीअर" से यदि बहुत लोग हों तो 'द' या "दोज मैन हूम यू नो आर हीअर।"

आशा है, अब तेरा मन शान्त हो गया होगा। एक दिन नीमके पत्तोंका रस अधिक ले लेनेके कारण मेरा पेट थोड़ी देर दुखता रहा। किन्तु वह तुरन्त जाता रहा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२५४) से। सी० डब्ल्यू० १०१०१ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

३७३. पत्र : नारणदास गांधीको

१५ जुलाई, १९३५

चि० नारणदास,

अब तो हरिलालको बिलकुल भूल जाओ। मैं तो लगभग भूल गया हूँ।

लीलावतीका पाठ[1] इसके साथ है।

वजुभाईने एक पत्र और भेजा है। किन्तु तुम्हारा उत्तर मिलने के बाद यदि आवश्यक लगेगा तो तुम्हें भेज दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

धीरूकी माँगके बारेमें तुम क्या सलाह देते हो? तुम्हें यह ध्यान है न कि वह शान्तिनिकेतन जाना चाहता है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४६४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३७४. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

१५ जुलाई, १९३५

चि० नरहरि,

देवशर्माजी के पत्रका यह अंश तुमसे सम्बन्धित है। मेरा सुझाव यह है कि इस भाईको तुम रख लेना। इससे हिन्दी शिक्षककी तुम्हारी माँग कुछ हदतक पूरी हो जायेगी। उन्हें सीधे पत्र लिख देना :

गांधी सेवाश्रम
डा० गुरुकुल काँगड़ी
जिला — सहारनपुर (सं० प्रा०)

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०८५) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

३७५. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
१६ जुलाई, १९३५

चि० मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला था। आशा है, तुम्हारी तबीयत लगातार सुधर रही होगी। यदि तुम एक चाकू, बाँस, टूटी स्लेटका एक टुकड़ा और एक परकार ले लो तो तुम खुद तकली बना सकती हो। परकारकी सहायतासे तुम उस स्लेटका गोल टुकड़ा काट सकती हो और फिर चाकूकी नोक या कीलसे स्लेटके उस गोल टुकड़ेमें एक सीधा छेद कर सकती हो। मनोरंजनके तौरपर इसे बनाने की कोशिश करो। त्रिमूर्ति यही है: मेरी सी०[1], मेरी आई (अर्थात् इंघम)[2] और सुमित्रा। मेरी सी० की शिकायत है कि मैंने उसे दहीके आहारपर रखा है, इससे उसे जुकाम हो गया है।

सस्नेह,

बापू

श्री मेरी बार
वेनलेस टी० बी० सेनिटोरियम
मिरज

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०५३) से। सी० डब्ल्यू० ३३८३ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार

१. मेरी चेजली, कनाडाकी एक क्वेकर।
२. ये मेरी चेजलीकी सलाहपर भारतमें ग्रामोद्धार-कार्य करने के लिए इंग्लैंडसे आई थीं।

३७६. पत्र : के० वी० रत्नम्‌को

१६ जुलाई, १९३५

प्रिय रत्नम्,

श्री कुमारप्पाके द्वारा आपने मुझे जो कलम भिजवाई है, उसके लिए धन्यवाद। कलम मुझे मिल गई है और मुझे ऐसा लगता है कि बाजारोंमें जो विदेशी कलमें मिलती हैं, उनकी जगह यह बहुत अच्छी चीज है।

आपका,
मो० क० गांधी

के० वी० रत्नम् एण्ड ब्रदर्स
रत्नम् फाउन्टेन पेन वर्क्स
राजामुन्द्री

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८१६) से।

३७७. पत्र : भाईलाल पटेलको

१६ जुलाई, १९३५

भाई भाईलाल,

तुम्हारा पत्र और मनीआर्डर मुझे मिल गये थे। तुम अच्छा काम कर रहे हो। तुम्हारा पत्र मैं 'हरिजनबन्धु'को[1] भेज रहा हूँ।

बापूके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३०१) से।

१. यह पत्र "एक हरिजन-कार्यकर्ताके अनुभव" शीर्षकसे हरिजनबन्धु, २१-७-१९३५ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

३७८. पत्र: कमलनयन बजाजको

१६ जुलाई, १९३५

चि० कमलनयन,

पिताजी से सुना कि . . .[1] अब तुझसे शादी नहीं करना चाहती, इस कारण कल ही उसे मुक्ति दे दी। हमें यही शोभा देता है। आशा है, तू स्वस्थ होगा। तेरा नसीब अच्छा ही है। इस कारण तुझे योग्य स्त्री ही मिलेगी। फिलहाल तो तू अपने अध्ययन और अपने चरित्रके गठनमें जी-जानसे लग जा। मुझे पत्र लिखना तो बाकी है ही। अपनी अंग्रेजी सुधारना। रुचिपूर्वक अध्ययन करना, शरीर मजबूत बनाना। मजदूरी करते हुए ऊबना मत, उसमें शर्मकी तो बात ही क्या है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०५०) से।

३७९. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

वर्धा
१८ जुलाई, १९३५

प्रिय चार्ली,

मुझे खुशी है कि तुम्हारे दिमागसे किताबका बोझ उतर गया है।[2] बेशक, शिमला इसके लिए ठीक जगह थी।

खम्भाताके बारेमें तुम्हारी बात समझता हूँ।[3]

जहाँतक नौजवान बंगालीका सम्बन्ध है, कुछ सीखने की इच्छाकी बात छोड़ दी जाये तो प्रस्तावित पुस्तक[4] यदि बहुत ही श्रेष्ठ कोटिकी न होगी तो उसका

१. नाम छोड़ दिया गया है।

२. सी० एफ० एन्ड्रयूजने हालमें अपनी पुस्तक इंडिया एण्ड ब्रिटेन समाप्त की थी।

३. देखिए "पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको", ३०-६-१९३५।

४. सी० एफ० एन्ड्रयूज और गिरिजा मुखर्जी द्वारा लिखित द राइज एण्ड ग्रोथ ऑफ कांग्रेस इन इंडिया; १९३८ में जॉर्ज एलेन एण्ड अनविन लिमिटेड द्वारा प्रकाशित; देखिए "पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको", २९-७-१९३५ भी।

कोई महत्त्व नहीं होगा। तुम्हें यह भी बता दूं कि डॉ० पट्टाभि कांग्रेसका इतिहास[1] लिख रहे हैं।

हाँ, जवाहरलालकी रिहाई[2] एक महत्त्वपूर्ण घटना होगी। यदि जोर-जबर्दस्तीकी बात न रहे तो समाजवादका सिद्धान्त सचमुच बहुत आकर्षक रहेगा।

सस्नेह,

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९०) से।

३८०. पत्र : अमृतकौरको

१८ जुलाई, १९३५

प्रिय अमृत,

यह पत्र केवल अपनी यह शुभकामना व्यक्त करने को लिख रहा हूँ कि पूनामें तुम्हारा समय आनन्दपूर्वक बीते।

कहने की जरूरत नहीं कि बाकीके ४०० रु० के बारेमें तुम वही करो जो ऐसी परिस्थितिमें तुम इस रकमका करतीं। मैं तो इतना ही कहना चाहता था कि जब तुम्हें सन्देह हो तभी तुम मेरी सलाहके लिए रुकी रहो।

एक या दो अगस्तको तुम्हारे आनेकी राह देखूंगा।

इसके साथ चार्लीके लिए एक पत्र[3] भेज रहा हूँ।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७१७) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६८७३ से भी

१. बादमें हिस्ट्री ऑफ इंडियन नेशनल कांग्रेस शीर्षकसे प्रकाशित।

२. कमला नेहरूकी बीमारीके कारण कैदकी अवधि समाप्त होनेसे पहले ही वे अल्मोड़ा जेलसे २ सितम्बर, १९३५ को रिहा कर दिये गये थे।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

३८१. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

१८ जुलाई, १९३५

चि० हेमप्रभा,

तुमारे बीमार तो नहीं पड़ना चाहीये। अगर मेरे खतोंके कारण बीमार हुई है तो तुमारी आज्ञाकितनाको[1] हानि होती है। मेरे कुछ भी कहने का तुमारे दुःख मानना नहीं है। शीघ्र अच्छी हो जाना है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७१३) से।

३८२. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

वर्धा
१९ जुलाई, १९३५

प्रिय अम्बुजम्,[2]

तुम्हारे पत्रोंसे मैं कभी ऊब नहीं सकता, क्योंकि तुम्हारी सच्ची खुशीमें मेरी दिलचस्पी है।

तुम किसी आते-जातेके हाथ वह थोड़े बड़े आकारवाला कुकर भेज सकती हो। अभी उसकी कोई जल्दी नही है।

तुम्हें अच्छी पुत्रवधू मिली, यह जानकर मुझे खुशी हुई।

जब यह सुन लूंगा कि किचीकी अँगुली बिलकुल ठीक हो गई है तब मुझे तसल्ली होगी।

आशा है, पिताजी स्वस्थ होंगे।

सस्नेह,

बापूके आशीर्वाद[3]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०३) से; सौजन्य : एस० अम्बुजम्माल

१. आज्ञाकारिता।
२ और ३. साधन-सूत्रमें सम्बोधन और हस्ताक्षर हिन्दीमें हैं।

३८३. पत्र : एफ० मेरी बारको

१९ जुलाई, १९३५

चि० मेरी,

इलाजका जो नतीजा निकल रहा है, उसके बारेमें मेरी कोई खास राय नहीं है। लेकिन यह तो मेरा स्पष्ट मत है कि जब एक बार वहाँ चली गई हो तो और किसी कारणसे न सही, कमसे-कम डॉक्टरोंके प्रति न्याय करने के लिए ही इलाज पूरा करवाओ। आखिरकार, हमें उनपर इतना भरोसा तो करना ही चाहिए कि वे क्या कर रहे हैं, यह उन्हें मालूम है। तुम उतावली मत करो। मुझे आशा है, अन्यथा तुम ठीक होगी। दोनों मेरी यहींपर अनुभव प्राप्त कर रही हैं।

यहाँ रोजाना हलकी वर्षा हो रही है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०५४) से। सी० डब्ल्यू० ३३८४ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

३८४. भाषण : वर्धा आश्रममें[1]

[२० जुलाई, १९३५ के पूर्व]

अपने मेहमानोंकी विदाईके समय मैं शायद ही कभी कुछ कहता हूँ, पर आज मैं कुछ कहूँगा। इसका पहला कारण तो यह है कि हमारे ये अतिथि जापान देशके हैं, पर दूसरा और मुख्य कारण यह है कि ये भाई जिस ढंगसे हमारे यहाँ रहे हैं, उसके कारण उन्होंने हमारे सामने एक सुन्दर उदाहरण कायम कर दिया है।[2] ये हमारे यहाँ चार-पाँच महीने रहे, पर इन्होंने जितनी निष्ठा और आत्मत्यागकी वृत्तिसे काम किया है उतनी निष्ठा और आत्मत्यागकी वृत्तिसे किसीने नहीं किया। ये इस तरह चुपचाप काम करते रहते थे कि हमें शायद ही कभी इनकी उपस्थितिका पता चलता था। इनकी प्रार्थनाकी एकाग्रता देखकर तो कोई भी मुग्ध रह जायेगा। एक ही मन्त्रका दिनमें चार घंटेतक, और यों ही जैसे-तैसे पिण्ड छुड़ानेके लिए नहीं, किन्तु उत्साह, प्रेम और एकाग्रताके साथ जप करना कोई साधारण बात नहीं है।

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. गांधीजी ने यह भाषण जापानी भिक्षु किशूकी विदाईके अवसरपर दिया था। देखिए "सलाह : किशूको", १३-७-१९३५ के पूर्व भी।

जब ये यहाँ आये, तब ये न तो भारतकी कोई भाषा जानते थे और न अंग्रेजी ही। इसलिए इन्हें अवश्य ही लगा होगा कि वे कहाँ इस देशमें अजनबी-से आ पड़े। पर ये अजनबी बने रहने को तैयार न थे। ये हिन्दी पढ़ने लगे, और थोड़े ही दिनोंमें इन्होंने हमारे साथ कुछ बोल लेने लायक हिन्दी सीख ली। पर जिस आनन्दोल्लासके साथ इन्होने इतने दिन हमारे यहाँ बिताये है, उसकी मै सबसे ज्यादा कद्र करता हूँ। आप लोग कल्पना करें कि आप एक ऐसे अनजाने देशमें जा पड़े हो, जहाँ आपकी जान-पहचानका कोई भी नही, जहाँकी भाषा और रीति-रिवाज सभी आपके लिए एकदम नये हैं; अब आप अपने मनसे पूछिए कि जिस तरह ये हमारे यहाँ रहे हैं, उस तरह आप भी वहाँ रह सकते है? मुझे लगता है कि मैं तो नही रह सकता, न आप लोगोमें से ही कोई रह सकता है। इसलिए मै कहूँगा कि ये भाई अपनी आत्मासे ही आनन्द-रस प्राप्त करते रहते थे। क्योंकि जिस परिवेशमें ये आ पडे थे, उसमें इन्हें ऐसा आनन्द मिल ही नही सकता था। किसीने इन्हें कभी क्षुब्ध या रुष्ट होते नहीं देखा। ये जिधर भी जाते, आनन्द-ही-आनन्द बिखेरते रहते थे। हम इनकी इस बातकी बड़ी कद्र करते है। यही कारण है कि इनका बिछोह हम सबको खलेगा। हम इन्हें अपने हार्दिक सद्भावके साथ विदा करते है, और आशा करते है कि जितनी जल्दी इनसे हो सकेगा, ये हमारे यहाँ फिर आयेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-७-१९३५

३८५. तीसरे दरजेमें यात्राके सम्बन्धमें कुछ उक्तियाँ[1]

[२० जुलाई, १९३५ के पूर्व]

ऊँचे दरजेके गद्दे-तकियेपर आपको अच्छी साफ सीट मिल ही नही सकती। धूल, कचरा और पसीना वगैरा जितना इन गद्दे-तकियोमें जज्ब होता है उतना और किसीमें नहीं होता। और चूँकि ये गद्दे बैठने में आरामदेह होते है इसलिए लोग इन बातोंका खयाल किये बिना उनपर सहज ही बैठ जाते हैं। तीसरे दरजेकी सीट तो प्रतिदिन धुलती रहती है या धोई जा सकती है, और उसे आप खुद भी जितनी बार साफ करना चाहें उतनी बार साफ कर सकते है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-७-१९३५

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। पत्रके अनुसार गांधीजी के एक मित्रने तीसरे दरजेमें कभी यात्रा नहीं की थी, लेकिन अब इस खयालसे कि तीसरे दरजेमें यात्रा किये बिना उसमें यात्रा करनेवाले यात्रियोंकी कठिनाइयाँ दूर नहीं की जा सकतीं, उन्होंने तीसरे दरजेमें यात्रा करने का निश्चय किया था। इसी प्रसंगमें जब गांधीजी से उन्होंने चर्चा छेड़ी तो गांधीजी ने उपर्युक्त बातें कहीं।

३८६. अहिंसाका अर्थ

एक अंग्रेज मित्रने मुझे नीचे लिखा पत्र भेजा है:

'मद्रास मेल' में प्रकाशित एक रिपोर्टकी नकल मैं इसके साथ भेज रहा हूँ। क्या आप उसे देखने की और मुझे यह बतलाने की कृपा करेंगे कि उसमें आपके शब्दोंको ठीक-ठीक उद्धृत किया गया है या नहीं? और यदि किया गया है तो क्या आप कृपाकर यह समझायेंगे कि यहाँ आपने जो मत प्रकट किया है, उसकी संगति, आप आम तौरपर जो बातें कहते रहते हैं, उनसे कैसे बैठती है? मुझे तो ऐसा लगता है कि आजतक जितने सिद्धान्तोंका उल्लेख मिलता है, उनमें यह सबसे भयंकर है। यह तो किसी भी मनुष्यको कानून अपने हाथमें ले लेने और हत्या या दूसरी किसी भी तरहकी हिंसा करने का आमन्त्रण देता है — बहाना सिर्फ यह रहेगा कि वह या तो खुद डरता है, या फिर उसके लिए हिंसाका एकमात्र विकल्प कायरताका मार्ग है जो हिंसासे भी बुरा है। अगर यह बात है तब तो बोलो जनरल डायरकी जय!

इस महीनेके ७ तारीखके 'मद्रास मेल' की वह कतरन निम्न प्रकार है:

एक प्रसिद्ध कांग्रेसीने श्री गांधीको लिखी अपनी चिट्ठीमें आन्ध्र देशके एक गाँवके हिन्दू-मुसलमानोंकी तनातनी और मुसलमानोंकी कथित सीनाजोरीका वर्णन किया था, और साथ ही यह सलाह चाही थी कि ऐसी हालतमें क्या करना चाहिए। उसके उत्तरमें वे अपने एक निजी पत्रमें लिखते हैं:

"प्रिय मित्र,

आपके द्वारा वर्णित यह स्थिति शोचनीय है। लोग अगर अपने मुसलमान भाइयोंसे डरते हैं तो उन्हें शारीरिक बलका प्रयोग करके अपनी रक्षा करने का पूरा अधिकार है।

"ऐसा न करना कायरताका काम समझा जायेगा। कायरता किसी भी तरह अहिंसा नहीं कही जा सकती। कायरता तो खुली हुई और सशस्त्र हिंसासे भी बुरी प्रकारकी हिंसा है।"

मेरे पास उस पत्रकी नकल नहीं है, तो भी जिसे मेरे पत्रकी नकल कहा गया है, उसमें मेरे विचारोंका सार आ जाता है। पत्र-लेखकका न तो मुझे नाम याद है, न मैं उसे पहचानता हूँ। अगर वह कोई प्रसिद्ध कांग्रेसी है तो मेरा खयाल है कि मैं उसे जानता होऊँगा। जैसाकि 'मद्रास मेल' के संवाददाताने कहा है, मेरा वह पत्र एक प्रश्नके उत्तरमें लिखा हुआ निजी पत्र था। इसलिए जिन परिस्थितियोंके

लिए मैंने वह जवाब लिखा था, उन परिस्थितियोंको दृष्टिमें रखकर ही उसे पढ़ना चाहिए। मैंने वह पत्र अगर अपने पास रखा होता तो उसके मुख्य अंश मैं अवश्य यहाँ उद्धृत करता। वह खासा लम्बा पत्र था। लेखकने उसमें गाँवके लोगोंकी परिस्थितिका विस्तारके साथ वर्णन किया था और लिखा था कि यहाँके हिन्दू असहाय और भयभीत हो गये हैं। अहिंसा क्या चीज है, यह वे बिलकुल ही नहीं जानते। गाँवके मुसलमानोंका जोरोजुल्म दिन-दिन बढ़ता ही जा रहा है, और दूसरे गाँवोंके मुसलमान आ-आकर इस अत्याचारको और भी शह दे रहे हैं। पत्र-लेखक जानना चाहता था कि ऐसी परिस्थितिमें गाँववाले क्या करें। उसे मैंने वही सलाह दी जो ऐसी परिस्थितियोंमें मैंने हमेशा दी है। सन् १९२० में जब मैं अली बन्धुओंके साथ यात्रा कर रहा था, तब मेरे पास यह खबर आई कि बेतियाके पास एक गाँवमें पुलिसने निरंकुशताके साथ मारपीट और लूटपाटकी है। इस विषयपर बेतियाके अपने सार्वजनिक भाषणमें[1] मैंने अपने विचार व्यक्त किये थे, और १५ दिसम्बर, १९२० के 'यंग इंडिया' में इस सम्बन्धमें एक लेख भी लिखा था, जिसका प्रासंगिक भाग इस लेखके अन्तमें उद्धृत किया जा रहा है।

जो आदमी मरने से डरता है और जिसमें प्रतिरोधकी शक्ति नहीं है, उसे अहिंसाका पाठ नहीं पढ़ाया जा सकता। असहाय चूहेको हम सिर्फ इसीलिए अहिंसक नहीं कह सकते कि वह हमेशा बिल्लीके मुँहका ग्रास बना रहता है। उसमें अगर ताकत होती तो वह उस हत्यारी बिल्लीको खुशीसे खा जाता, पर वह तो बिल्लीको देख कर भाग खड़ा होता है। हम उसे कायर नहीं कहते, क्योंकि प्रकृतिने उसका स्वभाव ही ऐसा बनाया है कि वह इससे भिन्न व्यवहार नहीं कर सकता। मगर जो मनुष्य खतरा देखकर चूहे-जैसा व्यवहार करता है, उसे अगर कायर या नामर्द कहें तो ठीक ही है। उसके दिलमें हिंसा और घृणा भरी हुई है, और खुद मार खाये बिना अगर वह शत्रुको मार सके तो उसे मारना भी चाहता है। ऐसा मनुष्य अहिंसासे लाखों कोस दूर है। उसे अहिंसाका उपदेश देना बिलकुल ही अकारथ है। वीरताका लेश भी उसके स्वभावमें नहीं है। वह अहिंसाको समझ सके, इससे पहले उसे अपने उस जबर्दस्त हमलावरका, जिसके द्वारा उसे परास्त कर देनेकी पूरी सम्भावना है, सामना करना और उसके आक्रमणसे अपनी रक्षा करते हुए जानतक दे देना सिखाना है। इससे भिन्न कुछ करते हैं तो यह उसकी कायरताको और भी पुख्ता करना होगा और तब वह अहिंसासे और भी दूर जा पड़ेगा। यह सही है कि मैं किसीको प्रत्याघात करने में मदद नहीं दूँगा, लेकिन अगर कोई तथाकथित अहिंसाकी ओटमें अपनी कायरताको छिपाता है, तो मैं उसे यह नहीं करने दूँगा। अहिंसा किन तत्त्वोंसे बनी हुई है, इस बातसे अनभिज्ञ बहुत-से लोग सच्चे दिलसे ऐसा मानते हैं कि जब कोई खतरा आये — और खासकर जिसमें जान जानेका डर हो — तब सामना करने के बजाय पीठ दिखाकर भाग जाना अधिक श्रेयस्कर है। अहिंसाके एक शिक्षककी

१. देखिए खण्ड १९, पृ० ९०-९३ और १२०-२२।

हैसियतसे मेरा यह कर्त्तव्य है कि मुझसे जहाँतक बन पड़े, ऐसे पुंसत्वहीनता-भरे विश्वासको जड़ न पकड़ने दूँ।

अहिंसा मानव-जातिके हाथोंमें सबसे बड़ी शक्ति है। मनुष्यकी बुद्धिने जो प्रचण्डसे-प्रचण्ड अस्त्र-शस्त्र बनाये हैं, उनसे भी प्रचण्डतर यह अहिंसाकी शक्ति है। संहार कोई मानव-धर्म नहीं है। मनुष्य अपने भाईको मारकर नहीं, बल्कि जरूरत हो तो उसके हाथसे मर जानेको तैयार रहकर ही स्वतन्त्रतासे जीवित रहता है। हत्या या अन्य प्रकारकी हिंसा, फिर चाहे वह किसी भी कारणसे की गई हो, मानव-जातिके विरुद्ध एक अपराध है।

किन्तु मैं यह बिलकुल स्पष्ट देखता हूँ कि अहिंसा-विषयक यह सत्य दुर्बल और असहाय मनुष्योंको नहीं समझाया जा सकता। उन्हें तो आत्म-रक्षा करने की ही बात समझानी चाहिए।

इसपर शंकाशील लोग यह दलील देंगे: 'आप दुर्बल मनुष्यको अहिंसा नहीं सिखा सकते, और बलवानके पास उसे ले जानेका आपका साहस नहीं। तो फिर यह क्यों नहीं मान लेते कि अहिंसा एक निरर्थक सिद्धान्त है?' इसका जवाब यह है कि अहिंसा आचरण द्वारा ही कारगर ढंगसे सिखाई जा सकती है। जब उसकी शक्ति और क्षमताका अचूक प्रदर्शन होगा, तब दुर्बल अपनी दुर्बलता छोड़ देंगे, और बलवानोंको अपने बलकी निरर्थकताका उसी क्षण पता चल जायेगा और वे नम्र बनकर अहिंसाकी सर्वोत्कृष्टता स्वीकार कर लेंगे। मैं यह दिखाने का प्रयत्न विनम्रताके साथ कर रहा हूँ कि सामूहिक प्रवृत्तिमें भी हम इस लक्ष्यको प्राप्त कर सकते हैं। यह बताने का मेरा नम्र प्रयत्न है। इन अंग्रेज मित्र-जैसे आलोचकोंसे मेरी यह प्रार्थना है कि वे जरा धीरज रखें।

आन्ध्रके पत्र-लेखकको मैंने जो उत्तर दिया था, उससे इन अंग्रेज मित्रने जो निष्कर्ष निकाला है, वह मेरी रायमें निराधार है। जिस पत्रका मैंने जवाब दिया था, उस पत्रके बिना भी इतना तो स्पष्ट ही है कि जब पुलिसकी सहायता सुलभ है तब तो किसीको अपनी रक्षा आप करने की जरूरत ही नहीं रह जाती। पुलिस अगर अपना कर्त्तव्य-पालन करती है, तो खुले-आम हमला या मारपीट वह होने ही नहीं देगी। आत्म-रक्षाके लिए प्रतिरोध करने की कानूनमें इजाजत है। मैंने जिन परिस्थितियोंकी चर्चा की थी, उनके सम्बन्धमें यह मानकर चला था कि वे पुलिस या कानूनकी पहुँचसे बाहर हैं।

वे अपराध कम ही रोकते हैं और उसका पता तो और भी कम लगा पाते हैं, वे तो अपराधका दण्ड ही अधिक देते हैं। इसलिए जहाँ शरीर होम देनेकी तत्परता न हो, वहाँ आत्म-रक्षा करते हुए जूझना ही एकमात्र सम्मानजनक मार्ग है।

> और यदि भविष्यमें या जब भी ऐसी घटनाएँ हों, वे अपनी रक्षाके लिए तैयार रहें। इस प्रकारकी स्थितिमें वे अपने शरीरकी या सम्पत्तिकी रक्षामें चोट पहुँचानेके बजाय यदि मर्दोंकी भाँति उत्पीड़न सह सकें और अपनेको लुट जाने दें तो बहुत अच्छा होगा। यह वस्तुतः उनकी सबसे बड़ी विजय

होगी। किन्तु उतनी सहनशक्ति केवल बलसे आ सकती है, दुर्बलतासे नहीं। जबतक यह शक्ति वे अपने अन्दर पैदा नहीं कर पाते, तबतक उन्हें अन्यायीका सामना [शारीरिक] शक्तिसे करने के लिए तैयार रहना चाहिए। जब पुलिसका कोई सिपाही किसीको गिरफ्तार करने के लिए नहीं, बल्कि तंग करने के लिए आता है, तब वह अपने अधिकारका अतिक्रमण करता है। तब नागरिकका यह एक अनिवार्य कर्त्तव्य है कि वह उसे लुटेरा माने एवं उससे वैसा ही व्यवहार करे। इसलिए वह उसको लूटपाट करने से रोकने के लिए पर्याप्त शक्तिका उपयोग करे। वह अपनी महिलाओंके सम्मानकी रक्षाके लिए निश्चय ही शक्तिका डटकर प्रयोग करे। अहिंसाका सिद्धान्त कमजोरों और कायरोंके लिए नहीं है; वह तो वीर और शक्ति-सम्पन्नोंके लिए है। सबसे अधिक वीर तो वह पुरुष होता है जो मारता नहीं है, बल्कि कोई उसे मारे तो स्वेच्छासे मृत्युका वरण करता है। वह किसीको मारने से, चोट पहुँचाने से अपना हाथ इसलिए रोकता है कि वह जानता है कि किसीको चोट पहुँचाना गलत काम है। चम्पारन के ग्रामीण ऐसे नहीं हैं। वे तो पुलिसको देखते ही भागते हैं। यदि उन्हें कानूनका भय न हो तो वे पुलिसके सिपाहीपर चोट कर देंगे और उसे मार भी डालेंगे। इसलिए उन्हें अहिंसाका श्रेय नहीं मिलता; बल्कि इसके विपरीत कायरता और अपौरुषका लांछन मिलता है। वे सरकार और मनुष्य दोनोंकी नजरोंमें निन्दनीय हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-७-१९३५

३८७. पत्र : आनन्द टी० हिंगोरानीको

वर्धा
२० जुलाई, १९३५

प्रिय आनन्द,

यह क्या बेहूदगी है! तुमसे कह दिया कि तुम आ सकते हो, तुम्हें और विद्याको[1] इससे ज्यादा और क्या प्रोत्साहन चाहिए था? जब चाहो तुम दोनो या कोई एक यहाँ आ जाओ। मुझसे जितना लेना सम्भव हो, लो।

दोनोंको स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द टी० हिंगोरानी

१. आनन्द टी० हिंगोरानी की पत्नी।

३८८. पत्र : केवलचन्द के० मेहताको

२० जुलाई, १९३५

भाई केवलचन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे डर है कि मैं बिजलीके बारेमें कुछ नहीं समझता और तात्कालिक उपाय तो मेरे हाथमें है नही। आज देशमें ऐसे बहुत-से काम हो रहे हैं जिन्हें रोकने का कोई उपाय नहीं सूझता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७) से।

३८९. पत्र : वसुमती पण्डितको

२० जुलाई, १९३५

चि० वसुमती,

गंगाबहनके साथ सफाईके कामके लिए अवश्य निकलना। जो विद्यार्थी आयें, उन्हें भी कुछ समयके बाद इस काममें साथ देनेके लिए कहा जा सकता है। सफाईके काममें मेहनत ज्यादा नहीं है और बहुत अधिक समय भी उसमें नही लगाना पड़ता।

लगता है, अब तू स्वस्थ हो गई है।

प्रभा[1] बम्बई पहुँचकर बीमार पड़ गई इसलिए यहाँ नहीं आई है।

लक्ष्मी अभी यहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४०४) से। सी० डब्ल्यू० ६५० से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

१. प्रभावती।

३९०. पत्र : हीरालाल शर्माको

२० जुलाई, १९३५

चि० शर्मा,

तुमारा खत आया था। जो हो सो हो, अमरीका जाना तो है ही।[1] कलकत्ते से खत आया है ता० दस [अगस्त] को जहाज जायगा। तुमारे कलकत्ता जलदी पहोचना है। इसलिये यहा २५ ता० को आ जाओ। यहां दो-तीन दिन रहकर कलकत्ता जाना अच्छा होगा। वहांसे ज्यादा सामान नही लाना। आवश्यक अवश्य लाओ।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १७४ और १७५ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे

३९१. पत्र : गोविन्दलाल साहको

२० जुलाई, १९३५

भाई गोविंदलालजी,

तुमारा खत बहुत दिनोंके बाद आया। जब म्युनिसीपालीटीसे वादा कर लिया है तो कुछ कहने का ही नही है। यो भी हरिजन सेवक संघ उस जमीन व मकानका कबजा नही ले सकते है। म्युनिसीपालिटीको देना ही बेहतर है।

तुम सबका स्वास्थ्य अच्छा होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०६७७) से। सी० डब्ल्यू० ९७५८ से भी; सौजन्य : उ० प्र० सरकार

१. हीरालाल शर्माने अपने पत्रमें सुझाया था कि यदि खर्च बहुत ज्यादा पड़ने वाला हो तो यात्रा रद कर देना ही बेहतर है।

३९२. पत्र : एक ग्राम-सेवकको[1]

[२१ जुलाई, १९३५ के पूर्व]

तुम्हारा पत्र कल ही मिला। पत्र अच्छा है। इसी तरह मुझे कामका विवरण भेजते रहना। इसी आवासको अपनी झोंपडी, गुफा या जो-कुछ कहना चाहो सो मानकर यदि तुम लगातार वर्षोंतक जमे रहोगे तभी सचमुच कुछ काम हो सकेगा। फिलहाल किसीको भी अपने साथ रहने की अनुमति मत देना। ऐसे लोगोंसे माफी माँग लेना। यह हो सकता है कि भली-भाँति स्थिर हो जानेके बाद कोई आकर तुम्हारे पास कुछ समय रह जाये। फिलहाल तो यदि कोई व्यक्ति वहाँ आयेगा तो उससे तुम्हारे काममें विघ्न ही पड़ेगा। इससे बचना। अपने स्वास्थ्यका भली-भाँति ध्यान रखना। यदि तुम बीमार पड़ जाओ तो किसी आश्रमवासीके साहचर्यकी इच्छा या आशा मत करना। वहाँ जो है, वही तुम्हारा साथी है। वह भी तुम्हारी सेवा करेगा और यदि न करे तो हरिइच्छा। जहाँ भी जाओगे हरि तो सदा तुम्हारे साथ रहेगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २१-७-१९३५

३९३. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

वर्धा
२१ जुलाई, १९३५

चि० जानकीबहन,

तुम्हारा पत्र अच्छा है। तुम जो चाहती हो सो मदालसासे धीरजके साथ करना। चिढ़कर कोई काम कराने का वक्त गया समझ लो। अभी तो दोनों वहीं[2] रहना। जितना पढ़ सको, उतना पढ़ना। और जितना लिख सको, उतना लिखना।

रणजीत और सरूपको अपने बच्चे मानकर वहाँ रखना। कोई तुम्हारी स्वतन्त्रता में दखल दे सके, ऐसा तो है नहीं।

१. पत्र-लेखकने अत्यन्त निष्ठापूर्वक अपना काम आरम्भ किया था और सहयोगीके रूपमें किसी व्यक्तिको साथ रखने की इच्छा दृढ़तापूर्वक त्याग दी थी।

२. अल्मोड़ामें।

यहाँ सब ठीक ही है। ओम् अपने-आपमें मगन है और रामकृष्ण टिकट इकट्ठे करता है और मौज कर रहा है। अब तो वह मेरी बग़लमें नहीं सोता, और यह ठीक ही है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७३)से।

३९४. पत्र : मदालसा बजाजको

२१ जुलाई, १९३५

चि० मदालसा,

तेरे पत्रमें अनुचित कुछ नहीं है। तेरा कार्यक्रम मुझे पसन्द है। यदि तूने पढ़ना छोड़ दिया तो कोई बात नहीं। तुझे जो अच्छा लगे, सो निःसंकोच खानेका निश्चय ठीक है। उसमें से तू अपने लायक उचित खुराक खोज सकेगी।

जानकीबहनके गुस्सेसे घबराना नहीं। उसमें जो सार हो, उसकी ओर ध्यान देना।

शरीर गरम रहना ही चाहिए। प्रार्थना और पढ़ते-लिखते समय सीधे तनकर ही बैठना चाहिए। कभी सिर झुकानेकी जरूरत नहीं। वहाँ तुझे पूरे कपड़े अवश्य पहनने चाहिए।

इन सभी बातोंपर ध्यान देना। अब तो तुझे न्याय मिला न?

यह अच्छा है कि तू रणजीतसे पढ़ती है। जबतक चाहे, वहीं रहना.

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३१७

३९५. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२१ जुलाई, १९३५

भाई खम्भाता,

अब अस्पतालको भूल जाना चाहिए। वहाँ तुम चंगे हो गये इस बातको याद करके ईश्वरका आभार मानते हुए जिस तरह भी हो सकती हो, उस तरह प्राणि-मात्रकी सेवा करना। मेरे हाथको आरामकी जरूरत थी।

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६११)से। सी० डब्ल्यू० ४४०१ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

३९६. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

२१ जुलाई, १९३५

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे आँकड़ोंसे मुझे मदद मिलेगी। आजकल मैं इस सम्बन्धमें अच्छी तरह विचार-विमर्श कर रहा हूँ। अपना स्वास्थ्य फिर पहले-जैसा बना लेना। यदि तुम पूरे धड़की मालिश करवाओ तो अच्छा हो।

क्या वाड़जसे तुम्हारा सम्बन्ध घनिष्ठ होता जा रहा है? क्या तुमने केवल अपना सूत बुनवाकर देखा है? उसे बुननेपर बुनकर ने उसके बारेमें क्या राय दी?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३८९)से; सौजन्य: भगवानजी पु० पण्ड्या

३९७. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

२१ जुलाई, १९३५

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला। देवशर्मा जिस व्यक्तिको भेजें उसका उपयोग हिन्दीके प्रचारमें विद्यापीठके बाहर भी किया जा सकता है।[1] उस अँगीठीमें हम बहुत ज्यादा कोयले नहीं झोंक सकते।

वेलचन्दका[2] मामला मैं अब सरदारके साथ तय कर दूँगा।

यदि जोशी खादी न पहनता हो तो वह हममें नहीं खप सकता। इसके अतिरिक्त क्या तुम्हें नारणदासके स्पष्टीकरणसे सन्तोष हुआ?

यदि भास्करराव अब भी तुमसे न मिला हो तो आश्चर्य है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०८७) से।

१. देखिए "पत्र: नरहरि द्वा० परीखको", १५-७-१९३५।

२. बड़ौदाके वेलचन्द बैंकर; देखिए "पत्र: नरहरि द्वा० परीखको", २३-८-१९३५ भी।

३९८. पत्र : जेठालाल जी० सम्पतको

२१ जुलाई, १९३५

भाई जेठालाल,

बच्ची झटपट अच्छी हो जाये।

तुम्हारे हृदय-मन्थनके वर्णनकी प्रतीक्षा करूँगा।

तुम्हारे सुझावोंको मैं समझ गया हूँ। मैं उतावली नहीं करूँगा। तुम इतने पास हो, इसलिए क्या वर्धा होकर अनन्तपुर जाना ठीक नहीं होगा?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८५३) से; सौजन्य : नारायण जे० सम्पत

३९९. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

२१ जुलाई, १९३५

भाई मूलचंद,

पतिकी कमाई [में] मां पत्निका एक-सा हिस्सा है। लेकिन इसका अर्थ यह नहिं कि पत्नि दिल चाहे ऐसे द्रव्यका उपयोग कर सकती है। इसलिए हिसाब रखने का तुमारा निर्णय योग्य है।[1]

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८३८) से।

१. मूलचन्द अग्रवालने अपने पत्रमें व्ययके सम्बन्धमें अपनी पत्नीके साथ अपने मतभेदका उल्लेख किया था। देखिए "पत्र: जानकीदेवी अग्रवालको", ५-७-१९३५ भी।

४००. बातचीत: मेरी चेजली और मीराबहनके साथ[1]

[२२ जुलाई, १९३५ के पूर्व][2]

गांधीजी: लेकिन आपको इसपर आपत्ति क्या है?[3]

मेरी चेजली: यह कि यह अंग्रेजी पोशाक है।

गां०: लेकिन अंग्रेजी पोशाकमें जो-कुछ अच्छा है, उसे हम क्यों न अपनाये? अंग्रेज लोग भले ही भारतीय पोशाकको घृणाकी दृष्टिसे देखें और उसमें से किसी भी चीजको अपनानेको तैयार न हों, पर मुझे तो, अंग्रेजी पोशाकमें जो चीजें अच्छी है, उन्हें अपनानेमें कोई आपत्ति न होगी।

मे० चे०: मगर वह कितनी कलाशून्य है। आधी आस्तीनके लटकते हुए भारतीय कुरतेसे अंग्रेजी जाँघिया बिलकुल मेल नहीं खाता।

गां०: तब तो अगर मैं लोगोंसे सोला टोप पहनने को कहूँ तो मेरा खयाल है, आप घबरा ही उठेंगी।

अब अपनी सहेलीकी ओरसे मीराबहन जवाब देने लगीं। उन्होंने कहा कि मैं तो निश्चय ही ऐसी सलाह सुनकर भौंचक्की रह जाऊँगी। सोला टोप बड़ा कीमती होता है और बड़ा गैर-आरामदेह और बेसँभाल भी।

गां०: इससे तो यही जान पड़ता है कि इंग्लैंडमें रहते हुए तुम जो टोप पहनती होगी, वह बिलकुल ठीक नहीं आता होगा।

मीराबहन: नहीं, ऐसी बात नहीं है। उन दिनों मेरे पास अच्छेसे-अच्छे टोप थे, लेकिन मुझे वे कभी पसन्द नहीं आये। उनको पहननेपर सिर बिलकुल दबा-दबा-सा रहता है और उसमें दर्द होने लगता है।

गां०: तब शायद तुम्हारा सिर ही बेडौल रहा होगा। मगर मुझे वास्तवमें ऐसा लगता है कि सोला टोपसे धूपसे बहुत अच्छा बचाव होता है।

मी०: पहनना ही पड़े तो मैं तो टोपके बजाय हिन्दुस्तानी पगड़ी पहनना ज्यादा पसन्द करूँगी। धूपसे तो यह भी बचाव करती है।

गां०: नही, नहीं करती।

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. मेरी चेजली वर्धासे २२ जुलाई, १९३५ को रवाना हुई थीं। देखिए "पत्र: एफ० मेरी बारको", २५-७-१९३५।

३. मेरी चेजली ने, जो कुछ दिन आश्रममें ठहरी थीं, आश्रमवासियों द्वारा काम करते वक्त पहनी जानेवाली पोशाकपर आपत्ति की। इसीपर यह चर्चा हुई थी।

मी० : ठीक है, मगर यह जाँघिये बहुत खराब हैं। आप जो कच्छा पहनते हैं और ये जो जाँघिये पहनते हैं, इन दोनोंमें स्वर्ग और नरकका अन्तर है।

गां० : ऐसा! तब तो तुमको मुझे समझाना पड़ेगा कि यह इतना ज्यादा क्यों खटकता है।

मी० : मैं शायद कुछ ज्यादा कड़े शब्दोंका प्रयोग कर रही हूँ; मैं तो कहूँगी कि इन दोनोंमें वही अन्तर है जो दिन और रातमें है।

मे० चे० : पर मेरी आपत्तिका कारण यह नहीं है। मुझे तो [हिन्दुस्तानी और अंग्रेजी पोशाकोंकी] इस अजीब-सी खिचड़ीसे चिढ़ है। आपका कच्छा हिन्दुस्तानी है। वे ऐसी ही कोई चीज क्यों नहीं पहनते। या तो पूरी हिन्दुस्तानी पोशाक हो या फिर पूरी अंग्रेजी।

गां० : पूरा अंग्रेज बनने के लिए तो मुझे शराबकी दुकानपर भी जाना चाहिए न? जहाँतक मेरे कच्छेकी बात है, मैं जानता हूँ कि वह जाँघियेसे बहुत अच्छा है। लेकिन अगर ये सबके-सब उसे पहनने लगेंगे तो लोग उनपर यह कहकर हँसेंगे कि ये तो महात्माजी की तरह दिखना चाहते हैं।

मे० चे० : लेकिन कुरतेके निचले हिस्सेको वे जाँघियेके नीचे तो दबा सकते हैं?

गां० : हाँ, आप लोग तो यही करते हैं। लेकिन स्वास्थ्यके लिए यह बुरा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-७-१९३५

४०१. तार : हीरालाल शर्माको

वर्धागंज
२२ जुलाई, १९३५

डॉ० शर्मा
खुर्जा

वे चाहते हैं, तुम जल्दी कलकत्ता पहुँचो। तुरन्त आ जाओ।

बापू

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १७४ और १७५ के बीच प्रकाशित अंग्रेजीकी अनुकृतिसे

४०२. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२२ जुलाई, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र मुझे मिल गये हैं। बा का पत्र दिल्ली भेज दिया है। वह और मनु वहाँ हैं। आज-कलमें लक्ष्मीके प्रसवका समाचार मिलना चाहिए।

लगता है, रामदासने हालमें कुछ पैसा गँवाया है। ठोकर खाकर ही उसे अक्ल आयेगी।

हरिलाल आखिरी हदतक पहुँच गया है। सारे दिन नशेमें धुत होकर पड़ा रहता है। इस बार उसने सभी सीमाएँ तोड़ दी है।

नारणदास और कुसुम राजकोटमें हैं। नीमू और उसके बच्चे यहाँ हैं। वे स्वस्थ रहते हैं।

जमनालाल यहाँ पहुँच गये हैं। जानकीबहन और मदालसा अलमोड़ामें हैं।

कान्ति और कनु यहीं हैं। आजकल वर्षा और ज्वरका मौसम होनेके कारण सभीको सावधान रहना पड़ता है। उपवास इसकी रामबाण दवा सिद्ध हुई है। सभी मामलोंमें यह भले कारगर न हो, किन्तु नुकसान कभी नहीं पहुँचाती। उपवास या तो आंशिक अथवा पूर्ण हो सकता है। आंशिक उपवासमें प्रोटीन और स्टार्चवाली चीजें नहीं लेनी चाहिए। दाल और दूधमें प्रोटीन होता है। स्टार्च चावल, गेहूँ और आलू आदिमें होता है। अतः आंशिक उपवासमें रसीले फल और हरी सब्जियाँ खाई जा सकती हैं। बुखारमें हरी सब्जियाँ भी नहीं खानी चाहिए। उस समय सिर्फ नारंगी, अँगूर आदिके रसपर रहना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४०)से। सी० डब्ल्यू० १२५२ से भी; सौजन्य : सुशीला गांधी

४०३. पत्र : मनु गांधीको

२२ जुलाई, १९३५

चि० मनुड़ी,

मेरे पत्रका उत्तर तूने अभीतक नही दिया। इस तरह कैसे बात बनेगी? मैंने तो पूरे दिनका कार्यक्रम माँगा है न?

यहाँ रोज थोड़ी-सी वर्षा होती है जिससे अच्छी ठंडक है। मुश्किलसे सूर्यके दर्शन होते हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

नैटालका पत्र इसके साथ है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५४४) से, सौजन्य . मनुबहन एस० मशरूवाला

४०४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
२३ जुलाई, १९३५

भाई वल्लभभाई,

लाहौरमें क्या हो रहा है? कुछ समझमें आता है? किसका दोष है? बीमा-कम्पनियोंकी तो बाढ आ गई है। मुझे तो जरा भी पसन्द नही हैं। परन्तु क्या किया जाये? कांग्रेसके नामपर बट्टा लगे, यह खतरनाक बात है। परन्तु इस चीजको टुकुर-टुकुर ताकते रहने के सिवा और क्या किया जा सकता है? . . .[1]

.[2] स्वच्छ आदमी है। हम ऐसे कामोमें मानापमान का तो विचार भी कैसे कर सकते है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७६

१ और २. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ अंश छोड दिया गया है।

४०५. पत्र : लीलावती आसरको[1]

वर्धा
२४ जुलाई, १९३५

१. इन पदार्थोंके पहले 'आर्टिकल' (उपपद) नहीं लगता क्योंकि ये गिने नहीं जा सकते, मापे ही जा सकते हैं।

२. तूने 'वुड'के जो अन्य अर्थ बताये हैं, वे सही हैं। उनका इसी तरह प्रयोग करने की रूढ़ि है। अंग्रेजीमें ऐसे रूढ़ प्रयोगोंको 'ईडियम' (मुहावरा) कहते हैं।

३. फिलहाल पाठमालाके अभ्यास जारी रखना लाभदायक होगा।

४. तेरा पत्र मगनभाईको दे दिया है।

बापू

[पुनश्च :]

तू शान्त हो गई है तो अब शान्त ही रहना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२५४) से। सी० डब्ल्यू० १०१०२ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

४०६. पत्र : नारणदास गांधीको

२४ जुलाई, १९३५

चि० नारणदास,

मैंने लीलावतीको वेतन देनेका सुझाव दिया था किन्तु तुम उस सम्बन्धमें लिखना भूल गये हो। यदि उसे वेतन दिया जा सकता हो तो देना।

यदि धीरूको अहमदाबाद या भावनगर भेजना हो तो भेज देना। यदि वह स्वीकार करे तो दोनों जगह लिखकर पूछ लेना।

१. लीलावतीने पूछा था : "(१) क्या द्रव्यवाचक संज्ञाके पहले 'आर्टिकल' (उपपद) लगाना चाहिए, जैसे घी, दूध, गुड, शक्कर, पानी आदि? (२) मैं सिर्फ इतना ही जानती हूँ कि 'वुड' 'विल'का भूतकाल है किन्तु कई बार वर्तमानकालमें भी इसका प्रयोग किया जाता है, जैसे 'आई वुड लाइक टु डू दिस'। कभी-कभी भूतकालमें भी 'वुड'का प्रयोग किया जाता है। 'हुं जतो'की अंग्रेजी 'आई वुड गो' होती है। इस वाक्यमें 'वुड'का क्या अर्थ लेना चाहिए? (३) पाठमालामें जो वाक्य दिये गये हैं, क्या उनका गुजरातीसे अंग्रेजीमें अनुवाद करना मुझे जारी रखना चाहिए? (४) क्या मुरब्बी मगनभाईके नाम लिखा मेरा गुजराती पत्र उन्हें मिल गया?"

यदि खाँसी हो तो उसे अभी मत भेजना। भले वह थोड़े दिन वही रहकर जितना सम्भव हो, उतना काम करे और अपना स्वास्थ्य सुधारे। यदि माणेकलाल उसका खर्च उठा सके तो उसे अवश्य उठाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इन दिनों जो जोशी नामक शिक्षक है, क्या वह खादी नही पहनता?

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८४६५ से भी, सौजन्य : नारणदास गांधी

४०७. पत्र : लुइसेत गियसको

२५ जुलाई, १९३५

प्रिय बहन,

मीराको लिखा आपका लम्बा पत्र पढ़ा। अगर वह भारतीय व्यापारी आपके पास न आया हो तो इससे मालूम होता है कि आपके काममें उसकी रुचि नही है। आपको भूलाभाई देसाईको लिखने की जरूरत नही है। मैं उन्हींसे यह जानने की कोशिश करूँगा कि उनके क्या इरादे हैं। प्रो० वाड़ियासे कोई आशा न रखें। वे शायद ही कोई सहायता कर सकें। मेरी तो पक्की सलाह है कि किसी भी कारणसे कर्जमें न पड़ें; तब अगर प्रकाशित न कर सकें तो प्रकाशन बन्द कर दें।[1] सिवाय समाचार और साहित्य प्राप्त करने के और किसी भी तरहसे भारतसे सहायता मिल सकनेपर निर्भर न रहें। यदि यह छोटा-सा बोझ उठानेवाले साधन-सम्पन्न फ्रांसीसी भी पर्याप्त संख्यामें न हो तो आपको यह काम बन्द करके खुद अपने निजी श्रमका सहारा लेना चाहिए। ईश्वर किसीसे भी, जो सम्भव नहीं है, उसकी अपेक्षा नही रखता। आप जो भी करें, उसीके लिए और उसीके नामपर करें। फिर आप जो भी करेंगी, उसके लिए आप नही, बल्कि वही जिम्मेवार होगा। हालाँकि यहाँ कई मित्रोंका विचार अन्यथा है, परन्तु मेरा यह निश्चित मत है कि हमें विदेशोंमें प्रचार करनेपर कोई पैसा खर्च नही करना चाहिए। हममें जितनी योग्यता और अच्छाई होगी, उसका प्रचार तो अपने-आप होगा; और उससे आगे जो-कुछ किया जायेगा, वह हमारी दुर्बलता छिपाने के लिए ही होगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

१. लुइसेत गियसने अपनी पत्रिका नुवेल द लैंद्र के लिए आर्थिक सहायता माँगी थी। इसके प्रकाशनमें उनपर ५,००० फ्रांकका कर्ज बढ़ गया था।

४०८. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
२५ जुलाई, १९३५

चि० मेरी,

खुद मैं तो एक पैसा भी नहीं भेज सकता, क्योंकि किसीको देनेके लिए मेरे पास अपना तो कुछ है नही। लेकिन जमनालालजी ५० रुपये भेज देंगे। तुम्हारा पत्र उनको दिखाया तो उन्होंने तुरन्त कहा कि वे भेज देंगे। जहाँतक आहारका सम्बन्ध है, तुम्हें अपनी जरूरतोंमें कोई कटौती नही करनी है। सेवाके निमित्त स्वस्थ होनेपर पूरा ध्यान दो।

दोनों मेरी सोमवारको सुमित्राके साथ चली गईं। मेरी 'सी' और सुमित्राकी आपसमें नहीं बनती है। लेकिन सुमित्रा अपने वादेके मुताबिक छह महीनेकी वह अवधि पूरी कर देनेपर दृढ़ है।

डॉ० प्रेमनाथने मुझे पत्र नहीं लिखा है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०५५) से। सी० डब्ल्यू० ३३८५ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

४०९. पत्र : अब्बास के० वरतेजीको

२५ जुलाई, १९३५

चि० अब्बास,[1]

तुम्हारा सुझाव ठीक है। उसपर अमल करने की व्यवस्था की जा रही है। कत्तिनोंकी मजदूरी कुछ बढ़नी ही चाहिए। यदि इस काममें तुम्हारी मददकी जरूरत हो तो क्या तुम्हें वहाँसे मुक्ति मिल सकेगी?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३११) से।

१. साबरमती आश्रममें कताई-बुनाईके शिक्षक।

४१०. पत्र : क० मा० मुंशीको

२५ जुलाई, १९३५

भाईश्री मुंशी,

तुम्हारा पत्र और अन्य वस्तुएँ मिल गई हैं।

तुम्हारी विज्ञापन-सूची मुझे तो बहुत अटपटी लगी। हम दोनोका दृष्टिकोण ही अलग है। मैं उसकी बारीकियोंमें नही पड़ूँगा। यदि मैं तुम्हें इस बातके लिए राजी कर सकूँ तो कहूँगा कि तुम्हें केवल पुस्तकोंके ही विज्ञापन लेने चाहिए। किन्तु इस मासिक पत्रिकाके प्रबन्धके मामलेमें मुझे दखल देनेका अधिकार नही है। अतः सिर्फ इतना ही कहता हूँ कि इसपर जितना नियन्त्रण लगाया जा सके, उतना लगाना।[1]

गुरुदेवको लिखे तुम्हारे पत्रसे देखता हूँ कि तुमने सलाहकार-मण्डलकी बात छोड़ दी है। यदि ऐसा ही हो तो मुझे यह बात पसन्द है।

जहाँतक मैं समझता हूँ, देशी रियासतोंके बारेमें भूलाभाई देसाईने जो राय दी[2] वह रियासतोंके सरकारसे सम्बन्धके बारेमें लागू होती है, न कि जनताके रियासतसे सम्बन्धके बारेमें। यदि मेरी यह मान्यता सही हो तो भूलाभाईकी रायमें मुझे कोई दोष नजर नही आता। मुझे लगता है कि उनकी रायमें बारीकी है और वह है भी सही। देशी रियासतों और वहाँकी जनताका सम्बन्ध तथा देशी रियासतों और ब्रिटिश भारतकी जनताका सम्बन्ध, ये दो अलग बातें हैं। भूलाभाईके सामने यह सवाल नही था। भूलाभाईकी राय जब पहली बार अखबारोंमें प्रकाशित हुई थी तभीसे मैं यह मानता आया हूँ। उनकी राय और कांग्रेसकी नीतिमें मुझे तनिक भी विरोध नजर नही आता। देशी रियासतोंकी जनता अपने अधिकार अंग्रेज सरकारसे नही बल्कि रजवाड़ोंसे माँगेगी।

गुरुदेवको जल्दी ही पत्र भेज दिया जायेगा। उक्त पत्र महादेव लिखेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७५७९) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

१. देखिए "पत्र : क० मा० मुंशीको", ८-७-१९३५।

२. भूलाभाई ने वकील की हैसियत से देशी राज्योंके कुछ राजाओं को संघ (फेडरेशन) में शामिल होने के सवालपर अपनी राय दी थी; यहाँ आशय सम्भवतः उसी राय से हैं।

४११. पत्र : हरिगोविन्द गोविलको

२५ जुलाई, १९३५

भाई हरि गोविल,

तुमारी किताब पढ़ने को प्रयत्न तो कर रहा हूं। अखबार पढ़ लिये हैं। उसमें बहूत अतिशयोक्ति पाता हूं। जितनी संस्था नैसर्गिक उपचारके लिये तुमने देखी है उसका नाम-ठाम मुझे भेजीये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२३) से।

४१२. पत्र : कमलनयन बजाजको

२५ जुलाई, १९३५

चि० कमलनयन,

तुमारा स्वच्छ खत मुझे मिला है। अपने दोषोंका स्वीकार कर लेता है सो तो बहूत अच्छा है। अब [एक] कदम आगे जाओ। दोषोंको दूर करने का बड़ा प्रयत्न करो। रोजनिशीमें[1] नित्यकर्म दे सकता है। प्रार्थना दो बार तो कर ही सकता है। रामधुन तो है ही। आलस्य छोड़ने के लिए सबसे अच्छी बात यह है कि नित्य नियम बना लेना और उसपर कायम रहना, भले कम काम हो। व्यायामको नित्य-कर्मका अनिवार्य हिस्सा माना जाय।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०५१) से।

१. डायरीमें।

४१३. पत्र : केवलरामको

वर्धा
२६ जुलाई, १९३५

चि० केवलराम,

मुझे जिन बातोंका डर था, वे सब सच साबित हुईं। वास्तवमें देखा जाये तो निजी या सार्वजनिक बेइज्जती-जैसी कोई चीज नहीं होती। उसमें भी [मुझ-जैसे] सार्वजनिक कार्यकर्त्ताके लिए। मेरी बेइज्जती जनताकी और जनताकी बेइज्जती मेरी बेइज्जती है। हम ही जनता हैं और जनता ही हम हैं। विश्व और व्यक्तिमें भेद कहाँ है?

चाहे तुम भाग्यशाली हो या भाग्यहीन, तुम गँवा तो इसीलिए सकते हो न कि कोई तुम्हें उधार देनेवाला है? तुम मेरी सलाह माँगते हो। तुम दो नियमोंका पालन करो:

१. तुम कुछ भी नहीं करोगे।

२. स्वतन्त्र रूपसे कोई काम-धंधा नहीं करोगे।

तुम्हारी स्वतन्त्रता तुम्हारी परतन्त्रता है। किसीके यहाँ स्वेच्छासे नौकरी करने में परतन्त्रता कहाँसे आ गई? तुम जब किसीको नौकर रखते हो तो क्या उसकी स्वतन्त्रता छीन लेते हो? नौकर और मालिक तो मनुष्यके बनाये हुए भेद है। नौकरीका तात्पर्य है कुछ नियमोंका पालन और मालिक अर्थात् स्वच्छंदता। इनमें से तुम किसे पसन्द करोगे? ये सीख मैं तुम्हें कबतक देता रहूँगा? तुम्हारी भूलोंको मुद्दा बना कर भी यदि मैं किसीकी कुछ सहायता कर सकूँ तो यह केवल [आत्मप्रशंसा][1] है। लेकिन इसमें मुझे कोई सार नजर नहीं आता। अच्छा तो यह हो कि तुम इन गलतियोंसे हमेशाके लिए कुछ शिक्षा ले लो।

बढवाणका इलाज अच्छा है। वहाँ तुम्हारा घर है, तुम्हारे उदार पिता है। वहाँ जाओ और अपना स्वास्थ्य सुधार लो। उपवाससे तुम्हारा स्वास्थ्य सुधर जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१. यहाँ साधन-सूत्रमें शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

४१४. सलाह : आश्रमवासियोंको[1]

[२७ जुलाई, १९३५ के पूर्व]

हमारी योग्यताको जितना छोटीसे-छोटी बातोंसे परखा जाता है उतना बड़ी-बड़ी बातोंसे नहीं। आप जरा अच्छे कागजपर और अधिक साफ-साफ लिख सकते थे। और निश्चय ही अंग्रेजीमें लिखने का तो आपके पास कोई कारण नहीं था, जब कि आप यही बात गुजराती या हिन्दीमें लिख सकते थे और जैसा कि जाहिर है, आप अंग्रेजी उतनी अच्छी तरह नहीं जानते। 'पाई-पाईका खयाल करो तो रुपया अपने-आप जुड़ जायेगा'—यह नियम केवल अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे ही उपयोगी नहीं है। यह एक नैतिक नियम भी है। आपको चाहे जितना छोटा काम करना हो, उसे आप अपने तईं अच्छेसे-अच्छे ढंगसे करें। उसे उतने ही मनोयोगसे करें जितने मनोयोगसे आप वह काम करेंगे जिसे आप अधिकसे-अधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं। कारण, आपकी योग्यताकी परख उन छोटे-छोटे कामोंसे ही होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-७-१९३५

४१५. आरम्भ कैसे करें

खादीके कारीगरोंके लिए मजदूरीकी मानक दर स्थिर कर दी जाये या न्यूनतम मजदूरी दर, मगर कोई परिवर्तन निश्चित प्रतीत होता है। एक विरोधी मतके सिवा, अबतक जो बहुत-सी रायें मिली हैं उनमें से किसीने भी बढ़ी हुई दर निश्चित करने के मेरे प्रस्तावका विरोध नहीं किया है। आठ आनेवाले प्रस्तावका[2] अभीतक कोई समर्थक नहीं मिला है। कुछ लेखक आठ आनेवाले प्रस्तावको खादीके लिए घातक समझते हैं। वे कहते हैं कि उस सूरतमें खादीकी कीमत इतनी अधिक बढ़ जायेगी कि उसके बहुत थोड़े-से ग्राहक रह जायेंगे। कुछ भी हो, किसी भी उल्लेखनीय परिवर्तनमें कुछ शर्तें तो पूरी करनी ही होंगी। इसलिए समय रहते ही चेत

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। इन दिनों गांधीजी ने आश्रममें दालके स्थानपर खलीका प्रयोग शुरू करवाया था। उन्होंने प्रत्येक आश्रमवासीसे इस परिवर्तनके सम्बन्धमें अपनी प्रतिक्रिया लिखकर बताने को कहा था। तीन व्यक्तियोंने इस परिवर्तनसे असहमति प्रकट की थी, सो दालका प्रयोग तो तुरन्त फिरसे आरम्भ करा दिया गया, लेकिन उन्होंने अपने-अपने हस्ताक्षरोंके साथ कागजके जो टुकड़े दिये थे उनसे गांधीजी के लिए "सीख देनेका एक मौका निकल आया।"

२. देखिए "मानक मजदूरीकी आवश्यकता", १३-७-१९३५।

जाना और जहाँ भी सम्भव हो नीचे लिखी बातोंपर तुरन्त अमल शुरू कर देना समझदारीका काम होगा :

१. कार्यकर्त्ताओंको कपास चुनने से लेकर बुनाईतक की सब प्रक्रियाओंमें पारंगत हो जाना चाहिए, ताकि वे दूसरोंको सिखा सकें।

२. संगठन करनेवालोको अपने-अपने हल्के या इलाकेके तमाम पीजनेवालो, कतैयो, बुनकरों आदि की सूची तैयार करनी चाहिए।

३. उन्हें मालूम होना चाहिए कि उनके कतैये कौन-सी रुई काममें लाते हैं और फिर उन्हें इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि उससे जितने नम्बरका सूत कत सकता है उससे ऊँचे नम्बरका सूत वे न कातें।

४. कतैयो और दूसरे कारीगरोको चेतावनी दे देनी चाहिए कि अगर वे अपने-अपने घरोमें खादी इस्तेमाल नही करेगे तो उन्हे कोई काम नही मिलेगा।

५ जिन कारीगरोको यह चेतावनी दी जाये उनके लिए ऐसी सुविधाएं कर दी जायें जिससे वे अपने परिश्रमके बदलेमें हमेशा खादी ले सकें।

६. सूतकी एक-एक गुडी जो मिले उसकी समानता और कस की जाँच की जाये और जैसे कम सिकी रोटी नही ली जाती वैसे ही असमान और कमजोर सूत भी न लिया जाये।

७. आम तौरपर प्रत्येक कतैयेका सूत अलग जमा किया जाये और जब एक थानके लायक हो जाये तब अलग ही बुना जाये। इससे खादीके टिकाऊपन, उसकी बनावट तथा उसके स्वरूपमे निश्चित तौरपर सर्वांगीण सुधार होगा।

८. इस प्रकार तैयार हुए सब थानोपर कागज चिपका होना चाहिए, जिसपर ओटनेवालो, पीजनेवालो, कातनेवालों और बुननेवालो के नाम, यदि ये सारे काम अलग-अलग लोगोने किये हो तो, दिये जायें।

९. जहाँ कारीगर गृहस्थ हो, वहाँ सम्बन्धित परिवारोको सारी प्रक्रियाएँ अपने ही घरोंमें करने के लिए राजी और प्रोत्साहित किया जाये। जब मजदूरी समान या लगभग समान हो जायेगी तब यह काम आसान होगा।

१०. जो परिवार कार्यकर्त्ताओंके प्रभावमें आयें उनके जीवन और आय-व्ययका ध्यानपूर्वक अध्ययन किया जाये और जो अपनी कमाई विवेकपूर्वक खर्च करते हैं उन्हें मदद दी जाये।

११. संघ जिन कारीगरोंकी सेवा करता है उनकी संख्याको ग्राहकोंकी कमीके कारण यदि कभी घटाना जरूरी हो जाये, तो पहले उन्हें अलग किया जाये जिनके पास आजीविकाके दूसरे साधन हो। मुझे मालूम हुआ है कि आजकल कई प्रान्तोंमें कातने का काम सिर्फ वही बहनें नहीं करतीं जो सबसे ज्यादा जरूरतमन्द है, बल्कि खाते-पीते घरोकी वे जुगती स्त्रियाँ भी करती है जिन्हें अधिक अच्छे भोजन या कर्ज चुकानेके बजाय अपने लिए छोटी-मोटी चीजें खरीदनेको थोड़ा-सा रुपया चाहिए।

१२. हर जगह कार्यकर्त्ताओंको धुनकियो और चरखोकी ध्यानपूर्वक परीक्षा करनी होगी। खास तौरपर उन्हें देखना होगा कि चरखोके तकुए कैसे हैं और वे कैसे

घूमते हैं। कारण, मजदूरीमें प्रस्तावित वृद्धि विशुद्ध वृद्धि ही नहीं होगी। कुछ हदतक तो वह वृद्धि उतने ही समयमें पहलेसे ज्यादा और बेहतर माल तैयार करनेका परिणाम होगी और कुछ अंशोमें विशुद्ध रूपसे वृद्धि ही होगी। अगर खादीकी माँग न बढ़ी तो ऐसे किसी भी कतैयेकी मजदूरीमें, जो अपने कामके ढंगमें सुधार नहीं करेगा, वृद्धि होनेकी सम्भावना नहीं है।

१३. पिछले अनुच्छेदसे यह निष्कर्ष निकलता है कि पहली बार तो संघ आसान शर्तोंपर नये यन्त्र या पुर्जे मुहैया करेगा। माल और तकुओंमें परिवर्तन करनेसे बहुत-से कतैये तो सहज ही अधिक मात्रामें ज्यादा अच्छा सूत कातने लगेंगे।

ये सब शर्तें तभी पूरी हो सकती हैं जब कार्यकर्त्ता अच्छी तरह समझ लें कि उनके सामने एक बड़ा लक्ष्य है और वे अध-भूखी अवस्थामें या ठीक भोजन न पानेवाले कारीगरों और मजदूरोंके एक विशाल परिवारके ही मामूली सदस्य हैं।

मैंने कपासके उत्पादनकी कोई चर्चा नहीं की है। आजतक मैं बाजारके लिए तैयार की जानेवाली खादीकी ही बात करता आया हूँ। स्वावलम्बी खादीके कुछ और नियम होंगे। यदि कतैये अपनी जरूरतकी कपास खुद पैदा न करेंगे या अगर लगभग हरएक गाँवमें कपास पैदा न की जाने लगेगी तो यह कभी सफल नहीं होगी। इसका मतलब यह हुआ कि जहाँतक स्वावलम्बी खादीका सम्बन्ध है, कपासकी खेतीका विकेन्द्रीकरण करना होगा। इसके लिए हमें उन गाँवोंके सम्बन्धमें आवश्यक आँकड़े एकत्र करने होंगे जिनमें खादी-सेवा की जा रही है। कारण, प्रत्येक कतैये या बुनकरके पास तो जमीन (बहुत थोड़ी जमीन भी) होगी नहीं, जिसमें वह अपनी जरूरतकी कपास पैदा कर सके। स्वावलम्बी खादीका सवाल बहुत बड़ा है और केवल इसीको हल करनेके लिए अखिल भारतीय चरखा संघके अस्तित्वका औचित्य ठहराया जा सकता है। यह ऐसा क्षेत्र है जिसमें संघने अबतक कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं किया है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-७-१९३५

४१६. टिप्पणियाँ

नियमोंकी पाबन्दीकी जरूरत

प्रान्तोंमें हरिजन सेवक संघकी जो अनेक अत्यन्त उपयोगी शाखाएँ खुल गई है उनकी समुचित व्यवस्थाके लिए बनाये गये नियमोके पालनकी आवश्यकतापर जोर देते हुए केन्द्रीय बोर्ड समय-समयपर प्रान्तीय संघोंको गश्ती चिट्ठियाँ लिखता रहता है और प्रोफेसर मलकानी उनकी नकले कृपापूर्वक मुझे भी भेजते रहते है। जबतक ये शाखाएँ सभी नियमों और केन्द्रीय बोर्ड द्वारा समय-समयपर जारी किये गये तमाम निर्देशोका पालन न करेंगी तबतक ये अच्छी तरहसे या आपसमें एक दूसरेके साथ तथा केन्द्रीय बोर्डके साथ तालमेल रखते हुए काम नही कर सकेंगी। बजटसे सम्बन्धित शर्तों या हिसाब-किताब तैयार करने के बारेमें की जानेवाली अपेक्षाओ को पूरा न करनेपर वित्त-व्यवस्था गड़बड़ हो जायेगी और यह बात इस बोर्डके लिए, जिसकी अनेक शाखाएँ हैं और जिन शाखाओंमें से प्रत्येकके अधिकारमें बड़ी-बडी राशियाँ है, बहुत बुरी होगी। यदि किये गये कार्योंके विवरण नियमित रूपसे नही भेजे जायेंगे तो केन्द्रके सामने कोई तसवीर ही नही रहेगी और इससे सारा काम अव्यवस्थित हो जायेगा। यदि सदस्य बैठकोमें भाग लेने उपस्थित न होगे तो संघका काम अटक जायेगा, जिससे एक प्रकारका गतिरोध पदा हो जायेगा और अन्तमें कामका सारा सिलसिला ही टूट जायेगा। जब व्यापारिक पेढ़ियोंके लिए नियमों और निर्देशोका ठीक-ठीक ध्यान रखा जाना जरूरी माना गया है तब यह सहज ही समझा जा सकता है कि किसी स्वैच्छिक, परमार्थी या प्रायश्चित्तके निमित्त संस्थापित संस्थाके लिए यह कितना अधिक आवश्यक है। इसलिए यह आशा करना उचित ही होगा कि संघके सभी घटक केन्द्रकी अपेक्षाएँ पूरी करने को प्रयत्नशील रहेंगे और इस तरह नियमानुसार व्यवहार करके ऐसी स्थिति उत्पन्न करेंगे जिससे अस्पृश्यताका यह महा-विकार हमारे बीचसे शीघ्र ही मिट जाये।

श्लीलताके सम्बन्धमें निवेदन

एक भाईने, जो खुद सम्पादक है, एक अखबारकी कुछ कतरनें भेजी है। उसके मालिक या व्यवस्थापक एक सुयोग्य लोक-सेवक माने जानेवाले सज्जन हैं। एकको छोड़कर ये सभी कतरनें दवाओंके बारेमें थी। मेरे विचारसे ये सबकी-सब बहुत आपत्तिजनक थीं, उनमें अश्लील बातें थी — मनुष्यकी पाशविक वासनाको जगाने और भड़कानेवाली। ये विज्ञापन उस अखबारके हालके अंकोंसे लिये गये थे। उन सबमें सुझाई गई दवाओका सेवन करनेवालो के लिए फिरसे जवानी और ताजगी पानेका दावा किया गया था। उनमें जो वर्णन दिये गये थे वे पढ़नेवालो के मनको घृणासे भर देते थे। उनमें से कुछ तो सरासर झूठ थे।

पत्र-लेखकने मुझे बताया है कि इस अपराधका दोषी अकेला वही अखबार नहीं है जिससे य कतरनें ली गई हैं। वे मुझे दूसरे ऐसे अखबारोंसे भी, जिन्हें लोकप्रिय और प्रतिष्ठित पत्र माना जाता है, इस तरहकी कतरनें भेजने को तैयार हैं।

ऐसे अखबारोके मालिकोंको शायद यह पता नहीं होता कि उनमें अश्लील विज्ञापन प्रकाशित किये जाते हैं। उन्होंने शायद उनको पढ़ा भी न हो। मैं आशा करता हूँ कि सम्पादक और व्यवस्थापक अपने-अपने अखवारोंके विज्ञापनोंका अध्ययन करेंगे और ऐसे विज्ञापनोंको छाँट देंगे जो निस्सन्देह आपत्तिजनक हैं। मै यह भी मानता हूँ कि प्रान्तोके पत्रकार संघ इस मामलेको हाथमें लेंगे और अखबार-मालिकोको विज्ञापन स्वीकार करने में संयम और विवेकसे काम लेनेपर राजी करेंगे। उनसे ऐसी अपेक्षा रखना अनुचित न होगा कि वे ऐसे सभी विज्ञापनोंको छाँट देंगे जिनसे सार्वजनिक नैतिकताके नियमोंके दूषित होने या श्लीलताकी भावनाको चोट पहुँचने की सम्भावना है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-७-१९३५

४१७. पत्र: जॉन हाईनीज होम्सको[1]

वर्धा
२७ जुलाई, १९३५

प्रिय मित्र,

यह पत्र श्री हीरालाल शर्माका आपसे परिचय करानेके निमित्त है। ये अमेरिकाके लिए बिलकुल अजनबी हैं। ये रोगोंकी प्राकृतिक चिकित्सा-सम्बन्धी विशेष ज्ञान प्राप्त करने के लिए अमेरिका जा रहे हैं। डॉ० केलॉगके बैटिल क्रीक सेनीटोरियमने इनका ध्यान आकर्षित किया है। मुझे अब डॉ० केलॉगके एक प्रतिनिधिसे मालूम हुआ है कि उन्होंने शिष्य बनाना बन्द कर दिया है। मैं तो श्री शर्माके पथ-प्रदर्शकके रूपमें आपसे अच्छे किसी आदमीके बारेमें सोच नही सकता। ये वहाँ एक बहुत ही गरीब आदमीकी तरह रहना चाहते हैं। ये बहुत परिश्रमी हैं। यदि किसी प्रकार ये अपनी शिक्षा और भोजनके निमित्त कुछ काम प्राप्त कर सकें तो उन्हें भी पसन्द होगा और मुझे भी। यदि यह न हो सका तो एक मित्र इनकी सहायता करेंगे और इनका तमाम खर्च वही उठायेंगे। आपसे जो भी सहायता बन पडे, इनको देनेकी कृपा कीजिए। मैं श्री शर्माको कोई और परिचय-पत्र नही दे रहा हूँ — हरिदासके नाम भी नहीं। इस सम्बन्धमें आप जो-कुछ भी आवश्यक समझें, करने की कृपा कीजिए। मै जानता हूँ कि जो कष्ट मैं दे रहा हूँ, उसको आप कष्ट नही मानेंगे। आपको

१. इस पत्रकी एक नकल हीरालाल शर्माको भी दे दी गई थी।

यह जानकर प्रसन्नता होगी कि श्री शर्मा यह अध्ययन केवल रोगी लोगोंकी सेवाकी खातिर ही कर रहे है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १७६-७७

४१८. पत्र : छगनलाल जोशीको

२७ जुलाई, १९३५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं नही चाहता कि तुम्हारे और नारणदासके बीच जो भी थोड़ी-बहुत मिठास है वह भग हो जाये। अतः मैं तुम्हें पाठशालाके इस झगड़ेसे मुक्त रखूंगा। किन्तु तुम्हारे पत्रसे मैं देखता हूँ कि तुम दोनोमें आपसमें भयकर स्वभावगत भेद तो बना ही हुआ है। तुमने एक प्रकारकी सहिष्णुता विकसित कर ली है। इतना ही काफी है कि तुम्हारा काम आसानीसे चलता रहे। जिस चीजके बारेमें तुम मेरा ध्यान आकर्षित करना चाहो उसके सम्बन्धमें मुझे लिखते रहना। उसका जिस तरह उपयोग करना मुझे उचित जान पड़ेगा वैसा मैं करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

रमासे पूछना कि क्या उसके पत्रकी आशा करना ज्यादती है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५२२) से।

४१९. पत्र : हरिगोविन्द गोविलको

२७ जुलाई, १९३५

भाई गोविल,

भाई हिरालाल शर्मा यह खत दगे। वह नैसर्गिक उपचारका अधिक ज्ञान पानेके लिये अमेरिका जा रहे हैं। बहुत गरीबीसे रहना चाहते हैं। हो सके तो अपने परिश्रमसे आजीविका भी पैदा करना चाहते हैं। उनको सेनेटोरियमके नामठाम दिया जाय; और भी जो परिचय दे सकते हैं दियों जाय। भाई शर्मा कभी हिन्दुस्तानके बाहर नही गये हैं।

बापुके आशीर्वाद

श्री हरिगोविन्द गोविल
५४, चौरंगी, कलकत्ता

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२४) से।

४२०. प्रश्नोत्तर[1]

२७ जुलाई, १९३५

प्रश्न : किसी आदर्श गाँवके लिए सफाई तथा आटा, चावल, गुड़, तेल आदि खाने-पीनेके सुधारोंके अतिरिक्त और कौन-कौनसी बातें आवश्यक हैं?

उ० : हरएकमें देखना चाहिये।[2]

प्र० : यदि मुझे यह ठीक पता हो कि माता-पिता आदि सम्बन्धी केवल मोहके कारण ही मुझे किसी सर्वहितकारी कार्यमें सम्मिलित होनेसे रोकते हैं तो क्या मुझको उनकी इस आज्ञाको मानकर बैठ रहना चाहिए?

उ० : तब नहीं मानना धर्म हो सकता है।

प्र० : अपने गुरुजनों (माता, पिता, गुरु तथा शासक वर्ग) की ऐसी आज्ञाका मानना जिससे सत्य, अहिंसा आदि व्रतोंमें से किसी एक व्रतका विरोध पाया जाता हो, ठीक होगा अथवा नहीं?

उ० : नहीं।

१. २५ जुलाई, १९३५ को अवधेशदत्त अवस्थी द्वारा पूछे गये प्रश्नोंके उत्तर।
२. अर्थात् यह तो अलग-अलग गाँवोंकी जरूरतें देखकर तय करने की बात है।

प्र० : आर्यसमाजके दस नियमोंमें एक नियम यह भी है कि "प्रत्येक हितकारी नियम पालन करने में स्वतन्त्र तथा सर्वहितकारी नियम पालनमें परतन्त्र रहना चाहिए।" क्या यह ठीक है?

उ० : ठीक समजमें नहीं आता। क्या इसका यह अर्थ नही होगा कि किसी समाजमें कोई बुरी प्रथा है उसका मिटाना आवश्यक है लेकिन जबतक कुल समाज अथवा बहुमत मिटाने के पक्षमें न हो तबतक प्रथाको मानना चाहिए अर्थात् अकेले ही उस प्रथाका सक्रिय विरोध न करना चाहिए। हाँ, दूसरे प्रयत्न भले ही करता रहे।

प्र० : एक साधारण व्यक्तिके लिए क्या उचित होगा यही बताया जाय। महान् पुरुष जो भी करेगा उसके पीछे तो बहुमत हो ही जाता है।

उ० : व्यक्तिको कर्त्तव्यपर डटे रहना।

प्र० : आपने यह बताया है कि जेलके उसी नियमको न मानना चाहिए जो सचमुच स्वाभिमानके विरुद्ध हो। इसलिए यह बताया जाये कि "जोड़े-जोड़ेसे गिनती देना, मार तथा गाली खाते हुए काम करते रहना, हथकड़ी पहनकर बाल बनवाना, प्रार्थना न करना, टिकट लेकर परेडपर खड़े होना, परेड लगाना, सायं-प्रातः अनुचित ढंगसे तलाशी देना" इन सात बातोंमें सचमुच कौन बातें स्वाभिमानके विरुद्ध हैं। क्योंकि इन्हीं बातोंपर प्रायः जेलोंमें हर जगह झंझट पैदा होते थे।

उ० : जिसमें हम धर्म-हानि मानें सो नहीं करना।

प्र० : आपने यह बतलाया है कि पत्नीका पालन करना और जहाँतक वह सहधर्मिणी रह सकती है उसका साथ देना पतिका धर्म है। सो यदि पत्नी सहधर्मिणी न हो, विरोधी विचारवाली हो तो पतिका पत्नीके प्रति क्या कर्तव्य होना चाहिए। और ठीक ऐसी ही दशामें पतिके प्रति पत्नीका कर्त्तव्य क्या होगा?

उ० : दोनोंका अलग रहना और पतिका आजीविका देना धर्म है।

प्र० : यदि मेरी मौजूदगीमें किसी मौकेपर (विशेषकर दरिद्रनारायण तथा हरिजन) रियासतका किसी भाईको पुलिसका सिपाही अथवा कोई मिथ्याभिमानी (विशेषकर सवर्ण) मनुष्य किसी कारणसे गाली देने अथवा मारने लगे, जैसाकि प्रायः हुआ ही करता है, तो ऐसे मौकेपर मेरा क्या कर्त्तव्य होगा?

उ० : अन्यायीसे रुक जानेका विनय करना, मजलूमको अहिंसक सहाय देना।

प्र० : एक पागल हाथी (अथवा कुत्ता) जो किसी प्रकार काबूमें नहीं आता है और अनेकों जानें ले चुका है तो क्या उसको मार देना उचित न होगा? यदि उचित है तो ऐसे ही स्वार्थ तथा काम-क्रोध आदिसे पागल मनुष्योंके लिए ऐसी ही अथवा इससे मिलती-जुलती व्यवस्था (राज्यसे) करना उचित ही होगा।

उ० : पागल हाथीपर भी यदि सच्चा प्रेम है तो सम्भव है वशमें आये। पागल मनुष्यके लिए स्टेट तो है ही।

प्र० : क्या स्त्रीसे पुरुषमें प्राकृतिक रूपसे कुछ श्रेष्ठता मानी जा सकती है?

उ० : नहीं।

प्र० : प्रायः स्त्रियाँ पुरुषोंकी पोशाक पहननेमें संकोच नहीं करती हैं जबकि पुरुष स्त्रीकी पोशाक पहनना ग्लानिकी बात समझता है। इसका क्या कारण है?

उ० : मेरी समझसे तो स्त्रियाँ पुरुषत्वको कुछ श्रेष्ठ समझती है। क्योंकि पुरुष स्त्रीको दुर्बल मानता है।

प्र० : आपके अंगारसे पके हुए अन्न न लेनेका क्या कारण है?

उ० : हिंसा, खर्च, समयका बचाव, आरोग्य इत्यादि।

प्र० : कुछ कारणोंसे मेरी यह धारणा हो गई है कि जबतक विद्योपार्जन करना अभीष्ट हो तबतक राष्ट्रीय अथवा सामाजिक आंदोलनसे सर्वथा पृथक् ही रहे। क्या यह धारणा ठीक है?

उ० : इसका निर्णय तुमारे करना है।

बापु

प्रश्नोत्तरोंकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२२१) से।

४२१. हिंसा बनाम अहिंसा

'हरिजनबन्धु' का एक पाठक लिखता है:[1]

हिंसा-अहिंसाका द्वन्द्व अनादि है और अनन्त कालतक बना रहेगा। सभी लोग दोनों शब्दोका अलग-अलग अर्थ करेंगे और अपनी इच्छा तथा सामर्थ्यके अनुसार उसपर आचरण करेंगे। अतः ऐसा लगता है कि इस बहुचर्चित विषयकी और अधिक चर्चा हमें कुछ बहुत आगे नही ले जा सकती। किन्तु दुर्बलतासे ग्रस्त हमारे आजके वातावरणमें अहिंसाको मैं जिस दृष्टिसे देखता हूँ, वह दृष्टिकोण नया-सा जान पड़ता है और इस कारण अहिंसाके भक्तोंको कभी-कभी आघात भी पहुँचता है। अहिंसा वीर पुरुषका लक्षण है। कायरता और अहिंसामें घोर शत्रुता है। हमारे भयसे घिरे हुए होने और अहिंसाको विपरीत ढंगसे देखने के अभ्यस्त हो जानेके कारण हम उसका सही रूप नहीं देख पाते।

उपर्युक्त पत्रपर विचार करने के लिए इतनी प्रस्तावना आवश्यक जान पड़ती है।

हमारे सामने ऐसा कोई प्रमाण नही है कि जहाँ अधिक साँप मारे जाते हैं, वहाँ औसतन अधिक लोग मरते हैं। बल्कि इसके विपरीत जहाँ एकमत होकर लोगोंने साँपको मारना अपना कर्त्तव्य मान लिया है वहाँ मुश्किलसे ही साँप देखने को मिलते हैं। किन्तु इस प्रमाणके आधारपर हिंसाको धर्म सिद्ध नही किया जा सकता। अहिंसाको प्रमाण देकर ही सिद्ध किया जा सकता है। मारने की प्रथा तो चलती ही आई है। इस दृश्यको देखकर ही किसी वीर पुरुषको ग्लानिका अनुभव हुआ होगा और वह बोल उठा होगा: "यह धर्म नहीं, अधर्म है। अहिंसा ही सच्चा और शाश्वत धर्म है।"

१. पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने लिखा था कि वह साँपोंके भयसे मुक्त नहीं हो सका है, हालाँकि वह यह जानता है कि अहिंसा ही जीवनका धर्म है।

यदि मैंने किन्ही विशेष परिस्थितियोमें साँपको मारनेका सुझाव दिया हो तो वैसा मैंने अहिंसा-धर्मकी उन्नतिके लिए ही किया है, न कि उसका विनाश करनेके लिए। अहिंसा मानसिक वृत्ति है। यदि मैं भयवश किसी साँपको मारूँ किन्तु मेरा प्रयत्न उससे मैत्री करनेका हो तो इसमें मेरी अहिंसाको लज्जित होनेका कोई कारण नही है। यदि मैं पूरी तरहसे प्रयत्न करूँगा तो मेरा वह प्रयत्न सफल भी हो सकता है।

सर्पादिको न मारनेमें हम दयाका उपयोग नही करते बल्कि रूढिसे बँधे होनेके कारण हमें उसमें अहिंसाका आभास मिलता है, इसलिए साँपको नही मारते। हम ऐसा नही कह सकते कि मनुष्य जिनसे डरता है उनपर वह दया दिखाता है। जो बलवान होगा वही निर्बलपर दया दिखा सकता है। साँपसे डर लगता है, इसलिए उसे पकडकर दूर छोड़ आनेमें दया कहाँ है? ऐसा करते हुए हमारे मनमें सामान्यत: इस बातका विचार तक नहीं आता कि किसी दिन हम साँपसे मित्रता करेंगे। अहिंसा तो जाग्रत मनुष्यका धर्म है। अहिंसाके उपासकको उसका प्रतिक्षण ज्ञानपूर्वक उपयोग करना पड़ता है, क्योकि हम चारो ओरसे हिंसासे घिरे हुए है। इस विकट परिस्थितिमें से सबको यथाशक्ति अपना रास्ता बनाना पडता है।

अब हम साँपको न मारनेकी क्रियाकी जाँच करे। यदि साँप हमपर हमला करने आए तो हम उसे अवश्य मार डालेगे बशर्ते कि हममें वैसा करनेकी हिम्मत हो। सामान्यत हम उसे नहीं मारते, क्योकि वह हमपर हमला नही करता। वह अपने रास्ते जाते हुए भूले-भटके हमारे घरमें पहुँच जाता है। इसलिए हम उसे पकडकर दूर फेंक आते है और वह हमपर हमला न करे इस बातकी सावधानी बरतते हुए उसे जितना दु:ख देना आवश्यक हो उतना दु:ख देते हैं। इसके पीछे दया काम नहीं करती, बल्कि अहिंसाके स्वीकृत धर्मका पालन न करनेके कारण अगले जन्ममें मिलनेवाले दण्डका भय काम कर रहा है। हमने साँपको न मारकर कोई बहादुरी नही दिखाई, और उसे मार देनेमें कोई पराक्रम भी न होता। [मारने और न मारने] दोनो कामोंके पीछे भयकी प्रेरणा है। यदि मुझमें सच्ची दया होगी तो मैं साँपको पकड़कर उससे मित्रता करूँगा और अन्य लोगोको भी उसके भयसे मुक्त करूँगा। यह ठीक है कि ऐसा करनेवाले साधुओंके किस्से हम सुनते है। सम्भव है कि ये सब गप्प हो, इनमें अतिशयोक्ति हो। किन्तु यदि अहिंसा सच्ची वस्तु है तो साँप और मनुष्यके बीच ऐसी मित्रता होना असम्भव नही है।

यदि उपर्युक्त बातें पाठकको स्पष्ट हो गई हो तो वह समझ जायेगा कि जिस वाक्यके बारेमें शंका उठाई गई है उसमें शंकाकी कोई गुजाइश नही है।[1] किन्तु

१. पत्र-लेखकने १४-७-१९३५ के हरिजनबन्धुमें प्रकाशित महादेव देसाईके अनुवाद "आदर्श और व्यवहार" से निम्न वाक्य उद्धृत किया था : "अहिंसा जीवनका नियम है, पर यदि मैं साँपसे डरता हूँ तो उस समय मेरा क्या कर्त्तव्य है? मनसे तो मैं पहले ही साँपका वध कर चुका; सिर्फ मेरी शारीरिक निर्बलता ही बाधा दे रही है। उस समय मेरा धर्म कहता है कि 'उसे मार डाल। उसे मारने से बचनेका तेरा जो यह मिथ्या प्रयत्न है, वह त्याग दे'।"

इसका यह मतलब नहीं कि जबतक साँपका भय चला न जाय तबतक उन्हें देखते ही मार देना चाहिए। किन्तु जहाँ साँपोंका भय बना ही रहता है वहाँ उन्हें मारने में संकोच करने की आवश्यकता नही है, क्योंकि उक्त भयके पीछे मनकी अतल गहराईमें उन्हें मारने की इच्छा बनी ही हुई है। यदि कोई साँपको मार देता है तो वह निर्भयता अनुभव करता है। अहिंसक व्यक्तिके लिए इससे अधिक दयनीय अवस्थाकी कल्पना मैं नही कर सकता। सर्पादिको मित्र बनानेका प्रयास करनेवाला व्यक्ति ऐसी समस्याओंको रिवाजके माफिक सुलझाकर ही सन्तुष्ट नही रहेगा, बल्कि ऐसे हिंस्र प्राणियोंकी किसी भी तरहसे हिंसा न करके उनके भयसे मुक्त होनेका प्रयास करेगा।

सुन्दर स्त्रीका उदाहरण यहाँ बिलकुल नहीं घटता। यदि किसीके मनमें सुन्दर स्त्रीके प्रति विकार उत्पन्न हो जाय और वह उसे क्रियान्वित करने का प्रयत्न करना चाहे तो बहुत-से लोग उसे मारनेको तैयार हो जायेंगे। मनुष्य ऐसे विकारोका शमन करता है अथवा जान-बूझकर विकारोंको पोसकर अपनी मौत खुद बुलाने का उपाय करता है। सर्पके साथ तुलना तो इस प्रकार हो सकती है। मैं किसी स्त्रीपर मोहित हो जाऊँ और अपने मोहको क्रियान्वित करने की कोशिश करूँ, इसकी अपेक्षा मुझे अपने मनमें रहनेवाले सर्पका नाश करना चाहिए; अर्थात् मुझे कुँएमें डूब मरना चाहिए। यह सच्ची अहिंसा होगी और पराक्रमका काम माना जायेगा। इस जगत्में सर्पादि हमारे लिए प्रतीकस्वरूप हैं। हमारे मनके विकार बुराईके प्रतिबिम्ब हैं। यदि हम अपने मनके विकारोपर विजय पानेका भगीरथ प्रयास करें तो हम अपने मनमें रहनेवाले सर्पादि-रूप बन्धुओके भयसे मुक्त हो जायेंगे। किन्तु जबतक हम इस भयको नहीं छोड़ पाते तबतक मैत्रीकी इच्छा रखने के बावजद जो उचित समझें सो करें।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २८-७-१९३५

४२२. पत्र : नारणदास गांधीको

वर्धा
२८ जुलाई, १९३५

चि० नारणदास,

इसके साथ हरिलालका पत्र है। जैसा मैंने लिखा था वही बात थी न? क्या अब भी वही हाल है? वह कहाँ रहता है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

साथका पत्र मैं इस खयालसे भेज रहा हूँ कि उसमें शिक्षाकी दृष्टिसे चरखेकी उपयोगितापर विचार किया गया है। पत्रमें जो-कुछ कहा गया है वह हमारे सोचने-समझने लायक है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८४६६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४२३. पत्र : एल० आर० डूचाको

वर्धा
२९ जुलाई, १९३५

प्रिय मित्र,

खादीके बारेमें दिये मेरे सुझावोंके सम्बन्धमें आपने जो बातें कही हैं, उनके लिए आपका धन्यवाद।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री एल० आर० डूचा
समाज-सेवक
३२२४/ए लिंगमपल्ली
हैदराबाद, दक्षिण

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७४२) से; सौजन्य : एल० आर० डूचा

४२४. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२९ जुलाई, १९३५

प्रिय चार्ली,

अगर तुमने १७ तारीखके लिए टिकट लिया हो तो तुम्हें शान्तिनिकेतनसे अब बहुत जल्द ही चल देना चाहिए। अन्यथा अन्तमें बड़ी भागदौड़ होगी। वेरियरके साथ एक दिन बितानेकी बात तो ठीक है, लेकिन तुम्हारे पास कोडाई [कनाल] जानेका समय नहीं है। एस्थरकी समस्या बहुत कठिन है। मेरा विचार यह है कि मेननको भारतमें तो अवश्य जमे रहना चाहिए, लेकिन तंजौरमें नहीं। सच्चे कौशल का मूल्य तो हर जगह मिलता है।[1]

× × ×

श्रीमती अम्बालाल अहमदाबादमें हैं। वे लोग अभी हालमें ही लौटे हैं। वे भली-चंगी हैं।

अगर तुम यूरोपीय पाठकोंके लिए कांग्रेसके बारेमें कुछ सारपूर्ण चीजें लिख सको तो अच्छा है। लेकिन, वह चीज स्वतन्त्र रूपसे लिखी हुई होनी चाहिए और लेखकके रूपमें केवल तुम्हारा ही नाम होना चाहिए। तुम गिरिजा या किसी औरके नामके साथ अपना नाम जोड़ो, यह नहीं हो सकता।[2]

[पुनश्च :]

तुम्हें बताया या नहीं कि सुधीरको मैंने तुरन्त पत्र लिख दिया था?

आप्रकाशके बारेमें बताना।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९१) से।

१. इससे आगेकी दो पंक्तियोंके कई शब्द पढ़े नहीं जा सके, जिससे उनका आशय स्पष्ट नहीं हो पाया। अत: उनका अनुवाद नहीं दिया जा रहा है।

२. देखिए "पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको", १८-७-१९३५।

४२५. पत्र : पद्माको

२९ जुलाई, १९३५

चि० पद्मा,

यदि मैं रगीन कागजका टुकड़ा काममें लाऊँ तो एक पैसा खर्च अधिक बैठेगा और फिर वह हाथका बना कागज भी नही होगा। बीमार तो पड़ना ही नही चाहिए। क्या तेरे पास मगन-चरखा है? यह बहुत अच्छी बात है कि शीला हरिजन पाठशाला में पढ़ती है। क्या अन्य सभी कातते हैं? यहाँ तो आजकल जरूरतसे ज्यादा वर्षा हो रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१५२) से। सी० डब्ल्यू० ३५०८ से भी; सौजन्य : प्रभुदास गांधी

४२६. पत्र : क० मा० मुंशीको

२९ जुलाई, १९३५

भाई मुंशी,

विज्ञापन-सम्बन्धी मेरे सुझावके प्रति तुम्हारी अनुकूलताके कारण मैं उलझनमें पड गया हूँ क्योकि इससे मेरा बोझ बढ़ जाता है और मुझे ऐसा भय होने लगता है कि मेरे विचारोंके अनुसार काम करने की तुम्हारी आदतका मुझसे जाने-अनजाने कहीं दुरुपयोग न हो जाये और इस प्रकार मैं तुम्हारे जैसे साथीको कही खो न बैठूँ। वैसे इसमें कोई सन्देह नही कि इस तरहके संयमसे अखबारकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी।

मैं भी यह मानता हूँ कि भूलाभाईका सुझाव[1] बहुत प्राविधिक है।

सलाहकार-मण्डलके बारेमें मैं समझ गया।[2]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५८०) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

१. देखिए "पत्र : क० मा० मुंशीको", २५-७-१९३५ भी।
२. देखिए "पत्र : क० मा० मुंशीको", ८-७-१९३५ भी।

४२७. पत्र : प्रभुदास गांधीको

२९ जुलाई, १९३५

चि० प्रभुदास,

तेरा पत्र मिला। मुझे तो तेरा बनाया हुआ चरखा पसन्द आया। इसलिए मैंने काफी मेहनत करके उसपर अधिकार भी कर लिया। मैंने उसमें कुछ सुधार भी किये जो मुझे सूझे। लेकिन तेरा बजट पास नहीं हो सका। दो व्यक्ति मैं कहाँसे लाऊँ? यदि मारुति[1] अथवा लक्ष्मीदासके[2] मनमें उत्साह पैदा कर सके तो बात बन सकती है। लेकिन आप मरे बिना स्वर्ग नहीं दीखता। इसलिए मुझे तो लगता है कि तुझे अकेले ही जूझना पड़ेगा। मुझसे जो हो सकेगा सो करूँगा।

तेरा क्षेत्र निश्चित कर दिया गया है और फिलहाल तू गुलरिया नहीं छोड़ सकता। वहाँ जो हो सके सो करना। तेरा पत्र मैं ईश्वरलाल, विनोबा और काकाको पढ़वा दूंगा। तुझे तनिक भी बेचैन नहीं होना चाहिए। कताईके बारेमें मेरे आँकड़े सही हैं।

ग्रामोद्योगके बारेमें तू भ्रममें है। जितने उद्योग तूने गिनाये हैं उनमें यदि उतने ही और जोड़ दिये जायें तो भी तू यह सिद्ध नहीं कर सकता कि किसी खास पैमाने के अनुसार मजूरीमें घट-बढ़ हुई है। जो विषमता है वह स्त्रियों और पुरुषोंके बीच है। यह उस सिद्धान्तके अनुसार नहीं है कि जितनी अधिक जोखिम, उतनी अधिक तनख्वाह। प्रकृतिने सबकी आवश्यकता एक-जैसी रखी है, उनकी सभी उद्योगोंमें एक-जैसी मजूरी होनी चाहिए। तूने विषमतामें समता देखी है। यह निरा भ्रम है। इसपर पुनः विचार करना। मैं यह मानता हूँ कि जो लोग आज अधिक वेतन पा रहे हैं वे कम नहीं लेंगे। इसका मुझे दुःख नहीं है। कम वेतन लेनेवालों को यदि न्याय मिल जाये तो मुझे सन्तोष हो जायेगा। यदि सभी लोग बुद्धिमान या भले बन जायें तो वे हर कामके लिए समान वेतन स्वीकार कर लेंगे। फिर काम यज्ञका रूप ले लेगा। किन्तु वह युग अभी बहुत दूर है। यदि हम उस ओर बढ़ें तो यह काफी होगा।

गोपीनाथजी का लेख मिल जानेपर मैं उसे जाँचकर तुझे वापस भेज दूंगा। मैं नहीं जानता कि तू जो इसकी प्रशंसा करता है वह कहाँतक उचित है। मैंने तो इससे उलटा कुछ सुना था। किन्तु मैंने उसपर कोई ध्यान नहीं दिया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. मारुति शर्मा।

२. लक्ष्मीदास आसर।

४२८. पत्र : अम्बा गांधीको

२९ जुलाई, १९३५

चि० अंबा,

तुम्हारा खत अच्छा है। उसमें निराशाकी बू आती है सही, लेकिन हम निराश न बनें। हमारे तो कैसा भी संकट हो उसके बीचमें सेवा करनी है और वह भी प्रसन्न चित्त और श्रद्धासे। लोग सुनें तो भी सही न सुनें तो भी सही।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४२९. पत्र : एस० सी० डिलार्फको

वर्धा
३० जुलाई, १९३५

प्रिय मित्र,

टॉल्स्टॉय उन शिक्षकोंमें से थे जिनके आगे मेरा सिर सहज ही झुक जाता था। बस इतना ही लिखकर भेज सकता हूँ। मैं जो अकसर अपने सामानमें से गैर-जरूरी चीजोंकी छँटनी करता रहता हूँ उसीके दौरान बहुत-से विदेशी पत्र नष्ट कर दिये। टॉल्स्टॉयके पत्र भी इसके अपवाद नहीं रहे। मैं अपनी कोई तसवीर नहीं रखता।

हृदयसे आपका,

एस० सी० डिलार्फ
'स्वोबोदा'
रू ६ सेप्टेम्बर, एन० ५
सोफिया (बल्गारिया)

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४३०. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

३० जुलाई, १९३५

चि० अम्बुजम,

तुमने जो फोटो भेजा है, सुन्दर है। लड़कीका चेहरा मुझे बड़ा अच्छा लगा। वह भोला और निर्दोष है। उनका जीवन पिताजी और माताजीके जीवनको तो भरेगा ही, मैं चाहूँगा कि तुम भी अपने जीवनके अवकाशको उससे उसी तरह भर जाने दो। आशा है, किचीकी उँगली बिलकुल ठीक होती जा रही होगी।

कुकर कल ही आया।[1] बहुत अच्छा है। कीमत तुमने नहीं बताई। फल भी समयसे मिल गये थे।

इस बार कुछ ऐसा हुआ कि फल बड़े मौकेसे आये, क्योंकि इन दिनों यहाँ कई लोग बीमार हैं। मगर इसका मतलब यह न समझना कि मैं तुमसे और भी फल भेजनेको कह रहा हूँ। अभी यहाँ काफी फल पड़े हुए हैं, क्योंकि मुलाकाती लोग कई टोकरे ले आये हैं।

स्नेह।

बापूके आशीर्वाद

अंग्रेजीकी फ़ोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०४) से; सौजन्य : एस० अम्बुजम्माल

४३१. पत्र : जी० सीताराम शास्त्रीको

३० जुलाई, १९३५

प्रिय शास्त्री,

अदला-बदलीकी प्रणाली-विषयक निबन्धके[2] बारेमें मैं चुप नहीं बैठा हुआ हूँ। प्रो० शाहने श्री बैकुण्ठनाथ मेहताका नाम सुझाया है। के०[3] लखनऊके प्रो० रंगाका नाम सुझाते हैं। ये लखनऊके प्रो० राव कौन हैं? क्या वे आन्ध्रके हैं? अगर

१. देखिए "पत्र : अम्बुजम्मालको", १९-७-१९३५।

२. कृष्णा जिला-स्थित गुणादला खद्दर संस्थानम्‌के यू० वेंकट कृष्णैयाने विनिमयकी प्रणालीपर सर्वोत्तम निबन्ध लिखनेवाले के लिए पुरस्कारकी घोषणा की थी।

३. शायद जे० सी० कुमारप्पा।

सबसे अच्छा और सबसे अधिक कायल करनेवाले तर्कोंसे युक्त निबन्ध अदला-बदली की प्रणालीके खिलाफ हो तो भी क्या पुरस्कार दिया जाना चाहिए ?

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९१७३) से; सौजन्य : जी० सीताराम शास्त्री

४३२. पत्र : भगवानजी ए० मेहताको

३० जुलाई, १९३५

भाई भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मैं जमनालालजी को भेज रहा हूँ। मैं जब उनसे मिलूँगा तो अवश्य बात करूँगा। जिस सगाईके बारेमें तुमने बधाई दी है वह टूट गई है। कमलनयन कोलम्बोमें लन्दनकी मैट्रिककी परीक्षाकी तैयारी कर रहा है। यह कहना अनुचित है कि काठियावाड़में ऐसा कोई नही है जो पवित्र जीवन बिताते हुए त्यागवृत्तिसे काम कर सके। इस कथनको सिद्ध नहीं किया जा सकता। यह कहना जितना सही है कि यथा राजा तथा प्रजा, उतना ही यह कहना भी सही है कि यथा प्रजा तथा राजा। आप भला तो जग भला। क्या तुम छगनलाल जोशीको जानते हो? वह तो गाँवोंका दौरा कर रहा है न?

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२५) से। सी० डब्ल्यू० ३०४८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४३३. पत्र : कोतवालको

३० जुलाई, १९३५

भाई कोतवाल,

तुम्हारा मिथ्या लोभ अभीतक क्यो नही जाता? जिसने सेवा की क्या उसकी वह सेवा ही पुरस्कार और प्रमाणपत्र नही है? जिनसे मैं सर्वथा अपरिचित हूँ उन्हें क्या प्रमाणपत्र दूँ? तुम्हें तो ऐसी झंझटोंसे मुक्त हो जाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५९९) से।

४३४. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

३० जुलाई, १९३५

चि० नरहरि;

विद्यालयके बारेमें लिखा तुम्हारा पत्र मैं पढ़ गया। जयाबहनको कितना वेतन दिया जाता है? क्या तुम यह नही मानते कि हमारी शिक्षा-पद्धतिमें कोई ऐसा दोष अवश्य है कि जिससे, हालाँकि हमारे यहाँ कमसे-कम पच्चीस बहनें होंगी, हम एकको भी वैसा नहीं बना सके जैसा कि तुम लिखते हो। यदि ऐसा हो तो बाहरसे किसी ऐसी बहनके मिलने की आशा कैसे कर सकते हैं जो हमारे ढाँचेमें ठीक बैठ सके? मुझे तो लगता है कि जैसा हमने बोया होगा वैसा हमें काटना पड़ेगा। तुम अपने मनमें इस बातका वहमतक मत रखना कि शिष्टाचारके कारण मैं अपनी गिनती 'हम लोगो' में करता हूँ। मैं अपनी कमीको भली-भाँति समझता हूँ। मै स्वयंको शिक्षक तो मानता ही हूँ किन्तु 'निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते' की तरह ही। यह सब लिखकर मैं यही कहना चाहता हूँ कि तुम्हें यह निश्चय कर लेना चाहिए कि जैसी तुम चाहते हो वैसी बहन हमें अपनेमें से ही तैयार करनी है। किसी दिन उक्त प्रयास सफल होगा। बाहर से ऐसी कार्यकर्त्री प्राप्त करने का प्रयत्न बेकार होगा। यदि इस प्रयत्नमें सफलता मिलने की सम्भावना हो तो भी उसे छोड़ देनेमें ही हमारा भला और हमारी सेवाकी सफलता है।

क्या तुम बालिकाओंको तकलीपर नये ढंगसे कताई करना सिखाते हो? यह ढंग बहुत ही आसान है। यह देखने में आया है कि पन्द्रह दिनमें ही छोटी बालिकाएँ आध घंटेमें ८० तारकी गतिसे कातने लगती है क्योंकि यह ढंग बिलकुल आसान है। समय-समयपर लड़कियोकी चरखे और तकलीपर कातने की गति जाँचते रहना।

फिलहाल मैं विद्यापीठके बारेमें कुछ नही लिख रहा हूँ।

गोशालाके बारेमें मैं लगातार सोचता रहा हूँ। मुझे अब भी यह लगता है कि या तो हमें किसी पिंजरापोलको अपने अधिकारमें ले लेना चाहिए और वहाँ बेकार पशुओंको रखना चाहिए या फिर दुग्धालयके साथ-साथ पिंजरापोल भी बनाना चाहिए। ऐसे पशुओंको वीडजमें या ऐसी ही किसी अन्य जगहपर रखा जा सकता है। पारनेरकरकी भरवाड़ोंसे सहयोग प्राप्त करने की योजना मुझे अधिकाधिक आकर्षित कर रही है। मैं बड़े पैमानेपर उसका यहाँ प्रयोग करना चाहता हूँ। डाह्यालालके तैयार होने-भर की देर है। शायद टाइटस आये। उसका तार आया था। पारनेरकरसे मैं जो समझ पाया हूँ वह यह कि भरवाड़ोंके पशुओंपर हमें पूरा नियन्त्रण रखना चाहिए। हम जैसा कहें वैसा चारा वे पशुओंको दें, वैज्ञानिक ढंगसे पशुओंको दुहें

और उनका पालन-पोषण करें। उनसे जो दूध मिलेगा उसे हम बेच देंगे। यदि अंतिम दोनो बातें सम्भव न हो तो बात आगे मत बढ़ाना।

फिलहाल तो वनमालाको अलोना खानेका अपना व्रत समाप्त करना पड़ेगा। यदि वह कोई अन्य व्रत ले ले तो अच्छा होगा। तुम शायद भास्कररावसे परिचित हो। वह पहले आश्रममें था और फिर विनोबाजीके पास रहा। मामाकी निगरानीमें भी रहा है। वह बड़ौदामें है। वह अपने माता-पितासे बहुत दूर रहना नही चाहता। वह गुजराती, संस्कृत और मराठी जानता है। बहुत करके अंग्रेजी भी जानता है। अपनी जरूरतें पूरी करने के लिए उसे सिर्फ पच्चीस रुपये महीना चाहिए। मेरा सुझाव है कि तुम उसे विनय मन्दिर या हरिजन आश्रममें रख लो। विनोबा मानते हैं कि यदि हम उसे ले लेंगे तो वह हमारे कामका सिद्ध होगा। वह बहुत कर्मपरायण व्यक्ति है। शायद तुम्हें जानता भी हो। यदि तुम विद्यापीठ या हरिजन आश्रममें उसका उपयोग कर ही न सको तो मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०८४) से।

४३५. सन्देश : लीग कौंसिल, लंदनको[1]

वर्धा
[१ अगस्त, १९३५ या उसके पूर्व][2]

मैं शान्तिके लिए प्रार्थना और उसकी आशा ही कर सकता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २-८-१९३५

१. इटाली-अबीसीनियाई संकटके सिलसिलेमें अपनी बैठकके पूर्व अविलम्ब सन्देश भेजने के लिए किये गये लीग ऑफ नेशन्सके अनुरोधके उत्तरमें।

२. तारीख "वर्धा, १ अगस्त," १९३५ के अन्तर्गत, "हमारे विशेष सम्वाददाता" की ओरसे भेजी गई सामग्रीके रूपमें प्रकाशित।

४३६. वक्तव्य : इतालवी-अबीसीनियाई संकटके सम्बन्धमें

[१ अगस्त, १९३५ या उसके पूर्व][1]

मुझे मालूम हुआ है, लोगोंके पूछने पर गांधीजी ने यह स्पष्टकर दिया है कि उन्होंने चन्देके लिए ऐसी कोई अपील जारी नहीं की है।[2] गांधीजी इतालवी-अबीसीनियाई संकटके सिलसिलेमें किसीसे भी मुलाकात नहीं करना चाहते, जिसका कारण वे यह बताते है, यदि वे अपनी रायपर अमल नहीं कर सकते तो मात्र मौखिक रूपसे उसे व्यक्त करना कोई महत्त्व नहीं रखता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २-८-१९३५

४३७. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धागंज

१ अगस्त, १९३५

रायटर एजेंसी द्वारा लॉर्ड जेटलैंडके नामसे प्रसारित इस वक्तव्यको[3] पढ़कर मुझे आश्चर्य हो रहा है कि श्री एम० आर० मसानीने मेरे प्रस्तावका[4] विरोध करते हुए हिंसाकी वकालत की थी। मेरा प्रस्ताव था कि कांग्रेसके सिद्धान्त-पत्रमें "वैध तथा शान्तिपूर्ण" शब्दोंके स्थानपर "सत्यनिष्ठ तथा अहिंसात्मक" शब्द रखे जायें।

मेरे मनमें उस अवसरकी स्मृति बड़ी स्पष्ट है और मैं निश्चित तौरपर कहता हूँ कि उनके भाषणमें हिंसाकी वकालत-जैसी कोई भी बात नही थी। अन्य अनेक व्यक्तियोंकी भाँति उनको भी राजनीतिक सिद्धान्त-पत्रमें बहुत-कुछ धार्मिक किस्मकी शब्दावलीके प्रयोगपर आपत्ति थी।

१. "वर्धा, १-अगस्त," १९३५ की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित।

२. साधन-सूत्रमें बताया गया था कि "देशमें तो इसकी कोई जानकारी नहीं, पर लगता है विदेशोंमें ऐसी अफवाह फैल गई है कि गांधीजी ने अबीसीनियामें रेडक्रास सेवाके भारतीयोंका एक स्वयंसेवक दल तैयार करनेके लिए चन्देकी अपील जारी की है। लगता है, यह अफवाह लन्दनसे चलकर अमेरिका पहुँच गई है और ऐसा कदम उठानेके लिए अमेरिकासे बधाईका एक तार पाकर गांधीजी को आश्चर्य हुआ है।"

३. भारत-मंत्री; एम० आर० मसानीकी पासपोर्ट जब्त किये जानेके सम्बन्धमें कॉमन्स सभामें लॉर्ड फेरिंगडन द्वारा पूछे गये प्रश्नके उत्तरमें तत्कालीन भारत-मन्त्री द्वारा दिया गया।

४. बम्बईमें २६ अक्तूबर, १९३४ को हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनमें। देखिए खण्ड ५९ पृ० २५२।

इसलिए मैं आशा करता हूँ कि सम्राट्के अधीन सबसे अधिक जिम्मेदारीके एक पदपर आसीन लार्ड जेटलैंड वैसी दो टूक भाषा प्रयोग करना स्वयं पसन्द नहीं करेंगे जैसी भाषाका प्रयोग करते वे बताये गये हैं।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २-८-१९३५

४३८. पत्र : हीरालाल शर्माको

१ अगस्त, १९३५

चि० शर्मा,

यह क्या बात है कि तुमारे तरफसे कोई खत नहीं है? श्री व्रजमोहनके खत से पाता हूं अमरीकाका खर्च बहूत है। इतना होना नही चाहीये। वहा जाकर देखोगे। मजदूर बनकर रहने में खर्च कम होना ही चाहीये। सब ठीक चल रहा होगा। सब हाल दे दो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १७९ के सामने प्रकाशित प्रतिकृति से।

४३९. पत्र : आप्रकाशचन्द्र मेहताको

वर्धा
२ अगस्त, १९३५

प्रिय आप्रकाश,

इस उम्रमें तुम्हारी कसौटी हो, यह बात तुम्हारे लिए अत्यन्त पीड़ाजनक क्यों होनी चाहिए? बल्कि यों कहें कि इस नये प्रयोगमें उम्र तुम्हारे विरुद्ध है। किसी अजनबीके लिए, चाहे वह जितना योग्य हो, यह कसौटीकी बात मानी जा सकती है। खास तौरसे यह बात ऐसे व्यक्तिपर लागू होती है जो तुम्हारी तरह किसी नये उपक्रममें लगे। ऐसा क्यों मान लेना चाहिए कि दुनिया हमें वैसा ही समझे-जाने जैसा हम स्वयं अपने को समझते हैं? हर प्रार्थनामें प्रतिदिन हम जिन ग्यारह प्रतिज्ञाओंको[1] दुहराते हैं उन्हें याद रखना। वह श्लोक इस विनतीसे समाप्त होता है कि हम उन प्रतिज्ञाओंका पालन पूरे विनयसे करें। विनय शान्ति और सच्चे आनन्दकी कुंजी है।

तुम्हारे अनुभवके बारेमें तुम्हारे प्रथम पत्रकी प्रतीक्षा मैं किंचित् अधीरतासे कर रहा हूँ।

१. देखिए "पत्र : कृष्णचन्द्र को", १४-५-१९३५।

वहाँ अमलाको[1] ढूँढ़कर उससे मिलना और मैत्री करना।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

४४०. पुर्जा: अवधेशदत्त अवस्थीको[2]

२ अगस्त, १९३५

लिखा करो और उत्तर देनेकी चेष्टा करूंगा। जब आनेका दिल हो तब लिखो। मैं यही हूंगा तो मैं सम्मति भेजने का प्रयत्न करूंगा।

बापूके आशीर्वाद

पुर्जेकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२२३)से।

४४१. टिप्पणियाँ

एक देश-सेवकका स्वर्गवास

पुरुलियाके निवारणबाबू, जिनका अभी हालमें स्वर्गवास हो गया है, बहुत विनम्र स्वभावके अत्यन्त सज्जन पुरुष थे। वे हरिजनोंके सच्चे सेवक थे और उसी तरह समस्त दीन-हीनके सच्चे बन्धु थे। अहिंसाकी अनुपम सुन्दरताका उन्होंने खूब गहरे जाकर साक्षात्कार किया था और उसे अपने जीवनमें उतारने का वे अहर्निश प्रयत्न करते रहते थे। उनका जीवन उनके अनेक मित्रों और अनुयायियोंके लिए प्रेरणाप्रद था, और वे भारीसे भी भारी संकटके समय निवारण बाबूसे पथ-प्रदर्शन तथा आश्वासन की आशा रखते थे। उनके मित्रों और अनुयायियोंको उनके जीवनकी स्मृति सदा शक्ति और सन्मार्गपर उत्तरोत्तर प्रगति करने की स्फूर्ति देती रहे।

सर्वस्व-दान

महान् हरिजन-सेवक श्री ज्वालाप्रसाद मंडेलिया अब इस लोकमें नहीं है। केन्द्रीय हरिजन सेवक संघके वे कोषाध्यक्ष थे। और जिस ध्येयको लेकर वे चल रहे थे, तथा जिसके प्रति उनका प्रेम अनुपमेय था, उसके वे कैसे अद्भुत संरक्षक थे! आजकल प्रायः जिस अर्थमें धनी शब्दका प्रयोग होता है वह वैसे धनी नहीं कहे

१. मार्गरेट स्पीगल।

२. यह अवधेशदत्त अवस्थीको लिखे पत्रपर ही एक ओर लिखा गया था। अवस्थी आश्रम छोड़ने वाले थे।

जा सकते थे। पर वे बिड़ला मिल्स, दिल्लीके सेक्रेटरी थे, और वहाँ उन्होंने जो-कुछ कमाया, जो-कुछ उनके पास था, वह सब वे दान कर गये हैं। अपने जीवनकालमें भी उन्होंने परोपकारी कार्योंमें दिल खोलकर पैसा दिया। वे एक जन्म-सिद्ध सुधारक थे। विधवाओंका उद्धार-काय उन्हें उतना ही प्रिय था जितना कि हरिजनों का, और अपनी वसीयतमें वे इन्हीं दोनोंके लिए अपना सर्वस्व दान कर गये हैं। उनके इस दानका व्यय-उनके मूल स्थान पिलानीमें किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-८-१९३५

४४२. वस्त्र-स्वावलम्बन

शहरवाले तो खादी-उत्पादनकी किसी भी क्रियामें हाथ लगाना नहीं चाहते या लगा नहीं सकते अतः उनके लिए बनाई जानेवाली खादीकी सफलताकी शर्तें एक प्रकारकी हैं जब कि वस्त्र-स्वावलम्बनके प्रयोगकी सिद्धिके लिए उससे भिन्न ही प्रकारकी परिस्थितियाँ अपेक्षित हैं। बेचने के लिए जो खादी बनाई जाती है उसमें कपास बोने और उसकी फलियाँ चुनने से लेकर सूत बुननेतक की प्रत्येक क्रिया अनेक आदमियोंके बीचमें आसानीसे बाँटी जा सकती है। खास करके जहाँ मजदूरी सबको करीब-करीब एक-सी दी जाती हो, वहाँ तो क्रियाओंका यह विभाजन और भी आसान हो जाता है। विभिन्न मनुष्योंको विभिन्न क्रियाओंमें किसीकी देख-रेखमें, और सहकारिताके आधारपर लगाया जाये तो परिणाम अधिक अच्छा आयेगा। लेकिन जहाँ कोई चीज अपने घरेलू उपयोगके लिए ही बनानी हो, वहाँ तो एक ही कुटुम्ब या एक ही व्यक्तिमें सारी क्रियाओंका केन्द्रीकरण जितना अधिक होगा समय और धनकी उतनी ही बचत होगी। किसी मनुष्यके पास यदि ऐसी थोड़ी-सी भी जमीन हो, जिसे वह कम ही सही पर पर्याप्त समयतक अपनी कह सके, और उसपर वह नित्य परिश्रम करे तो वह अथवा उसके कुटम्बके आदमी फुरसतके समय सिर्फ थोड़े हाथ-पैर चलाकर अपनी जरूरत-भरकी खादी बना सकते हैं। उसे केवल इतना ही बता देनेकी जरूरत है कि हरएक मनुष्य करीब-करीब मुफ्तमें ही अपनी जरूरत-भरकी खादी किस तरह बना सकता है। खादी-उत्पादनमें यदि मजदूरी देनी पड़े, और मजदूरीकी दर प्रति घंटेके हिसाबसे समान रखी गई हो, तब सबसे अधिक पैसा कताई-की क्रियापर बैठेगा। कारण यह है कि एक गज खादीके लिए सूत कातने में जितना समय लगता है वह कताईसे पहलेकी या बादकी किसी भी क्रियासे अधिक होता है। कोई मनुष्य अगर कपास खुद ही ओट ले, खुद ही धुन ले और खुद ही कात ले — और इतना तो वह आसानीसे कर सकता है — तो उसे खादी करीब-करीब उसी कीमतपर मिल जायेगी जिस कीमतपर मिलका कपड़ा। किसी पदार्थकी लागत उसके उत्पादनपर खर्च किये गये श्रमकी कीमतसे गिनी जाती है। इसलिए जब सारा श्रम स्वयं उपभोक्ताका ही हो और वह भी फुरसतके समय किया गया हो,

तब लागत लगभग कुछ भी नहीं होती। स्वावलम्बी खादी बिचौलियोंको बिलकुल उड़ा देती है। यह गाँवोंके करोड़ों अधभूखे लोगोंकी आमदनी प्रत्यक्ष रूपमें बढ़ानेका सबसे सरल उपाय है।

परन्तु क्या ग्रामवासी कभी स्वावलम्बी खादीको अपनायेगा? हाँ, यदि हममें श्रद्धा के साथ-साथ वैज्ञानिक कौशल हो या ऐसी सजीव श्रद्धा हो जो पहाड़ोंको हिला दे और हम मजदूरको उसके कामके लिए आवश्यक सारी कुशलता प्रदान करें। यह बेशक कठिन है। परन्तु कठिन हो या आसान, उसका अभीतक किसी बड़े या संगठित पैमानेपर अथवा किसी सुकल्पित योजनाके अनुसार प्रयत्न नहीं किया गया। जबतक कोई सुकल्पित, भारतव्यापी प्रयत्न गाँववालों को यह शिक्षा देने का न होगा कि वे अपना कपड़ा आप तैयार कर लें और इस तरह उनके देहात में जो थोड़ी-बहुत संपत्ति बाकी है उसका अनावश्यक रूपमें वहाँसे चला जाना रोका नहीं जायेगा, तबतक चरखा संघका अस्तित्व उचित नहीं माना जायेगा। कारण, जैसा मैं कुछ समयसे इस पत्रमें आग्रह कर रहा हूँ, खादीका सन्देश यही है कि स्थानीय उत्पादन और स्थानीय उपयोगके द्वारा वह देहातमें सर्वत्र काम आने लगे। प्रत्येक गाँवमें, उन गाँवोंमें भी जहाँ पहले कपास कभी नहीं बोई गई हो, कपासकी खेती कराकर कार्यारम्भ करना पड़ेगा। कपासकी खेतीके विकेन्द्रीकरणके बिना देहातमें खादीकी सार्वत्रिक उत्पत्ति सम्भव नहीं होगी। हमारे पास इसके प्रामाणिक उदाहरण हैं कि जमीनके विवेकपूर्ण सुधार और सँभालसे मरुस्थल भी लहलहाते उद्यान बन गये हैं। इसलिए प्रत्येक ग्राममें वहींके उपयोगके लिए काफी कपास उगा लेना असम्भव नहीं होना चाहिए। इससे खादी ग्रामवासियोंके लिए सस्ती ही नहीं हो जायेगी, परन्तु खादीका टिकाऊपन भी बढ़ जायेगा। अनुभवने अन्तिम रूपसे प्रमाणित कर दिया है कि सूतकी मजबूती और पैदावारपर काममें लाई जानेवाली रुईकी किस्मका और कपासको चुनने, साफ करने, ओटने, धुनने और कातने की पद्धतिका प्रभाव पड़ता है। जिस रुईसे ढाकाकी प्रसिद्ध मलमल तैयार हो सकी थी उसपर होनेवाली तमाम प्रक्रियाओंमें कोमलता रहनी चाहिए। तभी तो वह 'शबनम' में बदली जा सकती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-८-१९३५

४४३. उद्गार : शरीर-श्रमके विषयमें[1]

जो लोग शरीर-श्रम नही करते, उनसे तुम ईर्ष्या क्यो करते हो? दुनियामें हरएक आदमी अपने पसीनेकी ही कमाई खायेगा ऐसी कल्पना तो मैंने कभी नहीं की। मैंने तो एक स्वर्ण-नियम-भर बतला दिया है। उसपर चलने के लिए तुम खुद तैयार हो या नही? यदि हाँ, तो जिस मनुष्यमें इस नियमपर चलने की तैयारी या शक्ति नही है उसके प्रति तुम्हें द्वेष नहीं रखना चाहिए। मैं तो दूध और फल खाता हूँ उन्हें अगर शुद्ध शरीर-श्रम करके प्राप्त नही करता तो इसका यह अर्थ हुआ कि मै दयाका पात्र हूँ, इससे शरीर-श्रमके उक्त नियममें कोई न्यूनता नही आती। ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन थोड़े-से इने-गिने लोग ही करते होंगे पर इससे क्या उन्हें ब्रह्मचर्यका पालन न कर सकनेवाले करोड़ों मनुष्योके प्रति द्वेष करना चाहिए? वे तो द्वेषके नहीं, दयाके पात्र हैं। . . . मैंने तो जिस आदर्शतक हमें पहुँचना है वह बतलाया है। हरएक मनुष्य उसका यथाशक्ति पालन करे। अगर आपसे किसी भी तरहका शारीरिक श्रम नही हो सकता तो उसके लिए आप दुःख न करें। आप दूसरा जो शुद्ध धन्धा कर सकते हो वह करें, और इतना ध्यान रखें कि आपके लिए जो लोग पसीना बहाते है उनका आप शोषण न करें। आप यह मानते हैं कि डॉक्टरो आदिको शारीरिक श्रम करने के लिए फुरसत नही मिलती, तो उनके लिए आप चिन्ता न करें। ये लोग यदि शुद्ध सेवा-भावसे समाजकी सेवा करेंगे तो समाज इतना ध्यान तो रखेगा ही कि उन्हें भूखो न मरना पड़े।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-८-१९३५

४४४. पत्र : नारणदास गांधीको

३ अगस्त, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारे दोनो पत्रोंके उत्तरमें अभी तो मैं कुछ नहीं लिखना चाहता। मैं ये पत्र सम्बन्धित व्यक्तियोंको भेज रहा हूँ। फिलहाल तो मैंने वे सरदार और नरहरि को पढने को भेजे हैं, क्योंकि उन्हें भी वैसे ही पत्र मिले थे। इस मामलेमें उन्हें

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। अपने इस लेखमें गांधीजी के उक्त उद्गारोंको गूँथते हुए महादेव देसाईने प्रस्तावनाके रूपमें लिखा था: "गांधीजी जो कि बहुत ही सादीसे-सादी बातें कहते हैं वे भी कुछ लोगोंको पहेली-सी मालूम होती हैं। इनमें से एक है गांधीजी का शरीर-श्रमका आग्रह।" देखिए "श्रमयज्ञ", २९-६-१९३५ भी।

कुछ नहीं कहना है। जोशीकी पोशाकके बारेमें जो बात थी वह मैंने तुमसे पहले ही पूछ ली थी। उसका पत्र अभी मुझे नहीं मिला है। उसपर क्या आरोप था? यदि ऐसे सहायक शिक्षक शालामें खादी पहनकर आयें तो वह पर्याप्त माना जायेगा। उनसे अधिककी आशा नहीं की जानी चाहिए। यदि उनकी खादीपर श्रद्धा हो तो अच्छा होगा।

फिलहाल तो मेरा काम बहुत बढ़ गया है क्योंकि बुजुर्ग साथी इकट्ठे हुए है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४६७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४४५. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

३ अगस्त, १९३५

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारे इतने गहरे पानीमें जाना नहीं। जितना हो सके इतना करो। खोटा रुपैया तो महादोष था। दूसरेमें भी निर्बलता तो थी ही। निर्बल तो हम सब हैं। भगवान हमको बचाये रखे। यहां आजकल तो काफी ठंडक है। बारीस बंध होनेसे गरमी होगी ही। मेरा कुछ अभिप्राय है कि तुमारे आलमोड़े-जैसे स्थानमें स्थिर होना होगा। वहां भी सेवाक्षेत्र तो काफी है। यहां कुशल।

बापुके आशीर्वाद

श्री ब्रजकृष्ण चाँदीवाला
कटरा खुशालराय
दिल्ली

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३७) से।

४४६. पत्र : जमनालाल बजाजको

वर्धा
३ अगस्त, १९३५

चि० जमनालाल,

तुम थैलीके लिए द्रव्य एकत्र करने इंदौर जा रहे हो। इस सिलसिलेमें तुमने मुझसे तीन बातें जानना चाही है — (१) यह रुपया किस प्रकार खर्च किया जायगा, (२) कोई अंकित दान इसमें लिया जाय या नहीं? और (३) इसके खर्चके लिए कोई ट्रस्ट या कमिटी आप बनाना चाहते है या क्या व्यवस्था सोची है?

इनके सम्बन्धमें मेरा खुलासा यह है कि मेरी मांग मुख्यतः दक्षिण भारतमें हिन्दी-प्रचारके लिए है, किन्तु आवश्यकता देखकर दूसरे प्रान्तोंमें भी जैसे बंगाल, आसाम, सिन्ध, गुजरात, पंजाब आदि जहाँ हिन्दी भाषाका प्रचार या प्रवेश नही है मैं इस रकमको लगाना चाहता हूं। इनमें से किसी प्रान्तके कार्यके लिए अथवा इस कार्यके लिए आवश्यक प्रचारक तैयार करने कें लिए कोई दाता अंकित रकम देंगे तो थैलीके लिए उसे स्वीकारने में कोई आपत्ति न होनी चाहिए।

अब रही बात ट्रस्ट या कमिटी की। सो सब रुपया मिल जानेपर ट्रस्ट या कमिटी बनाकर अथवा किसी रजिस्टर्ड संस्थाके द्वारा मेरी देख-रेखमें रुपया खर्च करने का मेरा इरादा है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७४)से।

४४७. पत्र : सत्यदेवको

३ अगस्त, १९३५

भाई सत्यदेव,

आप तो नया संप्रदाय चला रहे हैं। उसमें मेरी चोच नही डूबेगी। इसलिए मैं आपको यहां आनेका कष्ट क्यों दू? आप लाहौरसे अवश्य बोध करते रहिये।

मैंने आपका अगला पत्र ठीक सुन लिया था। उसके बाद ही उत्तर दिया था। 'विशाल भारत' में अश्लील बातें मैंने नही पाई हैं। मैंने उसको सच्चा आदमी पाया है। उनके सब विचारोंसे मैं सहमत नही हूं। लेकिन यह कोई दोषकी बात नही है। आपके सिवाय और किसीकी तरफसे मैंने उनके बारेमें शिकायत नही सुनी है। आप उनको मानते हैं।

मेरे इर्द-गिर्दमें रहनेवालों में से किनको आपने सच्चे और ईमानदार नही पाये? आप सचोट प्रमाण दें तो उनका त्याग करूंगा। शायद महादेवको छोडकर औरोको तो आप जानते भी नही होंगे।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४४८. पत्र : ईश्वरदासको

३ अगस्त, १९३५

भाई ईश्वरदास,

तुम्हारा दोनों खत मिले हैं। मैं देखता हूं तुमको प्रश्न पूछने का व्याधि है। इसलिए मैं उत्तर नहिं दुंगा। जो-कुछ 'हरिजन' और 'हरिजनसेवक' से मिले उससे संतुष्ट रहो। और यथाशक्ति उसमें से जो पसन्द आवे उसका पालन करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४४९. पत्र : वालजी गो० देसाईको

वर्धा
४ अगस्त, १९३५

चि० वालजी,

बंगालकी खादी-विषयक तुम्हारा लेख मैंने अस्वीकार कर दिया है। मुझे कुछ ऐसा खयाल है कि मैंने इस सम्बन्धमें तुम्हें लिखा है। गायका दूध बढ़ाने के सुझावके बारेमें मैं देखूँगा। ग्रामोद्योग संघका पैसा आदि बैंकमें रहे इसमें फिलहाल मुझे कोई बुराई नजर नही आती।

लोगोको जीवाणुविहीन बनाने के बारेमे मैं कोई पक्की राय नहीं दे सकता। मेरा रुख उसके विरुद्ध है। अपने पापोंका फल भोगने के सिवा और कोई चारा नही है। ऐसा जबरदस्ती किया जाये तो उसमें बहुत अनर्थ बढ़ने और अत्याचार होनेका भय है। अपविकासका सिद्धान्त मुझे तो निराधार लगता है।

गोविन्दलालने गोविन्दनगरके बारेमें मुझे लिखा था। वह मामला ऐसा नही है जिसमें हम हाथ डालें। भले वह नगरपालिकाके पास जाये।

तुम्हें कौन-सी पुस्तकें चाहिए? यदि मुझे उनकी सूची भेज दो तो मैं उन्हें मँगवानेकी व्यवस्था करूँगा। किन्तु मैं तुम्हें आँखोंको दाँवपर लगाकर रतजगा नही करने दूँगा। आशा है, तुम सब कुशलपूर्वक होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४७३)से; सौजन्य : वालजी गो० देसाई

४५०. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

४ अगस्त, १९३५

भाई घनश्यामदास,

तुमारा खत मिला है। अगले भी सब मिले है। मेरे खतमें ऐसा भाव तो नही था कि तुमारे केस रजु करनेमें कुछ भी गलती थी। जहातक मुझे स्मरण है मेरे कहनेका मतलब यह था कि तुम तो सब-कुछ ठीक ही कर सके लेकिन मुझे डर रहा है कि समझौताके अर्थ करनेमें अनेक दिक्कत पैदा होनेवाली है। लेकिन मै निश्चिन्त हू। जो होनेका है सो होगा ही। हम अपने कर्त्तव्यका निडरतासे पालन करें। तुमारा काम हो जानेसे अवश्य आ जाना। वहा बेकार बैठना भी अच्छा नही लगेगा। हां, शरीर अच्छा करनेके लिये रहना उचित लगे तो अवश्य रहना।

हरिजन संघकी सब बातें तो मिला करती होगी।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०१३ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिडला

४५१. पत्र : लक्ष्मीनिवास बिड़लाको

४ अगस्त, १९३५

चि० लक्ष्मीनिवास,

तुमारा खत मिला है। अगले सब खत मिले थे। पिताजीके लिये खत तो भेजता हूं। अगर वे निकल चुके है तो मुझे लिखो अथवा तार दो।

सब कुशल होंगे।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०१८ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

४५२. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

४ अगस्त, १९३५

भाई मूलचद,

तुमारे दोनों खत मिले है।

बहिष्कार मिटानेका इलाज बहिष्कारका दुःख ही नही मानना।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५७) से।

४५३. सन्देश : 'हंस' को

वर्धा
५ अगस्त, १९३५

'हंस' हिन्दुस्तान-भरमें अनोखा प्रयत्न है। यदि हिन्दी अथवा हिन्दुस्तानीको राष्ट्रभाषा बनना है तो ऐसे मासिककी अत्यावश्यकता है। प्रत्येक प्रान्तकी भाषामें ये लेख लिखे जाते हैं उसका परिचय राष्ट्रभाषा द्वारा सबको मिलना चाहिये। बहुत खुशीकी बात है कि अब ऐसा परिचय दिल चाहे उनको 'हंस' द्वारा प्रतिमास आधा रुपयेमें मिल सकेगा।

मो० क० गांधी

सी० डब्ल्यू० ७५८२ से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

४५४. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

५ अगस्त, १९३५

चि० अमला,

तुम अकारण ही सन्देहशील हो रही हो। और अब तो पाँच शिष्योंकी[1] दादी बन जानेपर तुम महादेवकी, मेरी और अपने सभी स्नेहियोंकी उपेक्षा कर ही सकती हो। मैंने सतीशबाबूसे कह दिया है कि तुमको तुरन्त पूनियाँ भेज दें। मुझे आशा है कि अबतक वे तुमको मिल भी गई होंगी। मुझे इस बातकी खुशी है कि अब तुमको अपना जीवन ठीकसे जमता दिख रहा है।

स्नेह।

बापू

श्री अमलाबहन स्पीगल
शान्तिनिकेतन, बरास्ता बोलपुर

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४५५. पत्र : क० मा० मुंशीको

५ अगस्त, १९३५

भाई मुंशी,

पत्रक तो तुमने बहुत आकर्षक निकाला है। तुम भला साज-सज्जामें कोई कसर क्यों रखने लगे। यदि पत्रककी तरह आकर्षक लेख भी हमें मिलते रहें तो फिर और क्या चाहिए।

अपना सन्देश[1] इसके साथ भेज रहा हूँ। इसका 'ब्लॉक' बनवाने का लोभ मत करना।

लेख-सम्बन्धी तुम्हारी माँग पूरी करना शायद मेरे लिए मुश्किल हो। यदि समय मिला तो कुछ लिख डालूँगा। क्या तुम कुछ सुझा सकोगे?

पहलेसे ही पर्याप्त ग्राहक बना लेनेका ध्यान रखना।

टंडनजी से थोड़ी बातें हुई थी और सो भी अनायास ही। मुझे उनसे कुछ विशेष नहीं कहना था। मेरे कहने का तात्पर्य यही था कि उन्हें सूचित करते रहना आवश्यक था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७५८१) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

४५६. पत्र : ना० र० मलकानीको

वर्धा

६ अगस्त, १९३५

प्रिय मलकानी,

जहाँतक हरिजी[2] की बात है, अन्त भला सो सब भला। उन्होंने विकेन्द्रीकरणका सुझाव दिया है। मुझे कार्यकारिणीकी सदस्य-सूची भेज दो और लिखो कि किन-किनके आनेकी सम्भावना है। हरिजी यदि मण्डलके सदस्य न हों तो उनको आमन्त्रणपत्र भेज देना।[3]

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१६) से।

१. देखिए "सन्देश : 'हंस' को", ५-८-१९३५।

२. हृदयनाथ कुँजरू।

३. हरिजन सेवक संघ बोर्ड।

४५७. पत्र : शिवप्रसाद गुप्तको

[६ अगस्त, १९३५][1]

प्रिय शिवप्रसाद,

तुम्हारा पत्र मिला। अपनी बीमारीमें भी तुम अपने देशको नहीं भूले। कांग्रेस से मेरे अलग होनेके बाद कार्य-समितिकी बैठक पहली बार यहाँ हुई। यहाँ हो या कहीं और, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। तुमने पूछा है कि कांग्रेससे अपनेको अलग कर लेनेके बाद भी मैं उसमें इतनी रुचि क्यों लेता हूँ और मैं उसको सलाह-मशविरा और अपनी राय क्यों देता रहा हूँ। मेरा खयाल है कि तुमको मालूम ही होगा कि मैंने कांग्रेससे अपने-आपको अलग करते समय ही कह दिया था कि यदि मुझसे किसी विषयमें पूछा जायेगा तो मैं अपनी राय अवश्य दूँगा। कांग्रेसका नियन्त्रण करना एक बात है और कांग्रेसजनोंको राय देना बिलकुल ही दूसरी बात। कांग्रेस कमेटीकी बैठकें यहीं हुई थी, पर मैं उनमें कभी शरीक नहीं हुआ। उसकी सारी कार्रवाईके बारेमें मुझे अबतक बिलकुल कोई जानकारी नहीं है। जब भी सदस्य लोग मुझसे सलाह करना या मेरी राय लेना चाहते थे तो वे मेरे आवासपर आ जाते थे और मैं बड़ी खुशीसे उनको अपनी सलाह दे देता था। ऐसा न करने का मुझे कोई कारण नहीं दिखाई पड़ता। मैं कांग्रेसके हितके लिए ही उससे बाहर आ गया हूँ। मैं कांग्रेसके आदर्शोंको तो नहीं त्याग सकता। इसलिए यदि मैं जान-बूझकर उसको अपनी सलाह देनेसे इन्कार कर दूँ, तो अपने धर्मसे च्युत हो जाऊँगा।

अब परिषद्-प्रवेशकी बात लें। मैं समझता हूँ कि इस समय परिषदोंमें प्रवेश करना धर्म है, हालाँकि वह मेरा धर्म नहीं है, क्योंकि मैंने अपना जीवन किसी और ध्येयके लिए अर्पित कर दिया है। इन दिनों कानूनकी अहिंसात्मक अवज्ञा ही मेरी साधना है। मेरे इस ध्येयकी पूर्तिमें परिषद्-प्रवेश बाधा सिद्ध होगी। तुम जानते ही हो कि एक व्यक्तिका भोजन दूसरेके लिए विष हो सकता है।

आशा है, मैंने तुम्हारे सभी प्रश्नोंके उत्तर दे दिये हैं और ये तुमको सन्तुष्ट कर सकेंगे।

परिषद्-प्रवेशकी समस्या मुझपर छोड़ दो और तुम खुद ग्रामोद्योग तथा हिन्दी-प्रचारके काममें पूरी तरहसे जुटे रहो। इनमें तन-मनसे जुट जानेपर तुमको अन्य

१. शिवप्रसाद गुप्त के उत्तरसे जो मूल पत्र के साथ ही प्रकाशित हुआ था।

समस्याओंके बारेमें सोचने का समय ही नहीं मिलेगा। ईश्वर तुमको शीघ्र ही पूर्ण स्वास्थ्य लाभ दे।[1]

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, ६-९-१९३५

४५८. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

वर्धा
७ अगस्त, १९३५

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र कमालका है। किसीको भी विश्वास नहीं था कि तुम अपना सिर घुटाने जा रही हो और यदि तुम घुटा चुकी होगी तो अब फिरसे केश जमने लगे होंगे। आशा है कि नाती-पोते[2] भले-चंगे होंगे।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. हिन्दू, ३०-८-१९३५ के अनुसार श्री गुप्तने उत्तरमें लिखा था: "मेरे मनमें तो यह बात एक क्षणके लिए भी नहीं जम पाती कि आप परिषद्-प्रवेशकी हिमायत कैसे कर सकते हैं, जब कि परिषदोंमें प्रत्येकको सम्राट्के प्रति वफादारीकी शपथ लेनी पड़ती है और पता नहीं आप कांग्रेसके लाहौर तथा कराची-अधिवेशनों द्वारा स्वीकृत प्रस्तावों की-इसके साथ कैसे पटरी बैठाते हैं।"

गांधीजी के सचिव, श्री महादेव देसाईने पत्रकी प्राप्ति-स्वीकृति देते हुए लिखा था: "आपका पत्र बापूजी को मिल गया। जहाँतक शपथवाली बात है, बापूजी का कहना है कि परिषद्-प्रवेशका निर्णय अपने देशकी वर्तमान स्थितिको देखते हुए किया गया था और जो लोग शपथ लेंगे, उनका सरकारके खिलाफ कोई काम करना ठीक नहीं होगा। स्वराज्य-प्राप्तिके संघर्षका यह भी एक दौर है और वह इस दौरको अत्यावश्यक मानते हैं।"

२. उनके शिष्य; देखिए "पत्र : मार्गरेट स्पीगलको", ५-८-१९३५।

४५९. पत्र : जी० ए० गवईको[1]

[८ अगस्त, १९३५ के पूर्व][2]

प्रिय गवई,

आप मेरे पास जो एक दिलचस्प दस्तावेज छोड़ गये थे उसे मैं पढ़ गया हूँ। मेरी राय है :

सभी नियमोंकी व्याख्या इस ढंगसे की जानी चाहिए कि उससे उनके उद्देश्यको आगे बढ़ानेमें सहायता मिले। इस मामलेमें उद्देश्य है—हरिजनोंका हित। इसलिए चारका चुनाव अनिवार्य तो नही है, परन्तु यदि चारसे अधिक उम्मीदवार हो तो निर्वाचक-मण्डलको चारका चुनाव करना ही पड़ेगा। नाम तो निश्चय ही हर अवस्था में वापस लिये जा सकते हैं। हरिजनोंमें से खड़े होनेवाले प्रत्येक उम्मीदवारको आम निर्वाचन-मण्डलसे खड़े होनेका भी अधिकार है। यदि पृथक् निर्वाचक-मण्डल रखने में बड़ा झमेला-सा महसूस हो, तो हरिजन लोग जब भी चाहें लगभग सर्वसम्मतिसे अपने इस विशेषाधिकारको त्याग सकते हैं। समझौतेमें ही ऐसी व्यवस्था कर दी गई है।

कहने की जरूरत नही कि मेरी राय किसी भी तरहसे विधि-विशेषज्ञकी राय नहीं मानी जा सकती। यह तो एक ऐसे व्यक्तिकी राय है जिसने समझौता सम्पन्न कराने में हाथ बँटाया था।

मो० क० गां०

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई। बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-८-१९३५ से भी

१. बॉम्बे क्रॉनिकलके अनुसार (दलित वर्गोंकी ओरसे) विधान-परिषद्के सदस्य जी० ए० गवईने वर्धामें गांधीजी के साथ अपनी एक भेंटके दौरान "पूना-समझौतेकी अपनी व्याख्या और प्राथमिक निर्वाचनके प्रश्नके सम्बन्धमें मध्य प्रान्त परिसीमन समितिके सदस्यों द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण उनको समझाया था।"

२. महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीमें इस पत्रको अगले शीर्षक ("पत्र : एक विद्यार्थीको", ८-८-१९३५) के पहले स्थान दिया गया है।

४६०. पत्र : एक विद्यार्थीको[1]

८ अगस्त, १९३५

मैदान छोड़कर भागना अगर शर्मनाक है, तो व्यक्ति शरीरसे कितना ही कमजोर क्यों न हो, वह अपने स्थानपर डटा रहेगा और वही जान दे देगा। यही अहिंसा और वीरता होगी। वह चाहे कितना ही दुर्बल क्यो न हो, वह अपनी समूची शक्तिसे अपने विरोधीपर चोट करेगा और इस कोशिशमें काम आ जायेगा। यह वीरता तो है, पर अहिंसा नहीं। खतरेका सामना करना जब उसका कर्त्तव्य हो, तब पीठ दिखाना कायरता होगी। पहलेवाली स्थितिमें तो व्यक्तिके हृदयमें प्रेम या कल्याणकी भावना होगी। और दूसरी तथा तीसरी स्थितियोंमें व्यक्तिके मनमें घृणा या अविश्वास तथा भय ही रहेगा।

आपका,
मो० क० गां०

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई। हरिजन, १७-८-१९३५ से भी

४६१. पत्र : वसुमती पण्डितको

वर्धा
८ अगस्त, १९३५

चि० वसुमती,

तेरे दोनों पत्र मिल गये। यह प्रसन्नताकी बात है कि तेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है। अब तू जो-जो काम कर सके वे किया कर। गगावहनसे कहना कि

१. महादेव देसाईने अपने "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) में विवरण दिया था:
"हरिजनके नियमित पाठक एक विद्यार्थीने गांधीजी से पूछा था कि उसका अपना आचरण यहाँ बताई गई परिस्थितिमें कायरतापूर्ण माना जायेगा या सहज माना जायेगा। उसमें परिस्थितिका वर्णन इस प्रकार किया था: "शरीरसे मैं बड़ा दुर्बल हूँ, और मैं जब भी लम्बे-तगड़े, अकड़-भरे बदमाशोंको देखता हूँ तो सहज ही उनसे कतरा जाता हूँ' जिसके सामने हम कभी ठहर ही नहीं सकते, उस दैत्यके सामने पड़नेसे बचना कायरतापूर्ण क्यों समझा जाये? बिल्लीके सामने पड़ने से भागनेवाले चूहेको क्या कायर कहा जायेगा?"

उसका पत्र मिल गया है। उसमें ऐसी कोई विशेष बात नहीं है जिसका उत्तर देना आवश्यक हो। वह मुझे जब-तब लिखती रहे और जब कुछ पूछना आवश्यक हो तो पूछ लिया करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४०५) से। सी० डब्ल्यू० ६५१ से भी; सौजन्य: वसुमती पण्डित

४६२. पत्र : नारणदास गांधीको

८ अगस्त, १९३५

चि० नारणदास,

मैथ्यू जिस पत्रकी बात लिखता है वह मुझे नहीं मिला। उसकी माँग हमारे सिद्धान्तके विरुद्ध है। काफी चेतावनी देनेके बावजूद वह माँग करता है। फिलहाल तो हम उसके माता-पिताके लिए कुछ भेजनेमें असमर्थ हैं, और न उसे अभी मेरे पास आना चाहिए। जबतक खाने-पीनेका खर्च-भर लेकर रह सके तबतक वह अपनेको स्थायी मान सकता है। जब उसपर हम पूरी तरह विश्वास करने लगेंगे तो उसकी योग्यतानुसार माता-पिताके लिए भी हम कुछ दे सकेंगे। किन्तु यह अभी बहुत दूर की बात है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८६ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

४६३. एक पत्र[1]

८ अगस्त, १९३५

तुम्हारे पास ऐसा कौन-सा विशेष सन्देश है जिसके कारण अखबार निकाल रही हो? यों तो आजकल अखबार निकालना एक पेशा बन गया है। क्या तुम्हारे पास इससे बेहतर कोई और पेशा नहीं रहा? इसे छोड़ो।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई

१. यह एक महिलाके पत्रके उत्तरमें लिखा गया था। यह पत्र १७-८-१९३५ के हरिजनमें भी छपा था।

४६४. पत्र : लीलावती आसरको[1]

९ अगस्त, १९३५

१. 'व्हैन' वाला उपवाक्य [मुख्य उपवाक्यके] पहले आ सकता है और बादमें भी। 'व्हैन' का प्रयोग सभी कालोंमें किया जाता है, जैसा कि गुजरातीमें किया जाता है; जैसे "व्हैन यू कम, वी शैल प्ले"।

२. "बिफोर यू कम, आई शैल हैव गान"। 'बिफोर' पहले। "सिन्स यू हैव कम, वी हैव बीन आल वेल"। तुम आये हो तबसे . . .'सिन्स'–तबसे या क्योंकि। स्वतन्त्र वाक्य बनानेमें 'एगो' का प्रयोग नहीं किया जाता। 'लांग एगो' बहुत समय पहले, 'इयर्स एगो'–बरसों पहले; इस तरह, 'एगो' का प्रयोग काल सूचित करने के लिए किया जाता है।

३. 'लार्ज' का प्रयोग निर्जीव पदार्थोंके लिए ही किया जाता है; 'ए लार्ज वैसल'–बड़ा बर्तन; किन्तु 'ए बिग बॉय'।

'बिग' का प्रयोग दोनो स्थितियोमे किया जा सकता है। 'स्माल' और 'लिटिल' के प्रयोगके बारेमें भी. यही नियम लागू होता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२५४) से। सी० डब्ल्यू० १०१०३ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१. लीलावती आसरने लिखा था: (१) "पाठमालाका यह चौदहवाँ पाठ पूरा हो गया अब पन्द्रहवाँ शुरू करना है। यह अपूर्ण भूतकालके बारेमें है। उससे मैं एक उदाहरण दे रही हूँ: "व्हैन आई केम यस्टर्डे यू वर राइटिंग"। यहाँ 'व्हैन' वाला वाक्य पहले आया है। दूसरा वाक्य नीचे लिखे अनुसार है: "वी वर कमिंग टु स्कूल व्हैन द बैल रैंग"। अब पहले वाक्यमें 'व्हैन' पहले आया है और दूसरे वाक्यमें बादमें है। क्या इन दोनों प्रयोगोंमें कोई अन्तर है? क्या इस सम्बन्धमें कोई नियम है कि 'व्हैन' पहले कब आता है और बादमें कब? क्या 'व्हैन' का प्रयोग सदा भूतकालमें ही किया जाता है? (२) एक बात और। मैं 'सिन्स' का सही प्रयोग नहीं जानती। 'सिन्स', 'बिफोर' और 'एगो' इन तीनोंमें क्या अन्तर है? (३) 'लार्ज' और 'बिग' ये दोनों क्या समानार्थक शब्द हैं? क्या इन दोनोंका एक ही स्थानपर प्रयोग किया जा सकता है? इसी प्रकार 'स्माल' और 'लिटिल' के बारेमें भी बतायें।

४६५. पत्र : लीलावती आसरको

९ अगस्त, १९३५

चि० लीलावती,

तुझे अपनी लिखावट और अधिक सुधारनी चाहिए। तू नियमका पालन नहीं करती यह उचित नहीं है।

तूने अपना खर्च कम करके अच्छा ही किया। धीरजसे सब-कुछ अवश्य ठीक हो जायेगा। अपना खर्च इतना कम मत कर देना कि भविष्यमें निर्वाह न कर सके। जो-कुछ करे, सोच-समझकर करना।

तेरे हल किये हुए पाठोंमें मैं जो सुधार करता हूँ यदि वे समझमें न आयें तो पुनः पूछ लेना। यदि तू एक ही तरहका और एक ही आकारका कागज काममें लाये और सुधारोंके लिए जगह रखे तो उन पाठोंको सँभालकर रखने में सुविधा होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१०३) से; सौजन्य: लीलावती आसर

४६६. पत्र : नारणदास गांधीको

वर्धा
९ अगस्त, १९३५

चि० नारणदास,

कल मैंने तुम्हें बहुत उतावलीमें पत्र[1] घसीट मारा था। साथमें लीलावती और मैथ्यूके लिए पत्र हैं। मैथ्यूका पत्र ध्यानसे पढकर उसे दे देना। तुम भी उससे दृढ़तापूर्वक बात करना। यदि वह तुम्हें परेशान करे तो उसे छुट्टी दे देना। यदि वह ध्यानसे और मन लगाकर पढ़ाये तथा किसी तरहका शारीरिक काम करे तभी उसे रखना। वह खाने-पीनेकी क्या व्यवस्था करता है?

क्या हरिलालका किराया तुमने चुकाया? जूनागढ़में शराब क्यों नहीं मिलेगी? वह कोई भी काम ढंगसे सीधा रहकर नहीं करेगा। हाँ, इतना अवश्य है कि इससे तुम्हें वहाँ कम परेशानी होगी बशर्ते कि वह लौट न आये।

राधा और सन्तोकके बारेमें समझ गया। प्यारेलालके बारेमें तुम्हारा सुझाव ठीक है। वह दे देनेमें ही हमारा निस्तार है।

१. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", ८-८-१९३५

वजुभाईका एक अन्य पत्र साथमें है। इसमें कुछ विशेष नहीं था इसलिए मैंने तुम्हें नहीं भेजा था। उसे शालाका काम-काज नहीं सौंपना चाहिए। शालाको तो तुम्हें ही गढ़ना है। मैं अभीतक उसे तुम्हारा पत्र ही नहीं भेज पाया हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

४६७. चर्चा : खादी-उत्पादनके पुनर्गठनके सम्बन्धमें[1]

[१० अगस्त, १९३५ के पूर्व]

प्रश्न : बिहारमें आज करीब पाँच हजार स्त्रियाँ चार-चार, छह-छह पैसेके लिए भी दस-दस मीलसे हमारे खादी-केन्द्रोंमें आती हैं। खादी हम अधिक खपा सकें तो और भी अधिक स्त्रियाँ सूत कात-कातकर लायेंगी। खादीकी खपत आज अगर बन्द हो जाये तो बेचारी उन गरीब स्त्रियोंकी क्या दशा होगी?

गांधीजी : बात बिलकुल सही है। बंगाल और दक्षिण भारतके गाँवोंमें भी ऐसी ही स्थिति है, यह मैं जानता हूँ। पर मैं आपकी बातको उलटे ढंगसे रखता हूँ। फर्ज कीजिए कि आप आज कत्तिनोंको प्रति घंटा दो पाई देते हैं। दो पाईकी जगह अगर आप मजदूरीमें एक पाई देने लगें तो आप पाँच हजार नहीं बल्कि दस हजार स्त्रियों को काम दे सकेंगे। और मान लीजिए कि उन असहाय स्त्रियोंने आपकी दी हुई एक पाई भी लेना स्वीकार कर लिया तो क्या उन्हें एक पाई देनेका आप साहस कर सकेंगे? मैं कहता हूँ कि आपकी हिम्मत कभी नहीं पड़ेगी। इसका मतलब यह हुआ कि आपको ऐसी एक सीमा तो निश्चित करनी ही पड़ेगी कि जिससे नीचे फिर आप जा ही नहीं सकते। आप चाहें तो उसे 'लाचारीकी सीमारेखा' कहें। पर उस सीमाको अगर निश्चित करना ही है, तो क्यों न उसे एक बार स्थायी रूपसे निश्चित कर दें? भले ही उसके कारण खादी-उत्पादनमें लगे हुए कुछ लोगोंको फिलहाल नुकसान ही क्यों न होता हो। जहाँ खरीदारोंकी संख्या मर्यादित है, और उत्पादकोंकी संख्या अमर्यादित, वहाँ आपको कुछ उत्पादक तो कम करने ही पड़ेंगे। तो फिर विचारपूर्वक कमसे-कम मजदूरीकी ऐसी एक राशि क्यों न निश्चित कर दी जाये कि जिससे इन गरीब कत्तिनोंको पेट भरने लायक तो पैसा मिलने लगे? नहीं तो हम आज अनजानमें उनका जो शोषण कर रहे हैं, उसका कभी अन्त नहीं आनेका।

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। पत्रमें महादेव देसाई सूचित करते हैं कि जबसे गांधीजी ने "मानक मजदूरीकी आवश्यकता", १३-७-१९३५ पर लेख लिखा तबसे यह प्रश्न सर्वत्र चर्चाका मुख्य विषय बन गया था। उस दिन कांग्रेस कार्य-समितिके राजेन्द्रप्रसाद, वल्लभभाई पटेल, जयरामदास दौलतराम, जमनालाल बजाज, पट्टाभि सीतारमय्या, गंगाधरराव देशपाण्डे, जे० बी० कृपलानी आदि सदस्य जब गांधीजी के समक्ष उपस्थित हुए तो इस विषयपर स्वभावतः चर्चा छिड़ गई।

कागज तैयार करनेवाला एक भाई हमें एक जगहसे कागज भेजा करता है। वह अपने मजदूरोंको डेढ़ आना रोज देता है। उसे आशा है कि अभी और भी सस्ता कागज बन सकता है। मैंने उसे लिख दिया है कि मुझे तो तुम्हारा ऐसा सस्ता कागज नहीं चाहिए।

तो अब आप खादीकी परिभाषा बदल देंगे? 'हाथका कता और बुना हुआ कपड़ा' इस व्याख्यासे अब काम नहीं चलने का। अब तो खादी उस कपड़ेको कहना चाहिए जो हाथका कता और बुना हो, और जिसकी कताई-बुनाईकी मजदूरी अमुक दरसे दी गई हो।

इसमें तो कोई शंका ही नहीं। दुःखकी बात यह है कि इस चीजका आपको इतनी देरीसे पता लगा।

पर कताई तो एक पूरक धन्धा है। आप इतने बरसोंसे संसारको यही सन्देश देते आये हैं। कतैया अपने फुरसतके समयमें ही कातता है।

इसका जवाब 'हाँ' और 'नहीं' दोनों ही है। मुझे यह मालूम है कि हजारों स्त्रियाँ ऐसी हैं जो सारे दिन कातती हैं। कातना उनका सहायक धन्धा नहीं, किन्तु मुख्य धन्धा है। और मान लीजिए कि उनका वह मुख्य धन्धा नहीं है; तब भी दूसरा कोई भी काम एक घंटा करने की आप जितनी मजदूरी देते है उतनी मजदूरी सूत कातनेवाली स्त्रियोको क्यो न दें?

आपको शायद यह पता न होगा कि गुंटूर जिलेमें कितनी ही जगह लोग कताईका काम छोड़कर चावल कूटनेका काम करने लगे हैं, क्योंकि उसमें उन्हें ज्यादा मजदूरी मिलती है।

मुझे मालूम है। पर आपने जो यह कहा है उससे तो मेरी ही बातकी पुष्टि होती है। लोग तो वह काम पसन्द करेंगे ही जिसमें उन्हें ज्यादा पैसा मिलेगा। तब कताईके कामके लिए भी दूसरे कामोंके जितनी ही मजदूरी देकर क्यों न हम उसे एक प्रतिष्ठित धन्धा बना दें?

इसे अमलमें लाना बहुत ही मुश्किल है। न जाने कितनी कठिनाइयाँ आयेंगी। कत्तिनें कभी हमारी शर्तें माननेवाली नहीं। आप उनका बाकायदा रजिस्टर रखनेके लिए कहते हैं। आप उनसे अमुक नम्बरका, अमुक समानताका और अमुक ही मज-बूतीका सूत कतवाना चाहते हैं। यह सब कैसे हो सकेगा?

इन कठिनाइयोको तो पार करना ही होगा। यह क्या मैं नहीं जानता कि अभी बहुत समयतक तो हमे अनेक तरहकी शिकायते सुननी पडेगी? कुछ लोग यह कहेंगे कि अपने कपड़े लायक सूत खुद ही कात लेनेकी बात हम कत्तिनोंके गले नही उतार सकते, तो कुछ यह कहते आयेंगे कि जितना हमें चाहिए उतना सूत कातकर कत्तिनें हमें देतीं ही नही।

पर मान लीजिए कि वे हमारे नियम स्वीकार कर लें, और जिन चरखों और तकुओंसे वे काम चलाते हैं उनसे बढ़िया चरखे और तकुए उन्हें हम दे दें, तो यह

स्पष्ट है कि वे अधिक सूत कातेंगे और जितना पैसा उन्हें आज मिलता है उससे दूना या दूनेसे भी ज्यादा पैसा वे सहजमें कमा लेंगे।

सो तो वे सहजमें ही कर लेंगे — आपकी किसी खूबीके कारण नहीं। अधिक उत्पादनका मतलब अधिक कमाई है, यह तो स्पष्ट ही है। लेकिन हमने उन्हें जिस न्यायसे वंचित रखा है उनके साथ वह न्याय करनेकी दृष्टिसे हम क्या करने जा रहे हैं?

हमें यह विचार ही अपने दिलसे निकाल देना चाहिए कि खादीको मिलके कपड़ेके साथ प्रतिस्पर्धा करनी है। मिलका कपडा मिलका कपडा है, और खादी खादी है। मिलका कपडा पैदा करनेवालेको तो यही धुन सवार रहा करती है कि कपडा सस्तेसे-सस्ता कैसे तैयार किया जाये। हमें यह धुन रहनी चाहिए कि खादी-उत्पादकके साथ न्याय किस तरह हो और उसे यथोचित मजदूरी किस तरह मिले। इन दोनोका मुकाबला हो ही नहीं सकता। आप कहते है कि इस सलाहको अमलमें लानेमें कठिनाई पड़ेगी, तो मेरा यह कहना है कि अपने कर्मचारी कम कर दें, विज्ञापन देना बन्द कर दें, और प्राइवेट व्यापारके लिए खादी-उत्पादकको आप जो प्रोत्साहन देते है वह न दें। जिन लोगोंने केवल खादी ही पहननेकी दृढ प्रतिज्ञा कर ली है, उनकी इसमें परीक्षा हो जायेगी। वे या तो खादी खुद अपने हाथसे बना लें या जो कारीगर खादी तैयार करते है उन्हें पेट भरने लायक मजदूरीका पैसा दें। यह खादीधारियोंकी आत्मशुद्धिका प्रश्न है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारा ध्येय दरिद्रनारायणकी सेवा है। कठिनाइयाँ तो आयेंगी ही, उन्हें हम धीरे-धीरे हल कर सकते है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-८-१९३५

४६८. बम्बईका खादी-भण्डार

बम्बईका खादी-भण्डार चरखा संघका सबसे बड़ा खादी-भण्डार है। यह किसी एक व्यक्तिकी सम्पत्ति नहीं है। वह तो चरखा संघकी सम्पत्ति है और चरखा संघ दरिद्रनारायणका ट्रस्टी है। अत. दरिद्रनारायणका हितसाधन ही उसका मुख्य कर्तव्य है। यद्यपि मध्यम वर्गके कुछ लोगोको एक प्रतिष्ठित काम दिलानेमें वह साधनरूप रहा है तथापि उसे उन्हें नौकरी दिलानेवाला महकमा नहीं समझना चाहिए। चूंकि खादीके सम्बन्धमें अब नयी नीति अपनाई जा रही है, इसलिए नयी नीतिकी आव-

१. महादेव देसाईने अपने लेखमें इस चर्चाका उपसंहार करते हुए लिखा है: "सबकी साधारणतया इस एक बातपर सहमति थी कि जहाँ-जहाँ हो सके वहाँ यह प्रयोग शुरू कर दिया जाये, और कत्तिनोंको भले ही भिन्न-भिन्न स्थानोंमें भिन्न-भिन्न दरसे मजदूरी दी जाये, पर आज जिस दरसे उन्हें मजदूरी दी जाती है, वह तो अवश्य ही बढ़ा दी जाये।"

श्यकता अनुसार कर्मचारियोंकी संख्या घटाई जा रही है। श्री जेराजाणीजी अपनी शोधक बुद्धिसे सोच-सोचकर नये-नये डिजाइनोंकी खादी वहाँ मँगवाते थे; भारतवर्षके तमाम भागोंसे आई हुई इस खादीकी बिक्री बढ़ानेका असाधारण प्रयत्न वहाँ होता रहा है। परन्तु इस प्रयत्नसे व्यवस्था-खर्च इतना अधिक बढ़ गया कि उसकी तुलनामें दरिद्रनारायणकी दृष्टिसे परिणाम बहुत कम आया और इससे प्रान्तीय कार्यकर्त्ताओंका ध्यान अपने मुख्य कार्यसे हट गया। उनका काम तो यह था कि वे खादीको अपने-अपने प्रान्तमें स्वावलम्बी या लोकप्रिय बनायें। खादीका सार्वत्रिक मिशन सच्चे प्रान्तीय प्रयत्नके बिना पूरा नहीं किया जा सकता। वह खादीको यथासम्भव असंख्य उत्पत्ति-केन्द्रोंमें बाँटनेसे ही हो सकता है। बेशक, कुछ खादीकी जरूरत बम्बई-जैसे बड़े नगरोंके लिए सदा रहेगी, क्योंकि वे खुद उसे कभी पैदा नहीं करेंगे। यह एक स्वस्थ माँग होगी और वह असाधारण प्रयत्नके बिना पूरी की जा सकेगी। शहरकी खादीकी दुकानोंमें हमें जो तरह-तरहके नमूने दिखाई देते हैं, वे इसीलिए सम्भव हुए कि संघने शहरी जनताकी विविध रुचियोंको पूरा करनेकी कोशिश की। परन्तु यदि खादीको अपना मिशन पूरा करना है तो वह समय आ गया है जब उत्पत्ति-केन्द्रोंकी तरफ ध्यान मोड़ा जाये। परन्तु वे बहुत ही थोड़े हैं। जैसे प्रत्येक घर पकाये हुए भोजनकी उत्पत्तिका केन्द्र है, उसी तरह प्रत्येक घरको नहीं तो प्रत्येक गाँवको खादीकी उत्पत्ति का केन्द्र बनना पड़ेगा। रसोईघरकी अर्थव्यवस्था किताबोंकी अर्थव्यवस्थासे बिलकुल भिन्न है। खादीकी अर्थव्यवस्थाकी भी यही बात है। तब प्रस्तावित परिवर्तनका अर्थ यह है कि चरखा संघके द्वारा या उसकी तरफसे चलाये जानेवाले बड़े भण्डारोंके कर्मचारियोंमें काफी कमी की जाये। इसका यह अर्थ भी है कि प्रमाणित खानगी उत्पादक बिलकुल खत्म चाहे न किये जायें पर उनकी संख्या जरूर कम हो जाये। अभी यह कहना कठिन है कि यह-सब कैसे होगा। श्री शंकरलाल बैंकर मनोयोगपूर्वक इसे अमलमें लानेकी योजना बना रहे हैं और खास इसी उद्देश्यसे वे सारे भारतका दौरा कर रहे हैं।

पर इस बीचमें खादी-प्रेमियों और दरिद्रनारायणके भक्तोंको इतना तो जान ही लेना चाहिए कि खादी इससे कुछ महँगी जरूर हो जायेगी, और खादी-सेवकोंको अपना कौशल और भी अधिक बढ़ाना होगा, एवं खादीकी उत्पत्ति तथा बिक्रीसे सम्बन्ध रखनेवाले तमाम वर्गोंके बीच स्वार्थत्यागकी भावना और भी अधिक विकसित करनी होगी। खादीकी कीमतोंमें उत्तरोत्तर जो कमी हुई है, उसे खादी-भण्डारोंने अपने लिए हर्षका विषय माना है। मुझे वह दिन याद है जब मैंने बहुत ही मोटी खादीका पहला थान एक रुपया गजसे भी ऊपर बेचा था। आज तो वैसी खादी कोई दो आनेमें भी नहीं लेगा। खादी-भण्डार उसे बेचेंगे भी नहीं। इसमें सन्देह नहीं कि खादीके हरएक विभागने जो बढ़ती हुई कार्यकुशलता प्राप्त की है उसीसे खादी इतनी सस्ती हुई, पर इसमें सबसे ज्यादा बेचारी कत्तिनका पेट काटा गया है। लेकिन यह कत्तिन ही तो दरिद्रनारायणकी प्रत्यक्ष मूर्ति है — सारे हिन्दुस्तानमें सबसे कम मजदूरी उसीको दी जाती है। चरखा संघने यह अच्छा किया जो एक जमानेसे

बेकार पड़े हुए लोगोंके लिए अपनी शक्तिके अनुसार बहुत-बड़े पैमानेपर कामका एक जरिया तो तलाश दिया। एक घंटेकी मजदूरी एक पाई ही क्यो न मिलती हो, पर कुछ मिलने तो लगा। लेकिन अगर सघको अपने ट्रस्टका दायित्व पूरा करना है तो उसे कत्तिनको कमसे-कम इतनी मजदूरी तो देनी ही होगी कि जिससे वह अपना पेट भर सके। अगर वह प्रतिदिन आठ घंटे काम करती है तो कताईकी प्रति घंटा इतनी मजदूरी तो उसे मिले कि जिससे वह अपनी गुजर-बसर कर सके। कितना पैसा दिया जाये आज यह प्रश्न नही है। अभी तो हमारे सामने यह प्रश्न है कि कत्तिनोको जिस दरसे मजदूरी दी जाती है उसमें वृद्धि होनी ही चाहिए। चरखा संघकी रिपोर्टोंमें अब यह उल्लेख नही रहना चाहिए कि खादीकी कीमतमें पहलेसे कितनी कमी हो गई है, बल्कि अब सघको अपनी रिपोर्टोंमें यह दिखलानेमें गर्व होना चाहिए कि कताईकी मजदूरी की दर पहलेसे कितनी बढा दी गई है। न चरखा सघको तबतक सन्तोष होगा और न मुझे ही, जबतक कि कताईकी प्रति घंटेकी मजदूरी बुनकरकी मजदूरीके बराबर नही हो जाती। और खरीदारोको यह याद रखना चाहिए कि वे उस महान् ट्रस्टके सदस्य हैं, भले ही उनका नाम कागज पर दर्ज न हो, और कत्तिनोका हर तरहसे खयाल रखना उनका धर्म है। एक बार यह सम्बन्ध हृदयसे जान लिया जाये तो फिर खादीकी नित नयी उन्नतिमें कोई कठिनाई आ ही नही सकती। क्या ही अच्छा हो कि तमाम खादी-प्रेमी अपना कर्त्तव्य समझ लें और उन अश्रद्धालु खादी-कार्यकर्त्ताओंकी शंका निर्मूल कर दें जिनका यह खयाल है कि जनता कभी इतनी महँगी खादी खरीदेगी ही नहीं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-८-१९३५

४६९. पत्र : भुजंगीलाल छायाको

वर्धा
१० अगस्त, १९३५

चि० भुजंगीलाल,

तुम्हारी अन्तरात्मा जो कहे और अपनी सामर्थ्यके अनुसार तुम जो कर सको सो करना। अन्य लोग जो कहें वह धर्म नही है, हम जो मानें वही धर्म है। अन्य लोग हमारे मनको कैसे पहचान सकते हैं? अत: तुम भगवान्‌से पथ-प्रदर्शनकी प्रार्थना करना। वही एक सच्चा पथ-प्रदर्शक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६०७) से।

४७०. पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

१० अगस्त, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

तुम्हारे पत्र मिलते रहे हैं। तुम चन्दा अच्छा उगाह रहे हो। मैंने शंकरलालसे भी बात की थी। बापाके आनेपर उनसे भी बात करूँगा। हम तो ईश्वरपर भरोसा रखकर काम करते रहें।

यह दुःखकी बात है कि हरिजनोंको सतानेकी घटनाएँ घटती रहती हैं। ऐसा लगता है कि ऐसे मामलोंको अदालतमें ले जानेपर ही निस्तार होगा। ऐसे हर मामलेमें स्थानीय रूपसे आन्दोलन तो होना ही चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सरदारका कहना है कि हरिजन पाठशालाओंके लिए ताल्लुका बोर्डसे आर्थिक सहायता माँगना हमारा कर्त्तव्य है और माँगनेपर सहायता मिल सकती है। इस सुझावपर विचार करना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०२८)से। सी० डब्ल्यू० १२८ से भी; सौजन्य : परीक्षितलाल ल० मजमूदार

४७१. पत्र : मनु गांधीको

१० अगस्त, १९३५

चि० मनुड़ी,

डाक निबटा देनेके बाद तेरा पत्र मिला। बा की बीमारीकी खबर तो मुझे कल ही मिल गई थी अतः आज पत्र लिखा है। आशा है, तू आनन्दपूर्वक होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५४६) से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला

४७२. पत्र : काशी गांधीको

१० अगस्त, १९३५

चि० काशी (गांधी),

वानप्रस्थमें से गुजरते ही हमारी कसौटी शुरू हो जाती है। यह अशान्ति क्यों? अगर हमने सब-कुछ कृष्णार्पित कर दिया हो तो उसकी एक निशानी यह है कि हमसे हमारा आन्तरिक आनन्द कोई नहीं छीन सकता। ऐसे अर्पणमें यदि अभी भी कुछ शेष रह गया हो तो जीवनके इस नये चरणमें प्रवेश करते हुए हम उसको भी अर्पित कर दें। नीमूके बच्चे मेरे साथ हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०७०६) से; सौजन्य : छगनलाल गांधी

४७३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१० अगस्त, १९३५

चि० ब्रजकिशन,

तुमारा खत मिला। पनचक्कीके चावल यदि अक्षत हो तो कोई दोष नहीं है।

मुझे गाली मिलती है सो अच्छा लगता है। इसका बड़ा लाभ यह है कि सब बिगाड़ दूर हो जायेगा। मेरी पूजा करना और मेरा कहना नहीं करना उससे मुझे गाली देना मैं बहुत अच्छा समजता हूं। पूजारी कभी कुछ नहीं करेंगे क्योंकि उनको नहीं करने की आदत हो गई है। गाली देनेवाले तो दिलसे मुझको बुरा मानते हैं जब उनका भ्रम टूट जायेगा तब सब-कुछ करेंगे।

कृष्णनको बलात्कारसे भेजने में क्या लाभ हो सकता है। उसको मुक्त किया तब तो वह निकला। यदि जिनको सिपुर्द किया था वे नहि चलाते है तो क्या उसे चलाने का तुमारा धर्म नहीं है? अच्छा तो वही होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३६) से।

४७४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
११ अगस्त, १९३५

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिल गया। सरकारकी अनुमति लेकर शुरूसे आजतक का सारा पत्र-व्यवहार छाप देना चाहिए। कमेटीकी[1] नियुक्ति करनेवाला पत्र भी छाप देना चाहिए। यह सब छापकर हमें तो सबूत जुटाने में लग जाना चाहिए। यदि लल्लूभाई-का[2] शरीर काम देने लायक हो गया हो तो अच्छा ही है। वे गहराईमें उतर सकते हैं या नहीं, इसके बारेमें मुझे पूरा सन्देह है। यदि कुँजरू आ जायें तो मुझे अच्छा लगेगा। गिल्डर और बहादुरजी हों, तो काफी होगा। तीसरे जरा कमजोर हों तो भी हर्ज नहीं।

बलवन्तरायके बारेमें मैं समझ गया। हम तो जो उचित है सो करते रहें। 'सर्वेण्ट' [ऑफ इंडिया] के लेखपर मैंने नजर डाली थी। पूरा पढ़ने का समय भी नहीं था। राजेन्द्रबाबू वह लेख ले गये हैं।

. . .[3] का पता मालूम हो सके तो साथका पत्र उन्हें भेज देना।

महादेवके लिए तो इसके साथ मैं सब-कुछ भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यदि विट्ठलभाई वाले रुपयोंके बारेमें कुछ सूझा हो तो लिखना।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७६-७७

१. वल्लभभाई पटेलके निदेशनमें बोरसदमें प्लेग-राहत कार्य किया गया था; सरकारका कहना था कि यह कार्य वैज्ञानिक ढंगसे नहीं किया गया, उक्त कमेटी इसी आरोपकी जाँचके लिए नियुक्त की जा रही थी।

२. सर लल्लूभाई शामलदास।

३. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

४७५. पत्र : ना० र० मलकानीको

वर्धा
१२ अगस्त, १९३५

प्रिय मलकानी,

साफ दीख रहा है कि तुमने सचिवकी हैसियतसे कोई खास काम नहीं किया है, नही तो तुम अपनी डाक मेरे पास न भेजते। तुमको शायद मालूम न हो कि दक्षिण आफ्रिकाके अपने प्रवासके उस पूरे कालमें मैंने सचिवके कार्यके अतिरिक्त अन्य कुछ किया ही नहीं था। इसलिए मुझे तुमसे सहानुभूति है। पर तुमको जब-तब अनेक मालिकोंसे मिलनेवाली निराशा और झिड़कियोके बीच भी अपनी शान्ति कायम रखनी होगी और विनोदशीलता बनाये रखनी पडेगी। स्वयंसेवक होनेसे कोई फर्क नहीं पड़ता बल्कि स्वयंसेवक हो तो उसे और भी ज्यादा फटकारे सुननी-सहनी पड़ेंगी और उसपर भी कहना पड़ेगा : 'धन्यवाद, श्रीमान्'। ससारमें जितने भी उल्लेखनीय सचिव हुए है वे ऐसी ही खरी धातुके बने हुए थे। तुमको भी उन्हीकी श्रेणीका बनना है। मिलनेपर और अधिक बातें होगी।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च .]

साथका पत्र वा के लिए है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१०) से।

४७६. पत्र : द्रौपदी शर्माको

१२ अगस्त, १९३५

चि० द्रोपदी,

आज शर्मा[1] रवाना होगे। वह जवतक कलकत्तेमें भी था तो मुझे कुछ चिन्ता तुमारे लिये नही थी। अब तुमारे हाल जानते रहना मेरा कर्त्तव्य हो गया है। मुझे तुमारे और लड़कोंके हाल बताओ। तुमारे रहन-सहनकी बात लिखो। तुमरा रोजका कार्यक्रम लिखो। तुमारे मददगार कौन है सो भी लिखो।

बापुके आशीर्वाद

१. द्रौपदी शर्मा के पति, हीरालाल शर्मा, जो अमेरिका जा रहे थे

[पुनश्च :]

वहां कुछ किताब कन्या आश्रमकी रही है?

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १८४ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे

४७७. पत्र : श्रीपाद दामोदर सातवलेकरको

१२ अगस्त, १९३५

भाई सातवलेकर,

प्रेमवश होकर जो पत्र मुझे लिखा है उसके लिए मैं आभारी हूं। मेरा ख्याल है कि वह सांपमें विष ही नहीं था। पायलेगांवकरजी[1] ने भी कहा था बहुत विषैला नहीं है। कटवाने की कोशीश करते हुए भी किसीको नहीं काटा। तो भी तुमारी चेतावनी बिलकुल योग्य है।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७७७) से; सौजन्य : श्री० दा० सातवलेकर

४७८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

वर्धा

१३ अगस्त, १९३५

चि० प्रेमा,

पत्रोंको निबटाने के लिए आज मैंने अढाई घंटेका मौन लिया है। पत्रोको एकके-बाद-एक निबटाते हुए तेरा ९-७-१९३५ का पत्र मेरे हाथमें आया है।

केलकरसे[2] मिलकर बहुत अच्छा किया। यदि तू उन्हें अपना काम दिखाने ले जाये तो अच्छा हो।

गन्दे कामका वही हाल है जो तूने लिखा है। महारोवाला अंश मैं 'हरिजन-बन्धु' में दे रहा हूँ। तेरा नाम-पता नहीं दूंगा।

पूनाके प्रस्तावपर अमल होनेपर मुझे लिखना। हिटलरके विषयमें दूसरी पुस्तक कौन-सी है?[3]

१. साँपोंको बशमें करने की अपनी शक्तिके लिए प्रसिद्ध एक साधु। नागपंचमीके दिन (४ अगस्त, १९३५) को उन्होंने एक साँप गांधीजी के गलेमें डाल दिया था।

२. एन० सी० केलकर।

३. बापुना पत्रो – ५: कु० प्रेमाबहेन कंटकने, पृ० २३०-३२ पर प्रेमाबहन लिखती हैं कि हिटलरकी लिखी माई स्ट्रगल नामक पुस्तक उन्होंने और गांधीजी ने पढ़ी थी, किन्तु दूसरी पुस्तकके नामका उल्लेख उन्होंने नहीं किया।

अब तेरा प्रश्न। रूसके उदाहरणका नमूनेके तौरपर उपयोग करनेमें खतरा है। एक तो यह है कि हमें उसका प्रत्यक्ष अनुभव नहीं है, दूसरा यह कि उसे अभी बहुत समय नहीं हुआ है, तीसरा यह कि वहाँ जो-कुछ होता है वह जबरन कराया जाता है। इसलिए हम रूसको अलग करके सोचें। हमारे लिए अपने बीच इतना करना अनिवार्य है। हिंसाके द्वारा न तो कुछ करना चाहिए, न कराना चाहिए। इसलिए धनिकोसे न्याय प्राप्त करनेका सबसे आसान् उपाय यह है कि वे अपने प्राप्त किये हुए धनका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करे। इससे यह परिणाम निकल सकता है कि ऐसा करते हुए वे बहुत अधिक धन उपार्जन करनेका लालच ही छोड़ दें। यह परिणाम निकले तो कोई हानि नही और न निकले तो भी ठीक ही है। उलटे इतना धन सँभालकर रखनेकी झंझट किये बिना उसका लाभ मिल जाता है। और यदि बहुत-से धनिक न्यासी बन जायें, तो हमारे लिए कहनेको कुछ नहीं रह जाता। तेरे तर्कके मूलमें यह शंका निहित है कि धनिक कभी अपनी सम्पत्तिके न्यासी नही बनेंगे। यदि यह शंका सच हो तो भी चिन्ता नही, क्योंकि अन्तमें तो सत्यकी विजय है ही। जो लोग अपनी जरूरतसे ज्यादा सम्पत्ति रखते है वे चोरी करते हैं। और चोरीका धन कच्चा पारा है। वह पच नही सकता। अन्तमें वह चोरका नही रहेगा, यह विश्वास रखकर हम तो अहिंसक उपाय ही करते रहें।

यदि अब भी समाधान न हुआ हो तो फिर पूछना। तेरा प्रश्न महत्त्वपूर्ण है; और यदि अहिंसाको तूने पूरी तरह समझ लिया होगा तो मेरा उत्तर तुझे पूर्ण लगना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

लक्ष्मी बारडोली गई है। प्रभावती और अमतुस्सलाम भी यहीं हैं। बा दिल्लीमें है। लक्ष्मीके लड़का[1] हुआ है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३७६) से। सी० डब्ल्यू० ६८१५ से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

४७९. पत्र : रामदास गांधीको

१३ अगस्त, १९३५

चि० रा[मदास],

तेरा पत्र मिला। अन्तमें तो सबको भाग्य जहाँ ले जाता है वहाँ जाना ही पड़ता है इसलिए उसीके अनुसार तू भी बरतेगा। लेकिन जिस तरह भाग्य है उसी तरह पुरुषार्थ भी है। पुरुषार्थ अपने बसकी बात है इसीलिए शास्त्र हमें भाग्यपर भरोसा न करनेकी शिक्षा देते हैं। इसीसे "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"[2]

१. राजमोहन देवदास गांधी।

२. भगवद्गीता, २/४७।

वाला श्लोक रचा गया। इसका अर्थ बेशक ऐसा किया जा सकता है: "तुझे पुरुषार्थ करने का ही अधिकार है, भाग्यको जानने का कदापि नहीं। पुरुषार्थ करके जैसे राम रखे वैसे रह।" कभी-कभी 'गीता' का मनन करता है या नहीं? 'राम-गीता' पास रखता है या नहीं?

गुजरातीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

४८०. पत्र: एफ० मेरी बारको[1]

वर्धा
१४ अगस्त, १९३५

मेरे नये सचिवके बारेमें तुम्हारा क्या खयाल है?

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०५६) से। सी० डब्ल्यू० ३३८६ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार

---

१. गांधीजी ने अपनी कलमसे अमृतकौरके पत्रके अन्तमें इतना जोड़ दिया था। वर्धासे भेजे गये इसी तिथिका वह पत्र निम्न प्रकार था:

"बापूको तुम्हारा ११ तारीखका पत्र मिल गया है। उनको खुशी है कि तुम्हारे स्वास्थ्यमें संतोषजनक प्रगति हो रही है। नीम और इमलीकी पत्तियोंको त्याग देनेकी सूचना बिलकुल गलत है। भुरता अच्छा है, इसकी गवाही मैं दे सकती हूँ, और अच्छा हो यदि तुम अगली बार यहाँ आते समय उसकी विधिकी जानकारी लेती आओ। बापू कहते हैं कि तुमने बड़ा अच्छा किया कि अपनी "स्वास्थ्य-परीक्षा" स्वयं ही करना सीख रही हो। तो अब अस्पतालके लोगोंको कष्ट देनेकी जरूरत तुमको नहीं रह जायेगी। अफसोस! अब मुझे यहाँ एक सप्ताह ही और रहना है। यहाँ सब-कुछ बड़ा अच्छा रहा। मेरी और बापूकी ओरसे स्नेह।"

४८१. पत्र : हीरालाल शर्माको

१४ अगस्त, १९३५

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला। अच्छा किया सब तारीख दी है। मैंने द्रोपदीको खत[1] लिखा है।

तुमारे रवाना होनेका तार ब्रजमोहनजी से मिल गया था। तुमारे अगले खत मिल चुके थे। तुमारे जहाजके अनुभवका बयान अब मिलेगा।

कल्यर आश्रमकी कुछ किताब तुमारे पास थी क्या? छोटेलालने यह यादि[2] भेजी है। अगर मुझको कुछ तुमने कहा है तो मैं भूल गया हूं।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

लिस्ट पीछे दिया है।

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १८६ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे

४८२. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१४ अगस्त, १९३५

भाई सतीशबाबु,

तुमारा खत मिला। मै कुछ समजा हूं। मेरे पर कुछ उसका बोज-सा प्रतीत होता है। इतनी कमिटी, इतनी किताब, इतनी प्रवृत्ति एक व्यक्तिपर लादना अच्छा हो सकता है? लेकिन इस बारेमें मैं कुछ अभिप्राय निश्चित नही कर सकता हू। मुझे प्रतिष्ठानमें रहना चाहीये। बगैर अनुभवके कुछ भी टीका करने का मुझे अधिकार नही है। यहां आओगे तब थोड़ी बातें कर लेंगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७१४) से।

१. देखिए "पत्र : द्रौपदी शर्माको", १२-८-१९३५।

२. सूची।

४८३. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

१४ अगस्त, १९३५

चि० अम्बुजम,

आज तुमको हिंदी खत लिखता हूं। पढ़ सकती है या नही, लिखो। आपत्ति हो तो इंग्रेजीमें लिखुंगा।

किचीकी देखभाल हम क्या करनेवाले हो सकते हैं? अंतमें तो ईश्वर ही संभाल सकता है।

नीमु आजकल मेरे साथ रहती है। कानु बीमार है। बहूत दुर्बल हो गया है। लक्ष्मी बारडोली गई है। कुमारप्पा बीमार थे लेकिन अब अच्छे हैं। उनकी बहिन यहां दस दिन रह गई। अब यहां राजकुमारी अमृतकोर और खुरशेद बहिन है। प्रभावती और अमुतुल तो है ही।

तुमारे फल मिल गये हैं। शहद भी अच्छा। जब दिल चाहे तब फल व शहद भेजो लेकिन दोनो सस्ते हो। क्योंकि ये ही चीज नित्य चलती तो है ही।

मेरा खुराक दूध, नीम और दूसरी पत्तीयां और फल हैं। कोई बार फल छोड़ता हूं।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४८४. पत्र : निर्मलकुमार बोसको

वर्धा

१५ अगस्त, १९३५

प्रिय निर्मलबाबू,

आपका इसी ५ तारीखका पोस्टकार्ड मिला। आखिर मैं आपका लेख आवश्यक सुधारोंके साथ भेज पा रहा हूँ। विलम्बके लिए खेद है। आशा है, सुधारोंको पढ़नेमें आपको कठिनाई नहीं होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५०९) से।

४८५. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१५ अगस्त, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

कहीं डाक न निकल जाये इसलिए बहुत जल्दीमें यह घसीटे दे रहा हूँ। यहाँ सब कुशल-मंगल है। आजकल मैं बहुत व्यस्त हूँ। एक मिनट खाली नही मिलता। कहा जा सकता है कि हरिलाल शराबके कुंडमें पड़ा रहता है। यह खयाल कि उसमें सुधार हुआ है सब गलत साबित हुआ। वह जैसा था उससे कही ज्यादा बिगड़ गया है। किन्तु 'जबतक साँसा तबतक आसा' के अनुसार हमें मान लेना चाहिए कि यदि बचा रहा तो किसी दिन सुधर जायेगा।

बा और मनु दिल्लीमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४१) से। सी डब्ल्यू० १२५३ से भी; सौजन्य : सुशीला गांधी

४८६. पत्र : रसिक देसाईको

१५ अगस्त, १९३५

चि० रसिक,

चाहे जो कारण रहा हो तूने पत्र तो लिखा।

हर तरहसे आश्रमका गौरव बढ़ाना। क्वेटाका पैसा भेजने का सबसे सहज उपाय इन्श्योर्ड रजिस्ट्री पत्र द्वारा भेजना है। यह रकम तू सेठ जमनालाल बजाजको वर्धा भेज सकता है। आशा है, तेरी गाड़ी ठीक चल रही होगी।

बापूके आशीर्वाद

श्री रसिक देसाई
शामलदास कॉलेज छात्रावास
भावनगर, काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६२१) से।

४८७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१५ अगस्त, १९३५

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। दूसरा कोई-न-कोई मिल ही जायेगा। हमें बहुत जल्दी नहीं है। महादेवकी जबतक जरूरत हो तबतक रख सकते हो। यहाँ तो जैसे-तैसे काम चला लूँगा। राजकुमारी और खुर्शेद यथाशक्ति सहायता कर रही हैं। अधिकांश अंग्रेजी पत्र राजकुमारी निपटा देती है। वह २१ तारीखको यहाँसे जायेगी। खुर्शेद-बहन तो अभी यहाँ है ही।

राजेन्द्रबाबू आज चले गये। साथमें मथुराबाबू और गोरखबाबू थे ही। खगोल-शास्त्री आज शामको उधर आ रहे हैं।

सातके बजाय चौदह पुड़ियाँ लेकर भी (पीलिया रोगसे) सर्वथा मुक्त हो जाओ तो अच्छा ही है। जो करना हो उसे पूरी तरह करना ही ठीक है।

एन्ड्रयूजको दूसरे दर्जेमें भेजा, यह ठीक किया। हमने यहाँ उन्हें भूखा रखा तभी तो वहाँ तुम खिला सके। अगर यहाँ खिलाया होता तो आज वे खटियामें पड़े होते जैसे इलाहाबादमें पड़े हुए थे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७७-७८

४८८. पत्र : बलवन्तसिंहको

वर्धा
१५ अगस्त, १९३५

चि० बलवन्तसिंह,

चार दिन हुए जेठालाल अनन्तपुर गये। उनको रास्तेके लिये घीके मोणकी भाखरी चाहिये थी। स्टेशनोंसे कुछ लेते नहीं है। अमतुलसलामने मुझे पूछा मैंने कहा हां भाखरी बना दो। तुमारा किस्सा याद आया। तुमको तो मैंने डांटा।[1] स्मरणने मुझे दुःख दिया। मैं जानता हूं तुमारा तो भला ही हूआ लेकिन मेरा दोष

१. तीन महीने पूर्व, जब बलवन्तसिंह वर्धा छोड़ रहे थे।

मिथ्या नही हो सकता है। मेरा हेतु निर्मल था लेकिन यह बात मुझे मुक्त नही कर सकती। क्षमा करना। ऐसा अपूर्ण बापु है। बाकी तो कि०[1] ने लिखा है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८७९) से।

४८९. पत्र : रावजीभाई एन० पटेलको

वर्धा
१६ अगस्त, १९३५

चि० रावजीभाई,

मैंने चंचलसे बात की थी। किन्तु वह यहाँसे हिलना नहीं चाहती। कर्मठ है इसलिए सब उसे चाहने लगे है। मेहनती है इसलिए जल्दी-जल्दी सीखती जा रही है। वह निश्चितको छोड़कर अनिश्चितको अपनाना नही चाहती।

ऐसी स्थितिमें वहाँ जानेके लिए मैं तो उसपर जोर नही डालूँगा। यह अच्छा होगा कि ऐसी ही कोई लड़की वहाँ जाये जो सहज ही हरिजन आश्रम जानेको लालायित हो।

डाहीबहनको कुछ-न-कुछ होता ही रहता है। देहका दण्ड भोगनेपर ही छुटकारा होगा। क्या तुम्हारे घी की किस्ममें कुछ सुधार हुआ? हम लोगोने तो बाहरसे घी मँगाना बन्द ही कर दिया है।

बापूके आशीर्वाद

श्री रावजीभाई पटेल
ग्रामोद्योग कार्यालय
लिंबासी, मातर तालूका

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९००५) से।

१. तात्पर्य शायद बलवन्तसिंह द्वारा अपनी पुस्तक बापूकी छायामें, पृ० १२२-२४ पर उद्धृत किशोरलाल मशरूवालाके पत्रसे है।

४९०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१६ अगस्त, १९३५

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। . . .[1] के बारेमें . . .[2] को लिख रहा हूँ। ऐसी घटनाएँ मनुष्यको नास्तिक बना देती है। इसका इलाज यही है कि जो जाग्रत है, वे अधिक जाग्रत बनें।

जयकरने[3] अभी पूनामें भाषण दिया था। उसमें तिलक स्वराज कोषकी कड़ी आलोचना की गई है। उसकी रिपोर्ट हरिभाऊने[4] भेजी है। मैंने जयकरसे पुछवाया है कि क्या यह रिपोर्ट सही है? जवाब आने पर लिखूंगा।

उस श्रमजीवीका पत्र और उसका जवाब साथमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

. . .[5] के नामका पत्र साथमें है। उनका पता-तलाश करके इसे उन्हें भेज देना।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७८

४९१. विकेन्द्रीकरण?

हरिजन सेवक संघकी कार्यकारिणी समितिकी इसी माहकी तारीख ३० को होने वाली बैठकमें जिन कई महत्त्वपूर्ण विषयोंकी चर्चा होगी उनमें से एक विषय यह है कि क्या संघके कार्यकी व्यवस्थाका विकेन्द्रीकरण करनेकी जरूरत है। कुछ प्रान्तीय बोर्ड यह महसूस करते हैं कि विकेन्द्रीकरण कर देनेसे संघका ध्येय और भी अच्छी तरह सम्पादित होगा।

सेठ घनश्यामदास बिड़ला और श्री अमृतलाल ठक्करका आग्रह था कि व्यवस्था केन्द्रीकृत होनी चाहिए। इसका मुख्य कारण यह था कि पैसे तो केन्द्रने ही इकट्ठे किये थे, प्रान्तीय बोर्डोंके अध्यक्षोंको सेठ घनश्यामदासने निर्वाचित किया था और संघकी नीति भी क्रमशः केन्द्रीय बोर्डने ही बनायी थी।

१, २ व ५. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।
३. मुकुन्दराव रा० जयकर, नरम दलके नेता।
४. हरिभाऊ फाटक, पूनाके कांग्रेसी कार्यकर्ता।

संघके कारोबारको एक ही केन्द्रसे चलाने की नीतिसे मैं सहमत रहा हूँ, तो भी मेरी इच्छा हमेशा ही यह रही है कि उपयुक्त अवसर आते ही यह कारोवार संघकी विभिन्न शाखाओमें विभक्त कर दिया जाये। मुझे इसमें सन्देह नही कि केन्द्रीय बोर्डकी भी यही इच्छा रही है। पर यह तो तभी हो सकता है, जब प्रान्तीय बोर्ड अपनी जरूरतका पैसा स्वय इकट्ठा कर लेनेके लिए तैयार और समर्थ हो। गाँव-गाँवमें हरिजन सेवक संघ हो, और उसके लिए हर गाँव खुद पैसा इकट्ठा कर लिया करे इससे अधिक प्रिय मुझे और क्या हो सकता है? ऐसा दिन जब आयेगा, तब अस्पृश्यताका सर्वथा नाश भी हो गया होगा। आज तो बदकिस्मतीसे यह मानना पड़ेगा कि अब भी इस आन्दोलनको सारे देशमें जो इने-गिने थोडे-से सच्चे सुधारक हैं वही चला रहे हैं। इन सबमें अपने-अपने कार्यक्षेत्रसे पैसा इकट्ठा कर लेनेकी शक्ति नही है, और किस तरहकी नीतिसे काम चलाना चाहिए इसका भी सबको पूरा पता नही है। 'नीति' शब्दका मैं जान-बूझकर उपयोग कर रहा हूँ। क्योकि ध्येय क्या है यह तो सभी जानते है, पर सच्चे सुधारकोंको कैसी-कैसी सख्त मर्यादाओके अन्दर काम करना पडता है इस बातका सबको पता नही है। निर्णय करने में जरा-सी भूल हो गई, या उतावलीमें कोई काम कर बैठे, या बिना सोचे-समझे कोई बात ही कह दी, तो सारा किया-कराया काम मिट्टीमें मिल सकता है। इसलिए सघके कार्यकी नीति उन्ही थोड़े-से आदमियोको अपने नित्यके कार्यानुभवके आधारपर काफी सावधानीके साथ बनानी होती है, जिनके मनमें हरिजनोकी सेवा करने और हिन्दू-धर्मका अस्पृश्यता-रूपी यह महान् कलंक धो डालने के अतिरिक्त दूसरा कोई विचार ही नही।

हरिजन-सेवकोको यह जानकर दुःख होगा कि प्रधान कार्यालयके बही-खातोमें ८०,००० से अधिक ही रकम बतौर पेशगीके प्रान्तीय बोर्डोंके नाम पड़ी हुई है। इसका मतलब यह हुआ कि जिन प्रान्तीय बोर्डोंके नाम यह रकम पेशगी पड़ी हुई है, वे अपने निर्धारित हिस्सेका पैसा इकट्ठा नहीं कर सके। यह भी एक दुःखकी बात है कि अधिकाश प्रान्तीय बोर्डोंने आँकडे और तथ्य सघ द्वारा निश्चित किये हुए रूपमें नही भेजे। तीसरी उल्लेखनीय बात यह है कि सघके मन्त्रियोंके सतत जागरूक रहते हुए और उनके कई बार दौरा करनेपर भी, जिला संघों ने, उन्हें जिस तरह काम करना चाहिए था उस तरह नही किया। यह सब कहने का अर्थ यह नही है कि प्रान्तो तथा जिलोके हरिजन-सेवकोने कुछ किया ही नही। निस्सन्देह 'हरिजन' में समय-समयपर जो रिपोर्ट निकलती रहती है उन्होने यह सिद्ध कर दिखाया है कि हरिजन सेवक संघकी शाखाओंको काम आरम्भ किये अभी थोड़ा ही समय हुआ है, पर इतने ही समयमें उन्होने कितनी अद्भुत प्रगति की है। मगर इस वक्त तो मेरा हेतु उधार नामा जाँचना है कि जिससे हरिजन-सेवक एक सच्चे निर्णयपर पहुँच सकें। यह भी सम्भव है कि मैंने जिन त्रुटियोकी ओर ध्यान आकर्षित किया है वे त्रुटियाँ केन्द्रीकरणकी नीतिपर आवश्यकतासे अधिक आग्रह रखने का परिणाम हो। अगर एसा है तो जो लोग विकेन्द्रीकरणके पक्षमें हैं उन्हें अपना मामला साबित करना पड़ेगा। केन्द्रीय बोर्डको अगर इसकी जरूरत महसूस हुई होती, तो वह यह कभी का कर

चुका होता। आगामी बैठक केन्द्रीय बोर्डकी कार्यकारिणी समितिकी है। उसमें केवल सात सदस्य हैं, और अध्यक्ष उसमें उपस्थित नहीं हो सकेगा। अतः प्रत्येक प्रान्तके हरिजन-सेवकोंसे मेरा यह निवेदन है कि वे इस विषयपर अपनी निश्चित राय संघ-के मन्त्रियोंके पास भेज दें, साथ ही अपनी रायके समर्थनमें तथ्य और आँकड़े भी संक्षिप्त रूपमें भेजें। हरिजन-सेवाका कार्य दया-धर्मका कार्य है, और इसमें एक प्राचीन धर्मके जीवन-मरणका प्रश्न अन्तर्निहित है। इसलिए इस कार्यको आगे बढ़ाने के लिए हमें अपनी शक्ति-भर एक भी उपाय नहीं छोड़ना चाहिए। ऐसे विषयोंमें व्यक्तिगत दृष्टिसे विचार करने का कोई मूल्य ही नहीं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-८-१९३५

४९२. मिश्र खाद

इन्दौरमें 'इन्स्टिटयूट ऑफ प्लांट इंडस्ट्री' नामकी एक वैज्ञानिक संस्था है। जिनकी सेवा करने के लिए वह कायम की गई, उनके लिए वह समय-समय पर पत्रक प्रकाशित करती है। इनमें से पहला पत्रक खेतकी बेकार समझी जानेवाली चीजोंसे कंपोस्ट (मिश्र खाद) बनाने के तरीकों और उसके फायदोंका बयान करता है। गोबर और मैला उठाने, साफ करने या फेंकने का काम करनेवाले हरिजनों और ग्रामसेवकों के लिए वह बहुत उपयोगी है, इसलिए मैं कम्पोस्ट बनाने की प्रक्रियाके वर्णनके साथ उसके फुटनोटोंको भी जोड़कर लगभग पूरे परचेकी[1] नकल नीचे देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-८-१९३५

४९३. सर्प-विष

हॉफकिन इन्स्टीट्यूटके निदेशक डॉ० सोखीने मुझे भारतीय सर्पोंके बारेमें एक विवरण भेजने की कृपा की है। चूँकि अब गाँवोंमें हमारे सहकर्मी फैलते जा रहे हैं और चूँकि दुर्भाग्यवश वहाँ शहरी सुविधाएँ सुलभ नहीं हैं, इसलिए उनको ऐसी बातोंके बारेमें जानकारीसे लैस करना बहुत जरूरी हो गया है जिनका सामना गाँवोंमें आम तौरपर करना पड़ता है। इनमें सबसे खतरनाक है साँपका काटना, जो तुरन्त ही आवश्यक उपचार न हो पानेपर अनेक बार प्राण-घातक सिद्ध होता है। मैं उस विवरण के महत्त्वपूर्ण अंश नीचे दे रहा हूँ।[2] पूरे विवरणमें साँपोंकी पहचानके

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है; यह *हरिजन* में प्रस्तुत और बाद के अंकमें क्रमशः प्रकाशित हुआ था।
२. देखिए परिशिष्ट १।

बारेमें उपयोगी जानकारी दी गई है। पर सारा विवरण पारिभाषिक शब्दावलीसे इतना लदा है कि ग्राम-कार्यकर्त्ता उसे समझ नही पायेंगे। इसलिए म विवरणके उस अंशको छोड़ रहा हूँ।

चूँकि दसमें से नौ सांप जहरीले नहीं होते और वे चूहोसे खेतोकी रक्षा करने आदिमें बड़े उपयोगी रहते है, इसलिए जहरीले साँपोको गैर-जहरीले साँपोसे अलग करके पहचानने की यदि कोई सरल विधि मिल जाये तो बड़ा उपयोगी रहेगा। इसमें रुचि रखनेवाले पाठक तबतक नीचे दिये इस बहुत ही सादा-से इलाजपर गौर करे:[1]

कर्नल सोखीने तो मुझे आगाह किया है कि सर्प-विषमारक दवा की सुइयाँ लगाने के अलावा जहरीले साँपोके काटने का दूसरा कोई भी अचूक इलाज नही है, फिर भी मै 'रिटर्न टु नेचर' [प्रकृतिकी ओर लौट चलो] के लेखक जुस्टके अनुसार उनके द्वारा सफलतापूर्वक प्रयुक्त इस इलाजको यहाँ बतलाने का लोभ सवरण नही कर पा रहा हूँ। मैंने भी सर्प-दंशके दो या तीन मामलोमें और बिच्छूके डक मारने के अनेकानेक मामलोमें इसका सफलतापूर्वक प्रयोग किया है। इलाज यह है कि काफी मात्रामें मिट्टी लेकर दंशके स्थानपर उसकी पट्टी-सी लेप दी जाये। यथा-सम्भव अधिकसे-अधिक साफ मिट्टी लेकर शीतल जल मिलाकर ठण्डी पुलटिस बना ली जाये। फिर उसकी एक इंच मोटी तह फैलाकर जिस अंगपर दश लगा हो उसपर लेप दी जाये और एक गीले कपडकी पट्टी बाँध दी जाये। यदि एड़ीमें काटा हो, तो उस पैरमे घुटनेतक पुलटिस लगानी चाहिए और यदि अँगुलीमें काटा हो तो पूरे हाथमें पट्टी बाँधनी चाहिए। जितने अधिक स्थानपर हो, उतना ही अच्छा। उपर्युक्त विवरणमें बताये गये अन्य सब इलाज भी निस्सन्देह किये जाने चाहिए। और यदि दवाकी सुई लगा दी जाये तो फिर मिट्टीका यह इलाज अनावश्यक होगा। मुझे विश्वास दिलाया गया था कि यदि समय रहते सुई लगा दी जाये तो निश्चय ही वह विषको मार देगी। मिट्टी द्वारा किया जानेवाला इलाज सोलहो आने कारगर ही है, ऐसा भी मैं नही कह सकता। कारण मैंने इसके प्रयोगसे जिन लोगोको ठीक किया है उनके बारेमे मुझे यह ठीक-ठीक जानकारी नही रही है कि उनको अत्यधिक विषैले साँपोने ही काटा था। मिट्टीका यह इलाज हानिरहित है और गाँवोमें बड़ी सरलतासे किया जा सकता है और फिर लेखकने इसकी बडी प्रशंसा की है, इसी-लिए मै इसे सुझा रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-८-१९३५

१. देखिए परिशिष्ट १।

४९४. पत्र : ना० र० मलकानीको

वर्धा
१७ अगस्त, १९३५

प्रिय मलकानी,

इसी महीनेकी १५ तारीखका तुम्हारा पत्र आज मिला है, लेकिन नये न्याससे सम्बन्धित दस्तावेज और कागजात नही आये है।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६४)से।

४९५. पत्र : लीलावती आसरको

१७ अगस्त, १९३५

चि० लीलावती,

तेरी प्रसादी मिली। तूं स्थिरचित्त बन, सीख और सेवा कर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३६) से। सी० डब्ल्यू० ६६११ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

४९६. पत्र : निरंजन स्वामीको[1]

१७ अगस्त, १९३५

भाई निरंजन स्वामी,

तुम्हारे लेखोंमें छापने-जैसा मुझे तो कुछ मिला नही। फिर भी तुमने इतना लिखने और सोचने-विचारनेकी जो मेहनत उठाई है वह बिलकुल बेकार तो कभी नही जायेगी।

१. उर्फ मकनजी गोपालजी।

चि० वल्लभसे[1] मैं क्या कहूँ? उसके बारेमें विनोबा सोच लेंगे। वहाँके प्रबन्धमें मैं हस्तक्षेप कर ही नहीं सकता, किन्तु इतना मैं जानता हूँ कि नालवाड़ी आश्रमके संचालनका काफी बोझ वल्लभ पर है।

बापू

श्री निरंजन स्वामी
ओलपाड

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४६६) से।

४९७. पत्र: नारणदास गांधीको

१७ अगस्त, १९३५

चि० नारणदास,

हरिलालके बारेमें हम क्या कर सकते हैं? वह सभी चीजोंको सन्देहकी दृष्टिसे देखता है और स्वयंको निर्दोष मानता है। जूनागढ़में वह कोई तमाशा खड़ा न करे तो अच्छा हो।

मैथ्यूके बारेमें तुमने इतना अधिक सन्तोष व्यक्त किया है, उससे मुझे प्रसन्नता होती है। यदि वह दत्तचित्त होकर अपना काम करेगा तो वहाँ भी अपना नाम रोशन करेगा। तुम्हें पूरी तरहसे विश्वास हो जानेपर यदि तुम उसे अधिक दे सको तो देना। किन्तु उससे शारीरिक श्रम तो लेना ही चाहिए, और उसे हिन्दी भी अवश्य सीखनी चाहिए।

साबरमतीसे जो पैसा उन्होंने मँगाया है सो भेज देना।

वजुभाईने अपने अन्तिम पत्रमें जो पता दिया है वह मुझे भेज देना; मुझे उसकी जरूरत है। मैं अभी उसे पत्र नहीं लिख सका हूँ।

प्राध्यापक जोशीका पत्र वापस लौटा रहा हूँ। यदि उसे खादीपर श्रद्धा है तो वह खादीकी धोती क्यों नहीं लेता? अब तो बहुत महीन धोतियाँ मिल जाती हैं। यदि वह स्वयं ही काते तो बहुत सस्तेमें धोती बन सकती है। उसे छुट्टी दे देनेकी तो कोई वजह ही नहीं है। उसका पत्र मुझे पसन्द आया। यदि तुम उक्त पत्र नरहरिको भेज दो तो अच्छा हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४७० से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. वल्लभ स्वामी।

४९८. पत्र : ईश्वरदासको

१७ अगस्त, १९३५

भाई ईश्वरदास,

तुमने जो श्लोक बनाये हैं वह तो गुरु शिष्यके बारेमें है। और वह भी ऐसे मौकेपर जब दोनों एक स्थानपर रहते है। न मैं गुरु हूं न तुम शिष्य हो। मैंने किसीको शिष्य नहीं बनाया है। सो तो तुम्हें मालूम है न? तुम्हारे प्रश्नमें एक प्रकारका आलस्य पाता हूं। प्रश्न ऐसे रहते है जिनका प्रश्न मेरे लेखोमें आ ही गये है। लेकिन वाचन, मनन चाहिये ना?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४९९. सेवाकी रीति

एक बहन एक गाँवमें करीब एक सालसे रहती है, और वहाँ ग्रामवासियोकी सेवा करती है। धीरे-धीरे वह अपना सेवा-मार्ग तय कर रही है। कठिनाइयोके बहुत-सारे पहाड़ वह लाँघ चुकी है। किसानोंके साथ हल चलाती है, रास्ता साफ करती है, स्त्रियोंको सूत कातना सिखाती है और बालकों तथा वयस्कोंको पढ़ाती है। वह अपने अनुभव मुझे भेजती रहती है। अभी हालमें उसने जो अनुभव लिख भेजा है उसे अत्यन्त उपयोगी समझकर मैं यहाँ उद्धृत करता हूँ :[1]

> एक दिन महारवाड़ेमें एक बकरी मर गई। महार लोगोंने मुर्दार जानवरका मांस खाना या उसका चमड़ा उतारना दोषास्पद समझकर छोड़ दिया है। . . . मैं चमारवाड़ेमें गई, पर महारकी छुई हुई लाश लेनेके लिए चमार तैयार नहीं थे। . . . तब मैंने कहा कि अब माँगवाड़ा चलना चाहिए। . . . मैंने लाश खुद ही अपने सिरपर रख ली। . . . लोग आँखें फाड़-फाड़कर देख रहे थे। मैं सीधी माँगवाड़ेमें गई, और माँग लोगोंने वह लाश ले ली और कहा, "बहनजी, तुम खुद ही अपने सिरपर लादकर इसे क्यों लाईं? हमें कहला भेजतीं, तो क्या हम आते नहीं?" मैंने कहा, "मुझे यह बतलाना था कि काम गंदा नहीं होता, मनुष्य गन्दा होता है। मुझे तो कोई शर्म थी नहीं, इसलिए तुम्हें किसलिए कष्ट देती?"

१. यहाँ केवल कुछ अंशोंका ही अनुवाद दिया गया है। पत्र-लेखिका सम्भवतः प्रेमाबहन कंटक थीं; देखिए "पत्र : प्रेमाबहन कंटकको", १३-८-१९३५।

इस उदाहरणसे यह प्रकट होता है कि भाषणोंसे काम नहीं चलता। दूसरोंसे हम जो काम कराना चाहते हैं वह हमें खुद ही करके दिखाना चाहिए, तभी काम चलेगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १८-८-१९३५

५००. पत्र : भगवानजी ए० मेहताको

१८ अगस्त, १९३५

भाई भगवानजी,

मैंने तुम्हें हाथका बना थोड़ा-सा कागज भेजा है। आशा है, वह मिल गया होगा। उसका बीजक इसके साथ है।

देहाती नरकुल और स्याही तो राजकोटमें जितनी चाहिए उतनी मिल सकती है। बोहरा लोग दोनों चीजें बेचते हैं। ऐसी चीजें यहाँसे भेजनेकी जरूरत नहीं। नरकुल तो हमारे खेतोंमें होता है। उनमें से कुछ तरहके जो बहुत कड़े और चमकदार होते हैं, सब जगह नहीं होते। किन्तु बाँस तो जहाँ चाहिए वहाँ मिल जाता है। मुझे याद है कि बचपनमें हम सब भाई शौकिया बाँसकी कलमें बनाकर देखा करते थे। और घरमें नरकुलकी कलमके अतिरिक्त और कुछ नहीं था। अंग्रेजी स्कूलमें जानेके बाद निबवाले होल्डरोंने घरमें प्रवेश किया और आपसमें दोनोंसे लिखनेकी होड़ चला करती थी।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२६) से। सी० डब्ल्यू० ३०४९ से भी; सौजन्य : भगवानजी अ० मेहता

५०१. पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

वर्धा
१८ अगस्त, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

तुम्हारा पत्र दुःखद कथा पत्रका है। इस मामलेमें अखबारोंने [घटनाका] विवरण बढ़ा-चढ़ाकर नहीं बल्कि संक्षेपमें दिया है। तुमने सरकारी अधिकारियोंकी मदद लेकर अच्छा ही किया। अत्याचारियोंको सजा मिलनेपर ही निस्तार होगा। इसीमें कमसे-कम हिंसा है। जबतक अहिंसकोंकी संख्या और शक्ति परिमित है तबतक राज्यकी हिंसा सबसे कम दोषपूर्ण मानी जायेगी। सरकारी अधिकारियोंकी सहायता लेनेके बावजूद तुम अपने ढंगसे अन्य उपाय तो करोगे ही। क्या ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो

राजपूतों और बारैयोंको समझा-बुझा सके? हममें से किसीको हरिजनोंके बीच रहना चाहिए। मैं समझता हूँ, उस विभीषण-रूपी राजपूतको प्रोत्साहन मिलता ही होगा।

पाठशालाओंके बारेमें तुमने उपयोगी सूचनाएँ दी हैं। तुम्हारा पत्र मैं सरदारको भेज रहा हूँ। बापाके आनेपर मैं हमारे बजटके बारेमें बातचीत करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०३६)से। सी० डब्ल्यू० १२७से भी; सौजन्य: परीक्षितलाल ल० मजमूदार

५०२. पत्र: कस्तूरबा गांधीको

१८ अगस्त, १९३५

बा,

बहुत प्रतीक्षाके बाद तेरा पत्र मिला। तू जल्दी अच्छी हो जा। नीमू आदिकी फिक्र मत करना। नीमू आनन्दपूर्वक है। बच्चे भी यहाँ पहुँचनेके बाद कुछ पनपे हैं। कानो मेरे साथ ही खाने बैठता है। कभी सुमित्रा भी बैठ जाती है और कभी नहीं बैठती। उषा बढ़ती जा रही है। नीमूका सितार भी थोड़ा-बहुत बजता रहता है। अमतुस्सलाम खूब सेवा करती है। राजकुमारी अभी यहीं है। २१ तारीखको यहाँसे रवाना होगी। खुर्शेदबहन तो यहाँ है ही। २२ तारीखको गोसीबहनके आनेकी सम्भावना है। हरिलालके पत्र मिलते रहते हैं। जो उसके मनमें आता है सो लिखता रहता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १५४६) से; सौजन्य: मनुबहन एस० मशरूवाला

५०३. पत्र: मनु गांधीको

१८ अगस्त, १९३५

चि० मनुड़ी,

तुझे बुखार कदापि नहीं आना चाहिए था। अब इस तरह रहना कि बुखार आये ही नहीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५४७) से; सौजन्य: मनुबहन एस० मशरूवाला

५०४. पत्र : देवदास गांधीको

१८ अगस्त, १९३५

चि० देवदास,

लक्ष्मीकी दाढके लिए, यदि गरम पानीमें परमेंगनेट डालकर कुल्ले न कराये हो तो करा देखना। इसका अच्छा असर होता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५४८) से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला

५०५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१८ अगस्त, १९३५

भाई वल्लभभाई,

साथमें . . .[1] का पत्र है। इस बेचारेको तो कमेटीके बारेमें कुछ पता ही नहीं। क्या तुमने कोई कदम उठाया?

किशोरलालने कल बताया कि तुम्हें तो सख्त बवासीर हो गया है और अब खून भी जाने लगा है। ऑपरेशन कराना पड़ेगा। यह तो शरीरके भीतर इकट्ठी हुई गन्दगीका नतीजा है। मुझे पूरा हाल लिखना। इस हालतमें तुम्हारा ऑपरेशन भी अच्छा तो नहीं कहा जा सकता। इसलिए उसके बिना काम चल सके तो चला लेना ठीक होगा। गौरीशंकर या डॉ० मेहताकी[2] मदद लो तो ठीक होगा। शायद गौरीशंकर अच्छी मदद कर सके। बहुत-से लोग केवल पेट ठीक करके ऑपरेशनसे बच जाते हैं। यदि तुम अहमदाबाद वाले नीमहकीमकी गोदमें सिर रख सकते हो तो इस प्राकृतिक नीमहकीमकी गोदमें भी रख सकते हो, फिर भले ही सिर रहे या न रहे। तुम बीमार रहो यह हमें पुसा नहीं सकता। अमृतलाल कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

साथमें परीक्षितलालका पत्र है। यह तुम्हारे पढने लायक है। दोनो मामलोंके बारेमें।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७९

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

२. डॉ. दिनशा मेहता।

५०६. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१९ अगस्त, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

आज भी दो-चार शब्द लिखने का ही समय मेरे पास है। क्या मैं तुम्हें लिख चुका हूँ कि देवदासको पुत्र प्राप्त हुआ है? लक्ष्मी और बालक सकुशल हैं। बा और मनु अभी दिल्लीमें ही हैं। नीमू आजकल मेरे साथ है। कानो ज्वरसे पीड़ित है। बुखार उतरता-चढ़ता रहता है। वह जल्दी अच्छा हो जायेगा।

फिलहाल महादेव सरदारके पास बम्बई में है। शायद कल यहाँ पहुँच जायेगा। नवीन यहाँ आ गया है। अभी तो यहाँ रहेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४२) से। सी० डब्ल्यू० १२५४से भी; सौजन्य : सुशीला गांधी

५०७. पत्र : कृष्णचन्द्रको

वर्धा
१९ अगस्त, १९३५

चि० कृष्णचन्द्र,

तुमारे विह्वल होनेका कोई कारण नही है। सेडीमेन्ट[1] बंद होगा ही। व्यायाम ज्यादा होना चाहीये, कटी-स्नानका अभ्यास रखो, प्राणायाम खुल्ली हवामें करो। नीमकी मात्रा कम कर सकते हो। दूसरी कच्ची भाजी भी लेना। दूध सर्वथा नही छूट सकता है। फल लेना। स्वादकी बात छूट जानेसे आवश्यक खुराक लेनेमें संकोच नहीं रखना। आखरमें जिम्मेवारी तो मेरे सर पे है। दलीया अवश्य खाओ। रोटीका असर यदि ऐसा है तो उसमें तेल आता है वह कारन हो सकता है। इसका संशोधन आवश्यक है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२७७) से।

१. अवसाद; मूल में गांधीजी ने अंग्रेजी शब्दका प्रयोग किया है।

५०८. एक पत्र

वर्धा
२० अगस्त, १९३५

प्रिय मित्र,

इसी महीनेकी १९ तारीखका आपका पत्र मिला, जिसके साथ फिलीपीनके समाचार-पत्रकी एक कतरन भी है। उसमें दी गई जानकारी एकदम गलत है। मैंने अबीसीनियाके बारेमें कोई वक्तव्य[1] नहीं दिया है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २२-८-१९३५

५०९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२० अगस्त, १९३५

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। कमेटी अच्छी बन गई। काम तुरन्त निवट जाये, यही आवश्यक है। . . .[2]

मोरारजी और चन्दूभाई यहाँ २५ तारीखको सवेरे पहुँच रहे हैं।

तुम्हारे बवासीरका क्या हाल है?

कुमारप्पाके चेहरेपर अब भी बुखारकी हलकी-सी झलक बनी हुई है। सिविल सर्जनको दिखलानेवाला हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १८०

१. देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", १-८-१९३५।
२. साधन-सूत्रमें कुछ अंश छोड़ दिया गया है।

५१०. पत्र : तुलसी मेहरको

२० अगस्त, १९३५

चि० तुलसी मेहेर,

तुमने जो अनुभव पाया है उसका उपयोग वहां होता होगा।

जितने वहांके कागज भेज सकते हैं इतने भेजो। उसे वेच सकूंगा। सब कुशल है।

वापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५४९) से।

५११. एक पत्र

२१ अगस्त, १९३५

वैसे मैंने कभी भी इसके वारेमें इस तरहसे नहीं सोचा था जैसे आपने पेश किया है, लेकिन अव जव मुझे उकसाया गया है तो सोचना पड रहा है। मुझे सबसे पहला विचार यह आ रहा है कि ऊँचेसे-ऊँचे स्तरके क्रिया-कलापके लिए मनुष्यकी स्वतन्त्रतामें विश्वास करना नितान्त अनावश्यक है। परन्तु आपके दूसरे प्रश्नका उत्तर यह है कि मैं सदासे व्यक्तिकी सापेक्ष स्वतन्त्रताको ईश्वरीय इच्छाकी सर्वशक्तिमत्ताके अधीन मानता आया हूँ। मैं जीवनके कुछ सामान्य अनुभवोंके आधारपर इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ। बन्दीको तनहाईकी कोठरीमें भी हिलने-डुलनेकी — चाहे जितनी थोड़ी हो — स्वतन्त्रता तो रहती है और सोचने-विचारनेकी तो पूरी स्वतन्त्रता रहती है। आपने जो प्रश्न रखा है, उसके अनुसार तो मस्तिष्क तक ईश्वरीय इच्छाके अधीन पूर्ण रूपसे वन्दी है; फिर भी तथ्य यही है कि ईश्वर हमें करोड़ो फालतू वातें सोचने देता है। इससे मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि व्यक्तिको कुछ स्वतन्त्रता तो रहती है, भले ही वह एक छोटेसे-छोटे कण-मात्रके वरावर हो। ईश्वरीय इच्छाकी पूर्ण अधीनता स्वीकार करनेकी सबसे खरी कसौटी यही होगी कि क्या उस कण-मात्र स्वतन्त्रता तकको पूर्णत: त्याग दिया गया है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

५१२. पत्र : क० मा० मुंशीको

वर्धा
२१ अगस्त, १९३५

भाई मुंशी,

तुम्हारी पुस्तक मिल गई है। पुस्तकका कैसा स्वागत होता है, मुझे लिखना। शेष सब काकाने मुझे बताया है।

बापूके आशीर्वाद

एडवोकेट क० मा० मुंशी
रिज रोड, बम्बई

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७५८४) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

५१३. पत्र : मदालसा बजाजको

२१ अगस्त, १९३५

चि० मदालसा,

बहुत दिनोंके बाद तेरा पत्र मिला। तेरी जो मर्जी हो सो खाना, बशर्ते कि तू बीमार न पड़े। तू जो भी संयम पालना चाहे, इस बातका ध्यान रखना कि पालन स्वाभाविक होना चाहिए। कोई जल्दी नहीं है। क्रोध त्याग देना और बालक बनकर रहना। आश्रमका जीवन व्यतीत करने से स्वतन्त्रता आती है; उद्दण्डता, अविनय और अभिमान कभी नहीं आते।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३१८

५१४. चर्चा : निर्वाह-योग्य न्यूनतम मजदूरीके सम्बन्धमें – १[1]

[२२/२३ अगस्त, १९३५][2]

गांधीजी : हमें अपनी सीमाएँ जान-समझ लेनी चाहिए। वे ऐसी हैं कि उनको जानकर हम भौंचक्के रह जायेंगे। इसके लिए यदि हमको टूली स्ट्रीटके तीन दर्जियों[3] की भूमिका निभानी पड़े तो भी कोई परवाह मत कीजिए। हमारे संसाधन अत्यन्त ही स्वल्प तथा सीमित हैं। हम लम्बी-चौड़ी योजनाओंपर धन नहीं बहा सकते और हम सभी तरहके साधनोंको भी नहीं अपना सकते। हो सकता है कि हमें कार्य-कर्त्ता और एजेंट न मिल पायें और हमें अपनी शाखाएँ भी इनी-गिनी ही और बहुत दूर-दूर खोलनी पड़ें। लेकिन मुझे ऐसी कोई जल्दी भी नहीं है कि समूचे देश-भरमें ऐसी संस्थाओंका एक जाल तुरन्त बिछ जाये। हमारी नीति तो किसी ओरसे अपेक्षा किये बिना अपने कर्त्तव्यमें जुटे रहने की है। . . . यदि हम पायें कि कोई उद्योग निर्वाह-योग्य न्यूनतम मजूरी अदा करने में समर्थ नहीं है तो उसे बन्द कर देना चाहिए। हमें इसका पूरा ध्यान रखना चाहिए कि हम जिस किसी उद्योगको हाथमें लें उसमें अदा की जानेवाली मजूरी समुचित निर्वाहके लायक हो।

डॉ० प्रफुल्ल : मैं जिन दिनों एक वेतनभोगी अधिकारी था, उन दिनों हिसाब लगाकर देखता था कि मेरे नौकरोंको अपने और अपने ऊपर निर्भर रहनेवाले परि-वारके सदस्योंके ठीक ढंगसे निर्वाहके लिए कितने रुपयोंकी जरूरत पड़ेगी और उसीके अनुसार मैं उनको वेतन दिया करता था। वह प्रतिमास बीस रुपये बैठती थी। अब कपड़ों और अन्य आवश्यकताओंको मिलाकर, वह ३० रुपये प्रतिमास बैठेगी।

गांधीजी (हँसते हुए) : तब अगर आप तैयार हों, तो हम बंगालके लिए एक रुपया प्रतिदिन न्यूनतम मजूरी निर्धारित कर दें। आप एक अधिकारीकी हैसियतसे पहले जो सब किया करते थे अब वही आपको संघके एक सदस्यकी हैसियतसे करना है। निश्चय ही, मैं तो चाहूँगा कि न्यूनतम मजदूरी अधिकसे-अधिक निर्धारित की जा

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके प्रबन्धक-मण्डलकी बैठक वर्धामें हुई थी।

२. सर्चलाइट, ३०-८-१९३५ से।

३. इंग्लैंडके साउथवार्क नगरकी टूली स्ट्रीटके तीन दर्जियोंने एक बार कॉमन्स सभाके नाम अपना एक शिकायतनामा भेजा था, जिसे इस प्रकार आरम्भ किया गया था: "हम इंग्लैंडकी जनता . . .।" इससे एक मुहावरा बन गया है, जिसका आशय है — अपने-आपको समस्त जनताका प्रतिनिधि मानकर, छोटे मुँह बड़ी बातें बघारनेवाला कोई व्यक्ति।

सके और उसमें परिवारके कमसे-कम एक और सदस्यके निर्वाहके लिए गुंजाइश रखी जाये। पर आप जितना कर सकते हैं उतना ही तो करेंगे।

बम्बईमें प्रान्तीय सहकारी बैंकके प्रबन्ध-निदेशक, श्रीयुत वैकुंठनाथ मेहताने कहा कि इस प्रश्नके सिलसिलेमें जितनी जल्द कुछ किया जाये उतना ही अच्छा, क्योंकि जब हमारा आग्रह है कि बड़े पैमानेपर संगठित उद्योगोंमें मजूरी तथा कामके प्रश्नोंका समुचित हल निकलना ही चाहिए तो असंगठित उद्योगोंमें भी इन प्रश्नोंकी ओर ध्यान देना हमारा कर्त्तव्य हो जाता है। इसकी कठिनाइयाँ बहुत स्पष्ट है, लेकिन मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि यदि जनताको भली-भाँति समझा दिया जाये कि इन वस्तुओंकी खरीदपर खर्च होनेवाले उसके धनका ९५ प्रतिशत या इससे कुछ अधिक ही अंश सीधा उत्पादकोंको ही मिलता है तो वह खर्च उसको खलेगा नहीं।

श्रीयुत शंकरलाल बैंकरने संतुलित भोजनमें लेखी जानेवाली न्यूनतम वस्तुओंकी कीमतोंके प्रान्तवार आँकड़े जमा करनेके महत्त्वपर जोर दिया, लेकिन उन्होंने वर्तमान उद्योगोंमें मजूरीके प्रश्नपर अमल करनेकी कुछ कठिनाइयाँ बतलाईं।

गांधीजीने यह स्पष्ट किया कि हम केवल उन उद्योगोंको ही ले रहे हैं जो ठप हो गये हैं या होते जा रहे हैं और जिनका हम पुनरुद्धार करनेका प्रयास कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि हम मौजूदा उद्योगोंमें कोई व्यवधान नहीं डालेंगे। क्या न्यूनतम मजूरी निर्धारित कर देनेसे ग्रामवासियोंकी स्थिति कठिन हो जायेगी? क्या उनको मिट्टीके भाँड़े और दीये-जैसी अपनी रोजमर्राकी जरूरतकी छोटी-छोटी चीजोंके बारेमें कोई फर्क पड़ेगा? इनके लिए शहरी लोगोंको कुछ ज्यादा कीमत देनी पड़े, तो क्या गाँवके लोगोंको भी वही कीमत देनी पड़ेगी? शहरोंसे बिलकुल सटे हुए गाँवोंके लोगोंको तो अपेक्षाकृत दूरके गाँवोंकी तुलनामें अभी भी दूध की कुछ अधिक कीमत देनी ही पड़ रही है। गांधीजीने कहा :

यह तो अनिवार्य था। पर गाँवोके लोग अपने यहाँ कीमतोंकी पटरी बैठा लेंगे। इसके अलावा, हमारा संघ ठीकसे चल निकलनेपर जहाँ बढ़ई और लुहारो और कतैयोको कुम्हारोसे बर्तन खरीदते वक्त कुम्हारोंकी न्यूनतम मजदूरीके आधारपर निर्धारित कीमत अदा करनी पड़ेगी, वहाँ उनको अपनी तैयार की हुई चीजोकी भी वही कीमत मिलेगी जो उनकी अपनी न्यूनतम मजूरीके आधारपर निर्धारित की जायेगी, इसलिए उनको कुम्हारोंकी बढ़ी हुई कीमतोंसे कोई शिकायत नही रह जायेगी। लेकिन वह तो काफी दूरकी बात है। अभी तो हमको उन वस्तुओपर ही ध्यान देना चाहिए जो गाँवोसे शहरोमें भेजी जाती हैं और हमें ऐसी वस्तुएँ निर्वाह-योग्य न्यूनतम मजदूरीके आधारपर निर्धारित मूल्यसे कमपर लेनेसे इन्कार करना चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३१-८-१९३५

१. बैठकमें स्वीकृत हुए प्रस्तावके लिए; देखिए "एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव", ३१-८-१९३५।

५१५. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
२३ अगस्त, १९३५

प्रिय अमृत,

वादेके मुताबिक तुम्हारा तार आ गया। और मुझे खुशी है कि तुम्हारी जगह खाली पड़ी है। मैं जब भी अपने आसनपर बैठता हूँ, तुम्हारी अनुपस्थिति महसूस करता हूँ। तुम इस सबका एक अनिवार्य अंग बन गई थीं, और तुम अपने पीछे इतनी सारी चीजें छोड गई हो, जो तुम्हारी याद दिलाती रहती हैं। थर्मस हमेशा तुम्हारी याद दिलाता रहता है। साइट्रोनेलकी शीशी भी मुझे मेजपर पड़ी मिली। मेरा खयाल है, उसे भी तुम जान-बूझकर छोड़ गई थी। टोकरियाँ अभी वहीं हैं। चुकन्दर लगातार यहाँ पहुँच ही रहा है। मुझे उसे ठीकसे पकानेकी फिर कोशिश करनी चाहिए। देखती हो, तुमने क्या कर दिया है!

आशा है, जैसा मैं चाहता था वैसा प्रमाणपत्र शम्मीने दे दिया होगा।

तुमने कुमारप्पाको दावत दी है कि वह जब भी शिमला जाये तुम्हारे यहाँ मेहमानी करे। सिविल सर्जनने कल उसे देखा था और हलका-सा ज्वर रहनेके कारण उन्होंने उसे एक-दो महीनेके लिए पहाड जानेकी सलाह दी है। मैं उसे आगे जाँच-पडतालके लिए बम्बई भेज रहा हूँ। तुम अगर सचमुच किसी भी तरहकी कोई असुविधा महसूस किये बिना उसे रख सको, तो उसके बाद वह शिमला जानेको तैयार हो सकता है। अगर कर सको तो मुझे तार दे देना। लेकिन तुमको किसी भी तरहकी कोई असुविधा लगे तो मना करने में संकोच नही करना चाहिए।

तुम दोनोको स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५४१) से; सौजन्य : अमतकौर। जी० एन० ६३५० से भी

५१६. पत्र : छगनलाल जोशीको

२३ अगस्त, १९३५

चि० छगनलाल,

लगता है, तुम 'हरिजन' नहीं पढते। यदि तुम हड्डियोकी खाद बना डालो तो वह अवश्य बिक जायेगी। हर गाँवमें एक जगह हड्डियाँ इकट्ठी करके, 'हरिजन'[1] में बताये अनुसार उन्हें हलका-सा भूनकर आटेकी तरह बारीक पीस लो। फिर तुम उसे जहाँ भेजना चाहो वहाँ भेज सकते हो। तुम इस खादको रियासतके कृषि विभागको बेच सकते हो। जबतक उपयोगमें न आये तबतक तुम उसे गोदाममें संग्रह करके रख सकते हो, क्योंकि यह बिगडती नही। माससे खाद कैसे तैयार करनी चाहिए यह भी 'हरिजन' में बताया जा चुका है। इस खादका पैसा तो एक बडी पेढ़ी भी देती है। माससे खाद बनाने की क्रिया हड्डियोका चूर्ण बनाने की अपेक्षा कठिन है किन्तु फिर भी उसे घरपर तैयार किया जा सकता है। मैं उसकी सविस्तार नकल करवाकर तुम्हें भेज दूँगा। आँतोंसे ताँत बनती है, इसे जेठालाल बनाता है। शरीरका ऐसा कोई भाग नही जिसका उपयोग न हो सके। रक्तका भी उपयोग किया जा सकता है किन्तु वह प्रक्रिया मैं भूल गया हूँ। किन्तु मैं उसे प्राप्त कर लूँगा। अभी मैं पूरी तरह व्यवस्था नही कर पाया हूँ। मुझे आशा है कि व्यवस्था हो जाने पर उसकी माँगको स्थायी बना सकूँगा। हड्डियोंकी खाद या अन्य चीजे काठियावाडसे बाहर भेजने की जरूरत नही होनी चाहिए। जो किसान हमारी सुने उन्हें बहुत कम दामपर ये चीजें बेची जा सकती है क्योंकि अभी तो हमें उनकी लागत कीमत बहुत ही कम पडेगी।

यदि मैथ्यू वहाँ भी नही टिक पायेगा तो मैं लाचार हो जाऊँगा। उसके लिए मैंने बहुत परेशानी उठाई है।

रमाके बारेमें मैं समझ गया। बच्चोका ठीक विकास हो रहा है, इससे मुझे सन्तोष है।

बा तो दिल्लीमें है। वह बहुत सख्त बीमारी भोग चुकी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५२३) से।

१. इस विषयपर एस० सी० दासगुप्तके लेख हरिजनमें ३०-११-१९३४ और १४-१२-१९३४ के अंकोंमें प्रकाशित हुए थे।

५१७. पत्र : लीलावती आसरको

२३ अगस्त, १९३५

चि० लीलावती,

यदि तू अभ्यासार्थ प्रश्नोंके अपने हलके साथ ही प्रश्नोंके नीचे खाली जगह छोड़ दिया करे तो मेरे सुधारोंको पढ़ने में तुझे अड़चन नही होगी।

प्रश्नों पर क्रम-संख्या डालनी चाहिए। 'आइ विल' भविष्य-कालका सूचक है। मध्यम और अन्य पुरुषमें 'वुड' इच्छाको सूचित करता है। तेरे पाठोंमें जहाँ इन शब्दोंका प्रयोग नजर आये वहाँ उक्त नियमको लागू करके देखना।

१. इसी वाक्यमें 'इफ' और 'विल' का प्रयोग किया जा सकता है। 'इफ' समुच्चय बोधक है और 'विल' यहाँ क्रियापद है।

२. "यू विल हैव रिसीव्ड माई लेटर।" "आई होप यू आर हैपी।"

३. "दो यू आर गुड, यट विल आई नाट हर्ट यू।" 'स्टिल' और 'यट' के अर्थमें नहीं के बराबर अन्तर है।

४. "ही मस्ट बी पनिश्ड" का अर्थ है—उसे सजा मिलनी ही चाहिए।

"ही शेल हैव बीन पनिश्ड" का अर्थ है—उसे सजा मिली ही होगी। 'मस्ट और शेल हैव' में बहुत फर्क नही है। यह ठीक है कि मध्यम या अन्य पुरुषमें व्यवहृत 'शैल' 'मस्ट' का अर्थ देता है।

५[1]

६. 'दो' और 'यट' या 'स्टिल' का प्रयोग एक ही वाक्यमें किया जाता है। 'यट' या 'स्टिल' 'दो' के पूरक हैं।

आशा है सभी उत्तर तेरी समझमें आ जायेंगे। यदि कोई समझमें न आये तो दुबारा पूछने में संकोच मत करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३७) से। सी० डब्ल्यू० ६६१२ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

५१८. पत्र: नरहरि द्वा० परीखको

२३ अगस्त, १९३५

चि० नरहरि,

यद्यपि तुम्हारा १८ तारीखका पत्र मेरे सामने दो दिनसे पड़ा हुआ है किन्तु मैं उसे आज ही पढ़ पाया हूँ।

भाई वेलचन्दका रुख मुझे पसन्द है। कुछ थोड़े-से कुएं बनाये जायें और उनपर पण्ड्याके नामका पत्थर भले लगाया जाये। किन्तु मेरे विचारसे उनके नामकी शोभा तो तभी होगी जब वह किसी बहुत कठिनाईसे पूरा होते काम के साथ सम्बद्ध हो। यह काम कैसे किया जाये, यह वे हमपर छोड़ दें। जिस प्रकार तिलक स्वराज्य-कोषने अपने को और लोकमान्य को अमर बना दिया उसी प्रकार पण्ड्या ग्रामोद्धार-कोष अपने को और पण्ड्याको अमर बनाये। भाई वेलचन्द जो रकम अलग निकालना चाहते हैं उससे उक्त उद्देश्य कुछ तो जरूर पूरा होता है। फिलहाल इससे अधिक रकम तो हम खर्च भी नहीं कर सकते।

किन्तु यह तो मेरा और तुम्हारा विचार हुआ। सरदारसे मेरी बातचीत हुई थी। वे निश्चय नहीं कर सके। वे स्वयं वेलचन्दको लिखनेवाले थे। लिखने के बाद निर्णय करके मुझे सूचित करेंगे। तबतक हमें प्रतीक्षा करनी होगी। लगता है, अब वहाँ दुग्धालयका काम अच्छी तरह चल रहा है। तुम दूधका क्या उपयोग करते हो? भगतवाला मामला महादेवने मुझे सुनाया। बहुत विचित्र मामला लगता है।

रतिलालके बारेमें भी सुना। लगता है, तुम्हारे पास भरपूर काम है।

सुरेन्द्र वहाँ क्यों पहुंचा है? मुझे इसकी कोई खबर ही नहीं मिली।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०८८) से।

५१९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२३ अगस्त, १९३५

भाई वल्लभभाई,

'टर्म्स'[1] तो कल ही तैयार कर ली थीं और भाई वैकुण्ठके साथ भेजी जा रही हैं। उनसे बातें भी कर ली हैं।

साथमें 'सांज'की कतरन लौटा रहा हूँ। इस तरहकी विरोधी हलचलें तो अभी और भी होंगी। कमेटी काम करने लग जाये तो छुटकारा मिले।

कुमारप्पाके हलके ज्वरसे सिविल सर्जन जरा चौंक उठा है। वह बम्बईमें जाँच कराने को कहता है। वे दो-एक दिनमें वहाँ पहुँच जायेंगे। फिर मैं उन्हें शिमला भेजने की सोच रहा हूँ। राजकुमारीका निमंत्रण है। कुमारप्पाकी जाँच डॉ० जीवराज से करवाना। तुम वहाँ हो इसलिए मैं किसी और को नहीं लिख रहा हूँ। मैंने तो उसे आपके पास रहने को कहा था। परन्तु शूरजी यहाँ है, वह उन्हें खींच रहा है। [वर्धाके सिविल सर्जन] साहनी उनके गले और फेफड़ोंकी जाँच कराने को कह रहे हैं।

वेलचन्द जो दान देना चाहते हैं उसके बारेमें यदि तुम किसी निर्णयपर पहुँच सके हो तो सूचित करना। उनका नरहरिके नामका पत्र साथमें है। मेरा तो अब भी यह खयाल है कि उनके दानसे उनकी इच्छानुसार कुछ कुएँ बनवाकर बाकी रकम ग्रामोद्धारमें ही खर्च की जाये। यदि तुम इस रकमको गुजरातमें ही खर्च करना चाहो तो वैसा कर सकते हो। फिर भी तुम अपने स्वतन्त्र विचार मुझे बताना।[2]

विट्ठलभाईवाले पैसोंके बारेमें भी यदि विचार कर लिया हो तो सूचित करना। मोतीलालके[3] नाम लिखा पत्र अच्छा है।

मोरारजी और चन्दूभाई २५ तारीखको आ रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १८०-८१

१. प्लेग-निवारण कमेटीके लिए।
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. मोतीलाल सीतलवाड, प्रसिद्ध वकील।

५२०. टिप्पणियाँ

हरिजन और नाटार

यह प्रश्न हमारे सामने अब भी वैसा ही है। उस अत्याचार-पीड़ित प्रदेशके एक कार्यकर्त्ताने मेरे पास एक लम्बी रिपोर्ट भेजी है। उसे देखने से मालूम होता है कि नाटारोकी मनोवृत्तिमें अधिक सुधार नही हुआ है। जो थोड़ा-सा सुधार हुआ है, उसका कारण यह नही है कि वे अपने किये अन्यायको महसूस करने लगे है या उनमें समझ आ गई है। उसका बड़ा कारण तो उनका यह भय है कि अगर उन्होने हरिजनोका कोई नुकसान किया तो कही उनपर फौजदारीका मुकदमा न चल जाये। और इधर हरिजनोमें हरिजन सेवक संघके कार्यकर्त्ताओने जो काम किया है वह भी एक कारण हो सकता है। हरिजनोके दिलमें नाटारोके अत्याचारोका जो डर समाया हुआ था उसे दूर करने के प्रयत्नमें हरिजन-सेवक कुछ सफल तो हुए हैं। स्थायी सुधार तो तभी सम्भव है जब, जैसाकि रिपोर्टमें सूचित किया गया है, वहाँ हरिजनो और नाटारोके बीच खूब लगकर काम हो। हरिजनोकी अपेक्षा नाटारोको समझानेकी शायद ज्यादा जरूरत है। उनकी अकथनीय असहिष्णुताकी वजह उनकी इतनी ज्यादा दुष्टता नही है, उसका ज्यादा बड़ा कारण निस्सन्देह उनका अक्षम्य अज्ञान ही है। इसलिए कितनी ही भारी-भारी कठिनाइयाँ आडे क्यो न आये, संघ-वालोको उनसे जरा भी विचलित हुए विना निर्भयताके साथ अपनी सारी सेवा-शक्ति वहाँ लगा देनी चाहिए। अगर हरिजन-सेवकोकी श्रद्धा अन्ततक अटल बनी रही तो यह हो नही सकता कि उन्हें विजय न मिले।

बाध्य नहीं

भादरण ताल्लुका (बडौदा-राज्य) के पीपलाव ग्रामनिवासी कुछ बुनकरोने मुझे लिखा है कि:

> दो सालका अर्सा हुआ कि हम लोगोंने मुर्दार मांस न खानका निश्चय किया और इसीसे ढोरोंकी लाशें उठाने और उनकी खाल उधेड़ने का काम भी छोड़ दिया, मगर इस गाँवके चमार और भंगी यह सब काम बराबर करते हैं। गाँवके पाटीदारोंको यह सहन नहीं हुआ। उनकी दृष्टिमें हमने यह भारी गुस्ताखीका काम किया। इसलिए उन्होंने हमारे सख्त बहिष्कारकी घोषणा कर दी, तमाम सामाजिक सम्बन्ध तोड़ दिये। हमारे कुएँका पानी खराब कर डाला और हमारे छप्परोंपर पत्थर फेंकने लगे। अब आप बतायें, ऐसे में हम क्या करें?

अस्पृश्यता-निवारणकी अपनी प्रगतिशील नीतिके लिए बडौदा-राज्य काफी प्रसिद्ध है। मुझे भरोसा है कि तथाकथित सवर्ण हिन्दुओके द्वारा जहाँ भी गरीब असहाय

हरिजन सताये जायें, वहाँ राज्यके अधिकारी आवश्यक हो तो अतिरिक्त प्रयत्न करके भी उनकी मदद करेंगे। प्रगतिशील भादरण के सुधारकोंका भी यह फर्ज है कि वे इन गरीब बुनकरोंको हर तरहसे मदद दें, और पीपलावके पाटीदारोंको जाकर समझायें कि अपने बुनकर भाइयोके साथ उन्हें ऐसा अत्याचारपूर्ण बरताव नही करना चाहिए। मुर्दार मांस छोड़ देनेके लिए बुनकर बधाईके पात्र हैं। पर इसके लिए उन्हें यह जरूरी नहीं कि वे ढोरोंकी लाशें उठाना और उनकी खाल उतारना छोड़ दें। यह तो एक फायदेका और प्रतिष्ठित पेशा है। साथ ही, यह एक आवश्यक समाजसेवा भी है। लेकिन इस कामके लिए वे मजबूर नही किये जा सकते। अगर एक प्रतिष्ठित धन्धा आज अपमानजनक समझा जाता है, तो उसके ऐसे समझे जानेका उत्तरदायित्व सवर्ण हिन्दुओंपर ही है। इसमें अचरज ही क्या, अगर पीपलावके बुनकर अपनी अपमानजनक अवस्थाका भान होनेपर उससे छुटकारा पानेके लिए एक ऐसे धन्धेको छोड़ बैठे हैं, जिसकी बदौलत वे आज तिरस्कृत या पतित समझे जाते हैं। पीपलाव गाँवके लिए तो यह अच्छा ही है कि वहाँके चमारों और भंगियोमें अभी वर्ग-चेतना का उदय नहीं हुआ है, और वे अब भी लाशोंको उठाने और चमड़ा उधेड़नेका वह धन्धा कर रहे है, जिसे समाजने गलतीसे एक नीच काम मान रखा है। अगर ये उच्च कही जानेवाली जातियाँ अपने से किसी भी अन्य जातिके लोगोंको नीच समझने की पापपूर्ण प्रथाको समाप्त करने का अपना स्पष्ट कर्त्तव्य पूरा नहीं करती, तो निश्चय ही हमारा सारा सामाजिक ढाँचा टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा। किन्तु उस अवस्थाके आनेसे पहले अधिकारियो और सुधारकोंका यह फर्ज है कि पीपलाव गाँवके गरीब बुनकरोंके साथ जिस जालिमाना बरतावके होनेकी खबर आई है, उससे असहाय हरिजनोकी रक्षा करने में उन्हें अपनी शक्ति-भर कुछ उठा नही रखना चाहिए।

झूठे विज्ञापन

अभी कुछ दिन हुए, मैंने इन स्तम्भोंमें पाठकोंका ध्यान[1] अश्लील विज्ञापनोंकी ओर खीचा था। अब कलकत्तेसे एक सज्जनने प्रसिद्ध अखबारोंसे कुछ ऐसे विज्ञापन काट-काटकर मुझे भेजे है, जो निरे झूठसे भरे हुए हैं। मालूम होता है कि आजकल बंगाल और शायद अन्य प्रान्तोंमें भी हिन्दुस्तानी चाय पीनेके पक्षमें बड़ा प्रचण्ड प्रचार हो रहा है। चायके एक विज्ञापनका नमूना देखिए। यह बंगलाका अनुवाद है।

'चाय पीओ और हमेशा जवान दिखो'

जलपाईगुड़ी
१५ मई

उतरती अवस्थामें भी जवानी और ताकत कायम रखने में चाय मदद देती है। यह बात, लगता है, श्रीयुत नेपालचन्द्र भट्टाचार्यके अनुभवसे प्रमाणित हुई है। भट्टाचार्यजी की अवस्था आज अड़तालीस वर्षकी है, पर देखने से उनकी

१. देखिए "टिप्पणियाँ", २७-७-१९३५।

> उम्र चौंतीस सालसे अधिक नहीं जँचती। उनका कहना है कि उनकी इस तरुणाईका कारण है चाय पीना। चौदह सालकी उम्रसे उन्होंने चाय पीना शुरू किया था। तबसे वे बराबर बिना नागा चाय पी रहे हैं। और इधर दो सालसे वे करीब ३० प्याले चाय नित्य नियमित रूपसे पीते हैं। इस सम्बन्धमें वे अपनी एक खास विशेषता रखते हैं। चाय तैयार होते ही वे तुरन्त नहीं पीते, उसे कुछ देरतक रखी रहने देते हैं; और सारी ही चाय नहीं पी जाते, थोड़ी-सी चायदानीमें छोड़ देते हैं। एक-एक बार में छह प्यालेसे लेकर दस-दस प्यालेतक चाय भट्टाचार्य पी जाते हैं।

यह तो ऐसे-ऐसे विज्ञापनोंकी एक बानगी है। इसे पढ़ते हुए ऐसा मालूम होता है, गोया यह अखबारके अपने सम्वाददाताकी रिपोर्ट हो। चाय पीनेके पक्षमें यह विज्ञापन एक ऐसा दावा हमारे सामने रखता है, जिसे मनुष्यके अनुभवका कहीं भी समर्थन नहीं मिलता। देखने में तो इससे उलटा ही आता है। चायके पक्षमें वकालत करनेवाले भी बहुत ही थोड़ी चाय पीनेकी सलाह देते हैं। हिन्दुस्तानके लोग अगर चाय न पीयें, तो इससे उनकी कोई हानि तो होगी ही नहीं। मगर दुर्भाग्यसे यह चाय और अहानिकर कही जानेवाली ऐसी ही दूसरी पीनेकी चीजें, अब हम लोगोंमें जड़ जमा चुकी हैं। मेरा कहना यह है कि हमें विज्ञापन देते समय सचाईका उचित ध्यान जरूर रखना चाहिए। लोगोंकी, खासकर हिन्दुस्तानियोंकी यह एक आदत बन गई है कि किताब हो या अखबार, उसमें छपे हुए एक-एक शब्दको वे 'ब्रह्मवाक्य' मान लेते हैं। अतः विज्ञापन बनाने में अधिकसे-अधिक सावधानी रखने की जरूरत है। ऐसी-ऐसी झूठी बातें, जिनकी तरफ उक्त पत्र-लेखकने मेरा ध्यान आकर्षित किया है, बड़ी ही खतरनाक होती हैं। नित्य तीस-तीस प्याले चाय पी डालना,—यह क्या है? इससे शरीर और दिमागमें भला ताजगी आयेगी? इससे तो पाचन-शक्ति कमजोर पड़ जायेगी और शरीर क्षीण हो जायेगा। हलकी-सी चायके दो प्याले पी लेनेमें शायद नुकसान नहीं होता, और मनुष्यका शरीर इतनी ही चाय पचा सकता है। फिर हिन्दुस्तानमें चायकी पत्तियाँ असलमें उबाली जाती हैं और इस तरह उनका सारा 'टैनिन' पानीमें खिंच आता है। कोई भी डॉक्टर यह प्रमाणित कर देगा कि मेदेके लिए यह 'टैनिन' अच्छी चीज नहीं है। चाय पीना तो बस चीनी लोग जानते हैं। पत्तियोंको वे छन्नीमें रखकर उनपर खौलता हुआ पानी डालते हैं। पत्तियोंको वे चायदानीमें कभी नहीं डालते। पानीमें पत्तियोंका सिर्फ रंग उतर आता है। उनकी वह चाय हलके पीले रंगकी दिखती है, ऐसी लाल रंगकी नहीं, जैसीकि हिन्दुस्तानमें साधारण रीतिसे बनाई जाती है। तेज चाय तो जहर है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-८-१९३५

५२१. ग्रामसेवकोंके प्रश्नोंके उत्तर[1]

१-५. जहाँतक ग्रामोद्योगोंके कार्यक्रमका सम्बन्ध है, देशी राज्योंके और ब्रिटिश भारतके गाँवोंमें कुछ भी अन्तर नहीं है। ग्रामसेवकको किसी भी हालतमें अधिकारियों से संघर्षका अवसर नहीं आने देना चाहिए।

६-८. ग्रामसेवकको मुख्य बात यह याद रखनी है कि वह ग्रामवासियोंकी सेवा करने के लिए ही गाँवमें गया है, और यह न केवल उसका अधिकार बल्कि उसका धर्म है कि वह वहाँ ऐसा उपयुक्त आहार तथा जरूरतकी ऐसी अन्य चीजें अवश्य लेता रहे जिनसे वह अपने शरीरमें सेवा-कार्य करनेके लिए आवश्यक स्वास्थ्य और बल बनाये रखे। यह सही है कि ऐसा करते हुए ग्रामसेवकको अपनी रहनीपर ग्रामवासियोंकी अपेक्षा कुछ अधिक खर्च करना पड़ेगा, पर मेरा ऐसा खयाल है कि ग्रामवासी ग्रामसेवककी जरूरी चीजोंको ईर्ष्याकी दृष्टिसे नही देखते। ग्रामसेवकका अन्तःकरण ही उसके आचरणकी कसौटी है। वह संयमसे रहे, स्वादके लिए कोई चीज न खाये, विलासितामें न पड़े, और जबतक जागता रहे तबतक सेवा-कार्यमें ही लगा रहे। फिर भी यह सम्भव है कि उसके रहन-सहनपर कुछ लोग टीका-टिप्पणी करें। पर उस आलोचना या निंदाकी उसे परवाह नहीं करनी चाहिए। मैंने जिस आहारकी सलाह दी है वह सब गाँवोंमें मिल सकता है। दूध आम तौरपर गाँवमें मिल जाता है, और बेर, करौंदा, महुआ वगैरा अनेक फल भी गाँवोंमें आसानीसे मिल जाते हैं। इन फलोंको इसीलिए हम कोई महत्त्व नहीं देते क्यों कि वे आसानीसे मिल जाते हैं। गाँवोंमें अनेक तरहकी पत्ती-भाजियाँ काफी प्रचुरतासे मिलती हैं, पर हम

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। किसी काठियावाड़ी राज्यके एक गाँवमें ग्राम-सेवाकी दृष्टिसे बसे हुए कुछ नवयुवकों द्वारा पूछे गये ये प्रश्न इस प्रकार थे: (१) स्वराज्यके कामके लिए किसी देशी राज्यका गाँव पसन्द करना चाहिए या ब्रिटिश भारतका? (२) ग्रामोद्योगोंके कार्यक्रमकी दृष्टिसे इन दो मेंसे कौन-सा गाँव पसन्द करना चाहिए? (३) ब्रिटिश भारतके गाँवोंमें ग्रामोद्धारका काम तुलनात्मक दृष्टिसे क्या अधिक जरूरी नहीं है? (४) यदि हाँ, तो तमाम ग्रामसेवक ब्रिटिश भारतके गाँवोंमें जाकर क्यों न बस जायें? (५) क्या इस विषयमें कांग्रेस कोई निश्चित आदेश नहीं निकालेगी? (६) ग्रामसेवक अपनी रहनीका क्या स्तर रखें? गाँवके लोग जिस तरह रहते हैं, उस तरह तो ग्रामसेवक नहीं रह सकते। आप ग्रामसेवकोंको दूध और फल देनेसे मना नहीं करते। किन्तु ग्रामवासियोंको तो ये चीजें कभी नसीब होती नहीं। तब ग्रामसेवकोंका दिल इन चीजोंको किस तरह ग्रहण कर सकता है? (७) यह एक निर्विवाद बात है कि हमारे देशमें करोड़ों मनुष्य भूखों मर रहे हैं। हम भी अगर भूखें रहें तो उनकी सेवा हम किस तरह कर सकते हैं? भूखे रहकर तो सेवा होती नहीं। किन्तु कुटुम्बका नियम भिन्न है। कुटुम्बमें एक भाई दूसरे भाईको भूखों नहीं मरने देगा, बल्कि अपने हिस्सेकी रोटीमें से उसे टुकड़ा दे देगा। (८) जीवनकी कमसे-कम आवश्यकताएँ क्या होनी चाहिए?

केवल अपने अज्ञान या आलस्यके कारण उन्हें उपयोगमें नही लाते। मैं खुद आजकल ऐसी अनेक प्रकारकी हरी पत्तियाँ खा रहा हूँ जिन्हें मैंने पहले कभी जीभपर नही रखा था। पर अब मुझे ऐसा मालूम होता है कि मुझे ये सब पत्तियाँ पहलेसे ही खानी चाहिए थी। गाँवमें गाय रखना पुसा सकता है और अपना खर्च तो वह खुद निकाल सकती है। मैंने यह प्रयोग किया नही है, किन्तु मुझे लगता है कि यह चीज सम्भव होनी चाहिए। मेरा यह भी खयाल है कि ग्रामसेवकके जैसा आहार ग्रामवासियोको भी मिल सकता है और उसे वे ले सकते है, और इस तरह ग्राम-सेवकके जैसा रहन-सहन रखना ग्रामवासियोंके लिए भी कोई असम्भव बात नही है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-८-१९३५

५२२. वस्त्र-स्वावलम्बन

बिहारके मधुपुर खादी-केन्द्रसे यह खबर आई है कि १० गाँवोमें १९ व्यक्तियोने अपने काते हुए सूतकी १६६॥ गज खादी अपने उपयोगके लिए बुनवायी और २२ गाँवोमें ८२ व्यक्तियोंने अपना काता हुआ सूत देकर उसके बदलेमें ७०९ गज खादी उक्त केन्द्रसे ली। समाचार सुन्दर है।

मलाबारके पय्यानूर और नीलेश्वर गाँवसे यह सुन्दर समाचार आया है कि वहाँ कपासका बीज लोगोंको दिया गया और उन्होंने स्वयं सूत कातने का सकल्प करके वह बीज बोया। हमारे देशमें खुद सूत कातने के लिए कपास बोनेका चलन जब गाँव-गाँवमें चल जायेगा, तब खादी लोगोको सिर्फ उनकी फुरसतके वक्तमें की हुई मेहनतके मोल पड़ जायेगी। अपने घरोमें कपास बोनेवालो को खादीकी तमाम क्रियाएँ सीखनी होगी। असममें अनेक घरोंमें रेशमका काम इसी तरह होता है। रेशमका प्रचार घर-घर नही हो सकता। रूईको हम व्यापक रूप दे सकते हैं, और एक जमानेमें तो वह सार्वत्रिक थी भी। ऐसा करने का मतलब यह है कि राष्ट्रकी आयमें वृद्धि भी खासी अच्छी हो जायेगी और जो करोड़ो मनुष्य इस देशमें कई महीने बेकार पड़े रहते है उन्हें काम देनेके लिए एक सर्वांग सुन्दर योजना भी बन जायेगी।

कहने में तो यह चीज आसान है, पर इसे व्यावहारिक रूप देना बडा मुश्किल है। मगर यह असम्भव तो किसी भी तरह नही। इसमें कोई भारी पूँजी लगाने की जरूरत नही। जो क्रियाएँ सीखनी है, वे अत्यन्त सरल है। और जिन औजारोकी जरूरत पड़ती है वे सब गाँवमें मौजूद है, या झट बनाये जा सकते है। बडीसे-बड़ी बाधा तो यह है कि लोग नई लीकपर चलने या बुद्धि लगाने के लिए तैयार नही। कई पीढ़ियोंतक मजबूरन बेकार पड़े रहने और उस बेकारीके कारण भूखों मरते रहने से उनमें आज न तो आशा रही है, न शक्ति। उनकी जीनेकी इच्छातक मर गई है। लोगोंमें जीवित रहने की भी इच्छा न रहे, इस निराशासे बढकर विपत्ति किसी राष्ट्रके

लिए और हो ही क्या सकती है? पर जिन लोगोंमें यह निराशा नहीं आई है उन्हें अपने ध्येयपर अखण्ड श्रद्धा रखकर पहलेसे भी अधिक उत्साहके साथ काम करना होगा। निश्चय ही उनकी श्रद्धा बड़ेसे-बड़े पर्वतोंको भी लाँघ जायेगी। इस सुजला-सुफला भूमिमें जहाँ बिना भारी श्रम और सूझके काफी अन्न और वस्त्र पैदा किया जा सकता है, हताश होनेकी कोई जरूरत नहीं।

किन्तु इस आशाको हमें खादी-शास्त्रके निरन्तर बढ़नेवाले ज्ञानके आधारपर प्रगतिशील कार्यमें परिणत करना है। चरखा संघकी ओरसे समय-समयपर जो सूचनाएँ निकलती हैं, उनका खादी-सेवकोंको अनुसरण करना चाहिए, और उन्हें जिन ग्रामवासियोंकी सेवा करनी है, उनकी तमाम आपत्तियोंको भी पहलेसे ही जान लेना चाहिए। इसके लिए उन्हें ग्रामवासियोंके प्रगाढ़ सम्पर्कमें आना चाहिए। इस सम्पर्कके साथ-साथ उनके हृदयमें ग्रामवासियोंके प्रति सहानुभूति और विश्वासकी वृत्ति होनी चाहिए। ग्रामवासियोंके सामने उन्हें आश्रयदाताके रूपमें नहीं जाना चाहिए। उन्हें तो वहाँ उन स्वयंसेवकोंके रूपमें जाना चाहिए, जो अबतक अपने कर्त्तव्यके सम्बन्धमें असावधान रहे हैं। इतनी प्रारम्भिक शर्तोंका अगर पालन किया जाये, तो बाकीका सारा काम आपसे-आप उस तरह चल निकलेगा, जिस तरह कि नित्य रातके बाद दिन आ जाता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-८-१९३५

५२३. पत्र : रावजीभाई एन० पटेलको

२४ अगस्त, १९३५

चि० रावजीभाई,

डाहीबहनकी दवा हरिभाई कर सकते हैं; उनसे दवा करानेमें क्या तुम्हें सन्तोष नहीं होगा? यदि तुम चंचलबहनको समझा सको तो अवश्य समझाना। जब एक ही जैसे दो कर्त्तव्य आ पड़ते हैं तो बहुत मुश्किल पैदा हो जाती है। तुम वहाँकी स्थितिसे अपेक्षाकृत अधिक परिचित हो तो तुम जैसा ठीक समझो, उस तरह उसका पथ-प्रदर्शन करना।

यदि तुम वहाँ गायका अच्छा और शुद्ध घी तैयार करा सको तो यह काम अवश्य करना। किन्तु घी-उत्पादकको क्या मिलता है, यह पता लगा लेनेके बाद ही उसमें हाथ डालना। हमें उत्पादकोंके जीवनमें प्रवेश करना है। अतः वे क्या खाते-पीते हैं, कहाँ रहते हैं, कहाँ सोते-बैठते हैं, कैसा आचरण करते हैं और क्या करते हैं आदि बातोंकी हमें जानकारी होनी चाहिए। अतः तुमने नमूनेके तौरपर मुझे जो घी भेजा है उसका इतिहास तुम्हें जानना चाहिए। तुम्हारे सभी भण्डारोंमें हर वस्तुका इतिहास दिया जाना चहिए; उदाहरणके लिए — "लिंबासीके भरवाड़ मेघराज द्वारा तैयार किया गया, जिसने काममें . . . घंटे लगाये; . . . दूधकी कीमत . . .;

प्रति घंटा मजदूरी . . .; आढ़तियाका कमीशन . . .।" और यह सूचना हर ग्राहकको दी जानी चाहिए। मुझसे यह मत कहना कि इसमें बहुत-सा समय चला जायेगा। यदि काम एक बार ढंगपर आ जायेगा तो फिर उतना समय नहीं लगेगा। संघ चाहे जो दर तय करे किन्तु तुम तो दो पैसे प्रति घंटेसे कम मजदूरी मत देना। जिन वस्तुओंका प्रति घंटा औसत उत्पादन निकाला जा सकता है उनमें कामकी मजदूरी तुम्हें घंटेके हिसाबसे तय करनी चाहिए। यह इस प्रकार किया जा सकता है। जैसे यदि एक सामान्य कातनेवाला १५ अंकका ४०० [गज][1] सूत एक घंटेमें कातता हो तो हम उसे १५ अंकके ४०० [गज][2] की दो पैसे मजदूरी दें। आजकल 'हरिजन' में बहुत-सी नयी चीजोंकी चर्चा की जा रही है। मैं चाहता हूँ कि वे सब लेख तुम पढ़ते रहो। दिवालियेपनकी प्रथा चंचलके पिता-जैसे लोगोंकी सहायताके लिए आरम्भ हुई थी। बादमें धूर्तोंने उसका दुरुपयोग किया, इससे वह प्रथा बदनाम हो गई। किन्तु मैं तो यह सलाह अवश्य दूंगा कि उन्हें उक्त प्रथाका सहारा लेकर चिन्तासे मुक्ति पा लेनी चाहिए। उसके बाद भले ही वे बाकी बचे कर्जको पटा देनेकी आशा मनमें संजोये रहें। फिलहाल तो नादान लेनदारोंकी नादानीके कारण वे निश्चिन्ततापूर्वक कोई काम भी नहीं कर सकते।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९००६)से।

५२४. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

वर्धा,
२४ अगस्त, १९३५

बा,

तुझे तो वहाँ भगवान्‌ने ही भेजा था न? फिर वहाँ मनु भी है। इसलिए मैं निश्चिन्त बैठा हूँ। तू सिंहनी है और बीमारियोंसे डरनेवाली नहीं है।[3] अतः तुझसे जो बन सके सो दृढ़तापूर्वक करती रहना। रामकी शरण लेना। मनुसे रोज पत्र लिखवाती रहना। अन्सारी तो वहाँ होंगे ही। इतना काफी है। उनसे अच्छा और कोई डॉक्टर नहीं है। बहुत करके ब्रजकृष्ण भी वहीं है। और फिर प्यारेलालके लोग तो वहाँ हैं ही।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १५४९)से, सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला

१ और २. मूल में 'तार' ही था, जिसे बाद में गांधीजी ने सुधार दिया था; देखिए "पत्र : रावजीभाई एन० पटेलको", २७-९-१९३५।

३. देवदासको टाइफाइड हो गया था।

५२५. पत्र : मनु गांधीको

२४ अगस्त, १९३५

चि० मनुड़ी,

मुझे रोज देवदासके समाचार देती रहना। तेरा पोस्टकार्ड मिल गया है। आशा है, तू अब बिलकुल ठीक हो गई होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५०) से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला

५२६. पत्र : जयसुखलाल गांधीको

२४ अगस्त, १९३५

चि० जयसुखलाल,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। शंकरलालने भी मुझे तार दिया था। जो होनेवाला होता है सो तो होता ही है। उसमे किसको दोषी मानें? मेरी नजरमें उमियाके[1] लिए एक ही जगह है; वह है तुम्हारे पास अमरेलीमें। अमरेलीमें जिस डॉक्टरकी मदद मिले हमें उसीमें संतोष मानना चाहिए। सभी सामान्य सुविधाएँ वहाँ मिल जायेंगी। बम्बई या किसी अन्य जगह जाना मुझे निरर्थक लगता है। यदि वहाँका अस्पताल अच्छा हो और उसे आसानीसे वहाँ रखा जा सके तो वह वहीं रहे। मैं समझता हूँ कि उसकी बीमारीमें प्राकृतिक चिकित्सा पर्याप्त होगी, बशर्ते कि उसमें इतनी श्रद्धा और इतना धीरज हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. जयसुखलाल गांधीकी कन्या उमिया अग्रवाल।

५२७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२४ अगस्त, १९३५

भाई वल्लभभाई,

एन्ड्रयूज बीमार पड़ गये, इसलिए रुक गये है, . . .[1]

जयकरका जो उत्तर आया, वह साथमें है। अभी तो इसे सँभालकर रख लेना। मैंने पूछा है कि उनकी किससे बातें हुई थी? [तिलक स्वराज फण्डके] प्रबन्धमें क्या दोष देखा?[2] उनका जवाब मिलनेपर तुम्हें भेजूँगा। उनकी मरजी हो वैसा करें।

देवदासका तार साथमें है। कहना होगा, उसने हमें स्तब्ध कर दिया है।[3] मैंने तार किया है कि पूर्ण आराम ले और उपवास करे तो कोई खतरा नही है। राजाजी तो जायेंगे ही। बा और मनु भी वही हैं। अन्सारी-जैसे डाक्टर हैं। फिर क्या चाहिए? मै बिलकुल निश्चिन्त हूँ।

कुमारप्पा आज वहाँ पहुँच रहे हैं। उनके लिए जो करना जरूरी हो वह करना। कल मैंने लिखा है।[4] डॉक्टरी जाँच हो जानेपर वापस भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १८२

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ अंश छोड़ दिया गया है।
२. देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", १६-८-१९३५।
३. देखिए "पत्र : कस्तूरबा गांधीको", २४-८-१९३५, पा० टि० ३; देखिए अगला शीर्षक भी।
४. देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", २३-८-१९३५।

५२८. पत्र : देवदास गांधीको

२४ अगस्त, १९३५

चि० देवदास,

तेरे तारसे मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। जब मैं वहाँ[1] था तभी मैंने तेरा अनियमित जीवन तो देखा ही था। वह मुझे जरा भी नहीं रुचा। अभी तो तू ऑफिसमें अकेला है। फिर, तुझे लक्ष्मीकी[2] देखभाल भी करनी पड़ती है और खानेकी अनियमितता बनी रहती है। बा और मनु वहाँ है और फिर ताराकी[3] बीमारी। इतना सब बोझ तेरी शक्तिसे बाहर लगता है। अब भी अगर मेरे तारके अनुसार अमल करने लगा हो तो बहुत है। . . .[4]

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५२९. पत्र : द्रौपदी शर्माको

२४ अगस्त, १९३५

चि० द्रौपदि,

तुमारा खत मिला। ऐसे ही लिखा करो। साथमें शर्माका खत है। उसे पढ़कर वापिस करो। लड़कोंमें से जो लिख सके उसको लिखने का कहो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १८९ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

१. दिल्लीमें।
२. देवदास गांधीकी पत्नी।
३. देवदास गांधीकी पुत्री।
४. साधन-सूत्रमें पत्र अपूर्ण है।

५३०. पत्र : वियोगी हरिको

२४ अगस्त, १९३५

भाई वियोगी हरि,

'हिं० स्व०'[1] में किसने लिखा है? मैंने ऐसी कुछ बात किसीके सामने कही थी सही। उसी दिन मुझे स्मरण है कि महादेवने कहा था कि 'ह० [रिजन] बंधु' और 'ह०[रिजन] से०[वक]' में गलतीयां आ जाती है इसी [लिए] कैसा अच्छा होता यदि अनुवाद यहांसे भेजा जाता। महादेवने गूजरातीके अनुवाद आरंभ भी कर दिया। गलतीयां हो जाती है इसमें दोष किसीका नहिं निकाल सकते हैं। अनुवाद बहूत कठिन कार्य है। दो भाषापर जब एक-सा काबू रहता है तब ही अच्छा अनुवाद हो सकता है। मुझे खेदके साथ कबूल करना पड़ेगा कि मैं तीनमें से एक भी अखबार नही पढ़ पाता हूं। 'हरिजन'की सब वस्तु मेरी दृष्टिसे गुजराती हैं इसलिये उसमें क्या रहता है मैं जानता रहता हूं। लेकिन दूसरे दो में क्या आता है वह नहिं जानता। महादेव कुछ पढ़ लेता है सही लेकिन हम सब दयाके पात्र हैं। कामका बोज इतना रहता है कि जितना हो सकता है इससे ईश्वरका अनुग्रह मानकर सन्तुष्ट रहते हैं।

सांसीके[2] बारेमें मलकानीसे बात करने की आशा रखता हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३)से।

५३१. पत्र : नारणदास गांधीको

वर्धा

२५ अगस्त, १९३५

चि० नारणदास,

हरिलालके बारेमें सन्तोषजनक समाचार कैसे मिल सकता है?

मैथ्यूका जो हो जाये सो ठीक। जबतक वह मेरी शर्तोंका पालन नही करता तबतक उसे अधिक नहीं दिया जा सकता।

वजुभाई आदिको लिखे पत्रकी नकल इसके साथ है। आज ही मैं यह लिख पाया हूँ।

१. हिन्द स्वराज; मूलमें ये प्रारम्भिक अक्षर ही दिये गये हैं।

२. उत्तर भारतकी एक जन-जाति।

साँपको गलेमें डालने को मैं उत्सुक नहीं था। मैं समझता हूँ कि यह साँप जहरीला नहीं था। जमनालालजी इस आदमीको अच्छी तरह जानते थे। फिर भी तुम्हारी चेतावनी ठीक है। मुझे इस प्रकार ऐसे प्रयोगोंमें नहीं पड़ना चाहिए।[1]

अम्तुस्सलाम यहीं है। वह काममें बहुत व्यस्त रहती है इसलिए नहीं लिखती। मैं अब उससे लिखने को कहूँगा।

शर्माको रवाना कर दिया है। वह प्राकृतिक चिकित्साका ज्ञान प्राप्त करने गया है। उसकी सादगी, सत्यवादिता और उत्साहकी छाप मेरे मनपर पड़ी है। देखूँ, इस प्रयोगका क्या परिणाम निकलता है।

पिताजी की तबीयतके बारेमें मैं क्या कहूँ? वे दोनों अभी [जीवनकी डोरको] खींचते जा रहे हैं, यही आनन्द और आश्चर्यकी बात है। उन्हें मेरे दण्डवत् प्रणाम तो तुम हर पत्रमें मान ही लिया करो।

नवीन यहाँ पहुँच गया है। उसे अंग्रेजी और गणित सिखाये जा रहे हैं। मैं उससे बढ़ई आदिका काम भी लेनेवाला हूँ। तुम्हारे पास जो छोटा-सा कारखाना है क्या तुम उसका उपयोग करते हो? यदि न करते हो तो मैं उसे यहाँ ले लूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८४७१ से भी, सौजन्य: नारणदास गांधी

५३२. पत्र: अनसूयाबहन साराभाईको

२५ अगस्त, १९३५

चि० अनसूयाबहन,

तुम्हारी वार्षिक प्रसादी मिली है। स्वास्थ्य ठीक रखना। काम बहुत है, हम थोड़े हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (जी० एन० ११५६१) से।

१. देखिए "पत्र: श्रीपाद दामोदर सातवलेकरको", १२-८-१९३५ भी।

५३३. वस्तु-विनिमय प्रणालीके विषयपर निबन्ध-प्रतियोगिता

वर्धा

२६ अगस्त, १९३५

श्री उप्पुलर वेंकटकृष्णय्या बेजवाड़ाके निकट गुनडालामें १९२७ में संस्थापित खद्दर सस्थानम्के न्यासी हैं। उनको वस्तु-विनिमयकी प्रणालीपर बड़ा विश्वास है और वे अपनी संस्थाके आंतरिक तथा बाहरी लेन-देनमें, विशेषकर खाद्य तथा वस्त्रोंके उत्पादन एवं वितरणके मामलेमें, इसी प्रणालीको कुछ हदतक अमलमें लाते रहे हैं।

उनका विश्वास है कि वर्तमान आर्थिक मन्दीका एकमात्र इलाज यही है और उनका खयाल है कि यह प्रणाली वर्तमान मौद्रिक प्रणालीके कारण उत्पन्न होनेवाली अनेक बुराइयोको दूर कर सकती है। उनका यह भी विश्वास है कि भारतमें कृषिके विकास, खादी और अन्य हस्त-शिल्पो तथा ग्रामोद्योगोंके पुनरुद्धारके लिए और अहिंसाके सिद्धातके प्रचार तथा व्यवहारके लिए वस्तु-विनिमय प्रणालोको अपनाना अत्यावश्यक है। उनका मत है कि यह प्रणाली अहिंसाके सिद्धान्तमें ही निहित है। यह जानने की उनकी उत्कट अभिलाषा है कि इस प्रणालीके वैज्ञानिक अध्ययन तथा विश्लेषणकी कसौटीपर उनके विचार कहाँतक खरे सिद्ध होते है। इसलिए उन्होने इस विषयपर लिखे जानेवाले सर्वोत्तम निबन्धपर एक पुरस्कार देनेका आयोजन किया है और अपनी इस इच्छाकी घोषणा कराने के लिए उन्होंने मुझे माध्यम बनाना पसंद किया है। मैंने भी वस्तु-विनिमय प्रणालीपर निबंन्ध आमन्त्रित करने के लिए माध्यम बनने की सहर्ष सहमति दे दी है। पुरस्कार जीतनेवाले को उसकी पसन्दके मुताबिक पाँच सौ रुपये नकद या संस्थानम्में ही बुन कर तैयार की गई पाँच सौ रुपयेके मूल्यकी असली टिकाऊ खादी दी जायेगी। नकद राशि मेरे पास जमा कर दी गई है।

निबन्धमें (जो अंग्रेजीमें होना चाहिए) वस्तु-विनिमय प्रणालीका आरम्भिक इतिहास, इसके ह्रासके कारण और इसके पुनरुद्धारकी वर्तमान सम्भावनाओपर प्रकाश डालना चाहिए। उसमें यह भी बतलाया जाना चाहिए कि पिछले कालमें इसका क्या काम रहा है और यह विश्वके भावी आर्थिक जीवनमें कौन-सी भूमिका निभा सकती है, विशेष तौरपर यह दर्शाते हुए कि भारतीय ग्राम-जीवनके कुछ या सभी कार्यक्षेत्रोंमें इसे कैसे और कहाँतक अपनाया जा सकता है। निबन्धमें इस विषयकी चर्चा होनी चाहिए कि इस प्रणालीके सफल परिचालन तथा विकासके लिए अनुकूल परिस्थितियाँ क्या होंगी और उसके लिए किस हदतक सरकारकी सहायता दरकार है और यह भी बतलाया जाना चाहिए कि यदि इस प्रणालीको अपनाया जाये तो

विनिमय किस प्रकारका हो और उसका तरीका क्या हो। निबन्धमें इस बातकी भी चर्चा की जानी चाहिए कि भारतके आन्तरिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारके विकास पर वस्तु-विनिमय प्रणालीके क्या-क्या प्रभाव पड़ेंगे।

प्रोफेसर के० टी० शाह, श्री वैकुण्ठ एल० मेहता और प्रोफेसर जे० सी० कुमारप्पाने परीक्षक बनने की सहमति देनेकी कृपा की है। प्रोफेसर कुमारप्पा इसके मन्त्रीका काम भी सँभालेंगे। सभी निबन्ध उनके नाम मगनवाड़ी, वर्धाके पतेपर भेजे जाने चाहिए और वे ३१ अगस्त, १९३६ की दोपहरतक उनको मिल जाने चाहिए। यदि कोई भी निबन्ध परीक्षकों द्वारा निर्धारित मानदण्डका न हुआ, तो कोई पुरस्कार नहीं दिया जायेगा। परीक्षाके परिणामकी घोषणा ३१ दिसम्बर, १९३६ तक कर दी जायेगी। पुरस्कृत निबन्धका प्रतिलिपि-अधिकार खद्दर संस्थानमको रहेगा। मुझे आशा है कि पुरस्कारकी राशिके नहीं, बल्कि विषयके महत्त्वके कारण ही इस पुरस्कारको जीतने के लिए एक काफी बड़ी संख्यामें प्रतियोगी आगे आयेंगे।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३१-८-१९३५

५३४. पत्र: एस० अम्बुजम्मालको

२६ अगस्त, १९३५

चि० अम्बुजम्,[1]

प्रभावती लगभग तीन सप्ताह पूर्व लौट आई थी। वह बिलकुल ठीक है। बा अभी दिल्लीमें ही है और अब देवदासकी परिचर्या कर रही है। देवदासकी हालत काफी खतरनाक है। बीमारीका अन्त पक्षाघातमें भी हो सकता है। राजगोपालाचारी वहाँ जा रहे हैं।

फिलहाल मैं कभी-कभी ही फल लेता हूँ। अनेकानेक लोग मौजूद हैं जिनकी जरूरत मेरे मुकाबले कहीं ज्यादा है।[2] मैं जब-तब सेब या संतरे ले लेता हूँ। मेरे बारेमें चिन्तित मत होना। शरीरके लिए जरूरी होनेपर मैं जरूरतके मुताबिक पर्याप्त फल लूँगा।

तुमने 'रामायण' के सम्बन्धमें लिखी जिस किताबका हवाला दिया है, वह मैंने नहीं पढ़ी है।

१. साधन-सूत्र में सम्बोधन हिन्दी में है।
२. यहाँ साधन-सूत्रमें कुछ भूल रह गई जान पड़ती है, जिसे सुधारकर अनुवाद किया गया है।

मुझे आशा है कि किंची जिस बैंकमें काम सीख रहा है, वहीं उसे माकूल जगह मिल जायेगी।

सस्नेह,

बापूके आशीर्वाद[1]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०५) से; सौजन्य : एस० अम्बुजम्माल

५३५. पत्र : सी० आर० श्रीनिवासनको[2]

२६ अगस्त, १९३५

काम इतना अधिक है कि मैं वास्तवम, और शाब्दिक अर्थोंमें भी, जैसे बिलकुल रीत गया हूँ। जब भी माँगा जाये तब एक सन्देश प्रस्तुत कर देनेकी प्रतिभा मुझमें है नहीं। गाँवोंका यह काम इतने अधिक श्रमकी अपेक्षा रखता है और इतना दुष्कर है कि यदि मेरी चले तो सभी किस्मका लिखना-लिखाना बन्द करके, अपने-आपको किसी एक गाँवमें खपा दूँ और अपनी सामर्थ्य-भर वहीं काम करता रहूँ; और मैं चाहूँगा कि यह काम चुपचाप, पूरी शान्तिसे करूँ। इन परिस्थितियोंमें यदि मैं आपको सन्देश न भेज पा रहा हूँ तो आप मुझे क्षमा करने की कृपा करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

५३६. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

२६ अगस्त, १९३५

भाई मावलंकर,

मणिबहनके अभी-अभी मिले पत्रसे मालूम हुआ कि तुम्हारी पत्नीको हलका टाइफाइड बुखार हो गया है। आशा करता हूँ, बुखार उतर गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२४४) से। एस० एन० २२८६० से भी

१. साधन-सूत्रमें यह हिन्दीमें है।

२. मद्राससे प्रकाशित स्वदेशमित्रन् वाले।

५३७. पत्र : देवदास गांधीको

२६ अगस्त, १९३५

चि० देवदास,

आज तार तो भेजा है। तेरे तारकी आशा थी, लेकिन आया नहीं। तू करे भी तो क्या? और वहाँसे तार भेजने की सूझे किसे? वा का-पूरा पत्र आया है, यह अच्छी बात है? वा ने लिखा है कि तू घबरा गया है। लेकिन बीमारीके कारण तू घबराये क्यों? हम अन्तिम परिणाम जानते हैं और उसके लिए तैयार है तो फिर घबरायें क्यों? लेकिन तेरे विदा लेनेमें बहुत देर है। लेकिन अभी तुझे इसी देहसे बहुत-सी सेवा करनी है। इसलिए संकल्प करके तू स्वस्थ हो जा। मैं तो तुझे खुराक आदिके बारेमें ही सलाह दे सकता हूँ। ईश्वर तेरी रक्षा करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५३८. पत्र : अवधेशदत्त अवस्थीको

२६ अगस्त, १९३५

चि० अवधेश,

जो धर्म तुमारे सामने तात्कालिक पैदा हो उसका पालन करने से सब अच्छा ही होगा।

जो सदस्य अपनी संस्थाके नियमोंको जान-बूजकर भंग करते हैं उनको उस संस्थामें रहने का कोई अधिकार नहीं है।

बापुके आशीर्वाद

श्री अवधेशदत्त अवस्थी,
गाँव — रम्पुरवा
पो० बड़ापूर
जि० बहराइच, सं० प्रा०

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२१८) से।

५३९. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
२७ अगस्त, १९३५

प्रिय अमृत,

चौंको मत। मैं बायें हाथसे लिख रहा हूँ, जिससे कि दाहिना सोमवारको ठीकसे काम कर सके।

तुम्हारे दो पत्र और तार ठीक समयपर आ गये थे। तुम्हारे यहाँ गुंजाइश हो सके, तो शायद देवदास भी पहुँचेगा। बेचारा! उसे पक्षाघात होनेका खतरा है। जमनालालजी ने कल तार दिया था कि अन्सारीने उसे आबोहवा बदलने के लिए शिमला जानेकी सलाह दी है। शिमलाका नाम उन्होंने तुम्हारी वजहसे ही लिया होगा। शिमलामें और ऐसी क्या खासियत हो सकती है? मैं तो सिर्फ इसलिए लिख रहा हूँ कि उसके अनुरोधके लिए तुम पहलेसे तैयार रहो। यदि अनुरोध किया जाये तो तुम पहलेसे तय कर सको कि क्या कहोगी। मैं एक बार फिर तुमको आगाह किये देता हूँ। यदि समझो कि नहीं करना है तो कभी भी मना करने में संकोच मत करना। मैत्री बनाये रखने का यही एक तरीका है। मेरे लिए तुम एक मित्रसे कहीं अधिक प्रिय बन गई हो। लेकिन अगर तुम्हें रानी बिटिया बने रहना है तो मुझे तुम्हारी वफादारीपर अनुचित भार नहीं डालना चाहिए। इसपर भी मेरा जीवन साथी-सँगातियोंसे इतना भरा-पूरा है और सम्बन्धोंमें इतनी प्रगाढ़ता आ जाती है कि मुझसे अन्तरंग सम्बन्ध रखनेवाले हर व्यक्तिको अधिकसे-अधिक भार वहन करना पड़ता है। ईश्वर तुमको अपने ऊपर स्वयं लिया यह भार वहन करने की सामर्थ्य दे!

शम्मीको अब उतनी ऊँचाईसे शिमलासे कुमारप्पाको स्वास्थ्य-सम्बन्धी हिदायतें नहीं भेजनी पड़ेंगी, क्योंकि कुमारप्पाको अब वह अपनी प्रत्यक्ष देखरेखमें रख रहा है। उससे कहना कि मैं उसका भेजा हुआ चुकन्दर रोज नियमपूर्वक खा रहा हूँ। अमतुस्सलामने उसे ठीकसे पकाने का तरीका मालूम कर लिया है।

गोपीचन्दजी के साथ पुरीके बारेमें मेरी कोई ज्यादा बात नहीं हुई। तुम्हारे भेजे प्यारेलालके पत्रसे मुझे लगता है कि शिमलामें उसका मन नहीं रमा। क्या वहाँका ही कोई ऐसा आदमी नहीं जो यह काम सँभाल सके? मैं जी० को लिख रहा हूँ।

चौधरीका दिया कागज तुमको कैसा लगा? तुम जैसे कागज चाहती हो, उनका नाप और रंगोंके नमूने मुझे भेज देना।

मण्डलकी बैठकें[1] काफी अच्छी रहीं। तुम मौजूद रहतीं तो बहुत अच्छा होता। लेकिन मैं जानता हूँ कि तुम्हारे लिए चले जाना ही ठीक था। बेशक, तुम यहाँ जब भी आ सको, आओगी और अपना काम सँभाल लोगी।

अपने दोनों विश्वस्त नौकरोंको मेरी ओरसे स्नेह देना और कहना कि मुझे दुःख है कि मैं चाहते हुए भी उनका और अधिक परिचय प्राप्त नहीं कर सका। लेकिन मेरे पास काम इतने रहते हैं कि ऐसी बातोंके लिए समय नहीं मिल पाता।

हम सबकी ओरसे स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५४२) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६३५१ से भी

५४०. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

२७ अगस्त, १९३५

भाई वल्लभभाई

बाबोके[2] टॉसिल्सका हाल कल मणिके पत्रसे मालूम हुआ। इतनसे बच्चके इतने बड़े टॉसिल्स? इसका क्या कारण हो सकता है? क्या डॉक्टर कुछ बता सकेंगे? . . .[3]

दरबार[4] और भास्कर बीमार हैं। ऐसी स्थितिमें तुमने क्या मार्ग निकाला? क्या महादेव की जरूरत है?

मोरारजी और चंदूलाल दो-तीन दिन ठहरेंगे। अमेरिकाके स्वामी योगानन्द यहाँ हैं।

देवदासका पत्र ही तुम्हें भेज रहा हूँ। राजा[5] आज यहाँसे गुजरे थे। जमनालालका तार आया है, उससे मालूम होता है कि अभी तो जान खतरेमें नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

१. देखिए "चर्चा: निर्वाह-योग्य न्यूनतम मजदूरीके सम्बन्धमें", २२/२३-८-१९३५।

२. विपिन, डाह्याभाईका बड़ा पुत्र।

३. साधन-सूत्रमें कुछ अंश छोड़ दिया गया है।

४. गोपालदास अम्बाईदास देसाई।

५. चक्रवर्ती राजगोपालाचारी।

[पुनश्च :]

मोरारजी एक-दो दिनमें वहाँ आयेंगे। उन्हें रोक लेना। देवदासका पत्र रामदासको भेज देना।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १८३

५४१. पत्र : लीलावती आसरको[1]

[२७ अगस्त, १९३५ के पश्चात्][2]

यह कोई नहीं समझा होगा कि [पत्र] मेरा था। प्रथम पुरुषमें भी 'वूड' इच्छाको सूचित करता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२५४) से। सी० डब्ल्यू० १०१२८ से भी, सौजन्य : लीलावती आसर

५४२. पत्र : क० मा० मुंशीको

वर्धा
२८ अगस्त, १९३५

भाई मुंशी,

मैंने तुम्हें जो सन्देश[3] भेजा है, तुम उतने में ही सन्तोष करना। आजकल तो आश्रममें इतने लोग रह रहे हैं कि मुझे एक मिनटकी भी फुरसत नहीं मिलती। आज रात तो ११.२५ के बाद सोनेको मिला और १.५० पर उठ गया हूँ। यह पत्र लिखते समय २.४० हुए हैं। सुबह ६ बजेसे दैनिक कामोंमें जुट जाना है।

बापूके आशीर्वाद

एडवोकेट मुंशी
रिज रोड, बम्बई

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५८५) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

१ और २. लीलावती आसरके २७ अगस्त, १९३५ के पत्रके हाशियेमें गांधीजी ने ये पंक्तियाँ लिख दी थीं। अपने इस पत्रमें लीलावती आसरने गांधीजी को लिखा था कि उसके द्वारा भेजा गया पिछला एक पत्र उसे वापस लौटा दिया गया है।

३. हंसके लिए; देखिए "सन्देश : 'हंस' को" ५-८-१९३५।

५४३. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२८ अगस्त, १९३५

प्रिय चार्ली,

गुरुदेवकी जरूरतोंका[1] भार तुमको अपने ऊपर ले लेना चाहिए। मैं सोलहो आने सहमत हूँ कि उनको उगाहीके लिए खुद नहीं निकलना चाहिए। मैं देखूँगा कि मैं इसमें कितना-कुछ कर सकता हूँ।

वेशक, तुमको दौड़-धूप बन्द करके लेखन-कार्यमें जुट जाना चाहिए,— पत्रिकाओंके लिए नहीं; बल्कि स्थायी महत्त्वकी चीजें लिखने में।

और तुमको माँड़ और प्रोटीनयुक्त खाद्योंसे बचना चाहिए। तुम्हारे लिए तो फल, कच्चा दूध, विना उवले अंडे, ये ही चीजें ठीक हैं।

सस्नेह,

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१५६) से।

५४४. पत्र : अमृतकौरको

२८ अगस्त, १९३५

प्रिय अमृत,

जब तुमको कण्ठ-प्रदाह हो गया तो उतनी साफ हवामें तुम्हारे रहने और बढ़िया शहद तथा ताजे फल खानेका क्या फायदा? आशा है, अब वह सब ठीक हो गया होगा।

मैं तुम्हारा पत्र कुमारप्पाको दे रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि उसे वहाँ अकेलापन नहीं सतायेगा।

तुमको यह कागज और आवरण कैसा लगा? सब यहीं तैयार किया गया है। क्या किनारी ज्यादा खुरदरी है? रंग कैसा लगा?

तुमको चावल और तकली भेजने की याद रखूँगा।

१. विश्वभारतीके लिए चन्दा; देखिए खण्ड ६२, "पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", १३-१०-१९३५।

देवदासके बारेमें मुझे कुछ अच्छा समाचार मिला है।

तुम दोनोंको स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५४३) से, सौजन्य. अमृतकौर, जी० एन० ६३५२ से भी

५४५. पत्र: एफ० मेरी बारको

वर्धा
२९ अगस्त, १९३५

चि० मेरी;

मेरा खयाल है कि सालके बाकी महीनोंके दौरान मैं वर्धामें रहूँगा। क्या तुम उन कांग्रेसियोंके नामका पता लगा सकती हो, जिन्होंने इमारतोंको तोड़ा-फोड़ा था? यदि वहाँ कांग्रेसियोंने ऐसी हरकतें की हैं, तो मैं अपने प्रति मिशनरियोंका सदेह समझ सकता हूँ। वे लोग कैसे विश्वास करें कि जहाँ ऐसी हरकतें की गई हैं, मेरी कोई परवाह न करते हुए ही की गई हैं? यदि पूर्णत. नीरोग हो सको, तो तुम्हारा इलाज और लम्बा खिंचने की मुझे कोई परवाह नहीं। मेरी इंघम नागपुरके मेयो अस्पतालमें है। सुमित्रा बैतूल अस्पतालमें है। हम उनके लिए प्रार्थना करें। फिलहाल खादीका काम गड़बड़ा गया है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०५७) से। सी० डब्ल्यू० ३३८७ से भी; सौजन्य. एफ० मेरी बार

५४६. पत्र : पुरुषोत्तम एल० बाविशीको

२९ अगस्त, १९३५

भाई पुरुषोत्तम,

तुम्हारे पत्र और बीज मिल गये हैं। फिलहाल मीराबहनने खेतीका कार्य-भार छोड़ दिया है। यह सब डाह्याभाईके हाथमें है। तुमसे जितना होता है उतना करते हो, इतना पर्याप्त है। कैक्टसके बारेमें मैं समझता हूँ। कैक्टसके तुम क्या-क्या उपयोग मानोगे? क्या तुमने कभी इसका तजुर्बा किया है?

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२८) से। सी० डब्ल्यू० ४७४९ से भी; सौजन्य : पुरुषोत्तम एल० बाविशी

५४७. तार : वाइसरायको

वर्धा

३० अगस्त, १९३५

कमला नेहरूके स्वास्थ्यके बारेमें जर्मनीसे अभी-अभी एक एक्सप्रेस तार मिला है। "लगातार मतली और कै के कारण हालत गम्भीर।" इस गम्भीर समाचारको देखते हुए मैं पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी तुरन्त बिना शर्त रिहाईका अनुरोध करता हूँ, जिससे कि वे यदि सम्भव हो तो अगले मंगलवारको 'डच एयर मेल'का विमान पकड़ सकें।[1]

[अंग्रेजीसे]
लीडर, ५-९-१९३५

१. इसी प्रकारके तार बंगाल और संयुक्त प्रान्तके गवर्नरोंको भेजने का समाचार था। भारत सरकारने भारत-मन्त्रीसे परामर्श करने के बाद २ सितम्बरको जवाहरलाल नेहरूको बिना शर्त रिहा कर दिया। वे ३ सितम्बरको अलमोड़ा जेलसे इलाहाबादके लिए और वहाँसे ४ सितम्बरको जर्मनीके लिए रवाना हो गये।

५४८. पत्र : कुँवरजी के० पारेखको

३० अगस्त, १९३५

चि० कुँवरजी,

कान्ति सावली गया है। उसे लिखे तुम्हारे पत्रसे मालूम हुआ कि तुम बीमार पड़े हो। ऐसा कैसे हुआ? तुम कबसे बीमार हो? बली आजकल पत्र कहाँ लिख पाती है? यदि तुम्हें उत्तर नहीं मिलता तो क्या इसका कारण रामीका आलस्य ही नहीं हो सकता? क्या रामी जब चाहे तब वापस नहीं लौट सकती? तुम्हें आरामकी जरूरत है तो क्यों नही राजकोटमें ही आराम लेते?

बापूके आशीर्वाद

श्री कुँवरजी खेतशी
झण्डू फार्मेसी
सयानी रोड, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२३) से। सी० डब्ल्यू० ७०३ से भी; सौजन्य : नवजीवन न्यास

५४९. पत्र : कान्ति गांधीको

३० अगस्त, १९३५

चि० कान्ति,

तेरी अनुपस्थितिसे रामचन्द्रनको बहुत आश्चर्य और दु:ख हुआ। उसका कहना है कि वह तुझसे मिले बिना कदापि नही जायेगा। वह तो कहता है कि "मैं उसके पीछे-पीछे सावली जाऊँगा।" मैंने जब यह कहा कि मैं उसे वापस बुला दूंगा, तभी वह शान्त हुआ। उसका तेरे प्रति असीम प्रेम है। ऐसी स्थितिमें मैं उससे सोमवारसे पहले जानेको कैसे कह सकता हूँ? तू सोमवारको जल्दी ही पहुँच जाना। इससे पहले तो तू पहुँच नही सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३००) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

५५०. पत्र : वालजी गो० देसाईको

३० अगस्त, १९३५

चि० वालजी,

चित्रेके बारेमें समझ गया हूँ। लेख मिल गया है। मुंशीको मैंने जो प्रमाणपत्र दिया है वह, साहित्यके इतिहासके लिए उन्होंने जो सामग्री जुटाई है, उसके बारेमें है। उसे तुम प्रकाशित पुस्तकमें देख सकोगे। उनके उपन्यासोंका कथा-प्रवाह मनुष्यको कहाँ ले जाता है इस दृष्टिकोणसे मुझे उनकी पुस्तकें जिस मात्रामें पढ़नी चाहिए उतनी मैंने नहीं पढ़ी हैं। उस दृष्टिकोणसे पढ़ी भी नहीं जा सकती। वैसे मुंशीने तो स्वयं यह चाहा ही है कि मैं उनकी पुस्तकें पढ़कर अपनी सम्मति दूं। आशा है, तुम सब कुशलपूर्वक होगे।

बापूके आशीर्वाद

श्री वा० गो० देसाई
गोविन्दनगर
नैनीताल (सं० प्रा०)

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४७४) से; सौजन्य : वा० गो० देसाई

५५१. पत्र : बलवन्तसिंहको

३० अगस्त, १९३५

चि० बलवन्तसिंह,

ईश्वरभाई का खत उसे दो, कांति का कांति को। तुमारे खत मिले है। हिसाब पढ लिया है। पैसे तो है ना? चाहिये तब लिखो। हिसाब अच्छा है। भाजी इ० की शोध की सो अच्छा किया। मैंने माफी[1] मांग ली वह तो आत्मकल्याण के लिये। उसका असर तुमारेपर गहरा पड़ा यह समजकर मुझे आनंद होता है। तुमारे में काम करने की शक्ति तो काफी है ही। सावलीमें तुमको स्थिरचित्तता प्राप्त हो जायगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८८०) से।

१. देखिए "पत्र : बलवन्तसिंहको", १५-८-१९३५।

५५२. पत्र : एक ग्राम-सेवकको[1]

[३१ अगस्त, १९३५ के पूर्व]

अगर आप वहाँ अच्छा और शुद्ध गायका घी बनवा सकें तो इस उद्योगपर अपना ध्यान अवश्य केन्द्रित कीजिए। मगर पहले तो आपको इस बातका पता लगाना चाहिए कि क्या इससे घी बनानेवाले को गुजारेके लायक मजदूरी मिल जाती है। हमें श्रमिक-वर्गके जीवनमें प्रवेश करके यह पता लगाना चाहिए कि वे क्या खाते-पीते है, कहाँ और कैसे रहते हैं, उनपर कितना कर्ज है, आदि। इस तरह मुझको आप घी का जो नमूना भेजें, उसका मुझे सारा इतिहास बता सकना चाहिए। आपको अपनी दुकानमें एक बही रखनी चाहिए जिसमें ये सारी तफसीले दर्ज हो: (१) घी बनाने-वाले का नाम और ठिकाना; (२) उसे बनाने में लगनेवाला समय, (३) कितने दूधसे उतना घी बना, (४) उस घी की कीमत; (५) बनानेवाले को प्रतिघंटा मिलनेवाली मजदूरी; (६) बिचौलियेका हिस्सा और ढुलाई-खर्च। आप अपनी दुकानमें जो भी चीज रखते या बेचते हों, उसकी यह विवरणिका अवश्य लगी होनी चाहिए और जो भी आपसे वह चीज खरीदता है उसे उस विवरणिकाकी माँग करने का अधिकार है। आपको मुझसे यह नही कहना है कि यह तो बड़ा उकतानेवाला काम है और आपके पास इसके लिए समय नही है। जब एक बार सिलसिला शुरू कर दिया जायेगा तो वह नित्यकी एक साधारण बात हो जायेगी और उसमें ज्यादा समय नही लगेगा। अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ न्यूनतम मजदूरी चाहे जितनी नियत करे, आप तो किसी भी हालतमें प्रतिघंटा आधा आनेसे कम न दें। इस काममें कोई कठिनाई नही होगी। किसी चीजको तैयार करने में कितने घंटे लगे है इसका पता करके उस हिसाबसे उसकी मजदूरी और कीमत तय कर दीजिए। उदा-हरणके लिए, किसी सामान्य कतैयेको १५ अंकका ४०० गज सूत कातने में एक घंटा लगता है। इस हिसाबसे आप १५ अंकका ४०० गज मजबूत और एकसार सूत कातने के लिए मजदूरीमें आधा आना दीजिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३१-८-१९३५

1. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। उक्त ग्राम-सेवकने गांधीजी से पूछा था कि क्या वह खेतीके सहायक उद्योग की तरह घी बनवाने के कामपर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकता है और अगर कर सकता है तो उसे यह काम किस तरह करना चाहिए। १९-१०-१९३५ के हरिजनमें उसके अच्छा घी प्राप्त करने के अनुभव प्रकाशित हुए थे।

५५३. एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव

गत सप्ताह अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके बोर्डने अपनी नियतकालिक बैठकमें दो दिनोंतक पूरा विचार-विमर्श करने के बाद सर्वसम्मतिसे निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया :

> चूँकि इस संघके उद्देश्यमें यह बात भी शामिल है कि जो उद्योग मिट गये हैं या मिटते जा रहे हैं, उनके पुनरुद्धारके लिए प्रोत्साहन देकर ग्रामीण जनताका नैतिक तथा आर्थिक उत्थान किया जाये, इसलिए बोर्डका व्यवस्थापक-मण्डल चाहता है कि संघकी देख-रेखमें तैयार की जानेवाली या बिकनेवाली सभी चीजोंके लिए प्रत्येक कारीगरको एक न्यूनतम मजदूरी मिलनी ही चाहिए। यह न्यूनतम मजदूरी इस आधारपर तय की जाये कि कोई कारीगर आठ घंटेतक कुशलताके साथ जितना काम करे, उसकी कमसे-कम इतनी मजदूरी उसे अवश्य मिले कि उससे शास्त्रीय रीतिसे निर्धारित उसकी आहार-विषयक न्यूनतम आवश्यकताएँ पूरी हो जायें। इस बातका ध्यान रखना संघसे सम्बन्धित सभी लोगों और संस्थाओंका कर्त्तव्य होना चाहिए कि जिन उद्योगोंको वे प्रोत्साहन दे रहे हैं, उनमें लगे कारीगरोंको कभी भी निर्धारित मान से कम मजदूरी न मिले, और साथ ही उन्हें इस बातका बराबर खयाल रखना चाहिए कि जब और जैसे-जैसे परिस्थितियाँ अनुकूल होती जायें, मजदूरीके इस मानमें धीरे-धीरे वृद्धि करते जाना है ताकि एक दिन वह इस स्तरतक पहुँच जाये कि कारीगरके परिवारका भरण-पोषण उस परिवारके कमाऊ सदस्योंकी कमाईसे भली-भाँति हो सके।

यदि इस प्रस्तावपर ईमानदारीके साथ अमल किया गया तो निश्चित है कि इसके दूरगामी परिणाम निकलेंगे। इसपर अमल करके हम श्रमिकोंको, चाहे वे सामान्य मजदूर हों या कुशल कारीगर, वह न्याय प्रदान कर सकेंगे जो उन्हें बहुत पहले प्राप्त होना चाहिए था। इस प्रस्तावित मजदूरीका ठीक हिसाब पैसोंमें लगाने में मुश्किल तो पड़नेवाली है ही। सदस्यों और एजेंटोंको तीन तरहकी तालिकाएँ तैयार करनी पड़ेंगी :

१. विभिन्न प्रान्तोंमें अलग-अलग क्षेत्रोंमें मजदूरी करनेवाले पुरुष और स्त्रियाँ प्रतिघंटा कितना पैसा कमाती हैं?

२. मजदूरके रहने और काम करने के अपने-अपने इलाकोंमें उनका नित्यका आहार क्या है और उसपर कितना खर्च बैठता है?

३. विभिन्न प्रदेशोमें पैदा होनेवाले मुख्य खाद्य पदार्थोको ध्यानमें रखकर प्रत्येक प्रदेशके सम्बन्धमें विशेषज्ञों द्वारा शास्त्रीय विधिसे तैयार कराया गया न्यूनतम आहार-प्रमाण और उसकी लागत।

मुझे जो तथ्य-आँकडे मिले है, उनसे यह प्रकट होता है कि पजाबको छोड़कर सारे हिन्दुस्तानमें जनसाधारण जिन खाद्य पदार्थोंपर गुजारा करता है, उनसे उसे पर्याप्त पोषण नही मिलता।

न्यूनतम आहार-प्रमाणके विषयमें जो पुस्तिका सबसे अधिक सहायक हो सकती है, वह है बम्बई प्रान्त बाल एव स्वास्थ्य सप्ताह सघ (डिलाइल रोड, बम्बई ११) की ओरसे डॉ० एच० वी० तिलक द्वारा तैयार की गई पुस्तिका। उसका नाम है 'वैलेंस्ड डाइट' और कीमत चार आने है। मराठी और गुजरातीमें इसका अनुवाद भी हो चुका है। इसमें जिस आहारकी सिफारिश की गई है उसमें सोयाबीन-सहित कई तरहके साबुत अनाज (जिनमें से कुछको भिगोकर अकुर निकलने के बाद खानेको कहा गया है), मलाई-उतरे दूधका चूर्ण और साग-भाजी शामिल है। एक सफेद चूहेको जब अच्छी तरहसे कुटे चावलकी भरपूर मात्रा और थोड़े-से साग और दूधपर रखा गया तो उसका वजन १३ ग्राम था। उसी चूहेको जब सन्तुलित आहार दिया गया तो उसका वजन बढते-बढ़ते ५५ ग्रामतक पहुँच गया। इस पुस्तकमें जिस आहारकी सिफारिश की गई है, उसका निर्णय सावधानीपूर्वक अनेक प्रयोग करने के बाद किया गया है। बम्बईमें इस आहारपर ५ रुपये प्रति मासका खर्च बैठता है। इसमें मुझे शका है कि बम्बई-जैसी जगहमें भी गरीबोंके आहारमें सोयाबीन और मलाई-उतरे हुए दूधके चूर्णका समावेश किया जा सकता है या नही। डॉ० तिलकने दालोको अंकुरित करने और जौ का माल्ट बनाने की जो सिफारिश की है वह गृहस्थोके घर मुश्किल है। गाँवोंमें तो इस चीजको दाखिल करना प्रायः असम्भव है। मलाई-उतरा हुआ दूध गाँवोमें मिलता नही, और मुझे इस बातका पता है कि सैकडो गाँवोमें ताजे दूध या अच्छे घी की एक बूंद भी दुर्लभ है। मैं इन कठिनाइयोका उल्लेख इसलिए कर रहा हूँ कि विशेषज्ञ लोग डॉ० तिलकके तैयार किये हुए इस आहार-प्रमाणके आधारपर अपने-अपने प्रान्तोके गाँवोंके लिए ऐसा प्रमाण ढूंढ निकाले जो वहांके लिए अधिक अनुकूल भी पडे और जिससे वही परिणाम भी निकले जो परिणाम डॉ० तिलक द्वारा निश्चित किये हुए आहारके आगे बताये जाते है। जबतक ग्राम-सेवक अपने प्रभावमें आनेवाले मजदूरो या कारीगरोको इस लायक नही बना देते कि वे स्वय अपने और अपने आश्रितोंके लिए यथेष्ट आहार जुटा सके तबतक हमें चैन नही लेना चाहिए। चीजोंकी कीमतें कम करने के बजाय हमें बराबर इस बातकी फिक्र होनी चाहिए कि उन्हें बनाने में लगे मजदूरो और कारीगरोंको अपने गुजारेके लायक मजदूरी मिल सके। हमें यन्त्र-निर्मित विदेशी या देशी मालसे होड़ करने का विचार ही मनसे निकाल देना होगा। शक्ति-चालित यन्त्रो द्वारा वस्तुनिर्माण करनेवाले चन्द लोगोको उनकी जरूरतसे ज्यादा मिले और करोड़ो मजदूर-कारीगर लगभग भुखमरी की अवस्थामें रहें, इस स्थितिको कायम नही रहने देना चाहिए। राजकीय संरक्षणके

अभावमें लोक-मतको ही इस तरह प्रशिक्षित करना चाहिए जिससे लोग देशके मजदूरोंके शोषणमें हाथ न वटायें।

बिक्रीकी खादी तैयार कराने के काममें जो खादी-सेवक लगे हुए हैं उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि जो बात दूसरे ग्रामोद्योगों पर लागू होती है, वह बिक्रीके लिए तैयार की हुई खादीपर भी उतनी ही लागू होती है। कतैयेसे लेकर बुनकर तक खादीके सभी मजदूर-कारीगरोंको वह मजदूरी तो मिलनी ही चाहिए जिसकी तजवीज इस प्रस्तावमें की गई है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३१-८-१९३५

५५४. हमारा कर्त्तव्य

अस्पृश्यताकी चक्कीमें एक तरहसे गुजरातके हरिजन जितने पिस रहे हैं उतने शायद और कहीके नही। धोलकामें एक हरिजनको एक सवर्ण हिन्दूने मार डाला और वह हत्यारा ३०० रुपये जुर्माना देकर साफ छूट गया। कैविठा गाँवके हरिजनोंने एक सार्वजनिक पाठशालामें अपने बच्चे भेजने का साहस किया, तो वहाँके तथाकथित राजपूतोंने उन असहाय लोगोंको बड़ी बेरहमीसे मारा-पीटा। काठियावाड़में तो आज यह हाल है कि वहाँ कई क्षेत्रोंके अनेक गाँवोंमें सवर्ण हिन्दू हरिजनोंको बेहद सता रहे हैं, और सो सिर्फ इसीलिए कि वहाँ ढोरोंमें महामारी फैल गई है। लोगोंके मनमें वहाँ यह वहम समा गया है कि जादू-टोना करके या अन्य उपायोंसे हरिजन ये बीमारियाँ फैलाते हैं। हरिजनोंको हमेशा अपने जान-मालका भय लगा रहता है। सुधारक लाचारी महसूस करते हैं। राज्य या तो उदासीन है, या फिर ताकतवर सवर्णोके मुकाबलेमें वह भी अपनेको असहाय समझता है। कारण स्पष्ट है। हरिजनो को यह पता ही नही कि इस अत्याचारका आखिर क्या इलाज किया जाये। अपनी रक्षा करने की उनमें इच्छा-शक्ति ही नहीं है। उन्हें अपनी मानवीय गरिमाका या मानव-बन्धुओंसे अपनी रक्षा स्वयं कर सकने की अपनी सहज क्षमताका तनिक भी बोध नहीं है। सुधारकोंको वहाँ हरिजनोंको सतानेवालों का अज्ञानांधकार दूर करना है। सवर्णोको यह खबर ही नही है कि वे यह सब क्या कर रहे हैं। पर्चे छपा-छपाकर लोगोमें बाँटे जायें। पर अत्याचार करनेवाले सवर्ण लोग शायद ही कभी अखबार या पर्चे वगैरह पढ़ते है। उनकी एक अपनी ही दुनिया है और वे उसीमें मस्त रहते है। उन्हे समझानेका तो सिर्फ एक रास्ता है, और वह यह कि उनसे व्यक्तिगत रूपसे सम्पर्क स्थापित किया जाये। जरूरत हो तो उनके घरोंमें जाकर उनसे मिला जाये। उनके गाँवोंमें सभाएँ की जायें। कितनी ही नाराजी प्रकट कीजिए, कितनी ही तकरीरें बघारिए, इससे उनका अज्ञान दूर होनेका नही। जल्दीसे-जल्दी उन लोगोंका अज्ञान दूर करने का उपाय तो यह है कि उनमें यह प्रचार किया जाये कि किस तरह ये पशु-रोग छूत लगने से फैलते है और किस प्रकार सावधानीके साथ

उपचार करके उन्हे फैलने से रोका जा सकता है या रोगग्रस्त पशुओको रोगमुक्त किया जा सकता है।

इसका यह अर्थ हुआ कि प्रचारकोको धीरजके साथ लगातार काम करना होगा। और जिन राज्योमें हरिजन सताये जाये, उन राज्योसे भी कहा जाये कि वे उन गरीबोकी रक्षा करे। जहाँ सुधारक अच्छी-खासी सख्यामें हो वहाँ वे हरिजनोके बीच जाकर बस जायें और यदि उनके वहाँ रहनेसे भी हरिजनोका सताया जाना नही रुकता तो हरिजनोपर पड़नेवाली मुसीबतोको वे भी उनके साथ-साथ झेले। अज्ञान-निवारणकी इस प्रवृत्तिमें सनातनियोंकी भी मदद लेनेकी कोशिश करनी चाहिए। मुझे विश्वास है कि गुमराह और अज्ञानी सवर्णोंके द्वारा बिलकुल बेकसूर हरिजनोपर किये जानेवाले क्रूरतापूर्ण अत्याचारोका कोई भी समझदार सनातनी समर्थन नही करेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३१-८-१९३५

५५५. पत्र : अमृतकौरको

१ सितम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

यहाँ काम सीखनेवाले आजकल जो कागज तैयार कर रहे है उसकी कतरनका एक टुकड़ा भेज रहा हूँ। यह मैं तुमको कागजकी रगत और उसका पतलापन देखने के लिए भेज रहा हूँ। इसमें सफाई नही है। जल्द ही हम देशमें तैयार होनेवाला बढ़ियासे-बढ़िया कागज बहुत ठीक लागतपर तैयार करने लगेंगे। मुझे जितनी उम्मीद थी, उससे पहले ही अब देवदास तुम्हारे पास पहुँच जायेगा। तुम्हारा स्नेह-पत्र मैं देवदासके पास भेज रहा हूँ। कुमारप्पा शायद ४ तारीखको नागपुरसे चलकर ६को तुम्हारे पास पहुँच जायेगा।

मैंने चावलकी एक बोरी अविनाशीलिंगमके हाथ तुमको भेजी है। चावल सस्ता पर काफी बढिया है। मैंने दूना रेल-भाड़ा भरा है। इसलिए कि मालगाड़ीसे भेजने पर महीने-भर बाद कही तुमको मिल पाता और फिर खराब होनेका खतरा अलग। पता नहीं, मैंने यह ठीक किया या नही। शिमलामें तो चावल खराब नही होना चाहिए, अलबत्ता बिना कुटा चावल अधिक दिनोतक सहेजकर नही रखना चाहिए। यदि भेजे हुए चावलकी मात्रा तुम्हारी जरूरतसे बहुत ज्यादा हो, तो बाकीको बेच देना। इसका बिल अगर भेजा नही गया है तो मैं इसके साथ ही भेज रहा हूँ।

तकली भी अविनाशीलिंगमके हाथ भेजी है।

यदि देवदास आ जाये तो तुमको खादी-प्रचारके लिए उससे काम लेना चाहिए। वह कातना जानता है।

इन दिनों यहाँ काफी भीड़ है। हरिजन-मण्डलके सदस्य हमारे यहाँ आये हुए हैं।

जानकीप्रसादने अपने [उपवासके] सत्रह दिन पूरे कर लिये। उसकी दशा असाधारण रूपसे अच्छी रही। उसने शहद, नीबू और पानीके साथ उपवास तोड़ा।

तुम्हारे भेजे सेब मैं नहीं खा सका। मेरे पास बहुत-से लोग हैं; जिनकी जरूरत मुझसे कहीं बड़ी है।

तुम दोनोंको स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५४४) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६३५३ से भी

५५६. पत्र: छगनलाल जोशीको

२ सितम्बर, १९३५

चि० छगनलाल;

हड्डियोंसे खाद बनानेके बारेमें[1] तो तुमने पढ़ ही लिया होगा। अन्य चीजोंके बारेमें मैंने एक लेख विशेष रूपसे लिखवाया है। उसे ध्यानपूर्वक पढ़ना और तदनुसार स्वयं प्रयोग करना अथवा किसी अन्य व्यक्तिसे कराना। वैसे यह प्रयोग स्वयं किया जा सकता है। तुम किसीको यहाँ भेजकर उसे प्रशिक्षित भी करा सकते हो। लक्ष्मीदास एक आदमीको भेजनेवाला है।

संघका विवरण मैंने पढ़नेकी आशासे सँभालकर तो रख ही छोड़ा है किन्तु मैं नहीं जानता कि उसे कब पढ़ पाऊँगा। अपनी व्यस्तताको तो सिर्फ मैं ही जानता हूँ।

यह सच है कि मैंने फल खाना छोड़ दिया है। वे बहुत महँगे हैं। सस्ते फल मैं अवश्य खा सकता हूँ किन्तु आजकल कोई फल सस्ता है ही नहीं। सन्तरेके छिलके जरूर सस्ते हैं और जब वे बच जाते हैं तो मैं उनका मुरब्बा बना लेता हूँ। इससे मुझे कम गुड़की आवश्यकता पड़ती है और फल खानेका आधा उद्देश्य पूरा हो जाता है। मैं अभी उसको आजमा रहा हूँ। बाकी तो हरी सब्जियाँ और दूधका सहारा है। इसके अतिरिक्त शहद तो होता ही है। इससे कोई हानि नहीं पहुँचती। देखा जाये, कहाँतक इस खुराकपर रहा जा सकता है। इस बातका तुरन्त निर्णय नहीं किया जा सकता। मैं हरी पत्तियोंके अतिरिक्त कुम्हड़ा, लौकी आदि भी खाता हूँ, जो यहाँ बगियामें होती हैं। आजकल भिंडी और कुम्हड़ा उतर रहा है और भाजी भी उतर रही है।

भणसाली बहुत मर्यादित ढंगसे आचरण कर रहा है। वह मेरे नियन्त्रणको स्वीकार कर लेता है। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखता है और अत्यन्त प्रफुल्लित रहता

१. देखिए "पत्र: छगनलाल जोशीको", २३-८-१९३५।

है। यदि उसपर बहुत अधिक नियन्त्रण लगाऊँ तो मैं उसे गँवा बैठूंगा इसलिए मैं उतना ही नियन्त्रण लगाता हूँ जितना कि वह सहन कर सके। उसने एक अलग ही मार्ग स्वीकार कर लिया है। अतः ऐसी स्थितिमें उससे मेरी अपनी या हम लोगोंकी तुलना कैसे की जा सकती है? यह कौन जानता है कि कौन सही रास्तेपर है? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि हम दोनो ही सही रास्तेपर हों? एक अन्धा दूसरे अन्धेका इन्साफ कैसे कर सकता है? यदि दोनो खाईमें गिरने से बच जायें तो यह उनके लिए तारीफकी बात होगी। मैंने तुम्हारा संदेश भणसालीतक पहुँचा दिया है। जब वह हँसता है तो कमरा गूँज उठता है। यहाँ आश्रम-जैसा एकान्त नहीं है। बड़े कमरेमें एक कोना उसका है, जिसमें कान्ति, नवीन तथा दो-चार अन्य लोग हैं। उसमें जरा भी जगह नही बचती।

यहाँका दृश्य देखने लायक है। जिस कमरेमें मैं हूँ उसमें महादेव, कनु, मीरा-बहन तो स्थायी रूपसे टिके ही हुए हैं, अन्य लोग भी आते-जाते ही रहते हैं। एक दूसरे कमरेमें फिलहाल नीमू और उसके तीन बच्चे तथा तीन अन्य बहनें रहती हैं। अमतुस्सलाम अपना पूरा दिन भोजनालयमें बिताती है या फिर मेरे कमरेमें। और जब प्रभावती यहाँ होती है तो वह भी यही करती है। जब वर्षा होती है तो हम सब लोग कमरे या बरामदेमें और जब नहीं होती तो छतपर खुलेमें सोते हैं। इससे तुम्हें यहाँकी स्थितिका कुछ अन्दाज हो जायेगा। खानेका खर्च औसतन सातसे-साढ़े सात [आने ?] है, जिसे हम घटाना चाहते हैं। जो हो सो ठीक है। हम उसे पाँच तक लानेकी आशा करते हैं।

जो सज्जन सरकारी पाठशालामें पढ़ाते है यदि वे हमारे आदर्शोंके विपरीत व्यवहार न करें तो फिलहाल उनकी सेवा लेनेमें मुझे तनिक भी अटपटा नही लगेगा। इस भाईके चरित्र और खादी-प्रेमके बारेमें मैंने यथासम्भव जाँच-पड़ताल की थी। उनका पत्र भी मुझे सन्तोषजनक लगा था। उनका खादीपर विश्वास है, और अधिक-तर उसीका प्रयोग करते हैं। वे अभी खादीकी धोतीतक नही पहुँच सके हैं। खादीकी टोपी और खादीकी पोशाकके बारेमें उनका अपने उच्चाधिकारियोसे झगड़ा भी हुआ था, जिसमें उनकी जीत हुई। जिस बहनके बारेम आरोप लगाया जाता था उससे उनका सम्बन्ध आज भी बना हुआ है। किन्तु उनका कहना है कि उक्त सम्बन्ध सदा निर्दोष रहा है। उनका पत्र मुझे विश्वासजनक लगा है। मेरी यह जाँच-पड़ताल अभी हालमें पूरी हुई है। मैं तुम्हें इसमें डालना नही चाहता था, किन्तु अब यदि तुम इस मामलेपर कुछ प्रकाश डाल सको तो डालना।

इस सम्बन्धमें मैंने सरदार और नरहरिसे पत्र-व्यवहार किया है। इस मामलेमें सरदारके पास कहने को कुछ नहीं है। ऐसा लगता है कि नरहरिको नारणदासके वक्तव्यसे सन्तोष हो गया है। नारणदासका उक्त वक्तव्य वजुभाई और जेठालालको भी भेजा गया है और उनका उत्तर माँगा है। नारणदासके वक्तव्यमें मुझे कुछ कहने लायक नहीं लगा। ऐसा लगता है कि वजुभाई और नारणदासके बीच कुछ मूलभूत सैद्धान्तिक मतभेद हैं किन्तु मुझे वे भी स्पष्ट नजर नही आते, सिवा इसके कि नारण-

दासने उद्योगोंपर ज्यादा जोर दिया हो और शिक्षकोंसे भी वैसी आशा की हो। मैं इसे सैद्धान्तिक मतभेद नहीं मानता। क्या तुमने वजुभाई और जेठालालके पत्र पढ़े हैं? यदि तुम उसमें रस लेने और समय देनेको तैयार हो तो वह वक्तव्य मैं तुम्हें भेज दूंगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

रमा और बच्चोंको आशीर्वाद। आजका पत्र पहले के लम्बे पत्रोंकी याद दिलाता है। सप्ताहमें सोमवारके अतिरिक्त अन्य दिन मैं ज्यादातर बायें हाथसे लिखता हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३३) से।

५५७. पत्र : मनु गांधीको

वर्धा
२ सितम्बर, १९३५

चि० मनुड़ी,

तेरे लिए अलगसे यह पत्र है। क्या तू फिर बीमार पड़ गई? यदि बहुत सावधानी से रहा जाये तो बीमार ही क्यों हो? अब तो थोड़े दिनमें तू यहाँ आ ही जायेगी न? कुंवरजी ने तुझे राजकोट भेजने को लिखा है। रामीको उसने बुला लिया है। वह बीमार रहता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५१) से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला

५५८. पत्र : नारणदास गांधीको

२ सितम्बर, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारा कल्याण ही है। मैं जानता हूँ कि वहाँ लगातार तुम्हारी कसौटी हो रही है। किन्तु तुममें धीरज है, श्रद्धा है इसलिए सब ठीक ही होगा। वहाँ भी किसीको काम सँभालना ही चाहिए। माता-पिता तो हैं ही। अतः तुम्हें वहाँ आजकल अनायास ही सेवा करने का सौभाग्य मिल रहा है। ऐसा लगता है, मानो भगवान्ने तुम्हारे लिए सभी कर्त्तव्योंको निभाने की व्यवस्था कर दी हो!

हाँ, देवदासको लकवा मार जानेका डर था। अब तो ठीक है। किन्तु दुबला हो गया है। वह शायद बा के साथ शिमला जायेगा। यह सब लिखनेकी बात मुझे मुश्किलसे ही सूझती है।

मैथ्यूके बारेमें मैं समझ गया। यह कागज यहीं तयार किया गया था। यह पहला ही थान है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४७२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

५५९. पत्र: कृष्णचन्द्रको

वर्धा
प्रातःकाल ३ बजे, ३ सितम्बर, १९३५

चि० कृष्णचंद्र,

जब श्रद्धासे मानोगे कि सब कामोंमें परमात्मा साक्षी है और सब काम, सब विचार, सब वचन उसीको अर्पण करोगे तब परम आनंदका अनुभव करोगे और परमात्माकी हस्तीका अनुभव अवश्य करोगे। याद करो 'यत्करोषि यदश्नासि' इ०।[1]

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२७६) से।

५६०. तार: जवाहरलाल नेहरूको

४ सितम्बर, १९३५

ईश्वरको धन्यवाद। आशा है तुम भले-चंगे होगे।[2]

[अंग्रेजीसे]
लीडर, ६-९-१९३५

१. भगवद्गीता, ९/२७।

२. इसके उत्तरमें, जवाहरलाल नेहरूका इसी तिथिका निम्न तार था: "आज शाम विमानसे जा रहा हूँ। सप्रेम।" देखिए "तार: वाइसरायको", ३०-८-१९३५ भी।

५६१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
४ सितम्बर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

तुम समझ सकते हो कि तुम्हारा तार पाकर मुझे कितनी राहत मिली होगी। हमेशाकी तरह महादेव ही यह पत्र लेकर जा रहा है। काश! मैं खुद आता, लेकिन मुझे नहीं आना चाहिए। तुम दोनोंकी दिलचस्पीकी सभी बातोंके बारेमें खुले दिलसे मुझे अपनी राय देना। अगर कोई बहुत ही बड़ी, काबूसे बाहरकी बाधा न हो तो अगले वर्ष तुमको कांग्रेसकी नौकाकी पतवार संभाल लेनी चाहिए। वहाँ पहुँचकर कमलाकी हालतके बारेमें तार जरूर देना। तुम्हारी रिहाईकी खबरसे ही उसको काफी राहत मिली होगी।

आशा है, तुम्हारी सेहत ठीक रही होगी।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

५६२. पत्र : अमृतकौरको

४ सितम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

यहाँ तैयार किया जानेवाला यही सबसे पतला कागज है। तुम देखोगी ही कि इसके दोनों तरफ लिखा जा सकता है। उसने स्याही-सोख भी तैयार किया है। और उसने भरोसा दिलाया है कि इनमें काफी सुधार होंगे। यह कागज-उद्योग वरदान-जैसा साबित हो सकता है। यदि ऐसा हुआ, तो वह इस बातका प्रमाण होगा कि सूझबूझ और मेहनत दोनों हों तो गाँवोंके लिए कितना-कुछ किया जा सकता है। मुझे उम्मीद है कि तुम्हारी सहायतासे मैं कागज तैयार करनेवालों को आठ आने रोजसे भी कुछ अधिक दिलाने में सफल हो सकूँगा।

तुम्हारे लिए भेजा गया चावल अविनाशीलिंगमके ही पास है। वह कहता है कि उसे तुम्हारा स्थान नही मिला। उसने मुझे रेल-भाड़ा अदा नही करने दिया। तुम खुद देखोगी कि बोरीकी कीमत मामूली ही है। रेल-भाड़ा वस्तुकी कीमतसे दूना है। पता नही, उतना सारा चावल भेजकर मैंने ठीक किया या नहीं। शायद तुमको पता नहीं था कि एक बोरीमें कितना आता है। बोरियाँ भी तरह-तरह की होती हैं।

कुमारप्पा और देवदासको अपने यहाँ ठहराने का अनुरोध मैं कर चुका हूँ और अब ज्यादा कुछ नही कहूँगा। बस, यही आशा करता हूँ कि वे तुम्हारे ऊपर भार-स्वरूप नहीं होंगे। सचमुच तुमसे यह अपेक्षा बिलकुल नही है कि तुम उनपर अपना कुछ समय भी लगाओगी। गरीब आदमियोंके लिए तो पहाड़ोके फैशनेबल स्थानोंमें जानेकी बात सोचनातक मुहाल है। इस शरारतके लिए तुम्ही जिम्मेवार हो। मेरी गरीबी क्या तथाकथित ही है?

शम्मीको सच्चे गरीबोंको नही भुलाना चाहिए। नीमकी पत्तीके तत्त्वोंका विश्लेषण मुझे मिलना ही चाहिए।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५४५) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६३५४ से भी

५६३. पत्र : कमलनयन बजाजको

४ सितम्बर, १९३५

चि० कमलनयन,

देरसे ही सही किन्तु तेरा पत्र मिला, यह ठीक हुआ।

अरे, यदि रामनामका जप भी नियमसे करेगा तो तेरा भला ही होगा।

तू वहाँ हाथका बना कागज इस्तेमाल नही करता, उसकी कोई चिन्ता नही। ऐसा करने के लिए तेरे मनमें उत्साह और गरीबोंके प्रति अत्यन्त सहानुभूति होनी चाहिए। जब ये तेरे स्वभावका अंग बन जायेंगे तो तू स्वतः यह सब करने लग जायेगा। जो-कुछ तू अपने मनके उत्साहसे करेगा वही सार्थक होगा और वही तुझे फलेगा।

वहाँ बैठकर तू ब्रिटिश और अन्य विदेशियोंमें भेद करने के फेरमें मत पड़ना।

कपड़ोंके सम्बन्धमें एक बात कह देना चाहता हूँ। यदि तू वहाँ स्वेच्छासे खादी पहनने का आग्रह न रख सके तो उसे छोड़ देना। तुझे जिसमें सुविधा हो

वही पोशाक पहनना और जिसमें सुविधा लगे उसी कपड़ेकी पोशाक बनवाना। मैं समझता हूँ कि इतने में तेरे सभी प्रश्नोंका उत्तर आ जाता है।

अत: विदेशी या मिल के कपड़ेका ओवरकोट पहना जा सकता है, मोजे और कसरत करने की बनियान आदि पहने जा सकते हैं। यदि ये सब चीजें हाथकी बनी प्राप्त करने का प्रयत्न करे तो उसमें कोई बुराई नहीं है। यदि वैसा न करे तो कोई पाप नहीं माना जायेगा।

वहाँ तेरा मुख्य काम मेहनतसे अपनी पढ़ाई करना, निर्भयता, वीरता, दृढ़ता, उद्यम, उदारता, दया, प्रेम आदि गुणोंका विकास करना तथा सादगी और विनम्रता बढ़ाना है। वहाँके जीवनका निरीक्षण करना। पल-पलका सदुपयोग करना। अपनी दैनन्दिनी रखना।

तेरा पत्र मैं वापस लौटा रहा हूँ। यदि कुछ छूट गया हो तो लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २८६-८७

५६४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
५ सितम्बर, १९३५

भाई वल्लभभाई,

महादेव कल जवाहरलालसे मिलने प्रयागकी तरफ गये; आज जवाहरलालका तार आया है, उससे मालूम होता है कि महादेव उससे मिल नहीं पायेगा; क्योंकि वह आज गामको रवाना हो जायेगा।[1]

बम्बई सरकारने अपने जवाबको जितना जहरीला बनाया जा सकता था, उतना बनाया है। उसका अर्थ स्पष्ट है। सचाईको दबाने का प्रयत्न किया जायेगा। मेरे खयालसे अब हमें पत्र-व्यवहार प्रकाशित नहीं करना चाहिए। कमेटीकी रिपोर्ट मिल जानेपर उसके साथ प्रस्तावनाके रूपमें कमेटीकी उत्पत्ति बताने के लिए जितना आवश्यक हो उतना ही अंग प्रकाशित करें। इसमें क्या तुम्हें कोई दोष जान पड़ता है? यह वांछनीय है कि कमेटीका काम तुरन्त पूरा हो जाये।

आशा है, बाबा ठीक हो गया होगा। फिलहाल तो मेरे आस-पास एक-न-एक बैठक होती ही रहती है। . . .[2]

१. देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", ४-९-१९३५ की पाद-टिप्पणी २। महादेव देसाई द्वारा जवाहरलाल नेहरूको लिखे गये पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट २।

२. साधन-सूत्रमें कुछ अंश छूटा हुआ है।

महादेव परसों वापस आयेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १८४

५६५. पत्र : जयन्ती एन० पारेखको

५ सितम्बर, १९३५

चि० जयन्ती,

यह आश्चर्यकी बात है कि तू मेरे कामको नहीं समझ सका। मैंने तो यह कहा है न कि मेरी सभी गति-विधियाँ स्वराज्यके लिए ही होती हैं। मेरी हर साँस उसके लिए है। उस लक्ष्यको और भी जल्दी प्राप्त करने के लिए मैं कांग्रेस छोड़कर हरिजनोद्धारके काममें पड़ा और अब ग्रामोद्योगोंमें लगा हुआ हूँ। सर्व देवोंको किया गया नमस्कार केशवको ही पहुँचता है।

इस समय कान्तिकी मदद करना तेरा कर्त्तव्य है। तुम दोनों भाई कोई ईमान-दारीका धन्धा करके नत्थूभाईको ऋणसे मुक्त करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२६२)से।

५६६. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
६ सितम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

तो मरीजोंके[1] वहाँ पहुँचनेसे पहले ही तुम्हारी दैनिक डाक-सेवा शुरू हो गई। यह 'शकुंतला' के तुम्हारे रिहर्सल-जैसा ही रहा। अगली बार यहाँ आनेपर यदि सचिवकी हैसियतसे अपने कामसे थोड़ा समय निकाल सको तो तुम अपनी कुछ कला यहाँकी बालिकाओंको भी सिखा देना। मेरा खयाल है कि वहाँ तुम्हारा रिहर्सल अंग्रेजीमें ही हुआ होगा। अनुवाद किसका था? अभिनय किस-किसने किया था?

१. तात्पर्य जे० सी० कुमारप्पा और देवदाससे है।

हाँ, अगर तुम खादीकी एक निश्चित न्यूनतम मात्रा खरीदने और अपने भण्डारमें मिलका कपड़ा विलकुल न रखने की गारंटी दो तो तुमको विक्रेता मिल जायेगा और एक निश्चित अवधितक के लिए उसका मौजूदा किराया अदा कर दिया जायेगा। तुम अन्य सभी स्वदेशी वस्तुएँ वेच सकती हो। लेकिन मुझे चिन्ता इस वातकी है कि तुम्हारे कन्धोंपर वित्तीय तथा प्रशासकीय दायित्व पहले ही इतना अधिक है कि उसे और वढ़ाना नहीं चाहिए। यदि ठीक ढंगके कार्यकर्त्ता मिल जायें और तुम्हारा वित्तीय दायित्व विलकुल सोलह आने पाव-रत्ती निर्धारित हो जाये तो निश्चय ही तुम स्वदेशीका कारवार चला सकती हो। मैं जिन विभिन्न उद्यमोंसे सम्वन्धित हूँ उनके क्षेत्र इतने वड़े-वड़े हैं कि उनमें चाहे जितना पैसा लगाया जा सकता है। अवतक यदि ऐसा नहीं किया गया है तो सिर्फ इसलिए कि वे मेरे कावूसे वाहर न हो जायें। फिर, इनकी रचना भी इस तरह की गई है कि इन्हें सहज ही सुरक्षाकी गारंटी प्राप्त है, क्योंकि इनमें निजी लाभकी गुंजाइश नहीं रखी गई है। इसलिए मुझे समाजके सवसे निचले और दवे-पिसे लोगोंकी सेवाके लिए अर्पित तुम्हारी योग्यता, लगन और आत्माकी पवित्रता ही दरकार है। ईश्वरकी कृपा है कि यह मैं पा ही गया हूँ।

विजयसिंहका पत्र मैं लौटा रहा हूँ। मुझे वह खास अच्छा नहीं लगा। लेकिन मुझे उसके वारेमें राय देनेका कोई अधिकार नहीं। तुम एक-एक पाईका ठीक हिसाव रखने का आग्रह करना।

महादेव एक दिनके लिए जवाहरलालसे मिलने गया है। पर मुझे आशंका है कि वह चन्द घण्टे वाद ही पहुँचा होगा। जवाहरलाल उसके अनुमानसे पहले ही विमानपर सवार हो गया था।

आशा है, तुम अपनी सामर्थ्यसे अधिक मेहनत नहीं कर रही होगी।

सप्रेम,

वापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५४६) से; सौजन्य: अमृतकौर; जी० एन० ६३५५ से भी

५६७. पत्र: एस० अम्बुजम्मालको

६ सितम्बर, १९३५

चि० अम्बुजम,

मुझे खुशी है कि तुम्हारा थोड़ा घूमना-फिरना हो जायेगा। तुम अपनी प्रवृत्तियाँ हरिजन-कार्य, खादी और हिन्दीतक ही सीमित रखो, यह तुम्हारे लिए बेशक अच्छा होगा। तुम त्रिवेन्द्रम जा रही हो, इसलिए तुम वहाँके जिस सरकारी मधुमक्खी पालन-केन्द्रके बारेमें सुनते हैं, उसे भी देख सकती हो। वहाँके रामचन्द्रको तो जानती हो न? उसे ढूँढ निकालना। वह हरिजन सेवक संघका मन्त्री और हमारा एक श्रेष्ठ कार्यकर्त्ता है।

मुझे आशा है, अगर किचीकी उँगली हमेशाके लिए टेढ़ी रह जाती है तब भी शरीर-रचना-सम्बन्धी कोई खराबी सामने न आयेगी।

मैं बादाम तो लेता हूँ, लेकिन कभी-कभी। जबतक न कहूँ, मुझे बादाम बिलकुल मत भेजना।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजीसे: अम्बुजम्माल पेपर्स, सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

५६८. पत्र: क० मा० मुंशीको[1]

६ सितम्बर, १९३५

भाई मुंशी,

इस मामलेपर विचार करना। यदि तुम्हें लगे कि इसमें हम जीत सकते हैं तो तुम जलगाँव जाना या अन्य किसीको भेज देना। जानेवाले व्यक्तिको रेलके किरायेसे अधिक देनेकी सामर्थ्य इन भाइयोंमें नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७५८९)से; सौजन्य: क० मा० मुंशी

१. यह पत्र देवकीनन्दन, खादी-भण्डार, जलगाँवके ११ सितम्बर, १९३५के निम्न अंग्रेजी पत्रके साथ क० मा० मुंशीको भेजा गया था: "हमारा एक दीवानी मुकदमा अतिरिक्त प्रथम श्रेणीके सब-जज की अदालतमें है, जिसकी सुनवाई २७ सितम्बरको होगी। खादी-भण्डारने यह मामला सरकारके खिलाफ दायर किया है। इस बारेमें हमने महात्माजी की राय ली थी और उन्होंने आपके पास जानेको कहा। मामलेके बारेमें महात्माजी का आपके नाम लिखा पत्र हम साथ भेज रहे हैं, आदि।"

५६९. पत्र : गोवामलको[1]

६ सितम्बर, १९३५

भाई गोवामल,

मुझे पद्मावतीका पत्र नहीं मिला। मुझे आशीर्वादकी बात बिलकुल याद नहीं है। यदि उसने आशीर्वाद लिया भी होगा तो किन परिस्थितियोंमें लिया था, यह मैं कैसे कह सकता हूँ। तुम्हें ऐसे कामोंमें मेरा समय नष्ट नहीं करना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

महात्मा गांधी और जबलपुर, पृ० ४७ पर प्रकाशित गुजराती पत्रकी अनुकृतिसे

५७०. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

६ सितम्बर, १९३५

चि० ब्रजकृष्ण,

इस हालतमें एक वर्षतक नायर रह सके तो अच्छी बात है। आश्रम न चल सके तो उसे कलकत्तेसे बुला लो।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३५)से।

१. गोवामलने पूछा था कि क्या गांधीजी ने केरल की एक लड़की, पद्मावतीके अन्तर्जातीय विवाह पर आशीर्वाद देकर उस विवाहका समर्थन किया था। यह पत्र उसीके उत्तरमें लिखा गया था।

५७१. चर्चा: स्वामी योगानन्दके साथ[1]

[७ सितम्बर, १९३५ के पूर्व][2]

गांधीजी . दुनियामें पाप क्यों है, इस प्रश्नका उत्तर देना कठिन है। मैं तो वही जवाब दे सकता हूँ जिसे मैं एक ग्रामीणका जवाब कहूँगा। जगत्में प्रकाश है तो अन्धकार भी है। इसी तरह जहाँ पुण्य है, वहाँ पाप होगा ही। किन्तु पाप और पुण्य तो हम मर्त्य मानवोंके लिए ही है। ईश्वरके आगे तो पाप और पुण्य-जैसी कोई चीज ही नहीं है। ईश्वर तो पाप और पुण्य दोनोंसे ही परे है। हम अज्ञानी ग्रामवासी उसकी गहन लीलाका वर्णन मनुष्यकी वाणीमें भले करें, पर हमारी भाषा ईश्वरकी भाषा नहीं है।

वेदान्त कहता है कि यह जगत् मायारूप है। यह भी अपूर्ण मानवकी तोतली वाणीमें ही किया गया निरूपण है। इसीलिए मैं कहता हूँ कि मैं इन बातोंमें पड़ता ही नहीं। यदि मुझे ईश्वरके निगूढ़तम रहस्योंमें एक बार झाँकनेका भी अवसर मिले तो भी मैं उन्हें झाँककर देखने की कोशिश न करूँ। कारण, मुझे तो पता ही नहीं होगा कि वह सब जानकर मैं क्या करूँगा। हमारे आध्यात्मिक विकासके लिए इतना ही जानना काफी है कि मनुष्य जो-कुछ अच्छा काम करता है, उसमें ईश्वर निरन्तर उसके साथ रहता है। यह भी ग्रामवासीका ही निरूपण है।

योगानन्द : यदि ईश्वर सर्वशक्तिमान् है और निस्सन्देह वह ऐसा ही है, तो वह हमें पापसे मुक्त क्यों नहीं कर देता?

मैं इस प्रश्नकी भी उधेड़बुनमें नहीं पड़ना चाहता। ईश्वर और हम बराबरीके नहीं हैं। बराबरीवाले ही एक-दूसरेसे ऐसे प्रश्न पूछ सकते हैं, छोटे-बड़े नहीं। गाँववाले यह नहीं पूछते कि शहरवाले अमुक काम, जिसे यदि वे स्वयं करें तो निश्चय ही सर्वनाश हो जाये,- क्यों करते हैं।

आपके कहने का आशय मैं अच्छी तरह समझता हूँ। आपने यह बड़ी जोरदार दलील दी है। पर ईश्वरको किसने बनाया?

ईश्वर यदि सर्वशक्तिमान् है तो अपना सिरजनहार उसे स्वय ही होना चाहिए।

ईश्वर निरंकुश सत्ताधारी है या लोकतान्त्रिक भावनासे सबका खयाल करके चलनेवाला सत्ताधारी है?

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। इस "वीकली लेटर" के अनुसार "स्वामी योगानन्द अभी अमेरिकाकी यात्रा करके लौटे ही थे।" राँची जाते हुए वे गांधीजी से मुलाकात करने के लिए वर्धा उतरे थे।

२. गांधी—१९१५-१९४८ : ए डिटेल्ड क्रॉनोलॉजी के अनुसार यह चर्चा २६-२७ अगस्तको हुई थी।

मैं, इन बातोंके बारेमें बिलकुल नहीं सोचता। मुझे ईश्वरकी सत्तामें तो हिस्सा बँटाना नहीं है, इसलिए ये प्रश्न मेरे लिए विचारणीय नहीं है। मैं तो, मेरे आगे जो कर्त्तव्य है, उसे करके ही सन्तोष मानता हूँ। जो-कुछ है या हो रहा है, वह क्यों और कैसे, इन सब प्रश्नोंकी चिन्तामें मैं क्यों पड़ूँ?

पर ईश्वरने हमें बुद्धि तो दी है न?

बुद्धि तो जरूर दी है, पर वह बुद्धि हमें यह समझने में सहायता देती है कि जिन बातोंका हम ओर-छोर नहीं निकाल सकते उनमें हमें माथापच्ची नहीं करनी चाहिए। मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है कि सच्चे ग्रामवासीमें अद्भुत व्यावहारिक बुद्धि होती है, और इसीलिए वह कभी इन पहेलियोंकी उलझनमें नहीं पड़ता।

अब मैं एक दूसरा ही प्रश्न पूछता हूँ। क्या आप यह मानते हैं कि पुण्यात्मा होनेकी अपेक्षा पापी होना आसान है, अर्थात् ऊपर चढ़ने से नीचे गिरना आसान है?

ऊपरसे तो ऐसा मालूम होता है। पर असल बात यह है कि पापी होनेकी अपेक्षा पुण्यात्मा होना सहज है। कवियोंने निश्चय ही यह कहा तो है कि नरकका मार्ग आसान है, पर मैं ऐसा नहीं मानता। मैं यह भी नहीं मानता कि संसारमें अच्छे आदमियोंकी अपेक्षा पापी लोग अधिक हैं। अगर ऐसा है तो ईश्वर स्वयं पापकी मूर्ति बन जायेगा। पर वह तो अहिंसा और प्रेमका साकार रूप है।

क्या मैं आपकी अहिंसाकी परिभाषा जान सकता हूँ?

संसारमें किसी भी प्राणीको मन, वचन और कर्मसे हानि न पहुँचाना अहिंसा है। . . .

अब मैं दूसरे विषयपर आता हूँ। क्या आप सन्तति-निग्रहके मुकाबले संयमको अधिक पसन्द करते हैं?

मेरा यह विश्वास है कि किसी कृत्रिम रीतिसे या पश्चिममें सुझाई मौजूदा रीतियोंसे सन्तति-निग्रह करना आत्मघात है। मैंने यहाँ जो 'आत्मघात' शब्दका प्रयोग किया है उसका अर्थ यह नहीं है कि प्रजाका समूल नाश हो जायेगा। आत्मघात शब्दका प्रयोग मैं यहाँ ऊँचे अर्थमें कर रहा हूँ। मेरा आशय यह है कि सन्तति-निग्रहकी ये रीतियाँ मनुष्यको पशुसे भी बदतर बना देती हैं; यह अनीतिका मार्ग है।

पर हम यह कहाँतक बर्दाश्त करें कि मनुष्य अविवेकके साथ सन्तान पैदा करता ही चला जाये? मैं एक ऐसे आदमीको जानता हूँ जो नित्य एक सेर दूध लेता था और उसमें पानी मिला देता था, ताकि उसे अपने तमाम बच्चोंको बाँट सके। बच्चोंकी संख्या हर साल बढ़ती ही जाती थी। क्या इसमें आप पाप नहीं मानते?

इतने बच्चे पैदा करना कि उनका पालन-पोषण न हो सके पाप तो है ही, पर मैं यह मानता हूँ कि अपने कर्मके फलसे छुटकारा पानेकी कोशिश करना तो उससे भी बड़ा पाप है। इससे तो मनुष्यकी मनुष्यताका नाश होता है।

तब लोगोंको यह सत्य बतलाने का सबसे अधिक व्यावहारिक मार्ग क्या है?

सबसे अधिक व्यावहारिक मार्ग यह है कि हम संयमका जीवन बितायें। उपदेश से आचरण ऊँचा है।

मगर पश्चिमके लोग हमसे पूछते हैं, "तुम लोग अपनेको पश्चिमके लोगोंसे अधिक आध्यात्मिक मानते हो, फिर भी हम लोगोंके मुकाबले तुम्हारे यहाँ बालकोंकी मृत्यु अधिक संख्यामें क्यों होती है?" महात्माजी, क्या आप ऐसा मानते हैं कि लोग अधिक संख्यामें सन्तान पैदा करें?

मैं तो यह माननेवाला हूँ कि संतान बिलकुल ही पैदा न की जाये।

तब तो सारी ही प्रजाका नाश हो जायेगा।

नाश नहीं होगा, प्रजाका और भी सुंदर रूपांतरण हो जायेगा। पर यह कभी होनेका नहीं, क्योंकि हमें अपने पूर्वजोंसे यह विषयवृत्तिका उत्तराधिकार युगानुयुगसे मिला हुआ है। युगोंकी इस पुरानी आदतको काबूमें लानेके लिए बहुत बड़े प्रयत्नकी जरूरत है, तो भी वह प्रयत्न बहुत सरल है। पूर्ण त्याग, पूर्ण ब्रह्मचर्य ही आदर्श स्थिति है। जिससे यह न हो सके, वह खुशीसे बिवाह कर ले, पर विवाहित जीवनमें भी वह संयमसे रहे।

जनसाधारणको संयममय जीवनकी बात सिखाने की क्या आपके पास कोई व्यावहारिक रीति है?

जैसाकि एक क्षण पहले मैं कह चुका हूँ, वह रीति यह है कि हम पूर्ण संयमकी साधना करें और जनसाधारणके बीच जाकर संयममय जीवन बितायें। अगर कोई भोग-विलास छोड़कर संयममय जीवन बिताये तो उसके आचरणका प्रभाव जनतापर अवश्य पड़ेगा। ब्रह्मचर्य और अस्वाद-व्रतके बीच अविच्छिन्न सम्बन्ध है। जो मनुष्य ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहता है, वह अपने प्रत्येक कार्यमें संयमसे काम लेगा, और सदा नम्र बनकर रहेगा।

मैं समझ गया। जनसाधारणको संयमके आनन्दका पता नहीं, और हमें यह चीज उसे सिखानी है। पर मैंने पश्चिमके लोगोंकी जिस दलीलके बारेमें आपसे कहा है, उसके सम्बन्धमें आपका क्या मत है?

मैं यह नहीं मानता कि हम लोगोंमें पश्चिमके लोगोंकी अपेक्षा अधिक आध्यात्मिकता है। अगर ऐसा होता तो आज हमारा इतना अधःपतन न हो गया होता। किन्तु इस बातसे कि पश्चिमके लोगोंकी उम्र औसतन हम लोगोंकी उम्रसे ज्यादा लम्बी होती है, यह साबित नहीं होता कि पश्चिममें आध्यात्मिकता है। जिसमें अध्यात्मवृत्ति होती है उसकी आयु अधिक लम्बी होनी चाहिए, यह बात नहीं है, बल्कि उसका जीवन अधिक अच्छा, अधिक शुद्ध होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-९-१९३५

५७२. हरिजन सेवक संघके प्रस्ताव

हरिजन सेवक संघके बोर्डकी कार्यकारिणीकी ३० अगस्तसे २ सितम्बरतक होनेवाली बैठकमें कई महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किये गये। उनमें से एक निम्न प्रकार है:

> विशेष रूपसे आमन्त्रित श्रीयुत हृदयनाथ कुंजरूकी उपस्थितिमें समितिकी इस बैठकमें संघके वित्त और प्रबन्धके विकेन्द्रीकरणके प्रश्नपर चर्चा की गई; संयुक्त प्रान्त (पूर्वी)की स्थिति तथा अन्य प्रान्तोंसे आई सम्मतियोंपर विचार किया गया। चर्चाके अन्तमें पण्डित कुंजरूने अपने प्रान्तीय बोर्ड तथा जिला समितियोंकी सलाहसे प्रयोगके तौरपर संयुक्त प्रान्त (पूर्वी)के लिए एक अलग योजना तैयार करके कार्यकारिणी समितिकी आगामी बैठकके विचारार्थ प्रस्तुत करने का अनुरोध किया गया।

बैठकमें पास किया गया दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव निम्नलिखित था:

> हम निश्चय करते हैं कि १९३५ सितम्बरकी [२४][1] तारीखको, अर्थात् जिस तारीखको पूना-समझौते पर हस्ताक्षर हुए थे उस दिन, प्रधान कार्यालय, दिल्ली द्वारा तदर्थ जारी किये गये निर्देशोंके अनुसार 'हरिजन दिवस' मनाया जाये।

यह आशा करना स्वाभाविक ही है कि उस दिन भारत-भरके हरिजन-सेवक हरिजनोंके साथ निकटतर सम्पर्क स्थापित करने का प्रयत्न करेंगे और सभी लोग इस कार्यके प्रति अधिक समर्पणकी भावना अपनायेंगे।

तीसरा महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव इस प्रकार था:

> यह तय किया जाता है कि चरखा, ग्रामोद्योग तथा हरिजन सेवक संघोंकी प्रवृत्तियोंमें सामंजस्य स्थापित करने का प्रयत्न किया जाये और इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए सुझाव यह है कि चरखा संघ तथा ग्रामोद्योग संघसे विधिवत् स्वीकृति लेकर इन तीनों भगिनी संस्थाओंके मन्त्रियोंकी एक संयुक्त समिति बनाई जाये।

ये तीनों प्रवृत्तियाँ रचनात्मक हैं और तीनोंके क्षेत्र कई बातोंमें एक-दूसरेसे मिलते हैं। इसलिए यदि इनसे सम्बन्धित कार्यकर्ताओंके बीच जहाँ भी सम्भव हो वहाँ यदि अधिक सामंजस्य और तालमेल हो तो बहुत-सा पैसा, समय और शक्ति बचाई जा सकती है और तीनों संस्थाओंके कार्यमें तीव्रता लाई जा सकती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-९-१९३५

१. साधन-सूत्रमें "२५" ही है, जिसे बादमें गांधीजी ने सुधार दिया था; देखिए "टिप्पणियाँ", १४-९-१९३५ और २१-९-१९३५।

५७३. खानगी खादी-उत्पादक सावधान

कतैयो और खादी-उत्पादनमें लगे अन्य लोगोको पर्याप्त मजदूरी देनेकी जो नीति निर्धारित की जा रही है, उसके साथ ही जिन लोगोको निजी तौरपर खादी तैयार करने के प्रमाणपत्र दिये गये है उनका प्रश्न भी उठता है, जिसपर गम्भीरतासे विचार करना आवश्यक है। ये लोग काफी मात्रामें खादी तैयार करते हैं। खादी से मजदूरी कमानेवालो के प्रति सघका जितना दायित्व है, इनके प्रति उससे कुछ कम नही है। उनके साथ जो अनुबन्ध हुए है उन्हें तो पूरा करना ही चाहिए। किन्तु इतना कर लेनेके बाद सघका कर्त्तव्य पूरा हो जाता है। चरखा संघका पूरा तन्त्र कतैयोके हकमें काम करनेवाले एक न्यासकी तरह चलाया जाता है या चलाया जाना चाहिए, और इन कतैयोकी अवस्थामें उत्तरोत्तर सुधार करना आवश्यक है। खानगी उत्पादकोंको प्रमाणपत्र मुख्यत कतैयोके लाभके लिए ही दिये गये हैं। उत्पादकोको जो भी मुनाफा कमाना है, कतैयोंकी सेवा करके ही कमाना चाहिए, लेकिन आज तो जो स्थिति हमारे देखने में आती है वह यही है कि वे उनका पेट काटकर मुनाफा कमाते हैं।

किन्तु ये उत्पादक यदि सघके प्रत्यक्ष एजेंटोकी पक्तिमें आ जानेको तैयार हो तो उनके नाम जारी किये गये प्रमाणपत्रोंको वापस लेनेकी जरूरत नही है। लेकिन उनकी पंक्तिमें आनेके लिए उन्हें अपनी कार्य-पद्धतिमें आमूल परिवर्तन करना होगा। उन्हे अपने मुनाफेमें कमी करके भी सन्तुष्ट रहना पडेगा, बल्कि हो सकता है, उन्हें नुकसान उठाना पडे। संघकी जरूरतोके मुताबिक उन्हें कतैयों तथा जिन अन्य लोगोको वे काम देते हो, उनके रजिस्टर रखने हैं। उन्हें मजदूरी अदा करने के प्रमाण देने हैं और उससे सम्बन्धित आँकडे इकट्ठे करके संघके समक्ष प्रस्तुत करने हैं। यह काम शायद उनको बहुत भारी लगे। खादीकी कीमतमें होनेवाली सम्भावित वृद्धिसे उनको जो जोखिम है वह शायद इतनी बड़ी हो कि वे उसे उठा न सकें। ये उत्पादक जो मुनाफा कमाते है उसके लिए इन्हें निस्सन्देह बहुत कठिन परिश्रम करना पडता है और इस परसे सघकी उनसे जो अपेक्षाएँ होंगी, वे शायद उन्हें बहुत भारी लगें। जिन्हें ऐसा लगता हो उन्हें तो अभीसे अपना-अपना कारोबार समेटना शुरू कर देना चाहिए। जो लोग अपना-अपना खादी-कार्य चालू रखना चाहते हो उन्हे संघके एजेंटोंसे सम्पर्क स्थापित करना चाहिए। हाँ, उन्हें इतना जान लेना चाहिए कि शर्तोंका पालन करने में तनिक भी चूक होनेसे प्रमाणपत्र रद किये जा सकते हैं। उन्हें नुकसान हो या न हो, संघके साथ हुए उनके अनुबन्धके कायम रहने की यह अनिवार्य शर्त है कि वे पूरी ईमानदारीसे काम लें। इसलिए इस काममें केवल उन्ही को बने रहना चाहिए जो खादी-प्रेमी हो और दरिद्रनारायणके

भक्त हों। ऐसे लोग तो दरिद्रनारायणके हितका खयाल करके अपने नुकसानकी भी परवाह न करेंगे। जो लोग खुद खादीका उपयोग न करते हों और अपने-अपने घरमें उसका इस्तेमाल न करते हों उन्हें ऐसी आशा नहीं रखनी चाहिए कि उनके अनुबन्ध कायम रहेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-९-१९३५

५७४. कोढ़ और उसकी रोकथाम

सावली भी गरीब कतैयों और बुनकरोंके बीच रहनेवाले खादी-सेवकोंका एक केन्द्र है। सावलीमें कोढ़ का दौरदौरा है और इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं, क्योंकि इन मेहनतकशोंको सिर्फ दो रोटियाँ जुटाने के लिए भी कड़ी मशक्कत करनी पड़ती है; कतैयोंको पूरे घंटे-भरकी मेहनतके लिए अधिकसे-अधिक दो पाइयाँ मिलती हैं। महीने-भरके भोजनपर उनका औसत खर्च एक रुपया आता है।

इन सेवकोंने पूछा है कि वे उन कोढ़ियोंका क्या करें। वे तो बिना किसी रुकावटके सबसे मिलते-जुलते हैं। उनमें से अनेक अपनी रोजीके लिए या अपने सगे-सम्बन्धियोंका हाथ बँटानेके लिए काम करते हैं। उनकी बनाई हुई वस्तुओंका क्या किया जाये? अपने इन अभागे देशवासियोंकी सेवा वे किस तरहसे करें?

इंडियन कौंसिल ऑफ द ब्रिटिश एम्पायर लेप्रॉसी रिलीफ एसोसिएशन (ब्रिटिश साम्राज्य कुष्ठरोगी सहायता संघकी भारतीय परिषद्)ने 'लेप्रॉसी डायग्नोसिस, ट्रीटमेंट एण्ड प्रिवेन्शन' शीर्षक एक पुस्तिका प्रकाशित की है, जिसका पाँचवाँ संस्करण निकल चुका है। लेखक हैं — डॉ० म्यूर, एम० डी०। रोकथामसे सम्बन्धित उसके अध्यायसे पर्याप्त उद्धरण दे रहा हूँ:[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-९-१९३५

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

५७५. पत्र : लालचन्द जे० वोराको

वर्धा
८ सितम्बर, १९३५

भाई लालचन्द,

तुम तो ठीक प्रवृत्तियाँ चलाते जान पड़ते हो। सबका सहयोग साधकर और सेवावृत्तिसे ऐसी प्रवृत्तियाँ चलाई जायें तो जरूर लाभदायक साबित होंगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४९७) से। सी० डब्ल्यू० ९१२७ से भी, सौजन्य : लालचन्द जे० वोरा

५७६. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
९ सितम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

अभी दाहिने हाथसे ही कुछ पंक्तियाँ तुमको लिख दूँ। वैसे मैं महसूस करता हूँ कि यदि मैं अभी कुछ वर्षोंतक मौनके दिनके लिए अपने दाहिने हाथको लिखने लायक बनाये रखना चाहता हूँ तो मुझे मौन-दिवसके अतिरिक्त सप्ताहके अन्य सभी दिन अपने दाहिने हाथको आराम देना ही चाहिए। ऐसा केवल सावधानीके तौर पर कर रहा हूँ।

तुम्हारे सेब मैं खा रहा हूँ। लेकिन तुम जब भी सेब भेजो उनके साथ हर बार कुछ अनुल्लंघनीय आदेश मत जारी किया करो। मैं तुमको विश्वास दिलाता हूँ कि मेरे लिए जब भी आवश्यक होगा मैं फल खानेसे परहेज नहीं करूँगा।

महादेव इलाहाबाद गया था जवाहरसे मिलने, पर वह बादमें पहुँचा और वहाँसे सरदारके बुलावेपर उनके पास चला गया है। इसलिए सचिव का काम खुर्शीद[1] कर रही है। वह पूरा समय दे रही है और आज उसी तरह खट रही है जैसे उस सोमवारको तुमको खटना पड़ा था।

अमतुस्सलामने बीमारीके बाद अभी-अभी खटिया छोड़ी है और पाया कि उसकी जगह मीराने ले ली है।[2] और आज बाहर मूसलाधार वर्षा हो रही है। पर मुझे आशा है कि उसकी बीमारी गम्भीर नहीं होगी।

१. दादाभाई नौरोजी की पौत्री।
२. मीराबहन मलेरियासे पीड़ित थीं।

बा और देवदास आज तुम्हारे पास पहुँच गये होंगे। आशा करता हूँ कि उनके कारण तुमको कोई बहुत परेशानी नही होगी। शम्मी मुझे कुमारप्पा और देवदास दोनोंके बारेमें अपनी चिकित्सीय टिप्पणी भेजेगा।

पता नहीं, तुम्हारी चावलकी बोरी कितने दिन चलेगी। अगली बार तुम अपने आसपास की जगहसे धान मँगा लेना और छिलका उतारने की एक चक्की रखवा लेना। वही तरीका सबसे सस्ता और हमारी ग्राम-भावनाके अनुरूप रहेगा।

निरन्तर फैलते-फूलते परिवारको स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५४७) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६३५६से भी

५७७. पत्र: ना० र० मलकानीको

९ सितम्बर, १९३५

प्रिय मलकानी,

तुम्हारा कागजोंका पुलिन्दा मिल गया। तुम देखोगे कि 'हरिजन'[1] में तुम्हारी सभी इच्छाएँ पूरी कर दी गई हैं। मैंने हरिजी को भी लिख दिया है।[2] मैंने पिछले सप्ताह 'गुलिस्तां'[3] को लिख दिया है कि मुझे माफ करें। मैं जैसे बिलकुल रीत गया हूँ। तुम जानते ही हो कि मेरे हाथमें कितना काम है। इसलिए तुम्ही मेरी ओरसे सभी 'याचकों'को समझा दो कि मुझे माफ करें।

सस्नेह,

बापू

प्रोफेसर मलकानी
हरिजन सेवक संघ, बिड़ला मिल्स
दिल्ली

अंग्रेजीकी फोटो नकल (जी० एन० ९२४) से।

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १४-९-१९३५।

२. देखिए "पत्र: वियोगी हरिको", २४-८-१९३५।

३. बच्चोंकी एक पत्रिका। अखिल भारतीय बालकनजी बारीके अध्यक्ष शावकराज भोजराज दादाने सन्देश भेजने का अनुरोध किया था।

५७८. पत्र : कान्ति एन० पारेखको

९ सितम्बर, १९३५

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। व्यापार अवश्य कर। लेकिन भले ही उसमें करोडोका लाभ क्यो न हो, विदेशी वस्तुओके व्यापारसे बचना ताकि देशको नुकसान न हो।

शान्ताके बारेमें मुझे पता नही था। मुझे उसके व्यवहारसे आश्चर्य नही होता। तू पहले चार पैसे कमा ले फिर विवाह करना। यदि उस समय वह मुक्त हो और तुम दोनो चाहो तो उससे विवाह कर सकता है। अन्यथा कोई दूसरा जोड़ीदार खोज लेना।

मैं यह नही चाहता कि मेरे सभी विचार तुम सबको पसन्द आने ही चाहिए। तुम स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करके तदनुसार आचरण करो, यही तो सत्याग्रह है। कौडी-कौडी ईमानदारीसे कमाना। नत्थूभाई इसके सिवा और कुछ कदापि नही चाहेगे। मुझे जब-तब लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैंने तेरा पत्र फाड़ दिया है। उक्त पत्र और किसीने नही पढा था।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२७०) से।

५७९. पत्र : वसुमती पण्डितको

९ सितम्बर, १९३५

चि० वसुमती,

मैंने तेरे दोनो पत्र पढे। तेरा कार्यक्रम ठीक जान पड़ता है। जब चाहे तब आनेकी छूट तो तुझे मिली ही हुई है तो फिर मेरे पत्रकी राह क्या देखना? कही बेटी पितासे घर आनेकी अनुमति माँगती होगी? गंगाबहनसे कहना कि मुझे समय न मिल पानेके कारण मैं उसे लम्बा पत्र लिखनेकी अपनी इच्छाको रोक रहा

हूँ। जर्मनी जानेके पहले प्रताप और उसकी पत्नी तारामती मुझसे मिल गये। काफी बातें हुई। फुरसत मिलनेपर उसके बारेमें लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४०६) से। सी० डब्ल्यू० ६५२ से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

५८०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

९ सितम्बर, १९३५

भाई वल्लभभाई,

साथके पत्रपर नजर डाल लेना। मैंने जवाब नहीं दिया। शायद तुम इन्हें पहचान लो। यदि कुछ किया जा सकता हो तो करना। तुम्हारा बोझ कुछ-न-कुछ तो हलका हुआ होगा।

सरकार द्वारा पूना-समझौतेको परोक्ष रूपसे भंग करने की अफवाहें मेरे कानोंमें आ रही हैं। देखें क्या होता है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १८५

५८१. पत्र : पी० कोदण्डरावको

वर्धा
१० सितम्बर, १९३५

प्रिय कोदण्डराव,

यह कहना गलत है कि मैंने सविनय अवज्ञाका अपना विचार थोरोकी रचनाओंसे लिया है। थोरोका सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी लेख[1] मुझे जब मिला तबतक दक्षिण आफ्रिकामें सत्ताके प्रतिरोधका आन्दोलन काफी आगे बढ़ चुका था। परन्तु उन दिनों उसे निष्क्रिय प्रतिरोध आन्दोलन कहा जाता था। चूँकि वह शब्द अपूर्ण लगता था, इसीलिए मैंने गुजराती पाठकोंके लिए 'सत्याग्रह' शब्द गढ़ा था। फिर जब मैंने थोरोके अत्यन्त सारगर्भित निबन्धका शीर्षक देखा तो अंग्रेज पाठकोंको अपने संघर्षकी बात समझाने के लिए मैंने उसी शब्द-पदका प्रयोग आरम्भ कर दिया। परन्तु मैंने

१. देखिए खण्ड ७, पृ० २१४-१५ तथा खण्ड ४१, पृ० ६०१-२ भी।

पाया कि सविनय अवज्ञा शब्द भी संघर्षके अर्थको सम्पूर्णताके साथ व्यक्त नहीं कर पाता। इसीलिए मैंने दूसरा शब्द अपनाया — सविनय प्रतिरोध। अहिंसाका सिद्धान्त तो सदासे हमारे संघर्षका एक अविभाज्य अंग रहा है।

आपकी सलाहके मुताबिक श्री पियर्सनको एक प्रति भेजी जा रही है। मेरा खयाल है, आपने बहुत ठीक किया है। महादेव फिलहाल बम्बईमें है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत कोदण्डराव[1]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२८०) से। **गांधी ऐंड द अमेरिकन सीन,** पृ० १८-१९ से भी

५८२. पत्र : अमृतकौरको

१० सितम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

कुमारप्पा के ज्वरको लेकर मुझे कोई परेशानी नहीं। शम्मीकी देखरेखमें वह एकदम निरापद है।

राजेन्द्रबाबू को मैंने तुम्हारा नाम सुझाया हो, ऐसा मुझे याद नहीं पड़ता। यदि तुम सचमुच समझती हो कि तुमसे काम नहीं सँभलेगा तो निस्संकोच मना कर दो। यदि पुस्तिका कांग्रेसके दृष्टिकोणसे लिखी जानी हो, तो यह काम तुमको हाथमें नहीं लेना चाहिए। हाँ, यदि महिलाओंके दृष्टिकोणसे अपेक्षित हो, तो मुझे ऐसा कोई व्यक्ति याद नहीं पड़ता जो इसे तुमसे ज्यादा अच्छी तरह कर सके। लेकिन तुम कुछ और नये दायित्व अपने ऊपर लो, यह सोचकर खुद मुझे डर-सा लगता है। इसलिए इस दूसरे दृष्टिकोणसे पुस्तक लिखने का दायित्व तुम अपने ऊपर ले लो, यह चाहते हुए भी कहूँगा कि इसका निर्णय तो तुम स्वयं ही कर सकती हो कि उतना समय तुम निकाल पाओगी या नहीं। जरूरी नहीं कि वह बाकायदा एक पुस्तक ही हो। सुगठित शैलीमें लिखी अठपेजी आकारकी २५ पृष्ठोंकी एक छोटी-सी पुस्तिका काफी ठीक रहेगी। हाँ, यदि तुमको लगे तो अधिक भी लिख सकती हो।

कागज तुमको यथाशीघ्र मिल जायेगा। अबतक नमूने नहीं मिले।

क्या मैंने तुमको कल लिखा था कि मीराने खाट पकड़ ली है? उसे अभी-अभी वहीं भेजा गया है जहाँ कुमारप्पाको रखा गया था। कुमारप्पासे कहना कि

१. भारत सेवक समाजके। वे उस समय अमेरिकामें थे; देखिए खण्ड ६०, पृ० १४४।

अमतुस्सलामको अब उसका काम मिल गया है, और वह पूरी तरह सक्रिय है। वह तो भूल भी गई है कि अभी कल ही वह बीमार थी।

बा से कहना कि लक्ष्मीको बँगलेमें ठहराना है।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

देवदासके बारेमें तार अभी-अभी मिला है। ईश्वरको धन्यवाद।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५४८) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६३५७ से भी

५८३. पत्र : गिरिधारीलाल बत्राको

१० सितम्बर, १९३५

प्रिय डॉ० बत्रा,

पुस्तकोंकी पेटियाँ सही-सलामत पहुँचा दी गई हैं। अभीतक उन्हें खोला नहीं गया है और कुछ समय और खोला भी नहीं जायेगा। चित्र भी सुरक्षित पहुँच गये हैं।

मैंने आपको जल्दीमें लिख दिया कि उन्हें पुस्तकालयकी दीवारोंपर टाँगा जायेगा, लेकिन मुझे शीघ्र ही यह दिख गया कि आपका प्रस्ताव मानकर मैंने गलती की। मैंने मित्रोंको बराबर इस बातसे हतोत्साह किया है कि वे भेंटोंके साथ याद-दाश्तकी ऐसी चीजोंको जोड़ने की इच्छा मनमें न रखें। इससे भी बड़ी बात यह है कि पुस्तकालयके नियमनका काम मैं नहीं, बल्कि न्यासी लोग करेंगे और मैं तो न्यासियोंमें से भी नहीं हूँ।

इसलिए जल्दबाजीमें दिये मेरे उत्तरके लिए क्षमा करेंगे और मुझे उसमें परि-वर्तन करने दें। अगर मैं चित्रोंका कोई अन्य अच्छा उपयोग करूँ तो क्या उससे आपको सन्तोष होगा? मैंने न्यासियोंके साथ आपके प्रस्तावपर चर्चा नहीं की है, हालाँकि श्रीयुत कुमारप्पाके सामने उल्लेख किया था और उन्होंने मेरे विचारसे सहमति प्रकट की।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५८४. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१० सितम्बर, १९३५

चि० प्रेमा,

राखी समयपर मिल गई थी। जुन्नरके कागज मिले। अच्छे थे। पूरी गड्डी मुझसे, जिसे उसकी अधिक आवश्यकता थी, उस खुर्शीदबहनको[1] दे दी। खादी मिल गई। उसका उपयोग करूँगा। सूत इकट्ठा तो हो रहा है। इसपर बहुतोंकी नजर पड़ती रहती है। और मेरी कताई भी कितनी? जिस दिन १६० तार हो जायें वह मेरे लिए आनन्दका दिन होता है।

आजतक तो मैं यही समझता रहा हूँ कि देशी कलमें बहुत आती हैं। जिससे मैं लिख रहा हूँ वह देशी मानी जाती है। मैं पूछताछ करूँगा।

समाजवादियोंमें बहुत-से लोग भले हैं, कुछ त्यागी हैं, कुछ तीव्र बुद्धिवाले हैं, कुछ ठग हैं। लगभग सभी पश्चिमके रंगमें रँगे हुए हैं। किसीको भारतके गाँवोंका सच्चा परिचय नहीं, शायद उसकी किसीको परवाह भी नहीं है।

गनीमत है, तेरी रसोई पसन्द आई।

लक्ष्मीबाई ठुंसे[2] का नाम तो याद नहीं।

काका तुझे भले न्योता दें। लेकिन तेरा कर्त्तव्य तो वहीं रहने का है।[3] मैंने अपने विचार नहीं बदले हैं। तुझे लालच दिया गया, इससे देव अस्वस्थ हो गये हैं। उन्हे मेरी ओरसे आश्वस्त कर देना। तेरी ओरसे तो वे आश्वस्त हैं ही।

हिटलरके बारेमें तू जैसा कहती है लगभग वही मुझे भी लगा है।

यदि मेरी विचारधाराके बारेमें एक बात याद रखी जाये तो सब-कुछ समझमें आ जायेगा। मेरी तटस्थता परिणामके कालके बारेमें है, कार्यके बारेमें कभी नहीं। परिणामके बारेमें भी नहीं। धनिक धनको छोड़ें या न छोड़ें, यह कहने में परिणामके विषयमें लापरवाही नहीं है, उसके विषयमें निश्चिन्तता है। हमारा कदम ठीक होगा तो आगे-पीछे एक ही परिणाम निकलेगा। और अवश्य निकलेगा।

बन्दरसे मनुष्यके पैदा होनेकी बात मेरे गले नहीं उतरती। वैसे, इसमें

१. दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

२. पूना की पुरानी कांग्रेस कार्यकर्त्री।

३. बापुना पत्रो—५: कु० प्रेमाबहेन कंटकने में प्रेमाबहन लिखती हैं कि काका कालेलकर ने सासवड में चल रहे ग्रामसेवा-कार्यको जिम्मेदारी शंकरराव देव को सौंपकर मुझसे वर्धाके महिलाश्रमके संचालनका भार सँभाले लेनेको कहा था।

सन्देह नहीं कि मनुष्यकी देह धारण करनेवाले जीवने वानरादिकी देह जरूर धारण की है।

आततायीको मारने की बात मुझे पसन्द नहीं आई। आततायी किसे माना जाये? फिलहाल तो मैं यह मानता हूँ कि हत्यारों वगैराको जेलमें डालना पड़ेगा। परन्तु यह अहिंसा है, ऐसा कभी कहने का मुझे स्मरण नहीं है; मेरी यह मान्यता तो है ही नहीं। मैंने यह कहा है कि आजकी परिस्थितिमें यह अनिवार्य हो सकता है। इसका अर्थ इतना ही है कि मेरी अहिंसा अभी बहुत अपूर्ण है और इसलिए ऐसी हिंसाका उपाय मुझे मिला नहीं है। पतनको पतनके रूपमें देखने में ही सत्य है।

अहिंसाके बिना प्राप्त की हुई सत्तामें दरिद्रनारायणका स्वराज्य हो ही नहीं सकता। स्वराज्य-प्राप्तिमें जिस हदतक अहिंसा होगी, उसी हदतक दरिद्रोंकी दरिद्रता मिटेगी। पूर्ण अहिंसा तो न मुझमें है, न तुममें या और किसीमें। परन्तु अहिंसाको माननेवाले दिन-दिन अधिक अहिंसक बनेंगे और इससे उनका सेवाक्षेत्र बढ़ता जायेगा। हिंसाके पुजारीका क्षेत्र संकुचित होता जायेगा और अन्तमें अपनेतक ही सीमित रह जायेगा।

केलकरको निमन्त्रित करके अच्छा किया।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बा देवदासको लेकर शिमला गई है। देवदास काफी बीमार था। आजकल यहाँ रोगियोंकी काफी छाटें है। मीरा बीमार है। अमतुस्सलामको भी बीमार ही कहा जायेगा। नीमू और उसके बच्चे मेरे साथ ही हैं। लक्ष्मी दिल्लीसे आज आ रही है। वह मद्रास जा रही है। प्रभा यहीं है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३७८) से। सी० डब्ल्यू० ६८१६ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

५८५. पत्र : रामेश्वरदास बिड़लाको

१० सितम्बर, १९३५

भाई रामेश्वरदास,

तुमारा खत और चेक मिल गये है। अक्टोबरके बाद मैं अब तो आशा नही रखूंगा। भीड़ पड़ेगी तो हाथ लबाउंगा। सरदारको और राजेन्द्र बाबूको देते रहोगे यह यथार्थ है।

...[1]का खत मुझे नही मिला है। ..[2]के पास गई सो अच्छा है। यदि कोई उसको बचा सके तो वह ...[ब][3] ही है। और सच्ची शक्ति लेकर आई होगी तो अवश्य कुछ-न-कुछ असर डाल सकेगी। तब तो विलायत जाना सफल हुआ मानेंगे।

घनश्यामदासको अलग खत नही लिखता हुं। उनसे कहो यहां होकर ही कही जाना है जाय। मेरा रहना यही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७९७३) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

५८६. तार : अंकलेसरियाको[4]

[१२ सितम्बर, १९३५ या उसके पूर्व][5]

दुःख हुआ। कृपया उनसे कहिए उपवास बन्द करें और चंगे होकर वहाँ लोगोमें विनम्रताके साथ अपना सन्देश प्रचारित करें। दूसरेके हितोंके लिए उपवास करने से पहले उनको अपनेको उसके योग्य बना लेना चाहिए। मैं उनसे पहले ही कह चुका हूँ कि उपवास करने का अभी बिलकुल भी समय नही आया है।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, १३-९-१९३५

१, २ और ३. नाम छोड़ दिये गये हैं।

४. अंकलेसरियाके उस तारके उत्तरमें, जिसमें उन्होंने रामचन्द्र शर्माके "आमरण अनशन" के बारेमें गांधीजी की सलाह माँगी थी।

५. "वर्धागंज, १२ सितम्बर", १९३५ की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित।

५८७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
१२ सितम्बर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

कितना अच्छा रहा कि तुम कमलाके पास पहुँच गये। उसके लिए यही महौषध है। मैं इसके साथ ही उसके लिए एक छोटा-सा पत्र रख रहा हूँ। तुम्हारे भेजे हुए सँदेसे यहाँ ठीक-ठीक मिल रहे हैं। और सरूप भी जो समाचार पाती है यहाँ भेज देती है। हमें आशा करनी चाहिए कि अन्त भला ही होगा। डॉ० अटलको उनके सन्देशों तथा पत्रोंके लिए धन्यवाद दे देना। उनसे बड़ी मदद मिली है। मुझे उम्मीद है कि जबतक यह कठिन समय रहेगा, तुम नियमित रूपसे पत्र लिखते रहोगे। टाइपशुदा सामग्री[1] मेरे पास है। समय मिलते ही मैं उसे पढ़ जाऊँगा।

महादेवको एक जाँचमें वल्लभभाईका हाथ बँटाने बम्बई जाना पड़ा। वह अभी वहीं है। राजगोपालाचारी अभी-अभी लक्ष्मी और उसके बच्चेके साथ आये हैं। देवदास बुरी तरह बीमार था। अन्सारीने उसे शिमला रवाना कर दिया है। मुझे मीराकी देखभाल करनी पड़ रही है। वह बुरी तरह बुखारमें पड़ी हुई है।

मैं चाहूँगा कि तुम अगले वर्ष अध्यक्ष चुने जानेके लिए राजी हो जाओ। तुम्हारी स्वीकृतिसे कई कठिनाइयाँ हल हो जायेंगी। यदि तुम इसे ठीक मानो, तो मुझे तार दे देना।

क्या इन्दुका सब ठीक-ठाक हो गया?

खुर्शीद यहीं है। वह तुमको साधारण डाकसे पत्र भेजेगी।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. १९३६ में प्रकाशित जवाहरलाल नेहरू की आत्मकथा की।

५८८. पत्र : वि० ल० फड़केको

१२ सितम्बर, १९३५

चि० मामा,

तुम्हारे लेखको मैंने रद्दीकी टोकरीमें पधरा दिया है। योग्य पुरुष अथवा स्त्री द्वारा प्रयास करने का कोई निषेध नही है। ऐसे प्रचारक न तो 'हरिजनबन्धु' में विज्ञापन देनेपर मिलेंगे और न वे [हरिजन सेवक] संघके कार्यालयमें फलते हैं। वे तो तपस्याका प्रसाद होते है। तुम भी वैसे क्यों नही बनते?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८३३) से।

५८९. पत्र : दिलखुश बी० दीवानजी को

१२ सितम्बर, १९३५

भाई दिलखुश,

तुमने जो प्रश्न किशोरलालको भेजे है उन्हें आज ही पढ गया हूँ। प्रश्न अच्छे है। जो गरीव विद्यार्थी अपने पहनने लायक खादी तैयार करवाने के लिए ही कातते हैं उनकी कताईकी मजदूरी चाहे जितनी ज्यादा या कम रख सकते हो। यदि इस तरह उत्पादित खादी अपनी जरूरतसे ज्यादा हो तो उसकी दर किसी भी खादी-मण्डलमें प्रचलित दरके मुताबिक रखी जा सकती है। बाजारमें बेची जाये तो वह इस तरह बेची जाये जिससे खादीकी बिक्रीमें मददगार हो सके।

अगर कताई-प्रवृत्ति केवल मिर्च-मसाले, पान-बीड़ी आदिका खर्च निकालनेके लिए [अंशकालिक] हो तो कीमतें कमसे-कम रखी जा सकती है। लेकिन अगर कताई, घी-दूध वगैरहका खर्च निकालने के लिए की जाती हो तो घटे-भरकी मजदूरी उसके लिए काफी होनी चाहिए। तुम इसे नया सिद्धान्त मान सकते हो, लेकिन मेरी दृष्टिमें वह नया नही है। पहले मैंने जो-कुछ लिखा है, उससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है। इसलिए यह कोई नया सिद्धान्त नही है, वल्कि जो-कुछ आधारके रूपमें पहले कहा जा चुका है उससे निकलनेवाला तर्कसंगत परिणाम है। अनुभवसे देखने में आता है कि हजारो वहनें केवल कताईसे ही अपनी रोटी कमाती हैं। इन्हें

कताईकी क्या दर दी जाये, यह प्रश्न मेरे सामने उपस्थित हुआ। तब मुझे कहना पडा कि इन्हें ज्यादा नहीं तो इतना तो मिलना ही चाहिएं जिसमे इनका गुजारा हो सके। ऐसा न कर पाय तो हमें इनको कोई ऐसा धन्धा बताना चाहिए जिससे इनका गुजारा हो सके। इतनेमें तुम्हारे प्रश्नोका उत्तर आ जाता है। न आता हो तो खुशीसे फिर पूछो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
मोटाना मान, पृ० ७१

५९०. पत्र : अमतुस्सलामको

[१२ सितम्बर, १९३५ के पश्चात्][1]

प्यारी बेटी,[2]

कानमका[3] दिल जबतक नहीं जीता है तबतक कुछ नही किया।

मेरे पैर छूनेसे मुझे कुछ हो जानेका डर नही है। लेकिन इस बुतपरस्तीको टालना चाहता हूँ। मैं अपनेको ऐसा पाक नही मानता हूँ।

बाल काटने से कोई फायदा मैं महसूस नही करता। हाँ, सेवा करने में बीचमें आते हैं तो किसीसे भी कटवा लें।

मैं नहीं कहता तू नापाक है। तू अपनेमें कुछ ऐब नहीं पाती है तबतक मुझे क्या डर हो सकता है? कानपुर वगैरा जाना न जाना तेरे दिलकी बात है।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०१) से।

१. "मेरे पैर छूने से मुझे कुछ हो जानेका डर नहीं है", इस वाक्य से तिथि का अनुमान लगाया गया है। १२ सितम्बर, १९३५ को गांधीजी ने टहलते समय सहारे के लिए किसी लड़की के कन्धेपर हाथ रखने की आदत छोड़ दी थी; देखिए "एक त्याग", २१-९-१९३५।

२. साधन-सूत्रमें यह उर्दूमें है।

३. बापू के पत्र–८: बीबी अमतुस्सलामके नाम में अमतुस्सलाम ने बताया है कि वा शिमला में बीमार थीं; इसलिए रामदास गांधी के पुत्र कानम की देखरेख का भार उन्हें सौंपा गया था।

५९१. पत्र : अमतुस्सलामको

[१२ सितम्बर, १९३५ के पश्चात्][1]

इसमे मैं कुछ बता थोडा सकता हू? वह तो प्रेमसे जीता जा सकता है। यह प्रेम अपने-आप पैदा हो सकता है। यह तो पुरानी बात चली।

लिख देनेकी भी बात नही है। तेरेसे जो हो सकता है अपने आप वही करो।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०८) से।

५९२. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

वर्धा

१२/[१३][2] सितम्बर, १९३५

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा खत मिला।

जो खर्च कमी करने का तुमने लिखा है सो सही है। कृष्ण नायर को एक वर्ष कलकत्तेमें रहने दो। दरम्यान तुमसे और हरघ्यानसिंहसे जो हो सके सो करो। एक ही व्यक्तिपर जो वस्तु निर्भर रहती है उसे अन्तमें टूटना ही है और कृष्ण नायरको दिल्लीमें कहा तक रखोगे? इस बखत अनायाससे मैंने कृ० ना०में धनिकोंके प्रति छिपी हुई घृणा देख ली। वह भी समझ गया, अभी भी उसे इस चीजको हृदयगत करना बाकी है। इसलिये तुमने जो लिखा है वो सच है। उसका बगालमें रहना कल्याणकारी है। आस्ते-आस्ते सब चीजको साफ कर लेना। दरम्यान दूसरे आश्रमवासी है उनकी भी परीक्षा हो जायगी। आश्रमवासी उसिको कहा जाय जिसको मात-पिता इ० रिश्तेदारोसे कोई आर्थिक अथवा दूसरा भांतिके संबंध नही है और जिसकी अन्न-वस्त्रादिको छोडकर और कोई हाजत नही है। और जो अहिंसादि एकादश व्रतके पालनमें तत्पर रहता है। इस वास्ते जिसको कुछ भी बचाने का रहता है वह आश्रम-वासी कभी न माना जाय इस दृष्टीसे किसीको १० रुपयेसे अधिक न दिया जाय; और खाते-पिते १०में से जो बचे वह आश्रमको वापिस मिले। यदि कोई ऐसे है, जिनकी सेवाकी हमें आवश्यकता है, जो खुद सेवक है लेकिन बाह्य उपाधिया होनेके

१. कागज के उल्लेख के आधारपर; देखिए पिछला शीर्षक।

२. पत्रकी विषय-वस्तु से स्पष्ट है कि गांधीजी ने यह पत्र १२ सितम्बर को लिखना शुरू किया था किन्तु राजगोपालाचारी के पहुँच जाने के कारण लिखनेमें व्याघात पड़ने से वे इसे अगले दिन ही पूरा कर सके थे; देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", १२-९-१९३५ भी।

कारण अधिक लेनेके सिवाय सेवा नहिं कर सकता हैं, उसको तनखा देकर हम रख सकते हैं; बजटमें हमारे पास जितने द्रव्य रह सकते उससे अधिक खर्च न करे। ये सब बात आज जितने काम करनेवाले है उनको पढ़ा सकते हो। जिससे तुमारे शिरपे बोझ नही रहेगा और हमारा काम निपट जायेगा। मेरा स्वास्थ्य अच्छा। मेरा खोराक दूध-भाजी और कभी-कभी फल है। यह खत दो हिस्सेमें लिखा और लिखवाया गया है, लिखते-लिखते कुछ-ना-कुछ विघ्न आता हि रहा। इतने में कल राजाजी आ गये उनने सुनाया कि तुम विमार हो गया है, यह कैसे? आशा है की अब त्रो आरोग्य हो गया होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३४) से।

५९३. पत्र: पुरुषोत्तम एल० बाविशीको

१३ सितम्बर, १९३५

भाई पुरुषोत्तम,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। तुम्हारे मनमें जो गाँव है, मुझे उसका नाम लिख भेजो। विनोबाका अभी कुछ पक्का नहीं हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२७) से। सी० डब्ल्यू० ४७५० से भी सौजन्य: पुरुषोत्तम एल० बाविशी

५९४. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

१३ सितम्बर, १९३५

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। राजाजी मेरे पास बैठे हैं। तुम्हारा हुक्म[1] सुना दिया। वे कहते हैं कि अधिकसे-अधिक १७ तारीखको तो उन्हें चले ही जाना चाहिए। पापा मद्रास आयेगी और उसका लड़का जो बीमार था, उनकी बाट देख रहा है। वे मानते हैं कि तुम उनसे काँटोंके ताजके[2] बारेमें ही बातें करना चाहते हो।

१. यह कि उन्हें एक सप्ताह वर्धा में रोके रखना चाहिए।
२. कांग्रेस का अध्यक्ष-पद स्वीकार करने के बारे में।

अगर यही बात हो तो वह व्यर्थ है। वे कहते हैं कि उन्होंने भूलाभाईको कोई वचन नहीं दिया। वे यह ताज पहनने की स्थितिमें बिलकुल नहीं हैं। उन्हें शारीरिक और मानसिक थकावट बहुत है। उनकी सम्मतिसे मैंने जवाहरलालसे पुछवाया है।[1] इसके बावजूद यदि तुम सोमवारतक भी आ सको तो ठीक हो। मंगलवारको उन्हें जाने ही देना होगा। आजकल यहाँकी आबहवा खराब है।

मीरा अच्छी है, मगर दो बजेसे बुखार चढ़ रहा है। फलोंकी कीमत इसलिए जाननी है कि यदि उसी भावमें यहाँ मिल जायें तो यहींसे लेकर काम चला लें।

सिंदीके[2] बारेमें गलतफहमी हो रही है। हमें लोगोंसे जबरदस्ती कुछ भी नहीं करवाना है। चुपचाप काम ही करते रहना है। शेष मिलनेपर। यदि तुरन्त मिलना नहीं हो सका तो विस्तारपूर्वक लिखूँगा। जल्दबाजी जरा भी नहीं करूँगा।

मैं वलसाडवाले [व्यक्ति] के बारेमें समझता हूँ।

कमेटीकी रिपोर्टमें जितनी कम दलीलें होंगी उतनी ही वह अच्छी होगी। विशेषण तो हरगिज न होने चाहिए। महत्त्वकी बातोंपर उसका निर्णय और भविष्यके लिए सूचना, उसे बिलकुल निर्दोष पुस्तिका बना देंगे। उसे भी बन्द करना हो तो भले ही कर दें। यह मेरी राय है।

भाऊ जमनालालजी की चालमें रहता मालूम होता है। उसे नियमित रूपसे पैसे मिलते रहें इतना ही काफी है।

[3]का किस्सा बड़ा विचित्र है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १८६-८७

१. देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", १२-९-१९३५
२. देखिए "पत्र : मीराबहनको", २६-५-१९३५ की पाद-टिप्पणी।
३. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

५९५. बातचीत: निर्वाह-योग्य मजदूरीके सम्बन्धमें – २[1]

[१४ सितम्बर, १९३५ के पूर्व]

यह तो संघके नामसे ही स्पष्ट है कि हमारा ध्येय उन कतैयोंका प्रतिनिधित्व करना, अर्थात् उनकी अवस्था सुधारना है जिन्हें आज सबसे कम मजदूरी मिलती है। इसलिए हमें उनकी अवस्थामें क्रमिक सुधार करके दिखाना है। आपको बिलकुल प्रारम्भमें कही मेरी वह बात याद रखनी चाहिए कि हरएक घरमें एक चरखा हो और हरएक गाँवमें एक या अधिक करघे। वह बात जितनी तत्कालीन परिस्थितिपर लागू होती थी उतनी ही आजकी परिस्थितिपर भी लागू होती है। यही स्वावलम्बी खादीका आदर्श है, और अगर मैं आपको अपनी बात समझा सकूँ, तो मैं आपसे यह कहूँगा कि कतैयोंकी जितनी सेवा आप उनकी खादी बेचकर कर रहे हैं, उससे अधिक सेवा आप उनसे खुद उन्हींके उपयोगके लिए खादी तैयार कराकर कर सकते हैं। अपनी रोटियाँ हम अपने घरमें ही बना लेते हैं, गाँवोंमें होटल तो कहीं हैं नहीं; इसी तरह तमाम ग्रामवासियोंको अपने लिए खादी खुद ही बना लेनी चाहिए। यह बात नहीं कि उनमें कुछ लोग अतिरिक्त खादी तैयार नहीं करेंगे, लेकिन उनका अतिरिक्त खादी तैयार करना माँगपर निर्भर होगा। शहरके जो लोग हमारी खादी खरीदना चाहेंगे उनसे तो हम आर्डर लेंगे ही, और वह खादी हम जिन कारीगरोंसे तैयार करायेंगे, उन्हें नित्यकी आवश्यकताओंके अनुसार प्रति घंटा पर्याप्त मजदूरी दी जायेगी। सम्भव है कि इससे खादीका मौजूदा भाव फिलहाल कुछ चढ़ जाये। लेकिन

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। पत्र में खादी-कार्यकर्त्ताओं की दलीलों का सार निम्न प्रकार दिया गया है: "(१) यह कहना गलत है कि हम गरीब कतैयों का शोषण कर रहे हैं। उलटे, जो लोग जापानी या दूसरा विदेशी कपड़ा आसानी से खरीद सकते हैं, वे हमारी महँगी खादी खरीदते हैं। यह शोषण नहीं देशानुराग है। (२) न्यूनतम निर्वाह-योग्य मजदूरी तय कर देने से यह हो सकता है कि कुछ बहुत ही थोड़े-से कतैयों को थोड़ा पैसा और मिल जाये, पर उन हजारों की क्या हालत होगी जो बेकार हो जायेंगे? (३) खुद कतैये भी पेट भरने लायक किन्तु अनिश्चित मजदूरी के बजाय थोड़ी किन्तु स्थायी मजदूरी अधिक पसन्द करेंगे। अगर इसपर मतसंग्रह किया जाये, तो वे अपनी राय इस पेट- भरने-लायक मजदूरी के खिलाफ ही देंगे। (४) हमने कतैयों की मजदूरी नहीं घटाई है; खादीके दाम में जो कमी की गई है उसका कारण यह है कि इधर रुई का भाव गिर गया है, और बुनकरों की मजदूरी भी कम हो गई है। (५) जब राजनीतिक परिस्थितियाँ अनुकूल थीं तब तो इस सम्बन्ध में हम कुछ कर सकते थे, पर आज वातावरण इस परिवर्तनके हक में नहीं है।"

हमें लोगोंकी गरीबीका अब और बेजा फायदा नहीं उठाना चाहिए। मैंने यह कभी नहीं कहा कि शोषण जान-बूझकर किया जाता है। हम लोगोंने गत पन्द्रह वर्षोंमें जो-कुछ किया है, उसका पूरा उत्तरदायित्व मैं अपने ऊपर लेता हूँ। और जो-कुछ हमने किया है वह अनिवार्य था। पर अब हमें एक नयी लीकपर चलना है। सर्वहारा लोगोंकी तरफ हमने सदियोंसे ध्यानतक नहीं दिया है, और हमने सरासर बेजा तौरपर यह तो मान रखा है कि हमें उनके श्रमका उपयोग करने का हक है, पर यह बात हमारे ध्यानमें कभी नहीं आई कि अपनी उचित मजदूरी माँगने का उन्हें भी तो कोई हक है, और जिस तरह रुपया-पैसा हमारी पूँजी है उसी तरह श्रम उनकी पूँजी है। अब वह समय आ गया है जब हमें उनकी आवश्यकताओंका, उनके कामके घंटोंका, उनके अवकाशके समयका और उनके जीवन-स्तरका विचार जरूर करना चाहिए।

यह दलील देना व्यर्थ है कि कर्तैये बजाय इसके कि थोड़े-से लोगोंको ऊँची दरसे मजदूरी मिले, यह चाहेंगे कि मजदूरी थोड़ी मिले पर सबको मिले। हर शोषक और हरएक दास-स्वामी यही दलील देता है, और सच तो यह है कि गुलामोंमें कुछ ऐसे आदमी थे, जिन्हें गुलामीकी जंजीर बड़ी प्यारी लगती थी। पर आपको यह भय क्यों है कि उनमें से अधिकांश बेकार हो जायेंगे? क्या हम उन्हें कोई दूसरा धन्धा नहीं बतला सकते? आन्ध्रमें सीताराम शास्त्रीने उन्हें कताईके बजाय धान-कुटाईके काममें लग जानेको प्रोत्साहित करने में तनिक भी आगा-पीछा नहीं किया है, क्योंकि धान-कुटाईमें ज्यादा पैसा मिलता है। हमें अपने-आपको धोखा नहीं देना चाहिए। उनकी गरजका हमने अबतक नाजायज फायदा उठाया है, और उनकी दृष्टिसे हमने इस प्रश्नपर कभी विचार ही नहीं किया है।

सतीशबाबू को यह डर था कि इस न्यूनतम मजदूरीकी बातसे अनेक तरहकी धोखेबाजीके लिए रास्ता खुल जायेगा। इसपर गांधीजी ने कहा कि यह डर तो हमेशासे ही है। मजदूरीकी दर अभी बढ़ी तो है नहीं, पर धोखेबाजी आज कहाँ नहीं होती? यह तो एक ऐसा प्रश्न है जिसे स्वतन्त्र रीतिसे ही हल करना होगा। मैं इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि खादी-कार्यकर्त्ताओंके बीच यह जो प्रतिस्पर्धाका वातावरण है, वह अवश्य दूर हो जाना चाहिए और मुझे विश्वास है कि खादीके पीछे जो यह व्यापारी वृत्ति है, उसके दूर होते ही प्रतिस्पर्धाका वातावरण नष्ट हो जायेगा।

सतीशबाबू को इस बातकी भी चिन्ता थी कि खादीके कारीगरकी मजदूरी किसानकी मजदूरीसे किसी हालतमें ज्यादा नहीं होनी चाहिए। गांधीजी ने कहा कि किसानकी मजदूरी! ऐसी तो कोई चीज ही नहीं है। भारतके अनेक भागोंमें किसान को अपनी जमीनसे शायद ही पेट भरने लायक उपज मिलती हो, और जिस किसानके पास अपनी जमीन नहीं है और वह पट्टेकी जमीनपर काश्त करता है, उस बेचारेकी पैदावार तो इतनी भी नहीं होती कि उससे जमीनका लगान ही भर सके। गांधीजी ने कहा :

नही, किसानकी स्थितिका तो कोई मानक हो ही नही सकता। पेटके लिए रोज- रोटी-भर मिलती जाये, यही एकमात्र मानक है। इससे कम मजदूरी देनेका प्रयत्न करना अपराध कहा जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-९-१९३५

५९६. टिप्पणियाँ

हरिजन-दिवस

हरिजन सेवक सघके केन्द्रीय कार्यालयने निम्नलिखित परिपत्र जारी किया है:

हरिजन सेवक संघ सितम्बर मासके अन्ततक अपने अस्तित्वका तीसरा वर्ष पूरा कर लेगा; और सवर्ण हिन्दू तथा हरिजन नेताओं द्वारा सम्मत पूना-समझौते पर पूनामें २४ सितम्बर, १९३२ को हस्ताक्षर हुए थे। इसलिए हरिजन सेवक संघके जीवनमें सितम्बरके अन्तिम सप्ताह, और विशेषकर २४ सितम्बरकी तिथिको महत्त्वपूर्ण मानना सर्वथा स्वाभाविक है। इसीलिए संघकी कार्यकारिणीने हालमें ही वर्धाकी अपनी बैठकमें प्रस्ताव पास किया है कि सवर्ण हिन्दुओं और हरिजनों दोनोंको देश-भरमें २४ सितम्बरका दिन इस प्रकार मनाना चाहिए:

(क) उस दिन सभी हरिजन-सेवक सुबह हरिजन बस्तियोंमें जाकर हरिजनोंके समक्ष सफाईके महत्त्वके बारेमें भाषण करें और उनके लिए व्यक्तिगत तौरपर कुछ-न-कुछ सेवा-कार्य, वह चाहे कितना ही छोटा क्यों न हो, अवश्य करें।

(ख) शामको हरिजन और गैर-हरिजन बच्चोंको खेल-कूद तथा मनो-रंजनके लिए खुले स्थानोंमें ले जाया जाये।

(ग) जुलूसों, कीर्तनों या भजन-मण्डलियोंका आयोजन किया जाये। जहाँ भी हो सके, सार्वजनिक सभाएँ आयोजित करके उनमें जन्मजात अस्पृश्यताको मिटाने के हिन्दू-जाति के पवित्र संकल्पको दोहराया जाये।

(घ) संघके सदस्यों-सहयोगियोंकी सूचीमें लोगोंके नाम दर्ज किये जायें।

(ङ) हरिजन कुआँ-कोषके लिए जोश और मुस्तैदीके साथ चन्दा जमा करना — जो इस वर्षके कामका प्रमुख हिस्सा है — जारी रखा जाये।

मुझे आशा है कि हरिजन और गैर-हरिजन दोनों वर्गोंके सभी सुधारक — चाहे वे किसी भी दलके क्यो न हों — संघकी इस अपीलपर तुरन्त कार्रवाई करेंगे।

हरिजन-मण्डलोंको चेतावनी

श्री मलकानीके पत्रका एक अंश इस प्रकार है:

> मेरे पास प्रान्तीय मन्त्रियोंके पत्र आने शुरू हो गये हैं। उनमें कहा जा रहा है कि हरिजन-कल्याण-कार्योंपर होनेवाले व्ययका पच्चीस प्रतिशत भाग भी नये चन्देसे पूरा करना कठिन लगता है। श्रीयुत गोपालस्वामीके पत्रकी संलग्न प्रतिसे प्रकट होता है कि चन्देमें ढिलाई आनेका खतरा है। २२ अगस्तकी तिथितक प्रान्तीय मण्डलोंको दिये गये अग्रिम धनकी बकाया राशि ८१,४५५ रुपये १० आने २ पाई तक पहुँच चुकी थी। मोटे तौरपर देखा जाये तो यह राशि सभी मण्डलों और उनकी शाखाओंके दो महीनेके खर्चके बराबर बैठती है। मुझे लगता है कि अनेक समितियोंने तो आदत-सी बना ली है कि वे नयी उगाही करनेके बदले अग्रिम धनकी राशि खर्च करती जाती हैं। यदि यह प्रवृत्ति बढ़ने दी गई — और हो सकता है कि अगली १ली अक्तूबरके बाद यह और जोर पकड़े — तो एक बड़ी विषम स्थिति पैदा हो जायेगी और अग्रिम धनकी राशियाँ न मिलने से हो सकता है कि विभिन्न केन्द्रोंमें बकाया की राशियाँ इतनी बड़ी-बड़ी हो जायें कि नित्य-प्रतिका सामान्य काम चलना भी दूभर हो जाये। इस मामलेमें असम सबसे बड़ा अपराधी है और उससे अन्य प्रान्तोंको सबक लेना चाहिए। असममें थैलियोंके रूपमें मिली सारी-की-सारी राशि उसे सौंप दी गई थी। उसमें से कोई कटौती भी नहीं की गई थी; और उसे थैली-कोषमें से कल्याण-कार्योंपर व्यय होनेवाली पूरी राशि और 'क' तथा 'ख' मदोंके लिए दो तिहाई राशियाँ अनुदानोंके रूपमें मिल सकती थीं। फिर भी, उसने अपनी देनदारी बहुत ही अधिक बढ़ा ली है, और अग्रिम राशियाँ खर्च कर डाली हैं। मैं आपका आभार मानूँगा यदि आप हमारी अग्रिम राशियाँ और नई उगाहियोंके सम्बन्धमें सतर्कता बरतनेका महत्त्व बतलाने की कृपा करें।

इसपर अपनी ओरसे कुछ कहने की जरूरत ही नहीं रह जाती। यदि प्रान्तीय मण्डल, जिला मण्डल और अन्य शाखाएँ अपने हाथमें थोड़ी रकम देखकर गफलतमें पड़ी रहेंगी तो एक दिन वे पायेंगी कि उनके पास बिलकुल कोई ससाधन नहीं रह गये हैं। भाग्य सतर्कता बरतनेवाले का ही साथ देता है, काहिलोंका नहीं। मैं जानता हूँ कि केन्द्रीय कार्यालय इस अत्यन्त ही चोखी नीतिका शब्दश: पालन करेगा। इसलिए बड़ा अच्छा हो, यदि सभी शाखाएँ समय रहते चेत जायें और यह काम जारी रखने के अपने-अपने ससाधन तलाश लें। यदि वे ठोस काम करें तो स्थानीय उगाहीसे ही उनको ऐसे ससाधन मिल जायेंगे। यदि नहीं करेंगे तो वह एक संकेत होगा कि हमें बोरिया-बिस्तर समेट लेना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १४-९-१९३५

५९७. भ्रान्तियाँ

घटनाओं और चीजोंको ध्यानपूर्वक देखनेवाले एक सज्जन लिखते हैं:

आपके जिस पत्रका मैं जवाब दे रहा हूँ उसमें निर्दिष्ट दिशाओंमें काम करने की काफी ज्यादा गुंजाइश है। गृह-उद्योगोंका अपना एक स्थान है। पर अगर साफ-साफ पूछा जाये तो मैं यह कहूँगा कि मेरे खयालमें ये गृह-उद्योग बड़े-बड़े उद्योगोंका स्थान नहीं ले सकते। इन बड़े-बड़े उद्योगोंके संचालकोंके आर्थिक हितोंको एक तरफ रख दें तो भी मेरा यह खयाल है कि इस प्रकारके जो बड़े-बड़े उद्योग स्थापित हो चुके हैं या स्थापित हो सकते हैं, उन्हें नष्ट करने का प्रयत्न करना देशके हकमें अच्छा नहीं होगा। यन्त्रोंके खिलाफ सबसे बड़ी आपत्ति यही उठाई जाती है कि काम-धन्धेमें लगे हुए आदमियोंका काम ये यन्त्र दिनपर-दिन छीनते चले जा रहे हैं। नतीजा यह होता है कि बेकारी बढ़ती ही जाती है। मुनाफेके वितरणकी जो मौजूदा प्रणाली है, सम्भव है, उसमें फेरफार करने की जरूरत हो। पर फुरसतके समयका अगर सदुपयोग हो सके तो वह और बहुत-सी बातोंसे अधिक महत्त्वपूर्ण चीज होगी। सिर्फ लोगोंको भारी तादादमें काममें लगाने के लिए मेरे विचारमें यह जरूरी नहीं कि हम इन यन्त्रोंको खारिज कर दें, जिनसे पैसेकी बचत भी होती है और काम भी अच्छा और अधिक मात्रामें होता है। इन यन्त्रोंको बहुत-से लोगोंको अवकाश और भोजन दे सकना चाहिए। 'बहुत-से लोगों' में मैं ऐसे लोगोंको भी शामिल करता हूँ, जिनका इस उद्योगके साथ दूरका भी सम्बन्ध नहीं है। भारतकी जन-संख्या एक तो यों ही अधिक है, और वह बराबर बढ़ती ही जा रही है — यह देखते हुए मुझे तो डर है कि ऐसा समय शायद कभी नहीं आयेगा जब यहाँ हरएक आदमीको ठीक-ठीक सुख-सुविधा दी जा सके। ज्यों-ज्यों लोगोंमें शिक्षा और स्वच्छताका प्रचार होगा, त्यों-त्यों उनकी आयु बढ़ेगी और मृत्यु-दरमें कमी होती जायेगी। जन-संख्याकी दृष्टिसे देखें तो स्थिति तब और भी बुरी हो जायेगी। इसलिए माफ करें, मुझे यह कहना ही पड़ेगा कि इस दिन-दिन बढ़ती हुई आबादी के रोकने के उपाय करना ही हमारा सबसे पहला काम होना चाहिए, और यह काम बिना सन्तति-निग्रहके नहीं हो सकता। मैं यह जानता हूँ कि आप इस चीजके खिलाफ हैं। मगर आज चूँकि आप सफाई, आहार-सुधार, ग्रामोद्योग आदिके द्वारा आर्थिक पुनर्रचना पर ही अपना

सारा ध्यान दे रहे हैं, इसलिए मैं आपसे यह प्रार्थना करता हूँ कि जरा विचार करके देखिए कि क्या यह भी आपके ध्यान देनेकी चीज नहीं है?

जिन सज्जनने यह पत्र लिखा है, वे ईमानदारीसे विचार करनेवाले व्यक्ति हैं, तो भी जैसाकि मुझे लगता है, जिन दोनों संघोको ध्यानमें रखकर उन्होने लिखा है उनके कार्यका लक्ष्य वे बिलकुल नही समझ सके। बडे-बड़े उद्योगोको हटाकर उनकी जगह ले लेना या उन्हें नष्ट कर डालना तो इन सघोका लक्ष्य ही नही है; उनका लक्ष्य तो यह है कि मृत या मृतप्राय उद्योगोको पुनरुज्जीवित किया जाये, और उनके द्वारा उन करोड़ो लोगोको रोजगार दिया जाये, जिन्हें मजबूरन पूरी या आधी बेकारी में रहना पडता है। यह ध्वसात्मक नही, रचनात्मक कार्यक्रम है। ये बड़े-बड़े उद्योग करोडो बेकार लोगोको कभी भी काम नही दे सकते, और न उन्हे ऐसी कोई आशा ही है। उनका मुख्य उद्देश्य तो अपने चन्द मालिकोके खजाने भरना है, करोड़ो बेकारोको काम देना उनका सीधा उद्देश्य कभी रहा ही नही। खादी और दूसरे ग्रामोद्योगोके सचालकोंको ऐसी कोई आशा नही है कि निकट भविष्यमें उनकी प्रवृत्तियोंका बड़े-बडे उद्योगोपर कोई असर पडेगा। यदि वे कोई आशा कर सकते है तो यही कि ग्रामवासियोकी अँधेरी कोठरियोमें — जिन्हें झोपड़ियाँ कहना भी भाषाका दुरुपयोग करना है — प्रकाशकी एक किरण पहुँचाई जाये। इन सम्माननीय पत्र-लेखक महोदयका कहना है कि फुरसतके समयका अगर सदुपयोग हो सके, तो वह और बहुत-सी बातोसे अधिक महत्त्वपूर्ण चीज होगी, मगर ऐसा कहकर तो, मालूम होता है, उन्होने अपने पक्षका खण्डन स्वय ही कर दिया है। जिन प्रवृत्तियोको वे पसन्द नही करते, उन प्रवृत्तियोका उद्देश्य उस ध्येयको ही तो पूरा करना है जो उनकी दृष्टिमें है। निठल्ले पड़े हुए करोडो लोगोके फुरसतके समयका सदुपयोग करना ही इन प्रवृत्तियोका ध्येय है।

इसमें यन्त्रोके गलत उपयोग और दुरुपयोग — अर्थात् करोड़ोको नुकसान पहुँचानेवाले उपयोग — के खिलाफ कोई मुहिम नहीं चलाई जा रही है। हिन्दुस्तानके सात लाख गाँवोमें फैले हुए ग्रामीण जन-रूपी करोडो जीवित यन्त्रोंके विरुद्ध इन जड़ यन्त्रोको प्रतिद्वन्द्वितामें नही लाना चाहिए। यन्त्रोका सदुपयोग हुआ तो तब माना जायेगा जब वे मानव-प्रयत्नमें सहायक हों और उसे आसान बना दें। आज यन्त्रोंका जैसा उपयोग किया जा रहा है, उससे चन्द लोगोमें सम्पत्तिके सिमटते जानेका सिलसिला उत्तरोत्तर जोर पकड़ता जा रहा है और उन करोड़ों नर-नारियोकी पूरी उपेक्षा हो रही है जिनके मुखका ग्रास ये यन्त्र छीनते जा रहे है। अखिल भारतीय चरखा संघ तथा अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ द्वारा चलाई जानेवाली प्रवृत्तियोंकी परिकल्पना इस उद्देश्यको ध्यानमें रखकर की गई है कि अत्यन्त सवेदनशील मानव-यन्त्रोसे सरोकार रखने की झंझटसे बचते हुए इन निर्जीव यन्त्रोका प्रयोग करके विपुल सम्पत्ति एकत्र करने की सनकका जो कुपरिणाम सामने आ रहा है, उसे जहाँतक बने, शामिल किया जा सके।

पत्र-लेखकको यह भय है कि ऐसा समय कभी नहीं आयेगा कि जब हर आदमीको ठीक-ठीक सुख-सुविधा दी जा सके। जो लोग गाँवोंमें काम कर रहे हैं, उन्हें ऐसा कोई भय नहीं है। बात इससे उलटी है। गाँववालोंके निकट सम्पर्कमें आने और गाँवोंकी स्थितिसे अधिक-परिचित होनेसे उनकी यह आशा बढ़ती ही जा रही है कि अगर ग्रामवासियोंसे उनकी यह पुश्तैनी काहिली छुड़ाई जा सके तो वे सबके-सब ठीक-ठीक सुख-सुविधासे रह सकते हैं और इसके कारण वर्तमान व्यवस्थामें कोई बड़ा उलट-फेर भी न हो। इसमें शक नहीं कि ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिनसे सामान्य लोगोंका उत्पीड़न होता है और हमें इनपर काबू पाना होगा। कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिन्हें बसमें करना आवश्यक होगा। पर जिसे परम्परा-सिद्ध हितोंवाला वर्ग कहा जाता है, उसकी ओरसे यदि कुछ सहयोग मिले तो यह कार्य भी इस तरह सम्पन्न हो जायेगा जिससे किसीको कोई विशेष कष्ट न होगा।

वर्तमान जन-संख्याके लिए ठीक-ठीक सुख-सुविधाकी व्यवस्था करनेके विषयमें पत्र-लेखकको जो भय है, उससे स्वभावतः उनके मनमें जनाधिक्यका भय पैदा हो गया है। इस दशामें तो संतति-निग्रह ही तर्कसंगत उपाय हो जाता है। मेरे लिए संतति-निग्रह एक अंधकूप है। वह अज्ञात शक्तियोंके साथ खेलने-जैसी बात है। यदि मान भी लिया जाये कि कुछ स्थितियोंमें कृत्रिम उपायोंके द्वारा संतति-निग्रह करना उचित है, तो भी मुझे ऐसा लगता है कि करोड़ों लोगोंके लिए यह चीज बिलकुल ही अव्यवहार्य है। उन्हें गर्भाधान रोकने के उपायोंसे संतति-निग्रहकी बात समझाने की अपेक्षा मुझे तो यह ज्यादा आसान मालूम होता है कि उन्हें संयमके साथ रहनेकी बात समझाई जाये। हमारा यह छोटा-सा भूमण्डल कोई कल का बना हुआ खिलौना नहीं है। यह संसार तो न जाने कितने लाख-वर्ष पुराना है, लेकिन आजतक तो यह कभी भी जनाधिक्यके कारण कष्टमें नहीं पड़ा है। तब कुछ लोगोंके मनमें एकाएक इस सत्यका उदय कहाँसे हो गया है कि यदि गर्भाधान रोकनेके कृत्रिम उपायोंसे जन्म-दर न रोकी गई तो आहारके अभावमें भू-मण्डलका नाश हो जायेगा। मुझे तो लगता है कि पत्र-लेखक मित्र एक भ्रान्तिसे दूसरी भ्रान्तिमें पड़ते गये हैं, और अन्तमें वे जहाँ जा फँसे हैं- वह है, जैसा अबतक कभी नहीं सुना गया है, वैसे व्यापक पैमानेपर गर्भ-निरोधके साधनोंके प्रयोगका दलदल।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-९-१९३५

५९८. कुष्ठ-रोगियोंमें प्रजनन

कुष्ठ-रोगी सेवा संस्थाकी भारतीय शाखा (इंडियन ऑग्ज़िलियरी टु द मिशन टु लेपर्स)के अवैतनिक मंत्री श्री ए० डोनाल्ड मिलरने मुझे लन्दनसे एक पत्र भेजा है। उसे नीचे दिया जा रहा है।[1] कुष्ठ-रोगियोंके उद्धारकी पेचीदा समस्यामें तनिक भी रुचि लेनेवाले सभी मानवतावादी लोग इसे गहरी दिलचस्पीके साथ पढ़ेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १४-९-१९३५

५९९. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
१४ सितम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

तुम्हारे वक्तके पाबन्द, भरे-पूरे पत्र पाना मेरे लिए एक सौभाग्यकी बात है। दो मरीजोंको तुम्हारी देखरेखमें सौंपकर मुझे तो उनके बारेमें बिलकुल कोई चिन्ता नहीं रह गई है। प्यारेलालसे कहना कि उसके पत्र मुझे मिल गये हैं। मैं उसकी बातोंको शब्दशः सच मानकर चलता हूँ और इसलिए फिलहाल उसको उत्तर न देकर समयकी बचत कर रहा हूँ। महादेव अबतक नही लौटा। शायद सोमवारसे पहले न लौटे।

डॉ० गोपीचन्द भार्गवको तुम्हारा उत्तर बिलकुल ठीक है। मैं तुम्हारी इच्छाके मुताबिक पत्र नष्ट किये दे रहा हूँ। जो दायित्व तुम सँभाल नही सकती, उनको अपने ऊपर लेनेसे तुमको साफ इनकार कर देना चाहिए।[2]

मीरा अभीतक पूर्ण स्वस्थ नही हो पाई है। उसकी एक और रात बड़ी बेचैनीमें कटी। बुखार उतर तो रहा है, पर धीरे-धीरे ही।

राजाजी अभी यहीं हैं। वे शायद मंगलवारको जायेंगे। लक्ष्मी और नया मेहमान दोनों सकुशल हैं। ताराको अब भी बार-बार बुखार आ जाता है, और मनुको भी। वे सब जमनालालजी के बँगलेमें टिके हैं।

१. देखिए परिशिष्ट ३।
२. देखिए "पत्र : अमृतकौरको", १०-९-१९३५ भी।

बा और देवदाससे कहना कि उनको पत्र लिखने का समय मुझे नहीं मिल पा रहा है। उनको अलगसे लिखे गये पत्रोंका काम तुमको लिखे गये मेरे पत्रोंसे चल जाना चाहिए।

सबको स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५४९) से; सौजन्य: अमृतकौर; जी० एन० ६३५८ से भी

६००. पत्र : विश्वनाथको

१४ सितम्बर, १९३५

प्रिय विश्वनाथ,

न तो बाबाको[1] और न माँ को[2] ही तुमपर दबाव डालना चाहिए था। मुझे पत्र लिखने का तुमको पूरा अधिकार है; और अब तो, खैर, तुमने लिखा ही है। मुझपर तो तुम्हारा दोहरा हक है। एक तो ऐसे संगठनका एक सदस्य होनेके नाते जिसका प्रधान मैं हूँ और दूसरा इस नाते भी कि तुम दो ऐसे व्यक्तियोंसे[3] सम्बन्धित हो जो अनेक वर्षोंसे मेरे हर शब्दको आदेशके रूपमें स्वीकार करते आये हैं। इसलिए पत्र लिखकर तुमने अपने खरे अधिकारपर आग्रह करने के साथ ही मेरे प्रति अपने एक कर्त्तव्यका निर्वाह भी किया। तुम पत्रमें काफी भटक गये हो, पर इस बातसे तुम्हारे पत्रका महत्त्व किसी भी प्रकारसे या किसी भी रूपमें कम नहीं होता। उलटे, उसका महत्त्व इससे और बढ़ जाता है कि तुमने मुझसे वह कहने का साहस किया है जिसे तुम खरा सत्य मानते हो, भले ही मैं उसे सत्यके सर्वथा विपरीत ही मानूँ। बहुधा हम गलतियोंके कुछ थपेड़े खाते हुए ही सत्यतक पहुँचते हैं, ऐसी गलतियोंके थपेड़े जो तबतक हमको गलतियाँ नहीं लगतीं। खादीके प्रति तुम्हारे मोह ने — यह मोह प्रेमसे भिन्न है — तुमको गलतियोंके जालमें फँसा दिया है। अखिल भारतीय चरखा संघ प्रधान कार्यालय है और सम्बद्ध संस्थाएँ उसकी शाखाएँ हैं। प्रधान कार्यालयको जो अधिकार प्राप्त है, वे शाखाओंको नहीं हैं। और हो भी नहीं सकते। मुझे किसी समय किन्हीं खास परिस्थितियोंमें जो नीति बिलकुल ठीक और त्रुटिहीन लगती थी, हो सकता है, बदली हुई परिस्थितियोंमें या उन्हीं परिस्थितियोकी अधिक गहरी समझ आनेपर, वह नीति त्रुटिपूर्ण दिखने लगे। पर यदि मैं ऊपरी समरूपता बनाये रखने के लिए संस्थाके हितोंकी बलि चढ़ा दूँ तो मैं संस्थाका प्रधान बनने योग्य नहीं हूँ। और फिर बाबा और माँ ने अपने साथ और

१, २ और ३ सतीशचन्द्र दासगुप्त और उनकी पत्नी हेमप्रभा दासगुप्त।

अपनी बनाई हुई संस्था के साथ व्यवहार करने के मामलेमें मुझे जितनी छूट दे रखी है, उतनी मैं दूसरोके साथ शायद नही बरत सकता। मुझे ऐसी आशका कतई नही है कि वे कभी भी मुझे गलत समझेंगे। इसलिए तुमको प्रतिष्ठानके सम्बन्धमें किये गये मेरे प्रत्येक कार्यको बावा और माँ के साथ मेरे सम्बन्धकी पृष्ठभूमिमें रखकर देखना-समझना पड़ेगा। ये सम्बन्ध स्वय उनके ही बनाये हुए है। प्रतिष्ठानके बारेमें बस इतना ही कहूँगा।

अब मेरे नये प्रयोगकी बात लो। चूँकि तुम मानते हो कि खादी-आन्दोलनका प्रणेता मैं ही हूँ, इसलिए उसके विकासका नियमन करने और यहाँतक कि उसे नष्ट करने का भी अधिकार मुझे मिलना ही चाहिए। किसी चीजको बनानेवाला फिर नये सिरेसे भी सृजन कर सकता है। और यदि मुझे लगता है कि अपनी बनाई चीजको अमुक रूप देकर मैंने गलती की है, तो अपनी मर्जीके मुताबिक उसे एक नया रूप देनेका अधिकार मुझे तबतक रहना ही चाहिए जबतक उसकी देखरेखमें हाथ बँटानेवाले अपने सहकर्मियोका समर्थन मुझे मिल रहा है। तुम यह तो मानोगे ही कि यदि सहकर्मियोकी आलोचनाके बावजूद मेरा विवेक इस सृजनके सम्बन्धमें किसी चीजको ठीक समझे, तो तुम-जैसे सहकर्मियोकी आलोचनाके भयसे उसपर अमल न करना मेरे लिए अपने ही सृजनके प्रति गद्दारी करना होगा। मैं समझता हूँ कि तुमने जो मुद्दे उठाये हैं उन सभीका जवाब इसमें आ जाता है। तुम जितनी बार भी चाहो मुझे तबतक लिखते रह सकते हो जबतक मैं तुमको अपनी रायसे सहमत न कर लूँ या फिर तुम इस निष्कर्षपर न पहुँच जाओ कि मैं तुमको कभी भी सहमत नही कर सकूँगा।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

तुम्हारी इच्छाके मुताबिक मैं तुम्हारे पत्रको बिलकुल ही निजी पत्र मानूँगा।

श्रीयुत विश्वनाथ
खादी प्रतिष्ठान
सोदपुर, कलकत्ताके निकट

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७२९) से।

६०१. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

१४ सितम्बर, १९३५

भाई मावलंकर,

जिस प्रकार तुम्हें गृहस्थ जीवनकी परीक्षाओंमें से गुजराना पड़ता है उसी प्रकार दूसरोंको भी गुजरना पड़ता है। इतना ही आश्वासन हम ले सकते हैं न? किन्तु आशा है, अब तो सब-कुछ ठीक हो गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२४५) से।

६०२. पत्र : जी० बी० गुरजलेको

वर्धा

१५ सितम्बर, १९३५

प्रिय गुरजले,

तुम्हारा पत्र मिला। बड़ा विषादपूर्ण है। तुमको इस तरह हथियार नहीं डाल देने चाहिए। पर यदि तुमने निराशाके कारण ऐसा नहीं किया है तो तुम्हारा यह संकल्प सराहनीय है कि तुम आश्रममें बने रहोगे और मित्रों द्वारा भेजी गई सहायता पर ही निर्भर रहोगे। एक अनिवार्य शर्त यह है कि यदि वे एक पाई भी न भेजें, तो भी तुमको प्रसन्नचित्त रहना है। तुम पत्रोंके जरिये अपने मित्रोंसे अपील कर सकते हो और संस्था चलाने में अनवरत रूपसे वहीं लगे रह सकते हो। तुमको मेहनतका कोई ऐसा काम भी करना चाहिए जिससे ग्रामोद्योगोंको बढ़ावा मिले और साथ ही तुमको थोड़ी आमदनी हो जाये। तुम यदि कोई अच्छी योजना सोच सको, तो तुमको छुटकारा मिल जाये। तुम्हारे पत्रमें एक बात है, जिससे मुझे चिन्ता हो गई है। तुमने लिखा है कि तुम्हारे हर काममें हाथ बँटानेवाली तुम्हारी पत्नी अब तुम्हारे खिलाफ हो गई है। इसका क्या मतलब है? वह तुम्हारे खिलाफ क्यों हो गई है?

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

श्रीयुत गोविन्दराव गुरजले
कृपा आश्रम
तिरुवर्णनल्लूर (दक्षिण भारत)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४०३) से।

६०३. पत्र : के० जी० राखडेको

१५ सितम्बर, १९३५

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए बहुत धन्यवाद। मैंने श्री त्रिवेदीको सुझाव दिया है कि पैसा मुझे हस्तान्तरित कर दिया जाये। फिर तुरन्त मैं सालुकर स्मारक समितिके निर्माणके काममें लग जाऊँगा, ताकि न्यास कायम किया जा सके।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत के० जी० राखडे
छिंदवाड़ा

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

६०४. पत्र : नारणदास गांधीको

१५ सितम्बर, १९३५

चि० नारणदास,

पिताजी को मैं अलगसे पत्र लिख रहा हूँ।

'चरखा द्वादशी' से[1] सम्बन्धित पत्रक अच्छा है, किन्तु उसमें से तुम कितना करा पाओगे यह तो तुम्हारा विस्तृत विवरण मिलनेपर ही पता चल सकेगा। खादीके प्रति आजकल मध्यवर्गकी बहुत श्रद्धा देखने में नहीं आती, हालाँकि कुछ व्यक्तियोंकी श्रद्धा अवश्य बनी हुई है। मुझे तो तभी सन्तोष होगा जब राजकोट-जैसे शहरमें तुम्हें अच्छी सख्यामें कातनेवाले मिल जायेंगे।

वहाँ कारखानेका जो सामान पड़ा हुआ है यदि तुम उसका उपयोग न करते हो तो मैं यहाँ आसानीसे उसका उपयोग कर सकता हूँ। किन्तु यदि उसका तुम्हारे लिए कोई उपयोग हो तो मैं उसके बिना भी काम चला सकता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४७३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. भाद्र वदी २, विक्रम सम्वत् के अनुसार गांधीजी का जन्म-दिवस कताई-दिवस के रूप में मनाया गया था; जो १९३५ में २४ सितम्बर को पड़ा था।

६०५. पत्र : खुशालचन्द गांधीको

१५ सितम्बर, १९३५

आदरणीय भाईकी सेवामें,

आपकी तपस्या तो फलीभूत हुई। आप और अधिक तपस्या करते रहें और वह फलीभूत होती रहे ताकि मैं आपके आशीर्वाद पाता रहूँ।

मोहनदासके दंडवत् प्रणाम

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

६०६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१५ सितम्बर, १९३५

भाई वल्लभभाई,

मणिलालका[1] तार मुझे भी परेशान कर रहा था। मैंने तो आखिर साथकी नकलके अनुसार पत्र लिखा है। अच्छा किया कि तुमने महादेवको रोक लिया। मेरी गाड़ी तो दिन-दिन अधिक देहाती बनती जा रही है। उसके मोटे-मोटे पहिये और सड़कपर तीन-चार इंच मोटी धूलकी तहके बीचसे जब रास्ता तय करना है तो उतावली कैसी? मगर मैं आशा करता हूँ कि अब तो तुम मंगलवारको यहाँ पहुँच ही जाओगे। सिर्फ उसी दिन राजाजी यहाँ रहेंगे। शामको तुम उन्हें मुक्त कर देना।

सिन्धीके बारेमें तुम बेकार ही घबरा रहे हो। इस बारेमें मैं तुम्हें पूरी तरह सन्तुष्ट कर दूँगा।

[2]का मामला निपट जाये तो अच्छा हो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १८९

१. मणिलाल कोठारी।

२. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

६०७. पत्र : मीराबहनको

[१६ सितम्बर, १९३५][1]

चि० मीरा,

इसे पढ़ जाओ और कोई सुझाव हो तो उसके साथ इसे लौटा दो। यदि इतनी मेहनतके लायक शक्ति शरीरमें महसूस न करो, तो मत पढ़ना।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५४८१) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९४८० से भी

६०८. पत्र : राजेन्द्रप्रसादको

१६ सितम्बर, १९३५

प्रिय राजेन्द्रबाबू,

मैंने अनिच्छासे अंग्रेजीमें लिखना शुरू कर दिया है। महादेव कल सरदार और घनश्यामदासके साथ लौट रहा है।

आपको चंगा हो जाना चाहिए और तब यदि आ सकें तो जल्द ही यहाँ आ जाना चाहिए। देवदास प्यारेलालको नहीं भेज सकता। यदि आप न आ सकें, तो मुझे महादेवको आपके पास भेजना ही होगा। आप अकेले न छूट जायें। इसलिए तार द्वारा अपनी मंशा बतलाने की कृपा कीजिए।

बापू

[पुनश्च :]

मीराबहनको मलेरियाने बुरी तरह जकड़ लिया था। कलसे उसे बुखार नहीं रहा। चिन्ताकी कोई बात नहीं।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७६८) से; सौजन्य: राजेन्द्रप्रसाद

१. जी० एन० रजिस्टरके अनुसार यह पुर्जा सितम्बर १९३५ में मौन-दिवसको लिखा गया था। इसके पाठ से स्पष्ट है कि यह मीराबहन के बीमारी से उठने के कुछ ही समय बाद लिखा गया था; देखिए अगले दो शीर्षक भी।

६०९. पत्र : अमृतकौरको

१६ सितम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

तुम्हारे प्रिय पत्र मुझे हमेशा ठीक समयपर मिलते रहते हैं। ईश्वर तुमपर कृपालु हो। तुमको अपनी आँखोंपर बहुत ज्यादा जोर नहीं डालना चाहिए और उनको खराब नहीं कर लेना चाहिए।

डॉक्टर घरमें ही मौजूद है, इसलिए मेरा यह सुझाव देना उचित न होगा कि देवदास जितना लेना चाहे उससे अधिक भोजनका उससे आग्रह न किया जाये। ज्यादा अच्छा रहेगा कि उसे धीरे-धीरे ही आगे बढ़ने दिया जाये। यह सब सामान्य व्यक्तिका सुझाव ही है और इसपर उतना ही अमल किया जाये जितनेके यह योग्य हो।

दो पत्र साथमें हैं।

सबको स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

मीरा ठीक हो गई है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५०) से। सौजन्य : अमृतकौर; जी० एन० ६३५९ से भी

६१०. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१६ सितम्बर, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले। आज तो मेरे पास जरा भी समय नही है। एक तरफ मीराबहनकी खटिया पड़ी है और दूसरी तरफ नीमू, लक्ष्मी आदि भी यही हैं। और मैं तो 'हरिजन' के काममें अन्य सोमवारोंकी अपेक्षा अधिक व्यस्त हूँ। राजाजी और किशोरलाल मेरा एक महत्त्वपूर्ण लेख सुधार रहे हैं। इस बीच मैं यह पत्र लिखे दे रहा हूँ। देवदास और बा शिमलामें हैं। अब देवदास कुछ ठीक है। प्यारेलाल उसकी सेवामें लगा है। चिन्ता करने की कोई बात ही नही है। राजाजी ने नवागत शिशुका नाम राजमोहन रखा है।

सरदार, घनश्यामदास और महादेव कल बम्बईसे यहाँ आ रहे हैं।

सीता और अरुणकी शिक्षाके बारेमें मैं [अपने मतपर] दृढ़ हूँ। यह निश्चित मानना कि वे तुमसे जो पा सकते हैं वह उन्हें और कही नही मिल सकेगा। यदि उन्हे भली-भाँति तैयार कर दिया जाये तो बडे होनेपर उन्हे कुछ खास सीखना होगा तो वे स्वय ही सीख लेगे। मणिलाल जिस प्रकार खाने-पीनेके लिए समय निकालता है उसी प्रकार उसे प्रतिदिन एक निश्चित समय उनके लिए भी अवश्य निकालना चाहिए। मनुष्य अपने लिए नियम बना ले तो फिर तदनुसार आचरण करना सहज हो जाता है। जिस प्रकार हर सप्ताह 'इंडियन ओपिनियन' का निबटाना तुम अपना कर्त्तव्य मानते हो, उसी प्रकार यदि बच्चोके शिक्षण-कार्य को अपना कर्त्तव्य मान लो तो समय निकल ही आयेगा।

एजेंटसे रसाईसे जितनी बातचीत हो सके उतनी करना। यह मानकर कि एजेंट का पद अभी बन्द होनेवाला तो है नही, उससे जितना सार्वजनिक काम लिया जा सके उतना लेना चाहिए। हम जैसे हैं उस अवस्थामें एकाएक कैसे परिवर्तन हो सकता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४३)से।

६११. पत्र : लीलावती आसरको

१६ सितम्बर, १९३५

मुझे इस वर्षके अन्ततक कही नहीं जाना है। अतः अक्तूबरमें मैं यही रहूँगा। पेंसिलसे लिखने के सम्बन्धमें तेरी शिकायत सही है। अबसे मैं स्याहीसे ही सुधार किया करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२५४) से। सी० डब्ल्यू० १०१०४ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

६१२. पत्र : बलवन्तसिंहको

मगनवाड़ी, वर्धा
१७ सितम्बर, १९३५

चि० बलवन्तसिह,

देवीके सामने बकरीयोंके भोगका बयान दुःखद है। हम इस सदीओंकी भ्रमणा को क्षणमें दूर नही कर सकते, जबतक हमने लोग समझ सकते हैं ऐसी सेवा नही की तबतक हमारी बात सुनने के लिये उनके हृदय तैयार नही होंगे। बुध्धिका विकास इससे भी कठीन है। और अहिंसक प्रवृत्ति-मात्र हृदयस्पर्शी रहती है, बुध्धिस्पर्शी कम हृदय-स्पर्श निस्वार्थ सेवासे बहूत जल्दी हो सकता है। इसलिये आज तो हमारे इन देवीओं को बकरीओंका भोग चढानेवालों में सेवाकार्य करना है। और मोका मिलने से उनका भ्रम दूर करायेंगे। याद रक्खो कि जो दृश्य तुमको अणपढ लोकोंमें देखा वही दृश्य पढ़े हुए लोकोंमें कलकत्तेमें देखने में आता है, और वहां बहूत पैयमाने में।

दूसरी घटना भी उसी प्रकारकी[1] समझो, अगरचे इतनी दुःखद, इतनी असह्य नही है। उसमें भी इलाज वही है। मुझे पता नहीं कि कृष्णदास बीज, इत्यादि ले गया है कि नहीं, तुम्हारा खत उसके जानेके बाद मेरे हाथमें आया।

हां, जो मरीज दिल्लीसे आये हैं वह हरिश्चंद्र ही है। डा० पिंगले मालीश इ० करते हैं उनको और हरिश्चंद्र दोनोंको उमेद है कि वह अच्छे हो जायेंगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८८१) से।

१. बलवन्तसिंह ने एक महिला को सोने का एक आभूषण चोरी करने के आरोप में लोगों द्वारा तंग किये जाते देखा था। उनके बीच-बचाव करने और कहने-सुनने पर उसने आभूषण लौटा दिया था।

६१३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

मगनवाड़ी, वर्धा
१८ सितम्बर, १९३५

चि० ब्रिजकृष्ण,

इतने वर्षोंके बाद तुमने जो प्रश्न पूछा है वह आश्चर्य है। पापोके लिए क्षमा [का] अर्थ क्या है? और क्षमा कौन करे? क्यो करें? ऐसी भाषाका प्रयोग होता है सही, लेकिन ऐसी भाषा प्रयोग करते हैं उनको शका आती ही नही, क्योकि मनुष्य क्षमाका आरोपण करके शुद्ध बन जाता है। तात्विक दृष्टिसे पापका फल भोगना ही है। जो मनुष्य ज्ञानपूर्वक भोगता है वह दुबारा पाप नही करता है और शुद्ध हो जाता है। यही तो क्षमा है। क्षमाका अर्थ तो ऐसा कभी नही है कि मनुष्य पाप करता रहे और क्षमा मागता रहे। जिसके पापकी क्षमा हुई है वह दुबारा पाप करता ही नही, और करता है तो क्षमा हुई नहीं। दूसरी बात यह है कि हम प्रत्येक दर्दको पापकी सजा क्यो मानें? दर्दोंको ईश्वरकी प्रसादी क्यो न समझें? अर्थात् दोनो अर्थ निकाल सकते है और दोनो अर्थके मार्फत हम आत्मोन्नति कर सकते है।

नायरने मुझे भी लिखा है। अब मैं ज्यादा दखल नही देता हू। तुम ही नायरको लिख दो। आश्रमके लिये उनकी खूब आवश्यकता जचे तो भले अभ्यास मौकुफ करकें आ जाये। और आये तो उसको पूर्ण सत्ता दी जाय। और आर्थिक मदद चाहे सो दी जाय, सलाहके रूपमें जो कहना है सो कहा जाय। दिल चाहे सो करे।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३३) से।

६१४. पत्र : लीलावती आसरको

[१९ सितम्बर, १९३५ के पश्चात्][1]

चि० लीलावती,

जिस प्रकार तुझसे देर हुई उसी प्रकार मुझसे भी दो दिनकी देर हुई है। तेरा अगला पाठ मैं भेज चुका हूँ। तुम सबने अच्छी मेहनत की है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२५४) से। सी० डब्ल्यू० १०५० से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१. यह पत्र लीलावती आसरके १९ सितम्बर, १९३५ के पत्रके जवाबमें लिखा गया था।

६१५. पत्र: अगाथा हैरिसनको

वर्धा
२० सितम्बर, १९३५

प्रिय अगाथा,

मै इधर हफ्तोसे तुमको नही लिख पाया हूँ; हाँ, जब-तब दूसरोंसे तुमको अपनी ओरसे लिखवाता जरूर रहा हूँ। यह सब उसके अलावा रहा जो महादेव और चन्द्रशंकरने तुमको लिखा होगा। जवाहरलालकी रिहाईके सिलसिलेमें तुम्हारी कार्रवाई बड़ी ही तत्परतापूर्ण और शानदार रही। तुमने बहुत ठीक कहा है कि वह कार्रवाई राजनीतिक कम और मानवतावादी अधिक थी। मुझे इस बातकी भी खुशी है कि अधिकारियोंने अवसरके अनुरूप चुस्ती दिखाई और पर्याप्त राहत देनेमें मिनट-भरकी भी देर नही होने दी। यहाँ भी हम अपनी ओरसे प्रयत्नमें लग गये थे। और फिर सारा मामला कितनी अच्छी तरह निबट गया। सतहपर दिखनेवाले चारों ओरके अन्धकार और अवसादके बीच जवाहरलालकी रिहाई एक प्रकाश-बिन्दुके समान चमक रही है। मै जानता हूँ कि तुम धन्यवाद नहीं चाहती। यदि चाहो तो गाड़ियाँ-भर धन्यवाद तुमको मिल सकते हैं। मै जानता हूँ कि तुमने जैसी पहल की है यदि न की होती तो मुझे घोर निराशा होती। तुमने अपनी ओरसे ऐसी ही तत्परतापूर्ण और निर्णायक कार्रवाई करने की आशा रखने का मुझे अभ्यस्त बना दिया है। फिर भी उन सभी लोगोंको धन्यवाद अवश्य देना जिन्होंने तुम्हें सहायता दी और तुम्हारे कठिन उद्देश्यको इतने पूर्ण रूपसे सफल बनाया। विमान द्वारा बेडेनवीलर[1] पहुँचकर तुमने बहुत अच्छा किया। मैं वहाँके तुम्हारे विवरणकी राह बड़ी उत्सुकता से देख रहा हूँ। यदि यह कहा जा सकता हो कि मनुष्य ईश्वरकी योजनाओंमें कोई परिवर्तन कर सकता है तो निस्सन्देह कहना होगा कि जवाहरलालकी रिहाई इन सफल प्रयत्नोंके परिणामस्वरूप ईश्वरकी योजनामें निश्चय ही कमलाके जीवनके दिन बढ़ गये है। लेकिन मै इस हदतक तो पुराने विचारोंका आदमी हूँ ही कि मानूँ कि ईश्वरकी इच्छाके बिना एक पत्ता भी नही हिलता [अर्थात् वही हुआ जो ईश्वरकी इच्छा थी]। उस स्थितिमें भी, यह सोचकर मुझे पर्याप्त सन्तोष प्राप्त होता है कि तुमने और अन्य मित्रोंने ईश्वरकी योजना पूरी करने के लिए मिल-जुलकर प्रयत्न किया और इसलिए जब तुम लोग अपना कर्त्तव्य करने में लगे थे, अदृश्यमें ईश्वरके दूत कह रहे थे "शाबाश! बहुत अच्छा।"

१. कमला नेहरूको देखने के लिए।

घनश्यामदासको आज सुबह अचानक जाना पड़ गया। कल उनको एक तार मिला था कि उनकी माँ को बुखार हो गया है। नही तो वे यहाँ कमसे-कम चार दिन और ठहरते। लेकिन उन्होंने वहाँके अपने कामका खासा अच्छा विवरण मुझे साराशमें दे दिया था। चार्लीने यहाँकी परिस्थितिके बारेमें तुम्हें सब-कुछ बतला ही दिया होगा। उसने जो बतलाया होगा उससे आगे मैं और कुछ नही कह सकता। आशा है, इस समुद्र-यात्रासे उसे कुछ लाभ हुआ होगा। उसे विश्रामकी बड़ी जरूरत थी। मेरी बड़ी इच्छा है कि वह यहाँ तैयार की गई योजनाओंके अनुसार ही चले, मतलब यह कि वह कैम्ब्रिज या ऐसी ही किसी दूसरी जगह रहे और वहाँ अपने आपको स्थायी किस्म की कोई चीज लिखने में लगाये और जब कोई ऐसा विषय आये जिसके सम्बन्धमें केवल वही प्रकाश डाल सकता हो या मार्ग-दर्शन कर सकता हो तब वह तुम्हारे लिए सुलभ रहे। मुझे आशा है कि तुम इस योजनाको बढ़ावा दोगी। मैं जानता हूँ कि वह तुमको कितना मानता है। इसलिए यदि चाहो तो तुम उसके सम्बन्धमें 'मोहिनी' की भूमिका का सदा सफल निर्वाह कर सकती हो। अब मुझे लिखना बन्द कर देना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४९२) से।

६१६. पत्र : जी० वी० गुरजलेको

२० सितम्बर, १९३५

प्रिय. गुरजले,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं उसके बारेमें कुछ भी नही कहूँगा। बस, ईश्वरसे प्रार्थना करूँगा कि उन कठिन व्रतोको पूरा करने में तुम्हारी सहायता करे।[१]

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३८४) से।

१. देखिए "पत्र : जी० वी० गुरजलेको", १५-९-१९३५ भी।

६१७. पत्र : आनन्द टी० हिंगोरानीको

२० सितम्बर, १९३५

प्रिय आनन्द,

अगर मुझे समयसे तुम्हें पत्र भेज पाना है तो बोलकर ही लिखवाना पड़ेगा। विद्यापर बार-बार बीमारीका यह प्रकोप होना, यह बुरी बात है। आशा है, दिल्ली में जो खास इलाज किया गया उससे उसे फायदा हुआ होगा। अगर तुम वालजीका[1] निमंत्रण स्वीकार कर सको तो वेशक अच्छा रहेगा। मुझे इस बातकी भी खुशी है कि तुम्हें कराचीके अपने हरिजन-कार्यसे उम्मीद है। खुद मैं तो हरिजनोंको कपड़े देनेका खर्चा लेनेके विरुद्ध हूँ। मैं उन्हें गरीब-बेचारा मानने को तैयार नहीं हूँ। और अगर मुझे पहनने-ओढ़ने की चीजें देनी पड़ती हैं तो मैं हमेशा खादीका सहारा लेता हूँ। लेकिन सबके लिए एक ही नियम बना देना सम्भव नहीं है। इसलिए तुम्हें ऐसे हर मामलेमें अपने विवेकसे काम लेना चाहिए और या फिर जैसा तुम्हें ठीक लगे वैसा करना चाहिए या जयरामदाससे[2] पूछना चाहिए। और जब शंका हो तो कुछ ऐसा करो जिससे गलती भी हो तो सही दिशामें हो।

तुम दोनोंको प्यार।

बापू

श्रीयुत आनन्द हिंगोरानी
फीरोजपुर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द टी० हिंगोरानी

१. वालजी गो० देसाई।
२. जयरमदास दौलतराम

६१८. पत्र : भगवानजी ए० मेहताको

२० सितम्बर, १९३५

भाई भगवानजी,

जमनालालजी को लिखा तुम्हारा पत्र मैं उन्हें भेज दूंगा। तुम अपनी लडकियोंके लिए छाँट-छाँटकर दौलतमन्द आदमी ही क्यो चुनते हो? देवचन्दभाई के बारेमें तुम्हारा पत्र मिल गया है। यह पत्र उन्हें भेजने से यदि वे तुमसे मिलनेवाले होंगे तो भी नही मिलेंगे। इसलिए मैंने तो उन्हें अलगसे ही पत्र लिख दिया है। इसका जो परिणाम निकलेगा, वह मैं सूचित कर दूंगा।

मो० क० गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२७) से। सी० डब्ल्यू० ३०५० से भी, सौजन्य : भगवानजी ए० मेहता

६१९. पत्र : जमनालाल बजाजको

२० सितम्बर, १९३५

चि० जमनालाल,

सुनता हूँ कि तुम्हारे आनेकी तारीख आगे बढ़ती जा रही है। अलमोड़ामें और अधिक रुकने के लिए बढ़ रही है, यह मुझे अच्छा लगता है। तुमको आराम करने की बहुत आवश्यकता है। वहाँ बैठे हुए भी तुम पूरा आराम ले सको यह तो सम्भव है नही। पत्र तो लिखने ही पड़ते होंगे। लोग भी वहाँ मिलने-जुलने आते होंगे और वहाँका काम तो है ही। उसके बावजूद जो परेशानी तुम्हें यहाँ उठानी पड़ती है वह वहाँ नही है, इस कारण जाड़ा शुरू होनेतक यदि तुम वहाँ रहो तो भी मुझे अच्छा लगेगा। फिर वहाँका जाड़ा तो प्रसिद्ध है। इससे भी अधिक अच्छा जाड़ा शिमलाका माना जाता है, और जाड़ेमें शिमलाका रहन-सहन वर्षासे भी सस्ता होता है। बंगले नाममात्रके किरायेपर मिल जाते हैं। साग-सब्जी, फल वगैरह ढेरके-ढेर और सस्ते मिलते है और चारो ओरका दृश्य अत्यन्त आकर्षक होता है। सर्दी लोगोंकी कल्पनामें ही होती है। लाहौरमें जितनी ठंड लगती है उसकी अपेक्षा वहाँ कम लगती है; इसलिए मैं तो तुम्हें सर्दियोंमें वहाँ रहने की भी छुट्टी दे दूंगा।

तुम जहाँ रहोगे काम तो वहाँ भी करते ही रहोगे। पूरा एक वर्ष शांतिसे पहाड़पर बिता दो तो मेरा खयाल है कि तुम्हारा कानका दर्द शान्त हो जायेगा। मदालसाका शरीर अच्छा बन जायेगा और जानकी मैया अच्छी घुड़सवार बन जायेंगी बशर्ते कि वे अपनी हड्डियाँ न तोड़ लें। मैं यह अवश्य चाहता हूँ कि तुम चरखा संघकी बैठकमें उपस्थित रहो। पर अगर तुम्हें सन्तोष हो तो मैं तुम्हारी उपस्थितिके बिना भी काम चला सकता हूँ। हमने नयी नीतिके बारेमें काफी विचार-विमर्श कर लिया है। तुम्हें जो कहना हो सो तुम वहाँसे लिखकर भेज सकते हो। यदि खादी प्रतिष्ठान, मेरठ और कश्मीरके भंडारके विषयमें विचार करने की बात हो तो इनके बारेमें भी मेरे विचार बन चुके हैं।

इस सम्बन्धमें भी तुम अपनी राय भेज सकते हो और फिर जो हो जाये उसे सहन करो।

अब रही कांग्रेसकी कार्यसमितिकी बैठक। यदि तुम इसमें भी न आओ तो काम चल जायेगा। इस सबसे मैं तुम्हें केवल इस शर्तपर मुक्त कर सकता हूँ कि यह सारा समय तुम किसी पहाड़ी स्थानपर बिताओगे। अगर तुम नीचे उतरते हो तो फिर दोनों बैठकोंमें शामिल होना तुम्हारा धर्म हो जाता है। तुम जालंधर जानेवाले थे सो क्या वहाँ नही गये? राधाकृष्ण[1] और सरदार ऐसा समझते हैं कि शायद तुम नही गये। अब सरदारको वहाँ जाना पड़ेगा। यहाँ सब ठीक चल रहा है। बालकोबा गौरीशंकरकी देखरेखमें केवल दूधका प्रयोग कर रहे हैं। अब ठीक हैं। इसके साथ भगवानजी का पत्र है। तुमने जिस आदमीके बारेमें लिखा था मैंने उससे मिलने को कह दिया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७५) से।

६२०. पत्र : नारणदास गांधीको

२० सितम्बर, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारा 'चरखा द्वादशी' का कार्यक्रम सफल हो। मेरे लिए खादीमें धर्म और अर्थ दोनो समाविष्ट हैं। और मैं खादीका जो अर्थ समझता हूँ उसका वैसा अर्थ जो भी करेगा उसे भी वैसा ही अनुभव हुए बिना नही रहेगा। अतः मैं तो यह चाहता ही हूँ कि तुम्हारे यज्ञमें जितने अधिक लोग भाग लेंगे, उस हदतक वे अपना और देशका कल्याण करेंगे।

बापूके आशीर्वाद

१. जमनालाल बजाज के भतीजे।

[पुनश्च :]

यदि जमनादास वहाँका काम-काज सभाल ले तो तुम्हारे लिए यहाँ मेरे पास काफी काम है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४७४ से भी; सौजन्य . नारणदास गाधी

६२१. पत्र : पी० जी० मैथ्यूको

[२० सितम्बर, १९३५][1]

प्रिय मैथ्यू

समयकी इतनी तंगी रहते हुए दोहिने हाथसे लिखना कितना कठिन है, यह क्या तुम समझ नही सकते ?

बापू

अग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

६२२. पत्र : हीरालाल शर्माको

२० सितम्बर, १९३५

चि० शर्मा,

तुमको कोलंबो पत्र भेजा उसके बादमें पत्र भेज ही नहीं सका हू। यो तो तुमारे अमरीकासे खत आनेके पहले लिखना ही क्या था? लेकिन ऐसा भी नही। मेरे दिलमें तो हमेशा तुमको लिखने का रहता था। मैं वखतके अभावसे भेज ही नहीं सका। दैव जाने अब यह कब मिलेगा। पोर्ट सुदानका तुमारा खत मिल गया। कोलबोका भी मिला था। दोनो आकर्षक थे। जैसे सुखसे दिन वहाँ कटे ऐसे ही अमरीकामें हो। जो किताब तुम्हें चाहिये उसकी पैरवीं करूगा। मेरा कुछ ख्याल है कि अमरीका पहोंचने के बाद उस किताबकी आवश्यकता शायद ही हो, तो भी मैं तजवीज करूगा।

1. साधन सूत्रमें यह पत्र नारणदास गांधीको लिखे गुजराती पोस्टकार्ड (देखिए पिछला शीर्षक) के नीचे लिखा हुआ है।

द्रोपदीका मुझे एक बहूत ही छोटा खत आया था। उसके बाद कुछ नहीं है। अगरचे मैंने उनको लिखा है। अमतुलसलामको बड़ी शिकायत है कि उसको भी कुछ खत नहिं मिलते हैं। तुमको तो मिलते होंगे। कुछ मुझे बताने का हो तो बताईए।

कन्याश्रमकी किताबोंके बारेमें छोटेलालसे बातें करने के बाद मैं लिखुंगा।

तुमारे खत तो नियमपूर्वक आते रहेंगे।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९६-९७के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे

६२३. टिप्पणियाँ

एक भूल-सुधार

प्रो० मलकानीने पत्र लिखकर सूचित किया है कि हरिजन-दिवस इस महीनेकी २५ नहीं बल्कि २४ तारीखको मनाया जाना है, क्योंकि पूना-समझौते पर इसी तारीखको हस्ताक्षर हुए थे।[1]

रेशम और ऊन

हाथके कते और हाथके बुने ऊनी और रेशमी कपड़े शुद्ध खादीसे जुड़े हुए हैं और इसे उनसे सहारा भी मिलता है। उधर इन दोनोंको कुछ-कुछ सहारा चरखा संघसे मिलता है — ऊनको खासकर काश्मीरमें, और रेशमको बंगालमें। अब सवाल यह उठ खड़ा हुआ है कि न्यूनतम मजदूरीका नियम ऊन और रेशमकी कत्तिनों पर कहाँतक लागू होता है। यह नियम तो खादीसे भी अधिक ऊन और रेशमकी कताई पर लागू होता है। ईश्वरकी कृपासे ये उद्योग आज भी अपने पैरोंपर खड़े रह सकते हैं। ऊनी और रेशमी कपड़ोंपर ज्यादा मुनाफा लिया जा सकता है, और इस तरह खादीकी कीमत घटाने में इनसे मदद मिलती है। इसलिए ऊन और रेशमकी कत्तिनोंको उचित मजदूरी देना हमारा एक ऐसा कर्त्तव्य है कि जिससे हम किसी भी कारणसे जी नहीं चुरा सकते। ग्रामोद्योग संघके प्रस्तावके पीछे जो विचार है और चरखा संघ जो प्रयत्न कर रहा है, उसका अर्थ यह है कि इन दोनो संघोंके कार्यक्षेत्रमें काम करनेवाले कारीगरों और मजदूरोंको कमसे-कम इतनी मजदूरी तो दी ही जानी चाहिए जिससे उनका गुजारा हो सके। और यह देखते हुए कि मजदूरीकी जो दर अन्तमें नियत की जायेगी वह न्यूनतम ही होगी, जहाँ भी सम्भव हो वहाँ न्यूनतम दरसे अधिक मजदूरी देनेकी ही प्रवृत्ति होनी चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि ग्रामोद्योग संघ और चरखा संघ किसी भी उत्पादकको प्रमाण-पत्र तब तक नहीं दे सकते जबतक कि वे अपने यहाँके कारीगरों व मजदूरोंका ठीक-ठीक रजिस्टर न रखें और कारीगरों और मजदूरोंको निश्चित दरसे मजदूरी देनेका सबूत

१. देखिए "हरिजन सेवक संघके प्रस्ताव", ७-९-१९३५ और "टिप्पणियाँ", १४-९-१९३५ भी।

न दे सकें। इसका यह भी अर्थ निकलता है कि उन ऊनी और रेशमी कपड़ोंको, जो प्रमाण-पत्र प्राप्त उत्पादकोंसे न खरीदे गये हों, कोई भी प्रमाणित खादी-भण्डार नहीं रख सकता।

स्व० न्यायमूर्ति रानडे और चरखा

एक सज्जनने मेरे पास एक रोचक विज्ञापन भेजा है। स्वर्गीय न्यायमूर्ति रानडेने यह विज्ञापन ९ दिसम्बर, १८८० को भारतीय पत्रोंमें प्रकाशित कराया था :

> हमारे देशके अनेक भागोंमें कपासकी खेती होती है, और अनेक जगहोंमें चरखेपर सूत कातने का उद्योग खासे बड़े पैमानेपर चल रहा है, क्योंकि चरखेपर कते सूतकी अब भी काफी ज्यादा माँग है। इन परिस्थितियोंमें, कताईकी रीतिमें अगर सुधार कर दिया जाये तो यह चीज गरीब और मेहनती लोगोंके लिए लाभदायक साबित हो सकती है। इसी उद्देश्यसे कताईके यन्त्रका यह विज्ञापन प्रकाशित किया जा रहा है। उस यन्त्रमें नीचे लिखे सुधार होने चाहिए :
>
> १. रुई साफ करने के लिए एक यन्त्र हो, जो या तो खुद चरखेका एक हिस्सा हो या उससे अलग चीज हो।
>
> २. बजाय एक धागेके उससे पाँच धागे निकलें और इस तरह सूतकी कुल उत्पत्ति पाँचगुनी बढ़ जाये।
>
> ३. सूत एकसार होनेके अलावा कमसे-कम इतना महीन कतना चाहिए जितने महीन सूतकी खादी बुनी जाती है। सूत इससे मोटा न हो।
>
> ४. यन्त्र मजबूत होनेके अलावा सादा होना चाहिए, और ठीक-ठीक तथा अविराम चलने लायक होना चाहिए।
>
> यह यन्त्र किसी संग्रहालयमें बतौर एक नमूनेके रखने के लिए नहीं चाहिए, बल्कि जब चलाया जाये तो वह हमेशा बिलकुल ठीक-ठीक काम दे। ये यन्त्र (ऊपर की गई फरमाइशके अनुसार) १५ मई, १८८१ के पहले आ जायें। उन सबकी जाँच निष्णात व्यक्तियों द्वारा कराई जायेगी। और जिस मशीनको परीक्षक पसन्द करेंगे उसके बनानेवाले को ५०० रुपयेका पुरस्कार दिया जायेगा।
>
> उस यन्त्रके निर्माताको हमारी माँगपर उचित कीमत लेकर २५ मशीनें तक देनेका जिम्मा लेना पड़ेगा, और उसे यह भी गारंटी देनी होगी कि चलने के चार महीनेके अन्दर अगर यन्त्र बिगड़ जायें, तो वह उन्हें ठीक कर देगा।
>
> इसलिए जो लोग इस प्रयोगको आजमाना चाहें, उन्हें तदनुसार इस विज्ञापनके प्रकाशनकी तारीखसे दो महीनेके अन्दर हमें लिखित सूचना दे देनी चाहिए।

श्री हट्टीबेलगलकर (जो नीचे हस्ताक्षर करनेवालोंमें से एक हैं) शुक्रवार पेठ, पूनासे खुद मिलकर अथवा उन्हें जवाबी पत्र लिखकर इस सम्बन्धमें विस्तृत जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

पूना शहर (सही) श्रीनिवास शेषो हट्टीबेलगलकर
९-१२-१८८० पेंशनर रिकॉर्ड कीपर, एस० डी०
(सही) महादेव गोविन्द रानडे

भारतके पत्रकारोंसे हमारा अनुरोध है कि इस विज्ञापनको वे अपने-अपने पत्रोंमें एकाधिक बार छापें, ताकि इसपर अधिकसे-अधिक लोगोंकी नजर पड़ सके।

जैसाकि स्व० गोखले कहा करते थे, रानडेकी तीक्ष्ण दृष्टिसे कोई भी चीज बच नहीं पाती थी, और जिस चीजसे उनके दीन-दुःखी देशवासियोंको कोई लाभ पहुँच सकता था, उसे उन्होंने कभी अपने मनमें नगण्य नहीं समझा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-९-१९३५

६२४. एक त्याग

१८९१ में जब मैं इंग्लैंडसे लौटा तो अपने परिवारके बच्चोंको लगभग अपनी ही निगरानीमें ले लिया और उनके साथ — बालक-बालिकाओं दोनोंके — कन्धोंपर हाथ रखकर घूमने की आदत भी डाल ली। ये बच्चे मेरे भाइयोंके थे। उनके बड़े हो जानेपर भी यह सिलसिला जारी रहा। और जैसे-जैसे परिवारका विस्तार होता गया, यह सिलसिला भी बढ़ते-बढ़ते इस सीमातक पहुँच गया कि अब इस ओर लोगोंका ध्यान खिचने लगा।

जहाँतक याद आता है, अभी कुछ साल पहलेतक मुझे इस बातका कोई एहसास नहीं था कि इस सिलसिलेको कायम रखकर मैं कोई गलती कर रहा हूँ। लेकिन तभी साबरमतीमें एक आश्रमवासीने मुझसे कहा कि इस तरह आपका बड़ी उम्रकी लड़कियों और स्त्रियोंके कन्धोंपर हाथ रखकर चलना श्लीलताकी लोक-स्वीकृत धारणाओंके खिलाफ जाता है। लेकिन इस विषयपर अन्य आश्रमवासियोंसे चर्चा करने के बाद मैंने इसे जारी ही रखा। हालमें दो सहयोगी वर्धा आये तो उन्होंने कहा कि सम्भव है, आपकी यह आदत दूसरोंके लिए एक बुरा उदाहरण बन जाये, इसलिए आप इसे छोड़ दीजिए। उनकी दलील मुझे जँची नहीं। फिर भी, मैं इन मित्रोंकी चेतावनीकी उपेक्षा नहीं करना चाहता था। निदान मैंने पाँच आश्रमवासियोंसे इस पर सोच-विचार कर सलाह देनेको कहा। अभी वे विचार कर ही रहे थे कि एक निर्णायक घटना घटी। किसीने मुझे बताया कि विश्वविद्यालयका एक तेजस्वी छात्र

एकान्तमें एक लड़कीके साथ, जो उसके प्रभावमें है, तरह-तरहका अमर्यादित व्यवहार करता है और दलील यह देता है कि वह तो उसे अपनी बहनकी तरह प्यार करता है और कुछ चेष्टाओं द्वारा अपने इस प्यारका प्रदर्शन किये बिना उससे रहा ही नही जाता। अपने इस व्यवहारके तनिक भी कलुषित होनेकी बात सुनकर वह बिगड़ उठता है। वह युवक क्या-क्या करता था, इसका वर्णन यदि मैं कर पाता तो पाठक बेहिचक कहते कि उसके उस व्यवहारमें कलुष भरा हुआ था। उस पत्रको पढ़कर मैं और उसे पढ़नेवाले दूसरे लोग इसी निष्कर्षपर पहुँचे कि या तो वह युवक पक्का पाखण्डी है या फिर घोर आत्म-प्रवचनामें पड़ा हुआ है।

खैर; इस जानकारीने मुझे विचारमें डाल दिया। दोनों सहयोगियोंकी चेतावनी मुझे स्मरण हो आई और मनमें यह स्वाभाविक सवाल उठा कि यदि मुझे मालूम हो कि वह युवक अपने बचावमें मेरी आदतकी नजीर पेश कर रहा है तो मुझे कैसा लगेगा। यहाँ मैं यह बता दूँ कि जिस लड़कीके साथ युवक ऐसी हरकतें करता है वह यद्यपि उसे सर्वथा निष्कलुष और भ्रातृवत् मानती है, किन्तु ये हरकतें उसे पसन्द नहीं हैं, बल्कि इनपर वह आपत्ति भी करती है, लेकिन उसे रोकने का साहस उसमें नहीं है। इस घटनासे मैं जिस आत्म-चिन्तनमें प्रवृत्त हुआ, उसके परिणामस्वरूप उस पत्रको पढ़ने के दो-तीन दिनोंके अन्दर ही मैंने यह आदत छोड़ दी और इस महीनेकी १२ तारीखको मैंने वर्धा आश्रमके निवासियोंके समक्ष इसकी घोषणा भी कर दी। ऐसा नहीं कि यह निर्णय करते समय मेरा मन दुःखी नहीं हुआ। जब मैं उस तरह घूमा करता था उसके दौरान या उस आदतके कारण मेरे अन्दर कभी भी कोई अपवित्र विचार नहीं जगा। मेरा वह आचरण किसीकी नजरसे छिपा हुआ नहीं था। मैं मानता हूँ कि मेरा वह आचरण पिताके जैसा था और उसके कारण मेरे मार्ग-दर्शन और अभिभावकत्वमें रहनेवाली अनेक लड़कियाँ मुझे अपना इतना विश्वास दे पाईं जितना उनसे शायद किसीको नहीं मिला होगा। मैं ऐसे ब्रह्मचर्यमें तो विश्वास नहीं करता जिसके निर्वाहके लिए स्त्रीका पुरुषके स्पर्शसे और पुरुषका स्त्रीके स्पर्शसे बराबर बचते रहना आवश्यक हो और तनिक-सा प्रलोभनका प्रसंग आते ही वह भग हो जाये, किन्तु साथ ही मैं जैसी आजादी बरतता रहा हूँ उसमें समाये खतरोंसे भी मैं बेखबर नहीं हूँ।

इसलिए ऊपर मैंने जिस जानकारीका उल्लेख किया है उसके प्राप्त होते ही मुझे यह आदत छोड़ देनी पड़ी, चाहे वह अपने-आपमें जितनी भी निष्कलुष रही हो। मेरे हर कामपर हजारों स्त्री-पुरुषोंकी निगाह लगी रहती है, क्योंकि मैं एक ऐसा प्रयोग कर रहा हूँ जिसके लिए लगातार चौकसी रखना जरूरी है। मुझे ऐसा काम करने से बचना चाहिए जिसका औचित्य सिद्ध करने के लिए दलील देनेकी जरूरत पड़े। मेरा वह व्यवहार कोई ऐसा उदाहरण नहीं था जिसका चाहे जो अनुकरण करने लगे। इस युवकके मामलेने मेरे लिए एक चेतावनीका काम किया है। इस चेतावनीको मैंने इस आशासे स्वीकार किया है कि जिन लोगोंने मेरे दृष्टान्तसे प्रभावित होकर अथवा उससे प्रभावित हुए बिना इस दृष्टिसे कोई भूल की होगी वे

मेरे इस त्यागके परिणामस्वरूप उसे सुधार लेंगे। निर्दोष युवावस्था एक अमूल्य निधि है। इसे क्षणिक उत्तेजनाके लिए, जिसे आनन्दकी गलत संज्ञा दी गई है, व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिए। और इस प्रसंगमें जिस कमजोर दिल लड़कीका उल्लेख हुआ है वैसी लड़कियाँ इतना साहस तो अवश्य बटोरें कि वे उन युवकोंकी हरकतोंका, चाहे वे अपनी हरकतोंको जितना भी निर्दोष बताते हों, विरोध कर सकें जो या तो घोर कपटी हैं या जिन्हें यही नहीं मालूम कि वे सचमुच क्या कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-९-१९३५

६२५. गुड़-परिरक्षण[1]

ध्यातव्य — यह सच है कि गुड़को बहुत दिनोंतक, खासकर बरसातके मौसममें सुरक्षित रख पाना कठिन है, लेकिन मुझे एक सज्जनने, जिन्हें मेरी समझसे जानकार व्यक्ति मानना चाहिए, बताया है कि राबको, अर्थात् उबालकर गुड़ बनाने के लिए निकाले गये ईखके रसको, चाहे जितने दिन रखा जा सकता है और ऐसा माना जाता है कि उसे इस तरह सुरक्षित रखने से उसकी गुणकारिता और बढ़ जाती है। ईखकी फसल शुरू हो, उस समय यह प्रयोग करके देखने लायक है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-९-१९३५

१. यह महादेव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक-पत्र) के साथ एक टिप्पणी के रूप में प्रकाशित हुआ था। इस साप्ताहिक पत्र में महादेव देसाई ने एक अनुभवी डॉक्टर से हुई अपनी बातचीत का वर्णन किया है। उक्त डॉक्टर पहले मदिरा-पान, मांस-भक्षण और धूम्रपान किया करते थे, किन्तु समय रहते सचेत हो गये और मदिरा तथा धूम्रपान का पूरा त्याग कर दिया और मांसाहार भी लगभग छोड़ ही दिया। अब वे अध-कुटे चावल, हाथ-चक्की के पिसे आटे और साग-भाजी तथा ताजे दूधपर रह रहे थे। बातचीत के दौरान उन्होंने सुझाया था कि हरिजन में गुड़ के महत्त्वपर जोर दिया जाना चाहिए, क्योंकि यह चीनी से तो हर तरह से श्रेष्ठ है और ग्लूकोज आदि विदेशी चीजों से बहुत सस्ता भी; लेकिन कठिनाई सिर्फ यह है कि हमारी कुछ चीजें ज्यादा दिनोंतक रखी नहीं जा सकतीं।

६२६. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
२२ सितम्बर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

ये तीन पत्र लिखकर तुमने बड़ा अच्छा किया। उनसे हमें कमलाके बारेमें सारी जानकारी ठीक-ठीक मिल गई। मुझे आशा है कि तुम फिलहाल यह सिलसिला जारी रखोगे। मैंने जनताकी माँगको देखते हुए ही तुमको तार दिया था कि हररोज तार भेजते रहना। पर हालतमें कोई परिवर्तन न होनेके कारण तुमने तार न भेजकर ठीक किया; प्रेषक का नाम न देकर भी ठीक ही किया। वहाँ तुम्हारी उपस्थिति जिस प्रकार कमलाके लिए अमृत-स्वरूप है उसी प्रकार तुम्हारे मित्रोंको यहाँ उससे बड़ा सन्तोष मिला है। मैं इस हवाईडाकसे कमलाको अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ।

तुम्हारी पाण्डुलिपि देखना बस शुरू ही करने जा रहा हूँ। सिद्धान्तोंके निरूपणके मामलेमें तुमसे सहमत होनेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं दिखती। पर ठोस परिस्थितिके स्तरपर आनेपर हम सामान्यतया उसी भाषाका प्रयोग करते हैं जो मैंने प्रयुक्त की है। कांग्रेस अब एक इतना बड़ा संगठन बन गया है कि उसका पूरा संचालन किसी भी एक व्यक्तिके वशका नहीं रह गया है। लेकिन किसीको दायित्व तो सँभालना ही पड़ेगा। और जनता कुछ-न-कुछ मार्ग-दर्शन चाहती है। मैंने इसीलिए पूछताछ की है।[1] तुम यदि निर्वाचित हो जाते हो, तो वह उस नीति और उन सिद्धान्तोंकी खातिर ही होगा जिनके तुम पक्षधर हो। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम मुझे बतला दो कि तुम काँटोंका यह ताज पहनने के उम्मीदवारके रूपमें अपने नामका प्रस्ताव रखने की अनुमति दोगे या नहीं।[2]

मैं समझता हूँ कि कमलाकी हालतकी ज्यादा ठीक जानकारी मिलनेतक इंदिरा अभी तुम्हारा इन्तजार करेगी।

मैं कांग्रेसका संविधान भेज रहा हूँ।[3] यदि तुम इसपर ध्यान देनेकी स्थितिमें हो, तो मैं चाहूँगा कि तुम इसके बारेमें सोच-विचारकर अपनी आलोचना मुझे लिख भेजो।

१. देखिए "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", ४-९-१९३५ और १२-९-१९३५।

२. देखिए परिशिष्ट ४ और ५ भी।

३. इसमें महादेव देसाईने जोड़ा था: "संविधान को डाक से भेजने के लिए जरूरी डाक-टिकट खरीदने का समय नहीं रह गया था। इसे अगली हवाईडाक से भेजा जायेगा।"

जहाँतक कांग्रेसकी वर्तमान नीतिका सम्बन्ध है, मैं उसके ब्योरेवार अमलके लिए तो किसी भी तरह जिम्मेदार नहीं माना जा सकता, पर उसे यह रूप मुख्यत मैंने ही दिया है। वह बहावके साथ बह चलनेकी नीति नहीं है। वह शान्तिपूर्ण कार्रवाईको दृष्टिमें रखकर जनताकी शक्तिको एकजुट करनेके एक ही मुख्य विचार पर आधारित है। लेकिन तुम्हारी अनुपस्थितिमें हम बस किसी तरह घिसटते रहे हैं। अब चूँकि तुम रिहा हो गये हो, तुमको मार्ग-दर्शन करना है और अपने उन पुराने सहयोगियोंको साथ लेकर चलना है जो तुम्हारा हार्दिक समर्थन करे। जहाँतक मैं समझता हूँ, वे जहाँ तुम्हारा अनुगमन नहीं कर पायेंगे वहाँ भी तुम्हारा विरोध नहीं करेंगे। तुम वहाँ कमलाकी शुश्रूषामें लगे हुए हो, इसलिए इस तरहकी और अधिक चर्चा करके मुझे तुमको परेशान नहीं करना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

जवाहरलाल नेहरू
हेम्स वाल्डेक
बेडेनवीलर, बेडेन, जर्मनी

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। फाइल सं० ३००१/एच०, पृ० ३/५, पुलिस कमिश्नर कार्यालय, बम्बई से भी

६२७. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

२२ सितम्बर, १९३५

चि० नरहरि,

रामजीभाई का पत्र इसके साथ है। लगता है कि फिर कहीं कोई गलतफहमी हुई है। जो आवश्यक हो सो करना और मुझे सूचित करना। आशा है, गोशाला अच्छी तरह चल रही होगी। यदि सरदारको समय मिल जाये तो वेलचन्दके मामले को निबटा लेना। आशा है, वनमाला ठीक हो गई होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०६८) से।

६२८. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
२३ सितम्बर, १९३५

दुबारा नहीं पढ़ा

प्रिय अमृत,

चौधरीको लिखे तुम्हारे पत्रने प्रभाव दिखाया है। उसने पत्रको बहुत ठीक भावनासे ग्रहण किया है। क्षमा-याचनाका तो कोई प्रसग था नही। मगनवाडी तुम्हारा घर हैं और यदि तुम अपने ही घरमें अपने लोगोसे ही खरी-खरी बाते नही कर सकती, तो फिर कहाँ करोगी? अवसर आनेपर तुमको फिर यही करना चाहिए।

यह आकार विशेषकर तुम्हारे लिए तैयार किया गया है। लेकिन तुम मुझे इसके बारेमें अपने विचार अवश्य बतलाना। जिनसे बास आने लगी हो, उनके लिए तुमको कोई कीमत नही देनी पड़ेगी। क्या हवामें रखने और धूप दिखाने से बास चली गई है?

पुरीकी अपनी ब्योरेवार आलोचना अविलम्ब भेज देनी चाहिए। यहाँ आने तक नही रुकना चाहिए। मुझे अँधेरेमें नही रखना चाहिए।

मैं तुम्हारे भेजे हुए सेव खूब डटकर खा रहा हूँ। मुझे उनकी जरूरत भी थी। सेवों और मुसम्बियोंने दवाका काम किया है।

मीराको बुखारसे छुटकारा मिल गया है। लेकिन अब भी बहुत कमजोरी है और उसका पाचन-तन्त्र जैसा चाहिए वैसा काम नही करता। उसे ईनोज फ्रूटसाल्टकी काफी बड़ी मात्रा लेते रहनेपर भी पेटकी सफाईके लिए एनिमा लेना पड़ता है। पर उसके बारेमें चिन्ताकी कोई बात नही।

तुम दोनो जबतक प्यारेलालको दूध और अपने यहाँका उतना बढिया मक्खन लेनेको तैयार नही कर लेते, तबतक न तो तुमको परिचारिकाके और न शम्मीको ही एक अच्छे चिकित्सकके रूपमे पूरे नम्बर दिये जायेंगे।

मैंने 'हरिजन' में सर्प-दंशके बारेमें जितनी-कुछ सामग्री दी है[1] क्या उसमें जोडने के लिए शम्मीके पास और कुछ है? क्या जहरीले और गैर-जहरीले साँपोको अलग पहचानने का कोई आसान तरीका है? क्या वह इस विषयपर किसी पुस्तककी सिफारिश करेगा?

उसके खयालसे कुमारप्पा कबतक स्वस्थ होकर वहाँसे छुट्टी पा सकेगा?

१. देखिए "सर्प-विष", १७-८-१९३५।

तुम्हारे अतिथियों[1] (!) के लिए कुछ पत्र भेज रहा हूँ।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

तुम पहाड़ोंसे नीचे उतरकर कब आनेवाली हो? तुमको बीमारोंकी खातिर शिमलामें अपनी निश्चित अवधिसे अधिक नहीं रुकना चाहिए।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५१) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६३६० से भी

६२९. पत्र: नारणदास गांधीको

२३ सितम्बर, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारे हर्षके अश्रु-बिन्दु मैं तुम्हारे पत्रमें देख पाता हूँ। आज मेरी जो स्थिति है, यदि मैं उसी स्थितिमें आँखें मूँदूँ तो तुम हर्षके ऐसे और अधिक अश्रु-बिन्दु गिराना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४७५ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

६३०. पत्र: पुरुषोत्तम गांधीको

२३ सितम्बर, १९३५

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा पत्र मिला। यदि मैं तुझे पहचानता न होता तो तेरा पत्र न मिलनेपर मुझे बुरा ही लगता। किन्तु यह मानकर मैं अपनेको सान्त्वना दे लेता हूँ कि तूने किसी सदुद्देश्य — या तो अपना या मेरा समय बचाने — के कारण ही मुझे पत्र नहीं लिखा। अपने स्वभावके अनुसार तो मैं यह चाहूँगा कि तेरे-जैसे लोग मुझे पत्र लिखते रहें क्योंकि इस प्रकार मैं तुझे कहीं अच्छी तरह पहचान सकता हूँ और पहचान ही नहीं सकता बल्कि मदद भी कर सकता हूँ।

१. प्यारेलाल, कुमारप्पा और देवदास।

काठियावाड़में चल रहे हरिजन-कार्यका विवरण अभीतक मैं पढ नही पाया हूँ हालाँकि पढ़ने की इच्छा तो है। तूने छगनलालके बारेमें जो लिखा है उससे मैं चौंका हूँ। वहाँका हरिजन-कार्य बिगड़ना नही चाहिए। और इस काममें जीवनलाल की दिलचस्पी घटने की बात भी पुसाती नही। क्या तू कोई सुझाव दे सकता है? तेरा पत्र मिलने के बाद अब यह कैसे हो सकता है कि मैं शान्त होकर बैठा रहूँ। तूने जो लिखा है क्या मैं छगनलालको उसकी सूचना दे सकता हूँ?

क्या यह माना जा सकता है कि तू अब बिलकुल स्वस्थ हो गया है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

६३१. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

वर्धा
२४ सितम्बर, १९३५

प्रिय सतीशबाबू,

मलकानीके साथ आपका पत्र-व्यवहार मैं पढ़ गया हूँ। मैं उसके नाम अपने पत्रकी एक प्रति सलग्न कर रहा हूँ। इसीसे सारी बात पता चल जायेगी। शर्माके बारेमें यह है कि हम दोनोंने एक ही दिन एक-दूसरेको अपने-अपने पत्र डाकसे रवाना कर दिये। विश्वनाथको अपने ऊपर काबू पानेमें मदद देनी पड़ेगी।[1] मैं ऐसा तो नही मानता कि मैंने उसे तनिक भी समझ लिया है, पर अन्नदाके साथ हुए पत्र-व्यवहारसे मेरे मनपर कुछ ऐसी छाप पड़ी है कि उसकी गिनती आपके विश्वस्त कार्यकर्त्ताओंमें है। लेकिन वह बात ठीक हो या गलत, उसके प्रति लापरवाहीके कारण वह भटक जाये ऐसा नहीं होने देना है। इसलिए यदि वह मेरे पास अकेला आनेको तैयार न हो तो चाहे आपको अपने कामकी थोड़ी उपेक्षा ही क्यों न करनी पड़े, उसे अपने ही साथ ले आइए। लेकिन यह तभी जब आप समझते हो कि मेरे साथ रहने से उसका रोग और बढ़ने की सम्भावना नही है। यह आपको सिर्फ यह जतलानेके लिए लिख रहा हूँ कि मैं उसकी मानसिक दशाको लेकर चिन्तित हूँ। उसके लिए कौन-सा इलाज ठीक रहेगा, इसका अन्तिम रूपसे निर्णय तो आपको ही करना चाहिए।

बापू

श्रीयुत सतीशबाबू
कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७३०) से।

[1] देखिए "पत्र: विश्वनाथको", २४-९-१९३५।

६३२. पत्र : बी० जी० खेरको

२४ सितम्बर, १९३५

प्रिय खेर,

यह पत्र तो मुझे जब स्वामी यहाँ था तभी लिखना चाहिए था, लेकिन लिख ही नही पाया और फिर ध्यानसे बिलकुल उतर गया। कल दोपहर बाद स्वामीका याददिहानीका पत्र मिला तो याद आया। जो-कुछ ठक्कर बापाने लिखा है और मैंने स्वामीको बताया है उसके बीच मुझे कोई अन्तर्विरोध नही दिखता। हरिजन सेवक संघ पंढरपुरमें जायदाद रखने का प्रत्यक्ष दायित्व नही ले सकता, लेकिन वह अधिकाश न्यासी मुहैया करेगा और जैसे-जैसे किसी भी कारण से स्थान खाली होगे, आगे भी करता रहेगा। इसके पीछे विचार यह है कि सघको कोई आर्थिक दायित्व अपने सिर नही लेना चाहिए। जब वह ऐसे न्यासी नियुक्त कर देगा जो जायदादकी व्यवस्था आर्थिक तथा अन्य दृष्टियोसे भी कर सकेंगे तो उसका दायित्व पूरी तरह निभ जायेगा। यह विचार मेरी सलाहपर अपनाया गया। सघको जितनी सम्पत्ति दी जा रही है उसकी देखभाल करने के लिए उसके पास काफी कार्यकर्त्ता नही हैं। पंढरपुरका यह सुझाव इसलिए विचारार्थ स्वीकार किया गया कि आपकी और स्वामीकी उसमें रुचि है और आप दोनोका दातासे सम्बन्ध है और मै मानता हूँ कि अस्पृश्यता तथा अन्य विषयोमें उसके विचार काफी प्रगतिशील और उदार हैं तथा वह अस्पृश्यताके विरुद्ध संघके आन्दोलनका पूरा समर्थन करता है। आशा है, बूवाकी दृष्टिसे इतना सन्तोष-जनक है और यह सब बता देनेसे बात काफी स्पष्ट हो जाती है। अगर और कुछ स्पष्ट करना जरूरी हो तो लिखने में संकोच न करें। श्री कावड़े दो दिन यहाँ रहे थे और उन्हीसे मालूम हुआ कि अक्तूबरके पहले हफ्तेमें बूवाके वर्धाके आसपास कही रहने की आशा है। अगर ऐसा हो तो आप उससे कहें कि वह कुछ दिन मेरे साथ गुजारे ताकि मै व्यक्तिगत स्तरपर उसे जान सकूँ और पंढरपुरकी धर्मशालाकी व्यवस्था-के सम्बन्धमें उसकी इच्छा समझ सकूँ। स्वामी और कावड़ेसे मेरी जो बातचीत हुई उसकी दृष्टिसे मै यह सलाह दूंगा कि न्यासका दस्तावेज तैयार करते हुए आपको न्यासियोको रेहन, हस्तान्तरण आदिका पूरा अधिकार देना चाहिए। हाँ, इस बातका ध्यान तो रखना ही होगा कि उसका उपयोग केवल हरिजनोके लाभके लिए ही किया जाये। मैंने स्वामीको समझा दिया है कि मै न्यासियोको यह अधिकार सौंपा जाना दस्तावेजका महत्त्वपूर्ण अंश क्यो मानता हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

६३३. पत्र : वालजी गो० देसाईको

२४ सितम्बर, १९३५

चि० वालजी,

बहुत ज्यादा काम होनेके कारण मैं तुम्हे नही लिख सका। मुंशीकी रचना न आकर्षक है और न अश्लील। उनके द्वारा ब्रह्मचर्यका मजाक उडाने में मुझे कोई बुराई नही लगी। प्रस्तावना लिखने के पहले मैं लगभग पूरी कृति पढ गया था। मुझे उनका प्रयास अच्छा लगा था। बात यह है कि मुंशीको मैं व्यक्तिगत रूपसे जानने लगा हूँ इसलिए मैं उनका पक्षपात करने लगा हूँ। उनमें त्यागकी शक्ति है। वे मुझे सच्चे व्यक्ति लगते हैं। किन्तु उसका यह अर्थ नही कि मुझे उनकी सभी बातें पसन्द आती है। लेकिन हमें सभी लोगोको अहिंसक अर्थात् उदार दृष्टिसे देखना चाहिए, यहाँतक कि सबको उनकी सीमाके अनुसार आँकना चाहिए। इतनेमें तुम्हें सभी प्रश्नोंके उत्तर मिल गये न? तुम्हारा लेख मिल गया है। आशा है, तुम सब आनन्दपूर्वक होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४७४) से; सौजन्य : वा० गो० देसाई

६३४. सन्देश : जन्म-दिवसपर[1]

[२४ सितम्बर, १९३५ या उसके पश्चात्][2]

अगर हम पूरा वर्ष सोकर गँवा दें तो कुछ समयके लिए इस तरह जोश-जनून दिखाने से क्या फायदा? अब तो प्रत्येक मजदूरको आठ घटेतक एक विशेष मापदण्डके

१ और २. महादेव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक-पत्र) से उद्धृत। इस पत्र में महादेव देसाई ने सूचित किया है कि "कुछ वर्ष पूर्व जब गांधीजी को मालूम हुआ कि उनका जन्म-दिन सार्वजनिक रूप से मनाया जाता है" तब उन्होंने कहा कि 'यह दिन दरिद्रनारायण के हित सूत कातकर मनाया जाये।' तब से इस दिन किसी-न-किसी प्रकार का खादी-कार्य किया जाता रहा है। इस वर्ष उनके हिन्दू [विक्रम] संवत्वाले जन्म-दिन और ईस्वी सन्वाले जन्म-दिन में नौ दिनों का अन्तर था। लोगों ने उस दिन अपना सारा समय अतिरिक्त कताई करने या खादी बेचने अथवा खादीके लिए चन्दा इकट्ठा करने में लगाया। चूँकि २४ तारीख को (अर्थात् हिन्दू सन् के अनुसार उनके जन्म-दिवस को) हरिजन-दिवस भी पड़ा, इसलिए भारत के कई स्थानोंपर हरिजनों की विशेष सेवा करने की कोशिश की गई। लेकिन गांधीजी इतने से ही सन्तुष्ट होनेवाले न थे।..."

अनुसार काम करने के लिए एक न्यूनतम मजदूरी सुलभ कराने का निश्चित आदर्श हमारे सामने है। इसलिए हममें से कुछ लोगोंको अकेले-अकेले अथवा कईको साथ मिलकर प्रतिदिन आठ घंटे कातने का प्रयत्न करना चाहिए; और साथ ही प्रत्येक व्यक्ति और प्रतिदिनकी कताईका नियमित हिसाब रखना चाहिए, ताकि उसके आधार पर एक मानक औसत कताईका अनुमान लगाया जा सके।... मेरे दीर्घायु होनेकी आपकी कामनाके पीछे जो गहरी भावना है, उसे मैं समझता हूँ। लेकिन आप तो भली-भाँति जानते हैं कि मनुष्य चाहे जितना प्रयत्न करे, सिरजनहारने मेरी जितनी आयु निश्चित कर रखी होगी, उसमें एक क्षण भी नहीं जुड़ सकता। तथापि, जबतक साँस है, हम एक-दूसरेके कल्याण और दीर्घायुके लिए प्रभुसे प्रार्थना करते रहेंगे और अन्य प्रकारसे भी तदर्थ प्रयत्नशील रहेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१०-१९३५

६३५. पत्र : भुजंगीलाल छायाको

मगनवाड़ी, वर्धा
२५ सितम्बर, १९३५

चि० भुजंगीलाल,

तुम्हारे पत्रका उत्तर विलम्बसे दे रहा हूँ। हरिलालसे मिलने का प्रयत्न करना ही नहीं चाहिए। अपने भविष्यका निर्णय तुम्हें स्वयं ही करना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६०५) से।

६३६. पत्र : छगनलाल जोशीको

२५ सितम्बर, १९३५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। बलवन्तराय द्वारा दिखाई गई उपेक्षाकी बात पढ़कर भी मेरा दुःख हलका नहीं होता। यदि तुमने उसे मेरा पहला पत्र पढ़वाया हो तो उससे वैसा कहना या लिखकर सूचित करना। भंगियोंके मकान विलम्बके बावजूद सन्तोषजनक ढंगसे पूरे हो गये, यही बधाईकी बात है।

क्या तुम्हें भावनगरमें दक्षिणामूर्ति की मार्फत ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिल सकता जो भंगियोंको ऋणसे मुक्ति दिलाने का काम हाथमें ले सके? वालजी का [भतीजा] रसिक शामलदास कॉलेजमें पढ़ता है। कॉलेजके विद्यार्थी अध्ययन करते हुए मौन

भावसे समाज-सेवा करते दिखाई देते हैं। जरा रसिकको लुभाकर तो देखो! यदि वह इस काममें हाथ डाले तो शायद अपने साथी मित्रोंको भी आकर्षित कर सके।

पन्द्रह मन हड्डियोंसे एक टोकरा खाद भी नहीं निकली, इसका मतलब यह हुआ कि उन्हें आवश्यकतासे अधिक जलाया गया था। हड्डियाँ सिर्फ 'चार'[1] की जानी चाहिए, अर्थात् उन्हें इतना ही जलाना चाहिए कि वे काली पड़ जायें। कोयला बनाते समय लकड़ियोंको जितना जलाया जाता है उसकी अपेक्षा हड्डियोंको कम जलाना चाहिए। ऐसा करने से हड्डियोंका वजन मुश्किल से ही कम होता है। मैंने स्वयं खाद बनाकर देखी है। इस प्रयोगका प्रदर्शन मगनवाड़ीमें किया गया था। और अब नालवाड़ीमें समय-समय पर ऐसा किया जाता है। ईंधनके लिए काटकर निकाली हुई वाड़की सूखी टहनियों-जैसी चीजोंका प्रयोग किया जाता है। लकड़ी इस्तेमाल नहीं करनी चाहिए, और रहठा (अरहर आदिका जलावन) तो इस्तेमाल किया ही नहीं जा सकता। घासके तिनकोंकी बजाय अधिक टिकनेवाला ईंधन काममें लाया जाता है, ताकि पूरी तरह जल जानेके बावजूद वह हड्डियोंको न-जला सके। यह याद रखना चाहिए कि हमें हड्डियोंका कोयला भी नहीं बनाना है। 'चार' करने का मतलब हड्डियोंको काला-भर करना है। वे धुआँ छोड़ने लगें, इससे थोड़ा ही और आगे बढ़ना है। इस प्रकार जलाई गई हड्डियोंमें से थोड़े-से नाइट्रोजनके सिवा और कुछ भी नहीं उड़ता। फास्फोरस तो बिलकुल नष्ट नहीं होता। यदि फास्फोरस निकल जाये तो हड्डियोंका सार-तत्त्व ही नष्ट हो जाता है। थोड़ी-सी हड्डियाँ इकट्ठी कर तुम स्वयं दो-चार बार प्रयोग करके निपुणता प्राप्त कर लो। कहीं तुमने पन्द्रह मन हड्डियाँ एक साथ जलाने का प्रयत्न तो नहीं किया न?

हड्डियों और आटे आदिकी मिलें तो खुलती ही रहेंगी और यह भी सही है कि लोग उनपर टूट पड़ेंगे। किन्तु बड़ी संख्यामें व्यभिचारियोंके फैल जानेके बावजूद ब्रह्मचारी मेरुकी भाँति अविचल रहता है न? या इससे भी आगे बढ़कर देखें तो मृत्यु सभीके सिरपर झूल रही है किन्तु फिर भी सारी दुनिया मौतके दिनको दूर रखने का स्तुत्य प्रयत्न करती है न? इसी प्रकार यदि हम भी प्रयत्न करना अपना कर्त्तव्य समझें, फिर भले हम बार-बार असफल ही क्यों न होते रहें, इसके बावजूद हम निडरता और श्रद्धापूर्वक तथा प्रफुल्लित चित्तसे अपना काम करते ही रहें। लाभांश देनेकी सामर्थ्यमें मिलोंकी सफलता निहित है, किन्तु हमारी सफलता हमारे कार्य करने में ही है। पुरुषार्थी फलकी आशा करता ही नहीं। रेलगाड़ीमें बैठकर हरिद्वार जानेवाला तनिक भी पुरुषार्थ नहीं करता। किन्तु कन्याकुमारीसे जमनोत्री तककी पद-यात्रा करनेवाले के बारेमें यह कहा जा सकता है कि वह कुछ पुरुषार्थ करता है। मैंने यहाँ 'कुछ' विशेषणका प्रयोग किया है क्योंकि जमनोत्री पंचेन्द्रियगोचर है। ग्रामोद्योग-सम्बन्धी हमारा पुरुषार्थ भी इसी प्रकारका है। सच्चा पुरुषार्थ तो अगोचर वस्तुके बारेमें ही हो सकता है। विमानोंका प्रचलन होनेपर भी पैरोंकी आवश्यकता बनी ही रहेगी। इसी प्रकार असंख्य मिलें हो जानेके बावजूद ग्रामोद्योगोंकी उपयोगिता

१. झुलसाना; मूल में अंग्रेजी शब्द का प्रयोग किया गया है।

बनी ही रहेगी। और जैसे विमानोंकी संख्या बढ़ जानेपर शरीरसे काम न लेना मूर्खता होगी उसी प्रकार मिलोंके बढ़ जानेपर ग्रामोद्योगोंको छोड़ देनेमें भी मूर्खता होगी। हम देशको इस मूर्खतासे बचाने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। इसमें हारके लिए कोई स्थान है ही नहीं।

समढियाला गाँवके किसानोंकी स्थितिके विवरणसे यह ज्ञात होता है कि मैंने जो गाँवोंकी सफाईको पहला स्थान दिया है वह उचित ही है। मनुष्यकी शिक्षाके इस प्रथम अंगको भी लोग भूल बैठे हैं, इसका कारण यह है कि उच्च वर्गोंने निम्न वर्गोंकी उपेक्षा करके घोर पाप किया है।

यदि धीरू तोतारामजी के पास किसान बनने या उनकी सेवा करने के शुभ उद्देश्यसे गया हो तो उसे, तुम्हें और रमाको धन्यवाद। हरिलालको तो मैं अब भूल गया हूँ।

. . . के[1] चरित्रके सम्बन्धमें अपनी जाँच-पड़तालके बारेमें तो मैं लिख ही चुका हूँ। उनका पत्र मुझे तो बहुत ही निर्मल जान पड़ा। ऐसा लगता है कि वे राजकोटमें बहुत-सी संस्थाओंसे सम्बद्ध हैं। उन्होंने अपने पत्रमें यह सुझाव दिया है कि उसमें जिन तथ्योंका उल्लेख किया गया है यदि मैं चाहूँ तो उस सम्बन्धमें और अधिक जाँच-पड़ताल कर सकता हूँ। और इस सम्बन्धमें नारणदासके मनमें कोई सन्देह नहीं है। भाई जेठालालने मेरे सामने कोई खास सबूत पेश नहीं किया है, इसलिए मैंने आगे किसी तरहकी जाँच-पड़ताल नहीं की। किन्तु यदि तुम मेरे सामने कोई खास सबूत पेश करो तो मैं आगे जाँच-पड़ताल करने को तैयार हूँ। क्योंकि वह द्वार अभी खुला हुआ है। लेकिन मैं स्वयं तटस्थ हूँ। न्यायाधीशके सामने पक्ष-विपक्षमें ज्यों-ज्यों प्रमाण इकट्ठे होते जाते हैं त्यों-त्यों उसका निर्णय बदलता जाता है, वही स्थिति मेरी है। नारणदासका पत्र मैंने जेठालाल जोशीको भेजा है। किन्तु उसने उक्त पत्रकी प्राप्ति स्वीकृति तक नहीं भेजी। यह तुम उसे याद दिलाना और यदि उसे मेरा पत्र न मिला हो तो मुझे लिखना। मैंने नारणदासके पत्रकी नकलतक नहीं रखी। मेरा पत्र किस दिन डाकमें डाला गया था उसकी तारीख मेरे रजिस्टरमें मिल सकती है। जेठालाल तुम्हारे साथ उसी मकानमें रहता है। इसलिए यदि तुम इस मामलेमें पड़ना चाहो तो अवश्य पड़ना। नारणदासके पत्रमें तुमने देखा होगा कि वह किसी भी दोषको स्वीकार नहीं करता। इतना याद रखना चाहिए कि हमें . . .[2] के चरित्रकी अथवा वह पूरी तरह खादी पहनता है या नहीं, सिर्फ इसी बातकी जाँच-पड़ताल नहीं करनी है। इसमें तो नारणदासका विचार-दोष ही हो तो हो। इस सम्बन्धमें मैं अभी किसी निर्णयपर नहीं पहुँच सका हूँ। किन्तु खास शिकायत तो पाठशालाके पूरे प्रबन्ध और शिक्षकके रूपमें नारणदासकी योग्यताके बारेमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३४) से।

१ और २. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।

६३७. पत्र : नारणदास गांधीको

२५ सितम्बर, १९३५

चि० नारणदास,

भाई जमनादासको लिखा पत्र इसके साथ है। कुसुमको भी लिख रहा हूँ। तुम्हारी झोली अच्छी भरी जा रही है। अमतुस्सलामकी प्रेरणासे यहाँ भी काम चल रहा है। एक चरखा प्रतिदिन सोलह घंटे २ तारीख तक चलता रहेगा। कल तो अनायास ही २४ घंटे चला। कान्ति रात होते ही कातने बैठा और ४.४५ तक कातता ही रहा। फिर प्रार्थनाके लिए आया। क्योंकि अठारहों अध्याय तो उसे और महादेवको ही कण्ठस्थ हैं। कन्हैया तो ऐसे कामोंमें जी-जानसे जुट ही जाता है। नवीन भी इसमें जुट गया है। ऐसा लगता है कि उन सबको यह अच्छा लगता है। क्या मैथ्यू इस काममें भाग लेता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८६ से भी; सौजन्य. नारणदास गांधी

६३८. पत्र : क० मा० मुंशीको

२५ सितम्बर, १९३५

भाई मुंशी,

तुम दोनोंकी शुभकामनाओंको अन्य अनेक शुभकामनाओंमें जोड़े देता हूँ। किन्तु होगा तो वही न जो भगवान चाहेगा। भाग्यके लिखे को कौन मिथ्या कर सकता है? क्या तुमने इस बातका विचार किया कि मैं साहित्य परिषद्में कैसा लगूँगा? ऐसे ही किसी अवसरपर वर्षों पहले जब मेरा नाम सुझाया गया था तो स्वर्गीय रमणभाईने कहा था कि "इन्हें तो मैट्रिकके विद्यार्थीके बराबर भी गुजराती नहीं आती।" उस समय यह टिप्पणी सुनकर उनके इस कथनका मैंने पूरी तरहसे समर्थन किया था। तबतक मेरा युग तो शुरू हो ही चुका था अतः जिन लोगोंने रमणभाईकी यह खरी टिप्पणी सुनी उन्हें दुःख हुआ था। किन्तु मैंने इस टिप्पणीमें शुद्ध हेतु और न्यायबुद्धि ही देखी थी। हम लोगोंकी प्रीति अन्धी होती है। वे ऐसा मानते

हैं कि यदि कोई व्यक्ति किसी चीज़में कुशल हो तो उसे सभी चीजोंमें कुशल होना चाहिए। परिणाम यह होता है कि यदि उसकी समझ अपक्व हो तो उस बेचारेकी मुसीबत ही हो जाये। १९१५-१६ में की गई रमणभाईकी उक्त टीका आज भी अक्षरशः सही है। अतः आगामी परिषद्के लिए जबसे मेरे नामका सुझाव दिया गया है तभीसे मैं भयसे सिहर रहा हूँ। क्या तुम यह नहीं मानते कि परिषद्को गुजरातकी एकता और संस्कृतिका प्रतीक बनाने की आकांक्षा करके तुम उसके कार्य-क्षेत्रको सीमाहीन बना रहे हो? और मेरे सभापति बन जानेसे उक्त आशा फलीभूत होनेकी सम्भावना मुझे तो बिलकुल नजर नहीं आती। मेरी मानसिक स्थिति हूबहू यही है। यह सब जान लेनेके बावजूद यदि सभीकी यह इच्छा हो कि मुझे ही सभापति होना चाहिए और यदि परिषद्की बैठक अगले वर्ष होनेवाली हो तो उस समय मुझे पुनर्विचार करने का मौका देना।[1] तुम स्वागत-समितिके वकील बनकर मेरे पास आये हो किन्तु अब मेरी तरफसे वकालत करना और स्वागत-समितिको लिख देना कि मेरी दलीलको तुम तो समझ गये हो और यह स्वीकार करते हो कि परिषद्के सभापतित्वसे मुझे मुक्त रखा जाना चाहिए।

'हंस'की सलाहकार-समितिके बारेमें मैं तो समझता था कि जो-कुछ मुझे कहना था वह मैं कह चुका हूँ।[2] किन्तु महादेवने अभी-अभी तुम्हारा संदेसा मुझे दिया। मैं देखता हूँ कि तुमने पन्द्रह भाषाएँ गिनाई हैं, जिनमें से तीनको तुमने भी अस्वीकार कर दिया है, अतः बारह बचीं। बारह भाषाओंके लिए अधिकसे-अधिक बीस नामोंकी मर्यादा निश्चित कर उनमें से तुम्हें जो नाम ठीक लगें उन्हें चुन लो। मुझे चुननेमें दिक्कत होगी, क्योंकि मैं सबको पहचानता नहीं। मुझे जो कहना था वह संख्याके बारेमें ही था, और यदि संख्याके बारेमें तुम्हें मेरा तर्क उचित लगता हो तो उतने नामोंका चुनाव तुम्हें ही करना चाहिए। तुम जो चुनाव करोगे वह मुझे स्वीकार होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७५९२) से; सौजन्य: क० मा० मुंशी

१. गांधीजी ने इसके बारहवें अधिवेशन का सभापतित्व किया था जो ३१-१० से २-११-१९३६ तक अहमदाबाद में हुआ था; उनके अध्यक्षीय और समापन भाषणों के लिए देखिए खण्ड ६३।

२. देखिए "पत्र: क० मा० मुंशी को", ८-७-१९३५।

६३९. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

मगनवाड़ी, वर्धा
२६ सितम्बर, १९३५

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला। इस तरह हिम्मत हारने से थोड़े काम चलनेवाला है। पत्रके द्वारा मैं ज्यादा नहीं समझा सकता। परीक्षितलाल वहाँ पहुँच जाये तब कुछ समय निकालकर आ जाना।

यह सच बात है कि लड़कियोंको हम उतना नहीं दे सकते जितना कि देना चाहिए। किन्तु यह भी सच है कि ऐसा काम करनेवाली स्त्री कार्यकर्त्रियाँ भी हमारे पास नहीं है। भगवान् कठिनाइयाँ इसलिए पैदा करता है कि हम उन्हें जीत सकें, न कि उनसे घबराकर भाग खड़े हों।

भगवानजी को छुट्टी देकर ठीक किया। पुरातन चाहे तो भले ही गाँवमें जाये। तुम जो सुधार करना चाहते हो उन्हें और उनके अतिरिक्त जिन्हें हम सोच सकते हों, ऐसे सब सुधारोंको हम अवश्य कार्यान्वित करें। सिर्फ इतना याद रखें कि जो-कुछ हमने शुरू किया है उसमें जबतक कोई नैतिक बुराई नजर न आये तबतक हम उसे बन्द नहीं कर सकते। तुम यहाँ आओ इस बीच इस बारेमें सोच-विचार कर लेना। जो छोटी लड़कियाँ तुम्हें परेशान करती हैं क्या अनसूयाबहन उन्हें अपनी निगरानीमें रख सकती है? यदि अनसूयाबहनको जगहकी तंगी हो तो क्या वह अपना बालमन्दिर हरिजन आश्रममें ले जा सकती है?

चमड़े और दुग्धालयका काम तो तुम वहाँ बैठे हुए भी कर सकते हो। जमीन आदि की जो सुविधा तुम्हें वहाँ है वह अन्यत्र कहाँ मिल सकेगी? वालुंजकर यहाँ अपना काम जिस तत्परता और चतुराईसे कर रहा है उससे मुझे आशा बँधती है कि वह थोड़े समयमें विभिन्न स्थानोंपर चर्मालय चलाने में समर्थ हो जायेगा। नासिकमें ऐसा ही चर्मालय आरम्भ करने की बात उसने स्वीकार कर भी ली है। वहाँ इमारत भी बननी शुरू हो गई है और इमारत पूरी होते ही वहाँ तुरन्त काम शुरू हो जायेगा। जब तुम यहाँ आओगे तो तुम्हें यह भी देखने को मिलेगा। इस काममें कहीं कोई नुकसान न हो, इसका निश्चय उसने अभीसे कर लिया है और इस सम्बन्धमें विभिन्न योजनाओंपर विचार किया जा रहा है। मुझे लगता है कि आर्थिक दृष्टिसे यहाँका काम सतीशबाबूवाले कामकी अपेक्षा अधिक सफल होगा। सतीशबाबूवाले काममें अबतक काफी पैसा फँस चुका है। आय तो जब होगी तब होगी। वालुंजकरके काममें पैसा बहुत-कम लगाया गया है, और तब भी चमड़ा पकाया जाने लगा है, कामके लिए काफी मोची हैं और सीखनेवाले भी तैयार हो रहे हैं।

यह याद रखना कि जन-सेवकको सन्तुलित रूपसे चारों गुण प्रदर्शित करने चाहिए — अर्थात्, ब्राह्मणका ज्ञान, क्षत्रियका अपलायनम्, वैश्यका विशुद्ध प्रबन्ध और शूद्रका अश्रान्त शारीरिक श्रम। हम सबमें क्षात्र-वृत्तिकी अत्यधिक कमी है। हमारे मनमें तुरन्त कायरता आ जाती है। हम अकेले खड़े होते ही थरथराने लगते हैं। कठिनाई-रूपी बाघको देखते ही, हम चाहे अकेले हों या बहुत-से, भागने लगते हैं। इनमें से कोई आरोप अकेले तुम अपनेपर मत ले लेना। मैं जो-कुछ अपने चारों ओर और स्वयं अपने में भी देखता हूँ, उसीकी ओर इशारा कर रहा हूँ। किन्तु मैं भागकर आखिर कहाँ जाऊँगा? अतः मेरी स्थिति उस वणिककी-सी है जो घोड़ेपर बँधा हुआ था। यदि तुमने यह कहानी न सुनी हो तो कभी मुझसे पूछ लेना। मैं यह कहानी रसपूर्वक कह सुनाऊँगा और यदि तुम जल्दी नहीं आ सके तो पत्रमें लिख भेजूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०८९)से।

६४०. पत्र : लीलावती आसरको

२७ सितम्बर, १९३५

बीसवें पाठमें से : आपके आनेके पहले मैंने अपना पाठ लिख लिया होगा।[1]

"आई शैल हैव रिटन माई लेसन व्हेन यू विल कम" ('व्हेन यू कम' ज्यादा अच्छा है)। दूसरे वाक्यमें "द ओल्ड वुमन विल हैव फिनिश्ड ग्राइंडिंग बाजरा बिफोर द गर्ल्स विल रीच होम।" ('रीच होम' ज्यादा अच्छा है)।

भविष्यमें होनेवाली दो क्रियाओंमें से जो पहले पूरी होनेवाली हो उसमें पूर्ण भविष्यके रूपका प्रयोग किया जाता है। अब २०वाँ पाठ करना। पाठमालाका पहला भाग पूरा हो जानेपर सोचूंगा कि क्या किया जाना चाहिए।

अब भविष्यमें पेंसिलका इस्तेमाल नहीं करूँगा।[2]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२५४)से। सी० डब्ल्यू० १०१०६ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१. लीलावती आसर ने गांधीजी से बीसवें-पाठ के कुछ वाक्यों का अनुवाद कर देने का अनुरोध किया था क्योंकि पूर्ण भविष्य उनकी समझ में नहीं आया था।

२. लीलावती आसर ने गांधीजी को सूचित किया था कि पेंसिल से किये गये सुधार स्पष्ट नहीं होते।

६४१. पत्र : रसिक देसाईको

मगनवाडी, वर्धा
२७ सितम्बर, १९३५

चि० रसिक,

तेरा पत्र मैंने सँभालकर तो नही रखा किन्तु उसकी भाषा इतनी ज्यादा खराव थी कि उसका अर्थ समझने के लिए उक्त पत्र मुझे दो-तीन बार पढ़ना पड़ा। यह स्वाभाविक है कि तुम दोनो जनोका यह तात्पर्य न रहा हो किन्तु उसका अर्थ तो यही था कि तुम्हारा पैसा निश्चित रूपसे सहायता-कार्यमें खर्च करने के लिए ही हैं, किन्तु मुझे उसका विवरण भेजना चाहिए। और उस विवरणमें यह दिखाना चाहिए कि पैसा इन-इन व्यक्तियोको दिया गया है। यदि कान्तिने तुझे यह लिखा हो कि मुझे मिलनेवाले कोषका उपयोग नही होता तो यह सही नही है। यों कहा जा सकता है कि मेरे पास कुछ कोषोका पैसा पड़ा हुआ है जिसका अभीतक उपयोग नहीं हुआ है किन्तु कान्तिने वही लिखा हो जैसा तू मानता है तो क्वेटा सहायता-कोषके लिए पैसा तुझे भेजना ही नहीं चाहिए था। और यदि तूने अपना कर्त्तव्य समझकर मुझे पैसा भेजा था तो कान्तिके शब्दोंको उद्धृत करते हुए यह लिखना चाहिए था कि तेरे पैसोंका तुरन्त उपयोग होना चाहिए और ये पैसे मेरे पास पड़े नही रहने चाहिए।

आशा है, अग्रेजी भाषामें लिखने का दोष तो अब तू और भी स्पष्ट देख सकेगा। आश्चर्यकी वात तो यह है कि इतने वरस मेरे साथ रहनेपर भी तू यह नही समझ सका और न इस बातको स्वीकार कर सका कि अग्रेजी भाषाका चाहे कितना भी अच्छा ज्ञान क्यों न हो किन्तु लिखने-बोलने में उसका उपयोग बहुत आवश्यक होने पर ही किया जा सकता है। तेरे पत्रमें अविनय तो कहीं नही थी इसलिए माफी माँगने की जरूरत नही है। किन्तु आश्रममें तूने जो-कुछ सीखा है यदि वह सब गँवा बैठेगा तो अवश्य माफी माँगनी होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फ़ोटो-नकल (जी० एन० ६६२२) से। सी० डब्ल्यू० ४३५४ से भी

६४२. पत्र : रावजीभाई एन० पटेलको

२७ सितम्बर, १९३५

चि० रावजीभाई,

पिछली बार तुमने जो थोड़ा-सा घी भेजा था वह भी बहुत ही खराब निकला था। उसे फिरसे तपाना पड़ा था। स्वामीने तो चखते ही कहा था कि यह घी आपसे कैसे खाया जायेगा? मालगाड़ीसे भेजा जाये तो भी घी अच्छा होना चाहिए और यदि अच्छी तरह पैक किया गया होगा तो चूनेका कोई डर नहीं रहेगा। यदि ऐसा अच्छा घी न मिल सके तो भेजना बन्द कर देना चाहिए। जो लोग घी तैयार करते हैं उनके यहाँ हमारे किसी आदमीको जाकर उन्हें घी बनाना सिखाना चाहिए और जो अच्छा पका हुआ घी हो वही साफ डिब्बोंमें पैक करवाना चाहिए। घी को तपाने के लिए भी कलाकी पूरी जरूरत होती है। इस बार तो जो भेजा सो भेजा। उसे जाँचकर देखूँगा और तुम्हें सूचित करूँगा।

'चार सौ तार' के स्थानपर 'चार सौ गज' पढ़ना।[1] वहाँकी दर तुम स्वयं ही निश्चित कर सकते हो जिससे कत्तिनको कमसे-कम डेढ़ पैसा प्रति घंटा मिले। प्रतिगज या तार की दर हर प्रान्तमें अलग-अलग हो सकती है किन्तु हर प्रान्तमें युक्ताहारके खर्च-लायक मजदूरी अवश्य मिलनी चाहिए।

डाहीबहनकी आँखोंका इलाज आनन्दमें ही हो सका और वह अच्छी हो गई यह एक शुभ समाचार है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९००७)से।

१. देखिए "पत्र: रावजीभाई एन० पटेलको", २४-८-१९३५।

६४३. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२७ सितम्बर, १९३५

. . .[1] के प्रश्नोके[2] तेरे उत्तर बिलकुल ठीक है। ऐसे प्रश्न तो जब चाहे तब पूछे जा सकते हैं। और जब कोई जिम्मेदार आदमी पूछे तो उत्तर देना ही पड़ता है। ऐसे प्रश्नोके बारेमें समयका बन्धन लागू नही होता। सामान्य व्यक्तियोकी स्मरण-शक्ति सदा कमजोर होती है। किन्तु जनताका सेवक धीरज नही छोड़ सकता। उन्हें उत्तर देनेको सदा ही तैयार रहना चाहिए। अत मैंने तेरा उत्तर अपने नामसे भेज दिया है।

वर्धामें तो कुछ भी नही चल रहा है। और जब वल्लभभाई यहाँ आये तब भी कुछ नही था। जब घनश्यामदास आये तो वल्लभभाई भी उनकी बातें सुनने चले आये। शायद यह कि इस बातचीतमें घनश्यामदासने विलायतमें जो पराक्रम किया, उसके विवरण और सामान्य गपशपके अतिरिक्त और कुछ नही था। सौभाग्य से यह सच्ची बात तो अखबारवालो की नजरमें ही नही आई, अन्यथा तरह-तरहके अनुमान लगाये जाते और उससे घनश्यामदासको परेशानी होती।

उस समय राजाजी का यहाँ होना तो एक आकस्मिक घटना थी। वे लक्ष्मीको लेकर लौट रहे थे इसलिए उन्हें यहाँ उतरना ही था। क्योकि घनश्यामदास आने-वाले थे इसलिए मैंने उन्हें दो दिन रोक लिया। मुझे याद नही पड़ता कि किसीने मेरे राजनीतिमें भाग लेनेकी बात भी उठाई हो। . . .[3] मैं यह नही समझ सका कि . . .[4] ने ऐसी बेसिर-पैरकी बात क्यों कही।

मैंने पुछवाया है। तू उससे क्यो नही पूछता?

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १५९

१, ३ व ४. यहाँ मूल में कुछ अंश छोड़ दिया गया है।
२. तिलक स्वराज-कोष के बारे में।

६४४. पत्र : नारणदास गांधीको

२७ सितम्बर, १९३५

चि० नारणदास,

यह पत्र तो खानापूरीके लिए है।

मैथ्यूको लिखा मेरा पत्र मिल गया होगा; यहाँ एक चरखा लगातार सोलह घंटे चलता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४७७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

६४५. हिन्दी प्रचार-सप्ताह

ऊपर दी गई सूचनाको[1] मेरी सिफारिशकी दरकार नहीं। संस्था द्वारा किया गया ठोस कार्य ही उसकी अपनी सिफारिश होनी चाहिए। दक्षिण भारतके लोगोंको उसे पर्याप्त वित्तीय समर्थन देकर सिद्ध करना चाहिए कि वे उसकी कितनी कद्र करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-९-१९३५

६४६. 'धर्मान्तरण' के बारेमें

पिछले दिनों फेडरेशन ऑफ इण्टरनेशनल फेलोशिपके सदस्य श्री ए० ए० पॉलने मुझसे इन स्तम्भोंमें अपनी 'धर्मान्तरण' विषयक स्थितिपर प्रकाश डालने को कहा था। इसपर मैंने उनसे यह कहा था कि जिन बातोंका आप मुझसे उत्तर चाहते

१. यहाँ नहीं दी जा रही है। हरिहर शर्मा द्वारा लिखित इस सूचना में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की उत्पत्ति और प्रगति का विवरण और उसकी कार्यकारिणी परिषद् का यह निर्णय दिया गया था कि "३० सितम्बर से ६ अक्तूबर, १९३५ तक हिन्दी प्रचार-सप्ताह आयोजित किया जाये . . .। जिससे कि हिन्दी का सन्देश दक्षिण भारत के घर-घर में पहुँचाया जा सके और चन्दा जमा किया जा सके।" परिषद्ने "सप्ताह के दौरान सभा के यथासम्भव अधिकसे-अधिक नये सदस्य बनाने" की इच्छा भी व्यक्त की थी।

हो उन्हे प्रश्नोंके रूपमें लिख भेजें। परिणामस्वरूप उन लोगोकी मान्यताओंकी एक सूचीके साथ उनका यह पत्र आया है.

आपको याद होगा कि एक महीनेसे कुछ ऊपर हुआ, मैंने आपको लिखा था कि क्या आप अपने 'धर्मान्तरण' विषयक विचारोंको एक वक्तव्यके रूपमें प्रकाशित कर देंगे। आपने मेरे पत्रके जवाबमें यह लिखा था कि अगर आप अपने विचारोंको प्रश्नों या मान्यताओंके रूपमें लिख भेजें तो मुझे ज्यादा आसानी होगी। मद्रास इंटरनेशनल फेलोशिपकी कार्यकारिणी-समितिके अनुरोधपर हमारे एक ईसाई बन्धुने हमारी मान्यताओंकी यह सूची तैयार कर दी है, और समितिने मुझसे इसे आपके पास इस अनुरोधके साथ भेज देनेके लिए कहा है कि आप 'हरिजन' में इन प्रश्नोंका उत्तर प्रकाशित करने की कृपा करेंगे। बेशक, आप यह तो देखेंगे कि ये प्रश्न ईसाई-धर्मकी दृष्टिसे ही तैयार किये गये हैं; पर हमारी समितिका यह खयाल है कि ये प्रश्न प्रचारमें विश्वास रखनेवाले उन अन्य धर्मोंपर भी उतने ही लागू हो सकते हैं जो आज धर्मान्तरणके कार्यक्रममें लगे हुए हैं। तो क्या मैं यह आशा करूँ कि इन प्रश्नोंके सम्बन्धमें आप अपनी विचार-स्थिति स्पष्ट कर देंगे?

मान्यताएँ

१. धर्मान्तरणका मतलब हृदयका पापसे विमुख होकर ईश्वरमें अनुरक्त होना है। यह ईश्वरका कार्य है। पापका अर्थ है, ईश्वरसे बिलगाव।

२. ईसाई यह मानते हैं कि मानव-जातिके कल्याणार्थ ईसा पूर्णावतारके रूपमें प्रकट हुए थे। वे पापोंसे हमारा उद्धार करते हैं। पापीको वही ईश्वरकी शरणमें ले जा सकता है और इस तरह उसे वास्तवमें जीने योग्य बना सकता है।

३. ईसाई लोग, जिनके लिए ईश्वर ईसा मसीहके माध्यमसे एक जीवन्त वास्तविकता और शक्ति बन गया है, ईसाके सम्बन्धमें बोलना और पृथ्वीको वे मुक्तहस्तसे जो वस्तु देने आये थे, उसकी घोषणा करना अपना सौभाग्य और कर्त्तव्य समझते हैं।

४. यदि इस सन्देशको सुनकर किसी मनुष्यका हृदय इतना अधिक प्रभावित हो जाये कि वह अपने पापोंके लिए पश्चात्ताप करके ईसाके शिष्यके रूपमें नया जीवन बिताना चाहे, तो उसे ईसाके अनुयायियोंके सम्प्रदाय — ईसाई-धर्म संघ — में दाखिल कर लेना ईसाई उचित समझते हैं।

५. ईसाई ऐसे सभी मामलोंमें इस बातकी थाह लेनेका भरसक प्रयत्न करेगा कि उस आदमीकी श्रद्धा सच्ची है या नहीं और उससे जितना बनेगा, उसे धर्म-परिवर्तनके परिणाम समझायेगा और ऐसा करते हुए अपने कुटुम्बके प्रति उस मनुष्यका क्या कर्त्तव्य है, इसपर वह खास जोर देगा।

६. ईसाई अपनी शक्ति-भर पूरा प्रयत्न करेगा कि किसीका धर्मान्तरण करने में वह अपने मनमें स्वार्थकी भावना न आने दे और न जिसका धर्मान्तरण करे, वही भौतिक सुख-ऐश्वर्यके लालचके कारण इस तरह अपना धर्म बदले।

७. चूँकि ईसा पूर्ण जीवनका दान देनेके लिए पृथ्वीपर अवतरित हुए थे और यह इतिहास-प्रसिद्ध बात है कि ईसाई-धर्ममें आनेसे अनेकोंका जीवन ऊँचा उठ गया है, इसलिए यदि ईसाई-धर्ममें आनेसे किसीकी सामाजिक उन्नति होती है तो ईसाई-धर्मकी दीक्षा देनेवाले किसी ईसाईपर यह दोषारोपण नहीं करना चाहिए कि उसने उस आदमीको भौतिक प्रलोभन देकर ईसाई बनाया है, क्योंकि कहने की जरूरत नहीं कि ऐसे प्रलोभनका प्रयोग धर्मान्तरणके साधनके रूपमें नहीं किया जायेगा।

८. सच्ची श्रद्धासे ईसाई-धर्ममें आनेवाले के शरीर, मन और आत्माकी सार-सँभाल रखना यदि ईसाई अपना कर्त्तव्य समझता है तो वह ठीक ही करता है।

९. ईसाइयों पर यह दोष लगाना ही नहीं चाहिए कि वे रुपये-पैसेका प्रलोभन देते हैं। जब हिन्दुओंके समाज-दर्शनमें ही कुछ ऐसे तथ्य मौजूद हैं, जिनपर ईसाइयोंका कोई काबू नहीं है और जो अपने-आपमें हरिजनोंके लिए धर्मान्तरणके प्रलोभनका काम करते हैं तो ईसाइयों पर धर्मान्तरणके लिए भौतिक प्रलोभन देनेका आरोप नहीं लगाना चाहिए। (किन्तु इस विषयमें पाँचवीं और छठी मान्यताएँ भी देखिए।)

इन मान्यताओंकी पूर्व-पीठिका समझने के लिए पाठकोंके लिए यह जान लेना जरूरी है कि मुख्य प्रश्न मेरे और श्री ए० ए० पॉलके बीच चल रही एक चर्चाके दौरान उठा था और इस चर्चाका विषय था मुख्य रूपसे या पूर्णतः हरिजनोंसे आबाद एक गाँवके लोगोंका सामूहिक धर्मान्तरण। इस 'धर्मान्तरण' के विषयमें पाठकों को शायद किसी आगेके अंकमें ज्यादा पढ़ने को मिलेगा। अभी तो उनके लिए इतना समझ लेना ही काफी है कि इन मान्यताओंकी कसौटीपर सामूहिक धर्मान्तरणकी पद्धतिको ही परखना है।

इन मान्यताओंको मैंने कई बार पढ़ा है, और उन्हें जितना ज्यादा पढ़ता हूँ उतना ही ज्यादा महसूस करता हूँ कि ये व्यक्तिगत सम्पर्कपर ही लागू हो सकती है, किसी मानव-समूह पर तो कभी नहीं। अब पहली मान्यताको ही लीजिए। इसमें पापकी परिभाषा 'ईश्वरसे बिलगाव' बताई गई है। "धर्मान्तरणका मतलब हृदयका पापसे विमुख होकर ईश्वरमें अनुरक्त होना है। यह ईश्वरका कार्य है" — ऐसा कहते हैं इन मान्यताओंके लेखक। यदि धर्मान्तरण ईश्वरका कार्य है तो उसके हाथों से मनुष्यको वह कार्य क्यों ले लेना चाहिए? और ईश्वरसे कोई कार्य छीननेवाला मनुष्य कौन होता है? वह तो उसके हाथोंमें एक विनम्र साधन-मात्र हो सकता है।

इसी तरह वह यह भी तय नही कर सकता कि किसके हृदयमें क्या है। मै तो अकसर सोचा करता हूँ कि क्या हम खुद जानते है कि स्वय हमारे हृदयोमें क्या है। "आदमी, तू अपनेको पहचान" — यह वाक्य किसी आकुल हृदयमें ही अनुगुंजित हुआ होगा। और जब हम स्वयं अपने विषयमें इतना कम जानते है तो अपने पड़ोसियों या बहुत दूरके अपरिचित-अनजाने लोगोंके बारेमें कितना कम जानते होगे? हो सकता है, वे अनेक बातोमें हमसे बिलकुल भिन्न हो और यह भी हो सकता है कि इनमें से कुछ बातें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हों। तीसरी मान्यताका सम्बन्ध ईसाइयोके धार्मिक विश्वाससे है, जो उन्हें पीढ़ी-दर-पीढ़ी विरासतमें मिलता आया है। इस विश्वासमें निहित सत्यको हजारों जन्मजात ईसाइयोसे कभी भी स्वय परखकर देखने को नही कहा गया है, जो उचित ही है। मगर इस हालतमें इसे उन लोगोके सामने प्रस्तुत करना जिनका लालन-पालन एक भिन्न धर्मके परिवेशमें हुआ है, निश्चय ही खतरनाक बात है। अगर मै अपने अनपरखे धार्मिक विश्वासको अन्य धर्मावलम्बीके समक्ष, जिसका धर्म मेरी जानकारीकी हदतक शायद उतना सच्चा हो जितना मेरा है, प्रस्तुत करता हूँ तो यह मेरी धृष्टता ही जान पड़ेगी। बहुत सम्भव है कि मेरा धर्म मेरे लिए काफी अच्छा हो और उसका उसके लिए। जिस प्रकार विषुवदीय क्षेत्रमें रहनेवाले के लिए उसका छोटा-सा कच्छ बहुत ठीक होगा उसी प्रकार ठंडे मुल्कमें रहनेवाले के लिए उसका मोटा ऊनी कोट बहुत उपयुक्त होगा।

पहली मान्यताकी तरह तीसरीका सम्बन्ध भी धर्मके निगूढ़ तत्त्वोसे है, जिन्हें सामान्य जन समझ नही पाते, किन्तु श्रद्धासे ग्रहण कर लेते है। जो लोग उस धर्मके परिवेशमें पीढ़ी-दर-पीढ़ी रहते चले आ रहे हैं, उनके बीच तो ये पर्याप्त उपयोगी है; किन्तु जो किसी और धर्मके परिवेशमें पले-बढे हैं उन्हे तो वे सर्वथा अटपटे ही लगेंगे।

अन्य पाँच मान्यताओका सम्बन्ध धर्म-प्रचारक जिनका धर्मान्तरण करना चाहता है, उनके बीच उसके आचरणसे है। मुझे तो इन मान्यताओंको व्यवहारमें उतारना लगभग असम्भव प्रतीत होता है। जब प्रारम्भ ही गलत है तो उसके बाद जो-कुछ किया जायेगा वह सब आवश्यक रूपसे गलत ही होगा। उदाहरणके लिए, कोई ईसाई अपने श्रोताओकी नवोदित श्रद्धाकी सचाईको कैसे परख सकेगा? क्या उनसे हाथ उठवाकर? या कि व्यक्तिशः उससे बातचीत करके? अथवा कुछ थोड़ी देरकी परीक्षाके आधारपर? हम चाहे जिस कसौटीके बारेमें सोचें, वह एक न्यूनतम सीमातक भी सही परिणाम नही प्रकट कर सकेगी। मनुष्यके हृदयमें क्या है, यह तो केवल ईश्वर ही जानता है। क्या ईसाइयोंको स्वय अपने शरीर, मन और आत्माके इतना अधिक शुद्ध और सक्षम होनेका पूरा भरोसा है कि "सच्ची श्रद्धासे ईसाई-धर्ममें आनेवाले के शरीर, मन और आत्माकी सार-सँभाल रखना" अपना उचित कर्त्तव्य मानने में उनके मनमें कोई दुविधा न हो?

सबसे महत्त्वपूर्ण है अन्तिम मान्यता, जिसे पढकर स्तब्ध रह जाना पड़ता है। कारण, इसमें यह बात बिलकुल स्पष्ट कर दी गई है कि शेष आठोंका प्रयोग

बेचारे हरिजनों पर पूरी तरहसे करना है। लेकिन वास्तविकता यह है कि वह पहली मान्यता ही कतिपय महानतम मनीषियों और तत्त्ववेत्ताओंके लिए आजतक एक गुत्थी बनी हुई है। मूल पाप क्या है, वह कौन बता सकता है? कौन कह सकता है कि ईश्वरसे विलगावका मतलब क्या है? और ईश्वरके साथ ऐक्य प्राप्त करने का अर्थ क्या है? क्या ईसा मसीहके सन्देशका प्रचार करने का साहस करनेवाले सभी लोगोंको पूरा भरोसा है कि वे स्वयं ईश्वरसे ऐक्य प्राप्त कर चुके हैं? अगर उन्हें ऐसा भरोसा नही है तो इन गूढ़ विषयोंके सम्बन्धमें हरिजनोंके ज्ञानकी परीक्षा कौन करेगा?

उपर्युक्त मान्यताओंके प्रति तो मेरी प्रतिक्रिया यही है। आशा है, इसे पढ़नेवाले कोई भी ईसाई भाई इसका बुरा नही मानेंगे। अगर मै इन मान्यताओंके सम्बन्धमें अपनी सच्ची स्थिति न बताता, तो मैं अपने अनेक ईसाई-मित्रोंके साथ अप्रामाणिक व्यवहार करने का दोषी बनता।

अब कुछ शब्दोंमें खुद अपनी निष्पक्ष राय भी बता दूँ। मै मानता हूँ कि धर्मान्तरणका जो स्वीकृत अर्थ है उस अर्थमें मनुष्यको एक धर्मसे दूसरे धर्ममें दीक्षित किया ही नही जा सकता। यह तो बिलकुल निजी विषय है — सम्बन्धित व्यक्ति और उसके ईश्वरके बीचका विषय। अपने पड़ोसीके धर्मके प्रति मेरा बुरी नीयत रखना मुनासिब नहीं होगा, बल्कि मुझे उसका उतना ही आदर करना चाहिए जितना स्वयं अपने धर्मका करता हूँ। कारण, मै मानता हूँ, मेरे लिए जितना सच्चा मेरा धर्म है, विश्वके अन्य महान् धर्म भी कमसे-कम अपने-अपने अनुयायियोंके लिए तो उतने ही सच्चे है। मैंने संसारके सभी धर्मग्रन्थ श्रद्धापूर्वक पढे है, इसलिए उन सबकी खूबियोंको पहचानने में मुझे कोई कठिनाई नही होती। जिस प्रकार मै खुद अपना धर्म बदलने की कल्पना नही कर सकता, उसी प्रकार किसी ईसाई या मुसलमान, अथवा पारसी या यहूदीसे अपना धर्म बदलने को कहने की कभी सोच नहीं सकता। मगर इससे जिस प्रकार खुद मेरे सहधर्मियोंके दोषोंकी ओरसे मेरी आँखें बन्द नहीं हो जातीं उसी प्रकार उन धर्मोंके अनुयायियोंकी त्रुटियोंकी ओरसे भी मेरी आँखें बन्द नहीं होती। और यह देखते हुए कि अपने आचरणको अपनी श्रद्धाकी ऊँचाईतक ले जानेमें मेरी पूरी सामर्थ्यकी कसौटी हो रही है, दूसरे धर्मावलम्बियोंके बीच उसका प्रचार करने की मै कल्पना ही नही कर सकता। 'दूसरोंके मुंसिफ न बनो, नहीं तो कभी खुद भी इंसाफकी तराजूपर तोले जाओगे' — यह एक ऐसा सुनहला नियम है जिसका आचरण अपने जीवनमें हर-एकको करना चाहिए। मुझे दिन-प्रतिदिन इस बातकी अधिकाधिक प्रतीति होती जा रही है कि बड़ी-बड़ी और समृद्ध ईसाई धर्म-प्रचारक संस्थाएँ भारतकी सच्ची सेवा तो तभी कर पायेंगी जब वे अपने मनको इस बातपर राजी कर लें। उन्हें अपनी प्रवृत्तियाँ केवल मानव-दयासे प्रेरित सेवा-कार्यतक ही सीमित रखनी है और उनके पीछे भारतको या कमसे-कम भारतके भोले-भाले ग्रामीण लोगोंको ईसाई बना लेनेका उद्देश्य नहीं रखना है, क्योंकि ऐसा करके तो वे उसके उस सामाजिक ढाँचेको ध्वस्त कर देंगे जो अपने तमाम दोषोंके

बावजूद न जाने कितने युगोंसे बाहर और अन्दरसे होनेवाले प्रहारोंको झेलकर भी आजतक ज्योंका-त्यों खड़ा है। वे, यानी ईसाई धर्म-प्रचारक, और हम चाहें या न चाहें हिन्दू-धर्ममें जो-कुछ असत्य है, उसे तो एक-न-एक दिन नष्ट होना ही है। जीवित रहने के लिए प्रत्येक जीवन्त धर्ममें समय आनेपर अपने अन्दर नयी ताजगी और स्फूर्तिका संचार करने की शक्ति होनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २८-९-१९३५

६४७. सोयाबीन

कहते है, सोयाबीनमें बहुत अधिक पोषक तत्त्व होते है। इसलिए बॉम्बे प्रेसिडेन्सी बेबी एंड हेल्थ वीक एसोसिएशन (बम्बई प्रान्तीय बाल एवं स्वास्थ्य सप्ताह संघ) द्वारा प्रकाशित पुस्तिका संख्या ७ का निम्न अंश[1] उद्धृत कर रहा हूँ, ताकि आहार-सुधारक प्रयोग करके देख सकें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २८-९-१९३५

६४८. आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय और कतैयोंका कल्याण

खादी-प्रतिष्ठानमें आचार्य प्रफुल्लचन्द्र रायकी गहरी रुचि रही है और अपनी बचतमें से वे उसे मुक्तहस्त होकर दान देते रहे है। अब उन्होंने प्रतिष्ठानसे कतैयोंकी मजदूरीमें वृद्धि करने और उसकी मुख्य प्रवृत्ति खादीको स्वावलम्बी बनाने की योजनाकी सिफारिश करते हुए मुझे नौ तथ्यपूर्ण बातें[2] लिख भेजी है। ये बातें अपने-आपमें तो महत्त्वपूर्ण है ही, इनसे यह भी प्रकट होता है कि खादीमें उनकी कैसी गहरी श्रद्धा बनी हुई है और इस उम्रमें भी इसमें उनकी कैसी सक्रिय रुचि है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २८-९-१९३५

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।
२. देखिए परिशिष्ट ६।

६४९. पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
२८ सितम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

इस पत्रको बोलकर लिखाना ही ज्यादा अच्छा रहेगा। देवदासकी सेहतमें आनेवाले इन उतार-चढ़ावोंसे मैं तनिक भी चिन्तित नहीं होता। मैं जानता हूँ कि उसकी हालत वहाँ सुधारपर है। और मैं यह भी जानता हूँ कि उसकी चिकित्सा अच्छेसे-अच्छे हाथोंमें है। प्यारेलालको वह खबर देनेवाले ने कोई भला नहीं किया। सच तो यह है कि वास्तवमें मैंने इतना अच्छा पहले कभी महसूस नहीं किया था।

तुमने पिछली बार जो सेब भेजे थे, लगभग सारे मैंने ठिकाने लगा दिये थे। साथमें मैं मुसम्बियाँ भी ले रहा था। इसलिए इस मामलेमें भी चिन्ताकी कोई बात नहीं है। फल लेनेकी जरूरत मुझे जब भी महसूस होगी, मैं जरूर लूँगा। हरी पत्तियाँ लेना भी मैंने छोड़ा नहीं है। कुछ दिनोंतक नीमकी पत्तियाँ लेनेकी गुंजाइश ही नहीं रह गई थी। इसलिए उनको छोड़ दिया था। लेकिन उन दिनों फलों और फलोंके मुरब्बोंके सेवनके कारण सभी भाजियाँ छोड़ देनी पड़ी थीं। पर अब मैंने नीमकी पत्तियाँ फिर शुरू कर दी हैं। मैं कब्जसे बचनेके लिए उबली हुई भाजीका सेवन करता रहा हूँ, पर सेब शुरू करनेपर मैंने उसे बन्द कर दिया था। इसलिए तुम मेरी सेहतके बारेमें कोई चिन्ता मत करो।

अब बा के बारेमें। वह यदि वहाँ खुश न हो और यदि उसके बिना वहाँका काम चल सकता हो, तो मैं समझता हूँ उसे वहाँ रखना ठीक नहीं। मुझे पूरा भरोसा है कि तुम्हारी देखभाल और परिचर्याके चलते देवदासको वहाँ उसकी उपस्थितिकी जरूरत नहीं है। इसलिए यदि वह वर्धा आना चाहे तो तुम आने देना। वह अकेली बखूबी सफर कर सकती है। उसे सहायता उन स्टेशनोंपर दरकार होती है जहाँ वह उतरती है। सो तुम कालका, अम्बाला और दिल्लीके स्टेशनोंपर इसका इन्तजाम बड़ी आसानीसे कर सकती हो। स्टेशनपर कोई उसे मिल जाये और ठीक डिब्बेमें बैठा दे, बस।

मैं तुम्हारे उस पत्रके इन्तजारमें हूँ जिसमें तुम अपना कार्यक्रम मुझे लिखोगी। यदि देवदास और कुमारप्पाके कारण तुमने अपने कार्यक्रममें कोई रद्दोबदल की तो मुझे बड़ा बुरा लगेगा। यदि वे तुम्हारे चले आनेके बाद वहाँ मेनरविलेमें न रह सकते हों और उनका ज्यादा लम्बे अर्सेतक ठहरना जरूरी हो तो उनको किसी और जगह या किसी दूसरे पहाड़ी स्थानपर चले जाना चाहिए। और मेरा अपना खयाल है कि दोनोंको यदि नवम्बर नहीं तो कमसे-कम अक्तूबरके अन्ततक उस

स्वास्थ्यप्रद जलवायुमें रहना ही चाहिए। देवदासको तो शायद कुछ ज्यादा ही अर्से तक रहने की जरूरत पड़े।

तुम्हारे सेब और पत्र अभी-अभी आये हैं। बा यदि अपना टिकट इस्तेमाल करने का अधिकार खो देती है, तो उसे, अर्थात् देवदासको किराया भरना चाहिए।

सस्नेह,

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५२) से; सौजन्य : अमृतकौर; जी० एन० ६३६१ से भी

६५०. पत्र : छगनलाल जोशीको

२८ सितम्बर, १९३५

चि० छगनलाल,

चरखा द्वादशीके दिन लिखा तुम्हारा पत्र मिला। राष्ट्रीय शालामें चलनेवाले अखण्ड चरखा कार्यक्रममें तुम भाग ले रहे हो यह तो बहुत ही अच्छा लगता है। अमतुस्सलामके प्रयाससे यहाँ भी प्रतिदिन १६ घंटे चरखा चल रहा है। इसमें १६ व्यक्ति एक-एक घंटा देते हैं। चरखा प्रातः ५ बजेसे रातके ९ बजेतक चलता है। लगभग ३,५०० तार सूत निकलता है। मैंने इस कार्यक्रममें कुछ सुधारोंका सुझाव दिया है और प्रतिदिन नियमपूर्वक अखण्ड चरखा चलाने के मेरे सुझावपर भी चर्चा हो रही है।

ऐसा लगता है कि तुम मेरे उस लेखको[1] भली-भाँति नहीं समझे हो। मैंने उक्त त्याग लोगोंके दबावके कारण नहीं किया।

जब मोरारजी और चन्दुलाल अपनी भावनाएँ प्रकट करने यहाँ आये तो उस समय मुझपर उसका कोई असर नहीं हुआ और यदि हुआ भी हो तो उक्त त्याग करने लायक नहीं हुआ। किन्तु जब युवकको बचाने का प्रश्न मेरे सामने उठ खड़ा हुआ तो मेरा हृदय उसी क्षण बदल गया। दूसरोंको बचाने के विचार से मैंने अपने जीवनमें बहुत-कुछ किया है।

किन्तु मैंने अपना यह सिद्धान्त भी नहीं बनाया है कि लोगोंकी भावनाओंके दबावको कदापि स्वीकार न किया जाये। हालाँकि यह भी सच है कि लोक-भावनाओंके वशीभूत होकर कोई काम करने के पक्षमें मैं नहीं हूँ। मेरा नियम तो यह है : जहाँ

१. देखिए "एक त्याग", २१-९-१९३५।

लोगोंकी भावनाओंके वशीभूत होनेसे किसी प्रकारकी अनीति या मानहानि न होती हो वहाँ परेशानी उठाकर भी लोगोंकी भावनाओंके अनुसार काम करना चाहिए। उदाहरणके लिए, यदि लोगोंकी भावनाओंका प्रश्न न हो तो मैं बहुत करके सर्वथा नग्नावस्थामें रहूँ। मेरे अपने स्वास्थ्यके लिए लाभदायक होनेके अतिरिक्त इसमें मुझे और भी बहुत-से नैतिक लाभ नजर आते हैं। इससे मेरी संयम-वृत्तिको अधिक पोषण मिलेगा। इसके बावजूद मैं केवल लोक-भावनाओंके वशीभूत होकर यह स्तुत्य कदम नहीं उठाता।

जीवनलालके त्यागपत्रका तो मुझे तुम्हारे पत्रसे ही पता चला। इस सम्बन्धमें तुम्हें और अधिक प्रकाश डालना चाहिए था। इस सम्बन्धमें यदि मुझे आखिरकार निर्णय देना ही पड़ा तो उस स्थितिमें तुम जो-कुछ लिखोगे उससे मुझे अवश्य सहायता मिल सकेगी। अब तो यह प्रश्न जब मेरे सामने आयेगा तब तुमसे यदि कुछ पूछना आवश्यक हुआ तो मैं स्वयं ही पूछूंगा। आशा है, मेरा इससे पहलेका पत्र[1] तुम्हें मिल गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३५) से।

६५१. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

२८ सितम्बर, १९३५

चि० प्रेमा,

आज तो बोलकर ही लिखाना पड़ेगा। दायाँ हाथ केवल सोमवारको 'हरिजन' के लिए काममें लेता हूँ। बाकी दिनोंमें बायें हाथसे लिखता हूँ। ऐसा करने में समय तो लगता है। इसके सिवा तेरे पत्रका उत्तर तुरन्त देना चाहिए। १६ तारीखके आसपास जरूर आना। थोड़ा-थोड़ा करके जितना समय तुझे चाहिए उतना दूँगा। घूमते हुए समय दूँ तो ठीक होगा न? तू यहाँ रहने का समय तय करके न आये तो अच्छा होगा। दो दिन अधिक लगें तो भले ही लग जायें। यहाँ फैले हुए सब काम तू धीरे-धीरे देखे तब अच्छा होगा और बातें भी अलग-अलग समयमें होंगी तो ज्यादा अच्छा रहेगा। मेरा सूत प्रभावतीने इकट्ठा कर रखा है। भेजने को भी मैंने उससे कह रखा है। तेरी प्रेरणासे हिटलरकी पुस्तक पढ़ रहा हूँ। लेनिनके विषय में मैक्स्टनकी लिखी हुई पुस्तक[2] भी पढ़ी। हिटलरके बारेमें एक और पुस्तक मँगा रखी है। तेरा कोठरीका वर्णन आकर्षक है। तुझसे द्वेष करने के बहुत-से कारण हैं। मुझे

१. देखिए "पत्र: छगनलाल जोशीको", २५-९-१९३५।
२. जेम्स मैक्स्टन की पुस्तक लेनिन; १९३२ में प्रकाशित हुई थी।

विश्वास है कि मेरे त्यागका[1] सारा हाल जब तू जानेगी तब तू भी मुझसे सहमत हो जायेगी।

जमनालालजी बहुत करके दूसरी या तीसरी तारीखको आ जायेंगे। मुझे तो ऐसा याद है कि तेरे दोनो प्रश्नोके उत्तर मैं अपने पिछले पत्रमें दे चुका हूँ। लेकिन तेरे इस पत्रमें उक्त पत्रकी प्राप्तिका कोई उल्लेख नही देखता। मैं दुबारा संक्षेपमें उत्तर दे रहा हूँ। कोढ आदि रोगोसे ग्रस्त लोगोको जबरन नपुंसक बनाने की प्रथाको अपनाने में बहुत-सी मुश्किले आती हैं। इससे अनेक प्रकारके अनर्थ पैदा होनेकी सम्भावना है। फिर किसी भी रोगको असाध्य मान लेना भी ठीक नही। संयमका प्रचार करके जो परिणाम निकले उतनेसे सन्तुष्ट रहना ही मुझे तो निरापद लगता है। पग-पगपर मुझे कायरताकी गन्ध आती है। कायर कतैया सूतमें पड़ी हुई गाँठको चाकूसे सुलझायेगा। कुशल कतैया धीरज और कलासे गाँठ खोलेगा और सूतको अविच्छिन्न रखेगा। अहिंसक मनुष्य असाध्य मानी जानेवाली व्याधिसे पीडित लोगोके लिए ऐसा ही कुछ उपाय करेगा।

विदेशोंमें हमारा नियमित प्रचार-कार्य मुझे तो रेलगाड़ीके साथ बैलगाड़ीकी प्रतियोगिता-जैसा लगता है। हम यदि प्रचार-कार्यमें सच्ची बातपर एक हजार खर्च कर सकते हों, तो प्रतिपक्षी करोड़ खर्च करने की सामर्थ्य रखता है। इसलिए मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि हमें अपने-आप होनेवाले प्रचार-कार्यसे सन्तोष मान लेना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३७७) से। सी० डब्ल्यू० ६८१७ से भी; सौजन्य . प्रेमावहन कंटक

६५२. एक प्रमाणपत्र

वर्धा
३० सितम्बर, १९३५

श्री के० एस० सावन्त लगभग एक सप्ताहतक मेरे साथ रहे हैं। ये हरिजन हैं और पेशेसे मूर्त्तिकार। इन्होंने बॉम्बे स्कूल ऑफ आर्टमें पूरी शिक्षा ली है। मैं इनके इस आग्रहको टाल नही सका कि इनको मेरे कमरेमें किसी भी तरहसे मेरा बिलकुल भी ध्यान बँटाये विना बैठकर अपने कामकी अनुमति दी जाये। यह इनकी हार्दिक इच्छा थी और इन्होंने इस सुविधाका भरपूर उपयोग किया है। इनकी कलाका मूल्यांकन तो विशेषज्ञ ही कर सकते हैं। परन्तु मैंने देखा है कि श्री सावन्त विविध प्रतिभाओंके धनी हैं। इन्होंने इन दिनों मेरे साथ रहते हुए बड़ा अध्यवसाय

१. तात्पर्य हरिजनबन्धु, २२-९-१९३५ के अंकमें प्रकाशित "एक त्याग" शीर्षक लेख से है।

दिखाया और अपने काममें पूर्णतः दत्तचित्त रहे। हमने इनको पूरा मिलनसार पाया है और ये आते ही हमारे साथ घुलमिल गये। ये कला-प्रेमियों और धनाढ्योंकी ओरसे प्रोत्साहन पानेके लिए सुपात्र हैं। मैं इनकी सफलताकी कामना करता हूँ।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २८३२) से।

६५३. पत्र : अमृतकौरको

३० सितम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

पक्की बात है कि तुमने जो सेब भेजे हैं वे तुम्हारे अपने बगीचेके नहीं हैं। जानती हो, उनका रेल-भाड़ा कितना पड़ा? यह तो एक अच्छी चीजमें अति करना है। मुझे तो यहाँ बाजारमें मिलनेवाले फलोंपर ही बस करने दो। यदि दवाके रूपमें उनकी जरूरत होती, तो मैं तुमको और भेजने के लिए लिख देता लेकिन वैसी जरूरत नहीं है। मेरा खयाल है कि बीमारोंके लिए मुझे एक ही फलकी जरूरत है — संतरे या मुसम्बियाँ। और ये लगातार मिलते रहें, इसका प्रबन्ध मैंने कर लिया है। हो सकता है, यह भी मेरा खयाल ही हो, लेकिन मुझे यदि कमसे-कम दवाओंपर निर्भर रहना है तो ऐसा लगता है कि मुझे शहद और संतरे लेते रहना चाहिए। और तुमको मैं विश्वास दिलाता हूँ कि इन चीजोंका मैं लगभग जी खोल कर इस्तेमाल कर रहा हूँ। इसलिए मेरी खातिर सेब खरीदना बन्द कर दो। तुम्हारे अपने बगीचेमें अगली बार सेब आनेपर मैं बड़ी खुशीसे अपना हिस्सा ले लूँगा।

आज शाम बा के आनेकी उम्मीद कर रहा हूँ। मुझे उससे देवदास और कुमारप्पाके बारेमें सारे ताजे समाचार मिल जायेंगे, हालाँकि मैं समझता हूँ कि तुम मुझे जितनी पूरी, विस्तृत सूचना देती रही हो, उसमें वह अधिक कुछ जानकारी जोड़ नहीं पायेंगी।

कुमारप्पाके भाई, जे० एम० यहाँ आये हैं। वे आज शाम बम्बई जा रहे हैं। दोनों एक ही साँचेमें ढले है — शक्ल-सूरत और जीवनके प्रति अपने उदार दृष्टिकोण तथा देश-प्रेममें दोनों कितने समान हैं!

आशा है, तुम भली-चंगी होगी। यह कहने का तो कोई फायदा नहीं कि सामर्थ्यसे अधिक श्रम मत करना। मैं समझता हूँ कि तुमने अपने-आपको ऐसे किसी भी अनुरोध, परामर्श या आदेशपर भी अमल करने के सर्वथा अयोग्य बना लिया है।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

मीरा अब बिलकुल स्वस्थ हो गई है। मैंने तुमको बतलाया था या नहीं कि हमने कुमारप्पाके अपने कार्यालयवाले कमरेके ठीक पीछे उसके लिए एक छोटा-सा केबिन बना दिया है। कल वह उसमें चली भी गई और अब काफी खुश है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५३) से; सौजन्य : अमृतकौर; जी० एन० ६३६२ से भी

६५४. पत्र : मनोरंजन चौधरीको

३० सितम्बर, १९३५

प्रिय मित्र,

श्री किरणप्रभादेवी[1] द्वारा उगाये कपासके पौधेके सम्बन्धमें आपने जो जानकारी मुझे दी है, मैं उसका उपयोग कर रहा हूँ। आप मुझे उनकी रुईका नमूना भेज दें तो अच्छा होगा। मैं उसे स्वयं कातूँगा और यदि सुलभ हो तो उसके बीज भी भेज दें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री मनोरंजन चौधरी
बी० पी० हिन्दुनिसा
२११, बहूबाजार स्ट्रीट, कलकत्ता

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७६९) से।

१. मनोरंजन चौधरीकी पत्नी।

६५५. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

३० सितम्बर, १९३५

चि० अम्बुजम,

तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा कर रहा था। आखिर वह आ गया है। तुमने जो फल भेजे थे उनकी पहुँच सूचित करते हुए तुम्हें लिखा[1] तो था।

तुम्हें जल्दी शक्ति प्राप्त करनी चाहिए। तुम अपने शरीरके साथ खिलवाड़ नहीं कर सकतीं। वह ईश्वरकी सेवाके लिए सौंपी गई थाती है।

रामचन्द्रनके देहान्तका समाचार पाकर दुःख हुआ। इसका मतलब परिवारका एक सदस्य खो बैठना है। ऐसा पुराना और निष्ठावान् सेवक खो बैठने का मतलब क्या है, मैं समझता हूँ।

मीरा अब बिलकुल ठीक है। बा आज शिमलासे लौटेगी। अभी इतना ही।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

६५६. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

३० सितम्बर, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

सीता दुर्घटनाग्रस्त हुई किन्तु ऐसा तो होता ही रहता है। इस कारण हमें शकुन या अपशकुनका अनुमान नहीं करना चाहिए। यदि तुम दोनोंको उसका स्कूल जाना ही ठीक लगता हो तो वैसा करना ही उचित होगा। हालाँकि मैं तो अपनी राय पर दृढ़ हूँ। तुम्हारे पास जो-कुछ है वह सब सीताको देना तुम्हारा कर्तव्य है। जब वह समझदार हो जायेगी तो उसमें इच्छानुसार वृद्धि कर लेगी। किन्तु तुम्हारे विचारोंके सामने मैं अपने विचारोंको निरर्थक मानता हूँ। क्योंकि आखिर उसका भविष्य तो तुम्हें ही बनाना होगा। अपनी कठिनाइयों और महत्त्वाकांक्षाओंको भी तुम्हीं अच्छी तरह समझते हो। अतः यह उचित होगा कि मेरे विचारोंको जितना महत्त्व तुम देना चाहो उतना महत्त्व देकर अपनी इच्छानुसार ही चलो।

१. देखिए "पत्र : एस० अम्बुजम्मालको", १४-८-१९३५।

बा आज साँझको शिमलासे आ रही है। देवदास ठीक होता जा रहा है। रामदास थोड़ा दुबला हो गया है, किन्तु बम्बई छोड़ना नहीं चाहता। हरिलाल शराबकी गंगामें अपनी हड्डियोंको पावन कर रहा है। फिलहाल तो नीमू और उसके बच्चे मेरे ही पास रह रहे हैं।

किशोरलाल यथारीति कभी बीमार, कभी अच्छे रहते हैं। कान्ति, कनु और नवीन यहाँ काममें और पढाई-लिखाईमें लगे रहते हैं।

आज तो इतनेसे ही संतोष करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४४) से। सी० डब्ल्यू० १२५६ से भी; सौजन्य : सुशीला गांधी

६५७. पत्र : रतिलाल सेठको

३० सितम्बर, १९३५

भाई रतिभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे लिए नववर्ष सुखदायी हो और तुम्हारी सेवा-शक्ति बढ़े। तुमने अपने परिवारके समाचार देकर अच्छा किया। यदि खर्च-भरको ईमानदारीकी कौडी मिलती रहे तो अधिक [सम्पत्ति]का लोभ क्यों किया जाये? यदि कान्तिलाल सन्तोषजनक रूपसे काम कर रहा हो तो तुम्हारी इतनी चिन्ता कम हो गई। छगनके बारेमें मैं समझता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१७५) से। सी० डब्ल्यू० ४६७१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

६५८. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

३० सितम्बर, १९३५

दीर्घायु होओ और सत्य तथा अहिंसाका अनुसरण करते हुए सेवा करते रहो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३१३) से; सौजन्य : भगवानजी पु० पण्ड्या

६५९. पत्र : हरजीवन कोटकको

३० सितम्बर, १९३५

चि० हरजीवन,

तुम हठ कर रहे हो। जो हठपर उतर आया हो उसे कोई नहीं समझा सकता। तुम्हारे व्यवहारसे प्रकट होता है कि तुम नियमका पालन कर ही नहीं सकते। जैसा तुम चाहो वैसा हो तो हो, नहीं तो तुम आपा खो बैठते हो। यह मेरे साथ वर्षों रहनेका ही परिणाम है क्या? तुम्हें क्रोध है, मुझे दुःख। क्या पता, क्रोध करने में ज्यादा दोष है या दुःख करने में? दुःख आसक्तिकी निशानी है। आसक्ति और क्रोध रजोगुणकी निशानी हैं। मेरा दुःख बहुत दिनोंतक नहीं टिकेगा। तुम्हारा क्रोध भी क्षण-भरको प्रकट होकर शमित हो जाये तो कितना अच्छा हो?

[बापूके] आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

६६०. पत्र : शारदाबहन एच० कोटकको

३० सितम्बर, १९३५

चि० शारदा,

तू भी वहाँ[1] ठीक चल रही जान पड़ती है।

[बापूके] आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. श्रीनगर में।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

सर्पदंशके सम्बन्धमें डॉ० सोखेकी टिप्पणियोंके अंश[1]

विषोंके प्रकार

नाग और करैतका विष मुख्यतः मस्तिष्क और सुषुम्नापर असर करता है, जिससे मस्तिष्कमें स्थित श्वास-केन्द्र जड़ हो जाता है और मनुष्यकी मृत्यु हो जाती है।

साधारण साँपका विष हृदय और रक्तपर असर करता है, और इसमें मृत्यु रक्तसंचारको चालू रखनेवाले केन्द्रके जड़ हो जाने, अधिक और सतत रक्तस्रावके फलस्वरूप हुई थकावट, या घावके सड जाने के कारण रक्तके विषाक्त हो जाने से होती है।

विष चढ़ने के लक्षण

नाग-विष : सबसे पहला शारीरिक लक्षण यह है कि आदमी मदहोशीकी हालतमें पहुँच जाता है। बादमें शरीर पैरोंकी तरफसे जड़ होने लगता है और यह जड़ता धड़से होकर ऊपर चढ़ते हुए सिरतक पहुँच जाती है। सिर एक ओरको झुक जाता है, और पलकों, होठों, जीभ तथा गलेको लकवा मार जाता है। मुँहसे लार गिरने लगती है और बोलना उत्तरोत्तर अधिकाधिक कठिन होता जाता है। बार-बार मतली और उबकाई आती है। साँस लेना अधिकाधिक कठिन होता जाता है और अन्तमें बन्द हो जाता है। चेहरा विवर्ण और दु खार्त्त हो जाता है। निगलना असम्भव हो जाता है। हृदयपर कोई असर नही होता और साँस रुक जाने के बाद भी वह धड़कता रहता है। मृत्यु सामान्यतः डेढ से छह घंटेके अन्दर हो जाती है।

करैतका विष : मृत्यु मुख्यतः दम घुटने से होती है, लेकिन इसके अतिरिक्त जठर और अँतड़ियोंकी रक्त-धमनियाँ फट जा सकती हैं, और कई बार बहुत तेज पेट-दर्द भी होता है।

सामान्य साँपोंका विष : रक्तका जमाव रुक जाता है और रक्त-धमनियोंकी अन्दरकी परतें नष्ट हो जाती हैं, जिससे शरीरके अनेक भागोमें अन्दर-ही-अन्दर रक्तस्राव होने लगता है। जहाँ घाव लगता है वहाँ पीड़ा होती है, और वह हिस्सा बहुत सूज जाता है। रक्तस्राव बहुत अधिक हो जाता है, और रक्तका रंग भी बदल जाता है। शरीरपर चकत्ते उभर आते हैं, जिनमें रोगाणु पड़ जाने की संभावना रहती है। मतली और उलटी बार-बार आती है, लेकिन फालिज नही मारता।

१. देखिए पृ० ३६४-६५।

उपचार

विषैले साँपके दंशको देखकर स्पष्ट पहचाना जा सकता है। अगर दस मिनट के अन्दर कुछ नहीं होता है तो ऐसा माना जा सकता है कि साँप विषहीन था, क्योंकि विषैले साँपके दंशसे बहुत जल्दी जलन होने लगती है और जहाँ वह दंश लगाता है वह स्थान शीघ्र ही सूज जाता है। बीचमें खूब पसीना और उलटियाँ भी आ सकती हैं। कहने की जरूरत नही कि इन लक्षणोंके प्रकट होनेतक उपचार हो चुकना चाहिए — खास कर एंटीवीनन सीरम दिया जा चुकना चाहिए। यह सीरम दंशित व्यक्तिकी स्थितिके नाजुक दौरमें पहुँचने के पहले ही दिया जा सकता है। जितनी जल्दी दिया जा सके उतना ही अच्छा रहेगा। चूँकि चिकित्सा-सम्बन्धी सहायता सामान्यतः तुरन्त सुलभ नही हो पाती है, इसलिए उपचार शायद निम्न क्रमसे सम्भव हो :

१. **घावके स्थानको बाँधना** : अगर दंश हाथ-पैरमें कहीं लगा हो तो जहाँ लगा हो उसके ऊपर एक डोरी कसकर बाँध देनी चाहिए। बन्धन ऐसा होना चाहिए जिससे सभी स्नायु एक ही हड्डीके साथ बँध जायें; उदाहरणके लिए यदि दंश उँगलीपर लगा हो तो बन्धन उँगलीके मूलपर बाँधना चाहिए, और एक दूसरा बन्धन कुहनीके ऊपर भी बाँधा जा सकता है। अगर दंश अंगूठेमें लगा हो तो एक बन्धन अंगूठेके मूलपर बाँधिए और दूसरा घुटने के ऊपर बाँधना चाहिए। बन्धन लगभग हर दस मिनट बाद ढीला कर देना चाहिए और विषको निम्न प्रकार चूसना चाहिए। ऐसा बन्धन आधे घंटेसे बहुत अधिक देरतक नहीं बाँधे रखना चाहिए, लेकिन थोड़े समयका अन्तराल दे-देकर यांत्रिक रीतिसे विष चूसने की क्रिया चालू रखनी चाहिए।

२. **चीरा** : आड़ा-खड़ा चीरा लगाकर जहाँ दंश लगा हो उस स्थलको खोल देना चाहिए। चीरा काफी गहरा होना चाहिए, लेकिन चीरा ऐसी सावधानीसे लगाना चाहिए जिससे हड्डीसे ऊपरकी नाजुक खालको नुकसान न पहुँचे और कोई नस न कट पाये। चीरा लगाने के लिए सेफ्टी रेजरके ब्लेडका इस्तेमाल किया जा सकता है। अगर सम्भव हो तो उसे आगकी लपटपर शीघ्रतासे जीवाणुशून्य (स्टरिलाइज) कर लिया जाये।

३. **चूसना** : सम्भव हो तो चूसनेवाली प्याली लगाकर अन्यथा होठोंसे (जिसमें कोई खतरा नही है, यदि मुँहमें कोई जख्म न हो) विष चूसा जाये।

४. **एंटीवीनन सीरमकी सुई** : चिकित्सा-सम्बन्धी सहायता मिलते ही यह सुई लगवाई जा सकती है। यह सीरम कसौली का सेंट्रल रिसर्च इंस्टीट्यूट बेचता है।

५. **अनुपूरक** : हलके-से पोटाश परमैंगनेट (जो हलके गुलाबी रंगका होता है) का पतला घोल बनाकर चीरेसे लगे घावको धोना अच्छा रहेगा। परमैंगनेटके कण सीधे घावपर न लगायें, और न कास्टिक तेजाबका इस्तेमाल करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-८-१९३५

परिशिष्ट २

जवाहरलाल नेहरूके नाम महादेव देसाईका पत्र[1]

आनन्द भवन, इलाहाबाद
६ सितम्बर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

मैं यह पत्र आनन्द भवनसे लिख रहा हूँ, जहाँ आपसे मिलने की आशा में अन्य आधे दर्जन लोगोंके साथ मैं भी भागा-भागा आया, लेकिन उन्हीं की तरह मिलने में विफल रहा। सरूपबहनका ३ तारीखका तार, जिसमें सूचित किया गया था कि आप डच एयर मेल पकड़नेवाले हैं, ४ तारीखको वर्धा पहुँचा। आपका भी ३ का तार उसी दिन मिला। उसी क्षण बापूने तय किया कि मैं उसी शामको इलाहाबाद रवाना हो जाऊँ और चाहे जितनी थोड़ी देरके लिए हो, आपसे मिलने की कोशिश करूँ। सरूपबहनका वह तार जिसमें उन्होंने सूचित किया था कि आप प्रस्थान कर चुके हैं, कल वर्धा पहुँचा, लेकिन तबतक मैं इलाहाबादका आधा रास्ता तय कर चुका था। यह बहुत दुःख पहुँचानेवाली निराशा थी, लेकिन मुझे यह सोचकर अतीव प्रसन्नता हुई कि आप एक दिन पहले प्रस्थान कर सके। मैं आशा करता हूँ और प्रभुसे अपनी इस आशाको फलीभूत करने की प्रार्थना करता हूँ कि आप कमला बहनको पूर्ण स्वस्थताकी अवस्थामें साथ लेकर वापस आयें।

साथमें बापू और खुर्शेदके पत्र भेज रहा हूँ। प्रेमोपहारकी तरह बापूने हमारे ही यहाँका हाथका बना कागज, हाथका ही बना एक पेपर-कटर तथा एक चम्मच भेजा था। इन्हे वहाँ भेजने में तो कोई तुक नही दिखती। आपके लौटने तक हम इससे बहुत अच्छे स्तरकी चीजें बनाने लगेंगे, ऐसी हमारी आशा है। आपके वर्धा आने पर आपको उनके नमूने दिये जायेंगे।

बापूके मैं दो महत्त्वपूर्ण सन्देश लाया था: (१) एक तो यह कि बापू चाहते हैं, आप अगले वर्ष कांग्रेसका दायित्व सँभाले तो अच्छा हो। कार्यसमितिके समक्ष यह सुझाव उन्होने रखा तो उसने उसे सर्वसम्मतिसे स्वीकार कर लिया। आम तौरपर सदस्योका खयाल यह था कि इसी रास्तेसे समितिकी बहुत-सी कठिनाइयो और आजके कटु विवादोसे बचा जा सकता है, और आपकी नीति और कार्यक्रमको ईमानदारीके साथ और बिना किसी प्रकार की विघ्न-बाधाके आजमाकर देखा जा सकता है। नया सविधान आपको अपनी मर्जीके सहयोगी चुनने का अधिकार देता है, और बादमें जो लोग बाहर चले जायेंगे वे आपको यथासम्भव अपना सहयोग देंगे, लेकिन

१. देखिए पृ० ४१८।

आपके रास्तेमें बाधा बिलकुल नही डालेंगे। (२) दूसरी बात यह है कि यूरोपमें भी आपको कोई भाषण या वक्तव्य नहीं देना चाहिए। बापूका विश्वास है कि यदि आप फरवरीतक अथवा वापस आने तकके लिए कोई भाषण आदि न देने का व्रत ले ले तो इससे आपकी और भारतकी भी प्रतिष्ठा बढ़ेगी।

इन दो सन्देशोंके अतिरिक्त, निम्न विषयोंपर आपके विचार, जो सामान्यतया बिलकुल दो-टूक और बेलाग होते हैं, जानने को वे बड़े उत्सुक थे: (१) ग्रामोद्योग संघका कार्य, जिसमें इन दिनों बापूका सारा समय खप रहा है; (२) कौंसिल-प्रवेशके सम्बन्धमें बापूके विचार; (३) कांग्रेसका वर्तमान संविधान। खुद बापूको पूरा यकीन है कि यह हमारी प्रगतिका बहुत प्रभावशाली साधन है, और यद्यपि आँकड़ोंके जोड़-तोड़ आदिके रूपमें उसमें काफी भ्रष्टाचार है, फिर भी वह ऐसी चीज है जिसका उपयोग स्वतन्त्रता-प्राप्तिके अन्तिम और सफल प्रयासके लिए देशको तैयार करने के निमित्त किया जा सकता है; (४) न्यूनतम मजदूरीका प्रश्न तथा (५) समाजवादियोंका कार्यक्रम और उनके काम करने के तरीके।

यद्यपि रचनात्मक कार्यक्रमकी प्रगतिकी रफ्तार धीमी है, किन्तु बापूका यह विश्वास अधिकाधिक दृढ़ होता जा रहा है कि इसके अतिरिक्त और किसी भी साधनसे हम अन्तिम और सफल सत्याग्रह करने की योग्यता प्राप्त नहीं कर सकते, क्योंकि जबतक हम जनसाधारणके हृदयको नही जीतते तबतक कोई बड़ा काम करके नहीं दिखा सकते और जबतक हम जनसाधारणके बीच ऐसा गहन रचनात्मक कार्य नहीं करते जिससे उसकी कमाईमें बढ़ोतरी हो सके और वह ज्यादा बेहतर जिन्दगी जी सके तबतक हम उसके हृदयको नहीं जीत सकते।

लगभग इतनी बातें आपतक पहुँचाने की जिम्मेदारी मुझे सौंपी गई थी। हम आशा करेंगे कि कमलाबहनसे मिलते ही उनकी हालतके बारेमें आप तार भेजेंगे। जबतक वे ठीक न हो जायें, इसका उत्तर देने की बात मत सोचिए, और अगर आपको जल्दी लौटने की उम्मीद हो तो इसका उत्तर आप न दें तो भी कोई हर्ज नहीं।

ढेरसे स्नेह-सहित,

आपका,
महादेव

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

परिशिष्ट ३

ए० डोनाल्ड मिलरका पत्र[1]

[१४ सितम्बर, १९३५ के पूर्व]

आपने २ जुलाईको श्री शार्पको जो पत्र लिखा था वह उन्होंने मेरे पास भेजा है। उसमें आपने कुष्ठ-पीड़ित लोगों द्वारा सन्तानोत्पत्तिके बारेमें उनकी राय माँगी है, और आपने नैनी, इलाहाबाद आश्रमका उल्लेख किया, जहाँ श्रीमती हिगिन-बॉटमसे आपने यह जानकारी प्राप्त की कि कुष्ठरोगी सन्तानोत्पत्ति कर सकते हैं। . . .

इस बातको आपसे ज्यादा अच्छी तरह और कौन जानता है कि इस चीजसे कितने सारे सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक तथा चिकित्सा-सम्बन्धी प्रश्न जुड़े हुए हैं। आदर्श स्थिति और व्यवहारगत स्थिति दोनों हमेशा समान ही नहीं होती। हमारा जो आदर्श है उसके अनुरूप बनी दुनियामें नहीं, बल्कि वह वास्तवमें जैसी भी है, उसी दुनियामें हमें यथासम्भव अच्छीसे-अच्छी स्थितिको प्राप्त करना है। . . .

इलाहाबादके मिशनके तत्त्वावधानमें आयोजित एक सम्मेलनमें, जिसमें चिकित्सा-शास्त्रके विशेषज्ञ और बड़े-बड़े कुष्ठ आश्रमोंके प्रबन्धक आये हुए थे, चिकित्सा-समिति ने निम्नलिखित निष्कर्ष पेश किये थे, जिनका अनुमोदन सम्मेलनने किया था:

(क) यह सिद्ध नहीं हो पाया है कि यह रोग जन्मतः होता है, लेकिन इसकी छूत लगने की सबसे अधिक सम्भावना बचपनमें ही रहती है। ऐसा पाया गया है कि जिन बच्चोंको अपने कुष्ठरोगी माता-पिताओंसे जन्मके समय ही अलग कर दिया गया और उसके बाद उन्हें छूतकी सम्भावनासे बचाकर रखा गया, उन्हें यह रोग नहीं हुआ। इन बातोंसे प्रकट होता है कि जिन कुष्ठ-पीड़ित माता-पिताओंका रोग संक्रामक किस्मका है उनसे उनके शिशुओं और बच्चोंको यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र अलग कर देना नितान्त वांछनीय है।

(ख) कुष्ठरोगियोंमें, विशेष रूपसे कुष्ठ-पीड़ित महिलाओंमें, प्रजनन-क्षमता काफी होती है और कुष्ठरोगियोंके बच्चोंको इस रोगकी छूत लगने की अत्यधिक सम्भावना रहती है, और इस रोगके कायम रहने में इन दोनों बातोंका बहुत बड़ा योग है; इसलिए जहाँतक सम्भव हो, ऐसे स्त्री-पुरुषका एक-दूसरेसे अलग रहना वांछनीय है। जहाँ यह सम्भव न हो वहाँ विवाहित कुष्ठरोगियोंको इसी शर्तपर साथ रहने देना चाहिए कि उनके जो सन्तान होगी उसे यथासम्भव छोटीसे-छोटी आयुमें उनसे अलग कर दिया जायेगा। कुशल उपचारसे जिनके रोगमुक्त होने की अच्छी सम्भावना हो, ऐसे माता-पिताको एक-दूसरेसे अलग रखना विशेष रूपसे वांछनीय है। इसका

१. देखिए पृ० ४५१। यहाँ कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

एक कारण तो यह है कि इस तरह स्वस्थ पति या पत्नीको उपचाराधीन जीवन-साथीके रोगकी छूत लगने का खतरा भी मिट जायेगा और दूसरा यह कि गर्भावस्थामें अक्सर यह रोग तेजीसे उभरता है। . . .

इधर हालकी जाँच-पड़तालसे इस धारणाको और भी बल मिला है कि कुष्ठ-पीड़ित माता तथा उसके बच्चे दोनोंके हकमें यह जरूरी है कि ऐसे माता-पिता द्वारा सन्तानोत्पत्तिको प्रोत्साहन नहीं मिलना चाहिए। इस अवस्थामें माताके शरीर पर बहुत जोर पड़ता है जिससे रोगको बढ़ने का मौका मिलता है; और उधर यदि माताका रोग संक्रामक स्थितिमें रहता है तो जबतक बच्चा उसके साथ है तबतक उसे छूत लगने का गम्भीर खतरा बराबर बना रहता है। . . .

जब हम आध्यात्मिक पक्षके विषयमें सोचते हैं तो ऐसे धरातलपर आ जाते हैं जहाँ सहज ही आचरणका कोई कठोर सिद्धान्त निर्धारित नहीं किया जा सकता। फिर भी, मैं समझता हूँ कि जो समस्या उठाई गई है उसका सबसे श्रेष्ठ समाधान आध्यात्मिक क्षेत्रमें ही मिल सकता है। सुन्दरतर भविष्यके निर्माणके लिए किसी-न-किसी प्रकारका त्याग सबसे अपेक्षित है; व्यक्तिगत त्याग तो सामूहिक कल्याणका असली मर्म है। और कुष्ठ-पीड़ित स्त्री या पुरुषसे, जो ईश्वरकी कृपापर भरोसा रखता है और उसकी इच्छा जानने को उत्सुक रहता है, जिस त्यागकी अपेक्षा की जाती है वह यह है कि व्यक्तिगत सुख-सन्तुष्टिके पीछे पड़कर वह भावी प्राणियोंको आपद्-ग्रस्त न बनाये।

गरज यह कि हम इस निष्कर्षपर — और मुझे लगता है कि निश्चित रूपसे इस निष्कर्षपर — पहुँचते हैं कि आदर्शगत दृष्टिसे देखें तो आश्रमोंमें रहनेवाले साधनहीन कुष्ठ-रोगी सहवास करें, जिससे सन्तानोत्पत्ति हो — यह बात न तो चिकित्सा-शास्त्रकी दृष्टिसे और न सामाजिक अथवा आध्यात्मिक नजरियेसे अच्छी है।

लेकिन मैं तो कह ही चुका हूँ कि "आदर्श स्थिति और व्यवहारगत स्थिति दोनों हमेशा समान ही नहीं होती", और इसलिए सचाई यह है कि यद्यपि कुष्ठ-सेवा मिशनकी यह निश्चित नीति है कि जो लोग स्वेच्छासे हमारे यहाँ आते है, अथवा जो हमारे मेहमान है उन्हें विवाहित दम्पतिवाली आवास-सुविधा न दी जाये, फिर भी कभी-कभी परिस्थितिवश इस नीतिका पूरा पालन असम्भव होता है।

आपने अपने पत्रमें इलाहाबाद आश्रमका उल्लेख किया है। यहाँ जो लोग पहलेसे ही दाम्पत्योपयोगी आवासोंमें रहते आये है वे तो अब भी रह रहे है, लेकिन प्रमाणोंसे यह साबित होता है कि ऐसे आवास अधिकतम भलाईके हकमें नहीं हैं, और इसलिए नये दाखिल होनेवालों के आवासकी व्यवस्था या तो सिर्फ स्त्रियोंके रहने के हलकेमें या केवल पुरुषोंके रहने के हलकेमें की जाती है।

जब रोगी कानूनी विवशताके कारण किसी आश्रममें आये तब बात कुछ और बदल जायेगी — कमसे-कम सामाजिक दृष्टिसे। तब वह समाज द्वारा दूसरोके जीवन का नियमन करने की जिम्मेदारी निश्चित तौरपर अपने सिर लिये जाने का मामला हो जाता है। लेकिन भारतमें इस मिशनके जितने आश्रम है, उन सबमें रोगी स्वेच्छा

से आते हैं और हमारे कैदी नहीं, बल्कि अतिथि होते हैं। और जिस प्रकार आपके पुराने साबरमती आश्रममें अधिकसे-अधिक कल्याण साधने की दृष्टिसे मेहमानोंके लिए कुछ नियम बने हुए थे जिनका पालन उन्हें करना पड़ता था, उसी प्रकार अपने आश्रमोंमें ऐसी नीतिका पालन करके जिससे, जहाँतक सम्भव हो, कुष्ठरोगियोंको सन्तानोत्पत्तिके लिए प्रोत्साहन न मिले, हम अधिकसे-अधिक कल्याण साधने के लिए प्रयत्नशील हैं।

क्या अब हमारी कठिनाइयाँ और हमारे आदर्श आपके सामने स्पष्ट हैं? मैं तो आशा करता हूँ कि वे स्पष्ट हो गये होंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-९-१९३५

परिशिष्ट ४

जवाहरलाल नेहरूके नाम महादेव देसाईका पत्र[1]

वर्धा
२५ सितम्बर, १९३५

प्रिय जवाहरलालजी,

बापूजी आज बहुत व्यस्त हैं, इसलिए लिख नहीं सकते। उनके बदले मैं लिख रहा हूँ। कुछ दिनोंसे आपका कोई समाचार नहीं मिला है, और हम मानते हैं कि किसी प्रकारका समाचार न आने का मतलब यह है कि सब कुशल है। प्रगति तो दुःखद रीतिसे धीमी होगी ही, लेकिन हमें विश्वास है कि आपकी उपस्थिति अचूक दवाका काम करेगी। और इन्दुको इससे कितनी अधिक राहत मिली होगी, क्योंकि आपके बिना वह इस बोझको शायद ही बर्दाश्त कर पाती!

आपसे मिलने के लिए जल्दीमें मेरा इलाहाबाद पहुँचना बेकार नहीं गया, क्योंकि मैं साथमें आपकी वह महत्त्वपूर्ण पाण्डुलिपि लेकर आया। उसके तीन भाग (लगभग २७५ पृष्ठतक) मैं रास्तेमें ही पढ़ गया और उनको पढ़कर मैं आनन्द-विह्वल हो उठा। यहाँ काममें लगे रहने के कारण आगे पढ़ने का अवसर नहीं मिल पाया है, लेकिन खुर्शेद उसे पूरा पढ़ गई है और अब बापूने आरम्भ किया है। पहला भाग उन्होंने आज समाप्त कर दिया और जल्दी ही पूरी चीज पढ जाने की आशा रखते हैं। कहने की जरूरत नहीं कि वे यह सारा अध्ययन उसी स्थानमें करते हैं जिसे 'लाइब्रेरी' (यानी शौचालय) कहते हैं। आपको यह दिलचस्प बात बताऊँ कि शौचालयके शेल्फपर आपकी पाण्डुलिपिके साथ सिर्फ एक और पुस्तक हिटलरकी

१. देखिए पृ० ४७३।

जीवनी रखी रहती है। हिटलरकी आत्मकथा ('माई स्ट्रगल') उन्होंने कुछ दिन पूर्व खत्म की।

सस्नेह,
महादेव

[पुनश्च:]

साथमें कांग्रेसका संविधान भेज रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

परिशिष्ट ५

जवाहरलाल नेहरूके नाम महादेव देसाईका पत्र[1]

वर्धा
२९ सितम्बर, १९३५

प्रिय जवाहरलालजी,

लगता है, बापू आजकी हवाई डाकके लिए भी पत्र नहीं लिख पायेंगे। बहुत-से मुलाकाती आते रहे हैं और अभी, जब डाक भेज दी जानी चाहिए थी, वे कातते हुए एक मुलाकातीसे बातें कर रहे हैं। लेकिन क्षण-भरको बातोंका सिलसिला भंग करके उन्होंने मुझसे कहा कि २० सितम्बरको लिखे आपके उस महत्त्वपूर्ण पत्रकी पहुँच आपको सूचित कर दूँ जो यहाँ कल मिला। उन्होंने आपको यह बतानेको कहा है कि आप अपना निर्णय[2] सूचित कर पाये है, इसकी उन्हें कितनी अधिक खुशी है। इससे अच्छा पत्र और नहीं हो सकता था, और आपने जिस तरह साफ-सीधे शब्दोंमें लिखा है वैसा न लिखा होता तो यह आपके योग्य न होता। बापू आपकी आत्मकथा नियमित रूपसे पढ़ रहे है और आज उन्होंने दूसरा भाग समाप्त कर लिया है। आठ भाग है, लेकिन उपाध्यायने मुझे सात ही दिये हैं। इलाहाबादसे मैं रवाना हुआ, उस समय तक आठवाँ तैयार नहीं हुआ था। १० तारीखको अ० भा० च० संघकी बैठकमें भाग लेने कृपलानी यहाँ आ रहे हैं। वे आठवाँ भाग साथ लायेंगे।

सस्नेह,
महादेव

१. देखिए पृ० ४७३।
२. कांग्रेसके अध्यक्ष-पदको स्वीकार करते हुए।

[पुनश्च :]

दूसरा पत्र भी, जिसमें कमलाके स्वास्थ्यका पूरा हाल बताया गया है, कल मिल गया। कैसी सलीब आप ढो रहे हैं! ईश्वर आपको शक्ति दे।

महादेव

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

परिशिष्ट ६

कत्तिनोंका कल्याण[1]

बंगालमें खादी-कार्यको समर्पित खादी प्रतिष्ठानको स्वेच्छा-कताई कार्यके साथ-साथ कत्तिनोको (क्रमशः अधिकाधिक मजदूरीपर) काम देना और उनके सूतकी बिक्रीकी व्यवस्था करना क्यों जारी रखना चाहिए, उसके कुछ कारण इस प्रकार हैं :

१. खादीका प्रयोजन कभी भी मशीन (अर्थात् मिल) के बने कपड़ोसे होड़ करने का नही है।

२. खादी 'वापस गाँवोकी ओर चलो' के नारेका प्रतीक है।

३. ग्राम-जीवनका मतलब सादगी और 'सभ्य तथा परिष्कृत' शहरी जीवन-पद्धतिसे, अर्थात् सिनेमा, रेस, जूआ तथा ऐसी ही अन्य निरर्थक चीजें जिसके प्रतीक है उससे, अछूतापन।

४. मिलोंमें मजदूरोको ज्यादा अच्छी मजदूरी मिलती है, लेकिन वास्तवमें वे मनुष्य नही रह जाते, बल्कि यंत्र-जीव और गुलाम बन जाते हैं।

५. चरखा चलाकर दो रोटी-भरके लायक कमानेवाली स्त्रियाँ (सामान्यतः विधवाएँ) इसके सहारे स्वावलम्बी बनती हैं और अपने पुरुष सगे-सम्बन्धियोपर, जो वास्तवमें निठल्ले बैठे रहते है तथा अपनी आश्रित स्त्रियोसे गुलामोंकी तरह काम करवाते हैं, निर्भर रहने से उन्हें मुक्ति मिल जाती है। इस तरह इन स्त्रियोको वास्तवमें खून-पसीना एक करनेवाले श्रमसे छुटकारा मिल जाता है।

६. चरखा चलानेवाली स्त्रियाँ यह काम कभी भी पूरे समय नही करती हैं या करती भी हैं तो ऐसी स्त्रियोंकी संख्या बहुत विरल है। घरके कामकाजसे फुरसत मिलने पर अपने खाली समयमें ही वे कातती है। इसलिए उनके खाली समयके इस श्रमकी तुलना मिलोंमें खून-पसीना एक करके काम करनेवाले लोगोकी मेहनतसे करना गलत होगा।

१. देखिए पृ० ४९५।

७. बंगालके अधिकांश हिस्सोंमें एक ही फसल (आमन धान) होती है। इससे किसानोंको सालमे मुश्किलसे तीन महीने काम मिल पाता है। जहाँ दूसरी फसल पैदा की जाती है और फलतः जहाँ दो महीने या इससे कुछ अधिक समयके लिए और काम मिल जाता है वहाँ भी वे सात महीनेतक बेकार बैठे रहते हैं। इसलिए अगर लोगोको चरखा चलाने के लिए राजी किया जा सके तो उन्हें एक और धन्धा, यानी समय पड़ने पर काम देनेवाला एक और सहारा मिल जायेगा। इस प्रकार सूखे या बाढ़ (जिसका प्रकोप कमसे-कम बंगालपर बहुधा होता है) के कारण फसलके नष्ट हो जाने पर चरखा चलाना 'वरदान' साबित हो सकता है। फिर लोगोंको भूखों नहीं मरना पड़ेगा, या राहत-केन्द्रों, भाग्यवश कभी-कभी मिल जाने-वाले मुठ्ठी-भर अनाज या दो रोटियोंपर निर्भर नही रहना पड़ेगा।

८. इससे सिर्फ कत्तिनोंको ही लाभ नही होगा; उनके साथ-साथ बुनकरोंकी एक विशाल संख्याको भी रोजगार मिलेगा। सच तो यह है कि कामके हर दिन — खासकर गाँवके हाटवाले दिन — खादी-केन्द्रोंके बुनकर धोतियाँ तथा कुरते आदिके कपड़े लेकर आते है और बड़ी उत्सुकतासे पैसेकी राह देखते हैं। इसके अलावा, सहायक कारीगरोंको भी लाभ पहुँचेगा — जैसे चरखा बनानेवाले बढ़ई आदि को।

९. अतराल और तलोराके केन्द्रों (जिनका निरीक्षण आपने १९२५ मे किया था) में एक अद्वितीय प्रयोग चल रहा है। बारह वर्षके कठिन परिश्रम, खर्च और फिर बहुत-से स्वयंसेवकोंके त्यागके बाद अब यहाँ यज्ञ-भावसे कातनेवालो का एक समूह तैयार हो गया है। अपना कता सूत लेकर आनेवाली बहनें उसके बदले साड़ियाँ, अँगियाँ और बच्चोंके लिए चादर पाने की राह किस आतुरतासे देखती हैं, यह सरस और हर्षजनक दृश्य मैंने अपनी आँखों देखा है।

प्र० च० राय

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २८-९-१९३५

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक सग्रहालय, नई दिल्ली: गाधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, पृ० ३५५।

नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

साबरमती सग्रहालय, अहमदाबाद: पुस्तकालय तथा आलेख संग्रहालय, जहाँ गांधीजी से सम्बन्धित कागजात सुरक्षित है; देखिए खण्ड १, पृ० ३५५।

'अमृतबाजार पत्रिका'. कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'गुजराती'. बम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'लीडर': इलाहाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'वीणा' (श्रद्धाजलि अंक), अप्रैल-मई, १९६९: इन्दौरसे प्रकाशित मासिक पत्रिका।

'सर्चलाइट' (अंग्रेजी): पटनासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हरिजन': आर० वी० शास्त्री द्वारा संपादित अंग्रेजी साप्ताहिक, जो ११ फरवरी, १९३३ को सर्वप्रथम पूनासे प्रकाशित हुआ था।

'हरिजनबन्धु': चन्द्रशकर शुक्ल द्वारा संपादित गुजराती साप्ताहिक जो १२ मार्च, १९३३ को सर्वप्रथम पूनासे प्रकाशित हुआ था।

'हिन्दुस्तान टाइम्स': नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'गांधी एण्ड द अमेरिकन सीन' (अग्रेजी): जी० शेषाचारी; नचिकेता पब्लिकेशन्स लि०, बम्बई, १९६९।

'गुजरात एण्ड इट्स लिटरेचर' (अंग्रेजी): के० एम० मुशी, भारतीय विद्याभवन, बम्बई; १९६७।

'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद': द० बा० कालेलकर द्वारा सपादित; जमनालाल बजाज सेवा ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'बापुना पत्रो—२: सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती): मणिबहेन पटेल द्वारा संपादित; नवजीवन प्रकाशन मदिर, अहमदाबाद; १९५७।

'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने' (गुजराती) : द० बा० कालेलकर द्वारा संपादित; नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद; १९५७।

'बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती) : द० बा० कालेलकर द्वारा संपादित; नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद; १९६०।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) : मथुरादास त्रिकमजी; नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद; १९४८।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष' : हीरालाल शर्मा; ईश्वरशरण आश्रम, इलाहाबाद; १९५७।

'बापूज़ लेटर्स टु मीरा' (अंग्रेजी) : मीराबहन द्वारा संपादित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद; १९४९।

'महात्मा गांधी और जबलपुर' : नगरनिगम, जबलपुर; १९६९।

'मोटाना मान' (गुजराती) : ईश्वरभाई देसाई, हकूमत देसाई एवं कल्याणजी मेहता द्वारा संपादित; दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, १९७२।

प्यारेलाल पेपर्स : प्यारेलाल, नई दिल्ली।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी : स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें सुरक्षित।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(२५ अप्रैल से ३० सितम्बर, १९३५ तक)

२५ अप्रैल : गाधीजी वर्धामें थे।

२६ अप्रैल : क्षयसे ग्रस्त एफ० मेरी वारको पत्र लिखकर उनके इलाजका खर्च उठाने की सूचना दी।

२७ अप्रैलके पूर्व : जे० पी० भणसालीसे बातचीत की।

११ मईके पूर्व : एक मिशनरी नर्सको मुलाकात दी।

२१ मई या उसके पूर्व : वर्धासे ट्रेन द्वारा बम्बई रवाना।
रेलगाडीमें ही पियरे सेरेसोलसे बातचीत।

२२ मई . बम्बईमें 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिसे भेंट; प्रार्थना-सभामें भाषण।

२३ मई या उसके पश्चात् : बोरसद गाँवमें कई सभाओंमें भाषण दिये।

२५ मई : हरिजन कूप-कोषके निमित्त एक लाख रुपया इकट्ठा करने के लिए 'हरिजन' में अपील जारी की।

३१ मई : नडियाद विट्ठल कन्या विद्यालय और फूलचन्द शाहकी स्मृतिमें बने बाल-मन्दिरके उद्घाटनके अवसरोंपर भाषण दिये।
अहमदाबादकी साबरमती जेलमें अब्दुल गफ्फार खाँ से मुलाकात की।
समाचार-पत्रोको मुलाकात दी। ज्योति संघके सदस्योके प्रश्नोंके उत्तर दिये।

१ जून : बोरसदमें आर्य कन्या विद्यालय देखने गये।

३ जून : वर्धा पहुँचे।

६ जून . क्वेटाके भूकम्पके बारेमें वक्तव्य जारी किया।

१३ जून काग्रेस-अध्यक्ष राजेन्द्रप्रसादसे क्वेटाकी स्थितिके बारेमें चर्चा की।

१५ जूनके पूर्व : एक हरिजन-सेवकसे बातचीत की।

१६ जूनके पूर्व : चित्तरंजन दास स्मारक-भवनके उद्घाटनपर सन्देश भेजा।

१८ जून : बम्बईके खादी-भण्डारके एजेन्ट और कर्मचारियोंके झगड़ेका पंच फैसला सुनाया।

१९-२१ जून . अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके अधिवेशनमें भाग लिया।

२२ जून : क्वेटासे आये हुए एक मुलाकातीसे प्रार्थनाकी उपयोगितापर चर्चा की।
एक बातचीतमें बताया कि ग्रामोद्योग-आन्दोलनका उद्देश्य मशीनको उखाड़ फेंकना नही है।

१३ जुलाई : 'हरिजन' में प्रकाशित "मानक मजदूरीकी आवश्यकता" शीर्षक लेखमे आठ घटेके कठिन परिश्रमके लिए आठ आने मजदूरी देने की सलाह दी।

२० जुलाईके पूर्व : वर्धा आश्रममें, केशूके कलकत्ता जाते समय किये गये आयोजनके अवसरपर बोले।

२० जुलाई : 'हरिजन' में प्रकाशित "अहिंसाका अर्थ" शीर्षक लेखमें तर्क देकर अपनी इस मान्यताका समर्थन किया कि "जहाँ शरीर होम देनेकी तत्परता न हो, वहाँ आत्मरक्षा करते हुए जूझना ही एकमात्र सम्मानजनक मार्ग है।"

१ अगस्त या उसके पूर्व : लीग कौंसिलको भेजे गये एक लेखमें उन्होंने कहा : "मैं शान्तिके लिए प्रार्थना और उसकी आशा ही कर सकता हूँ।"
इतालवी-अबीसीनियाई संकटपर एक वक्तव्य देकर इस अफवाहका खण्डन किया कि अबीसीनियामे काम करनेके लिए रेडक्रास संगठनके निमित्त भारतीयोका एक स्वयंसेवक दल तैयार करनेके लिए उन्होंने चन्दा देनेकी अपील जारी की है।

१ अगस्त : एम० आर० मसानीका पासपोर्ट जब्त किये जानेके संबंधमें कॉमन्स सभामें लॉर्ड जेटलैंडसे लॉर्ड फैरिंगडन द्वारा पूछे गये प्रश्नके उत्तरका एक प्रेस वक्तव्य जारी करके खण्डन किया।

५ अगस्त : 'हंस' को दिये गये एक सन्देशमें कहा कि "यदि हिन्दी अथवा हिन्दुस्तानीको राष्ट्रभाषा बनना है तो ऐसे मासिककी अत्यावश्यकता है।"

१० अगस्तके पूर्व : खादी-उत्पादनके पुनर्गठनके सम्बन्धमें कांग्रेस कार्य-समितिके सदस्योंसे चर्चा की।

२२-२३ अगस्त : अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके प्रबन्ध-मण्डलकी बैठकमें "निर्वाह-योग्य न्यूनतम मजदूरी" के सम्बन्धमें चर्चा की।

३० अगस्त : वाइसरायको तार देकर कमला नेहरूके चिन्ताजनक स्वास्थ्यके कारण जवाहरलाल नेहरूकी बिना शर्त रिहाईका अनुरोध किया।

२ सितम्बर : अलमोड़ा जेलसे जवाहरलाल नेहरू बिना शर्त रिहा किये गये।

१४ सितम्बरके पूर्व : खादी-कार्यकर्त्ताओंसे "निर्वाह-योग्य मजदूरीके सम्बन्धमें" बातचीत।

२४ सितम्बर या उसके पश्चात् : गांधीजी का ६७ वाँ जन्म-दिन मनाये जानेके सम्बन्धमें चर्चा।

२८ सितम्बर : धर्मान्तरणके बारेमें 'हरिजन' में लिखे लेखमें फेडरेशन ऑफ इण्टरनेशनल फेलोशिपके सदस्य श्री ए० ए० पॉल की सामूहिक धर्मान्तरण-सम्बन्धी मान्यताओं का विवेचन किया।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

उ

ए

ओ

क

ख

ग

घ

च

ठ

ड

त

थ

द

फ

ब

भ

स

ह